मानव व्यवहार का

मनोविज्ञान

ग्यारहवीं कक्षा के लिए पाठ्यपुस्तक

कमला भुटानी   के. रामचन्द्रन

सी. बीना   मनीषा सेन

अनुवाद

कमला भुटानी   नरेन्द्र सिंह

लक्ष्मी प्रसाद जायसवाल

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

अगस्त 1992
श्रावण 1914

PD 3T–NSY

प्रकाशन सहयोग

सी. एन. राव *अध्यक्ष*, प्रकाशन विभाग

प्रभाकर द्विवेदी *मुख्य सम्पादक*
दिनेश सक्सेना *सम्पादक*
नरेश यादव *सम्पादन सहायक*

यू. प्रभाकर राव *मुख्य उत्पादन अधिकारी*
सुरेन्द्रकांत शर्मा *उत्पादन अधिकारी*
टी.टी. श्रीनिवासन *सहायक उत्पादन अधिकारी*
दिलीप कुमार शेन्डे *वरिष्ठ कलाकार*
मौ. समीउल्लाह *उत्पादन सहायक*
प्रकाश टहिल्याणी *उत्पादन सहायक*

आवरण : एम. सफल

मूल्य : रु. 23.50

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा कम्प्यूग्राफिक्स, एच-16, ग्रीन पार्क एक्सटेंशन, नई दिल्ली 110016 द्वारा लेज़र टाईपसेट होकर न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झाँसी रोड, नई दिल्ली 110055 में मुद्रित।

प्राक्कथन

मानव व्यवहार के विज्ञान के रूप मे मनोविज्ञान के महत्व ने विद्यालय पाठ्यक्रम के +2 स्तर पर अपना स्थान प्राप्त कर लिया है और इसलिए एक ऐसी पाठ्यपुस्तक की रचना की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी जिसमें वे आधुनिक विकास परिलक्षित हों जो इस विषय मे शिक्षा के +2 स्तर से सबद्ध हो। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् ने इस दिशा में उपयुक्त पाठ्यक्रम के विकास के लिए मनोविज्ञान के क्षेत्र से संबंधित अनेक विशेषज्ञ सम्मिलित करके व्यापक प्रयत्न किए जो इस पुस्तक की रचना का आधार बने।

यह पाठ्यपुस्तक इसलिए भी महत्वपूर्ण होगी क्योंकि यह मनोविज्ञान के विषय में आधारभूत विचार प्रदान करती है एव मनोविज्ञान के उन्नत पाठ्यक्रमो की नीव भी डालती है जिन्हें +2 स्तर के विद्यार्थी पूर्व स्नातक स्तर पर ले सकते हैं। इस पुस्तक की रचना मे रा. शै. अ. और प्र. प. के तथा उसके बाहर के मनोविज्ञान विशेषज्ञों द्वारा सम्मिलित रूप से बहुत परिश्रम किया गया है। मै इस पुस्तक के लेखकों— डा. सी. बीना, डा. मनीषा सेन, डा. कमला भुटानी और श्री के. रामचन्द्रन द्वारा किए गए कार्य के लिए आभार अभिलिखित करना चाहूँगा। डा. कमला भुटानी ने इस पुस्तक के विकास के कार्य का समन्वय करके इसे वर्तमान आकार दिया। मूल अग्रेजी पुस्तक के हिन्दी रूपान्तरण के कार्य का समन्वय एवं अनुवाद डा. कमला भुटानी एवं डा. नरेन्द्र सिह ने किया।

इस पुस्तक के विकास में प्रो. ए. शर्मा, प्रो. परीन एच. मेहता, प्रो. के. एन. सक्सेना, प्रो. आर. मुरलीधरन, प्रो. सी. एच. के. मिश्रा और प्रो. जे. एस. गौड़ ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

चूँकि पाठ्यक्रम की रचना निरन्तर चलनेवाली प्रक्रिया है जिसमे पाठ्य सामग्री का संशोधन और आधुनिकीकरण सतत आधार पर चलता रहता है, अतः हम इस पुस्तक के बारे मे प्राप्त समालोचना के लिए अत्यन्त आभारी होगे।

डा. के. गोपालन
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्

आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् इस पाठ्यपुस्तक की पाण्डुलिपि के पुनरीक्षण के लिए इन विशेषज्ञों का आभार व्यक्त करती है।

1. प्रो. अणिमा सेन
   दिल्ली विश्वविद्यालय
   दिल्ली

2. प्रो. जी. सी. गुप्ता
   दिल्ली विश्वविद्यालय
   दिल्ली

3. प्रो के. डी. बूटा
   दिल्ली विश्वविद्यालय
   दिल्ली

4. प्रो. पूर्णिमा माथुर
   भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान
   नई दिल्ली

5. प्रो. मर्सी अब्राहम
   केरल विश्वविद्यालय
   त्रिवेन्द्रम

6. प्रो. एल. बी. त्रिपाठी
   गोरखपुर विश्वविद्यालय
   गोरखपुर

7. प्रो. सी. जी. पाण्डे
   नागपुर विश्वविद्यालय
   नागपुर

8. प्रो. जी. मिश्रा
   बर्कतुल्ला विश्वविद्यालय
   भोपाल

9. प्रो. कुलदीप कुमार
   राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
   और प्रशिक्षण परिषद्
   नई दिल्ली

10. प्रो. आर. रथ (अवकाश प्राप्त)
    नेशनल फेलो
    सान्ता साही
    कटक

11. प्रो. एच. जी. सिंह (अवकाश प्राप्त)
    निदेशक
    व्यवहार प्रबंध संस्थान
    बी-463, मीराबाग
    नई दिल्ली

12. प्रो. बाक़र मेहदी (अवकाश प्राप्त)
    रा. शै. अ. और प्र. प.
    नई दिल्ली

13. प्रो. वी. के. सिंह (अवकाश प्राप्त)
    रा. शै. अ. और प्र. प.
    नई दिल्ली

14. डा. नीलिमा मिश्रा
    लखनऊ विश्वविद्यालय
    लखनऊ

15. डा. मुक्ता रस्तोगी
    लखनऊ विश्वविद्यालय
    लखनऊ

16. डा. यू. सी. जैन
बर्कतुल्ला विश्वविद्यालय
भोपाल

17. डा. एस. बी. लाल
सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर

18. डा. पी. सी. शुक्ला
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

19. डा. बी. डी. तिवारी
गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर

20. डा. एस. के. पात्रा
उत्कल विश्वविद्यालय
भुवनेश्वर

21. डा. एच. सी. सुमन
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
धर्मशाला

22. डा. चिन्तामणि मिश्रा
सी. एम. महाविद्यालय
सम्बलपुर

23. श्री सौमेन्द्र मुदाली
एस. सी. एस. महाविद्यालय
पुरी

24. श्री पद्म कुमार जी
गवर्नमेंट कालेज, चित्तूर
पालघाट

25. श्री मीना केतन पाणि
गवर्नमेंट विमेन्स कालेज
बरहामपुर

26. श्री के. एस. यादव
गवर्नमेंट कालेज
जींद

27. श्री चिन्तामणि कार
के. के. एस. विमेन्स कालेज
बालासोर

28. डा. गोपा भारद्वाज
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

29. श्रीमती एन. जी. चौहान
नानपुरा त्रिमाल्याबाद
सूरत

30. डा. अरुणा बूटा
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

31. डा. आशुम गुप्ता
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

32. डा. नमिता मुखर्जी
कमला नेहरू महाविद्यालय
नई दिल्ली

33. डा. जनक जी. सिंह
कमला नेहरू महाविद्यालय
नई दिल्ली

34. डा. एस. पौन्नुस्वामी
दौलतराम कालेज
दिल्ली

35. डा. शान्ति औलख
लेडी श्रीराम कालेज
नई दिल्ली

36 श्री के. सी. तुली
ज़ाकिर हुसैन महाविद्यालय
दिल्ली

37. श्रीमती रक्षा अरोड़ा
राज्य शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्
नई दिल्ली

38. डा. नरेन्द्र सिह
रा. शै. अ. और प्र. प.
नई दिल्ली

लेखक

1. डा. कमला भुटानी
रा. शै. अ. और प्र. प.
नई दिल्ली

2. श्री के. रामचन्द्रन
रा. शै. अ. और प्र. प.
नई दिल्ली

3. डा. सी. बीना
उस्मानिया यूनिवर्सिटी कालेज फॉर
विमेन, कोटी,
हैदराबाद

4. डा. मनीषा सेन
बम्बई विश्वविद्यालय
मुबई

हिन्दी रूपान्तरण का पुनरीक्षण

1. प्रो. एच. जी. सिह (अवकाश प्राप्त)
निदेशक
व्यवहार प्रबंध संस्थान
बी-463, मीरा बाग
नई दिल्ली

2. डा. डी. एन. श्रीवास्तव
आगरा कालेज
आगरा

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

मो॰ क॰ गांधी

विषय-सूची

एकक 1

व्यवहार के विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान

इस एकक के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- मनोविज्ञान की प्रकृति का वर्णन करें;
- व्यवहार की व्याख्या करें;
- मनोविज्ञान में प्रयुक्त विभिन्न विधियों, परीक्षणों तथा प्रविधियों का वर्णन करें;
- मनोविज्ञान के कुछ महत्वपूर्ण एवं उभरते हुए क्षेत्रों का निरूपण करें।

मनोविज्ञान का सबध मानव के अध्ययन से है। इसमे व्यक्ति के अधिगम, स्मृति, चिन्तन, समझने, अनुभव करने तथा पर्यावरण मे अन्य व्यक्तियो के साथ क्रिया तथा प्रतिक्रिया करने का अध्ययन किया जाता है। नवजात शिशु मे भी क्रियाएँ एव प्रतिक्रियाएँ स्पष्ट होती है। किन्तु जन्म के कुछ दिनो पश्चात् ही नवजात शिशु विभिन्न स्वादो, ध्वनियो और गन्धो मे भेद करने मे सक्षम हो जाता है। थोड़ा बड़ा बच्चा वर्णमाला सीख सकता है, साइकिल चला सकता है अथवा दूसरे बच्चों से झगड़ा भी कर सकता है। वह क्रोध, प्रेम, भाव तथा उलझनो को व्यक्त कर सकता है। मनोविज्ञान मे इसी तरह की सभी क्रियाओ का अध्ययन किया जाता है। मनोवैज्ञानिको ने कुछ ऐसे प्रश्नो को हल करने का प्रयास किया है जैसे "व्यक्ति मे चिन्तन किस तरह विकसित होता है?" "व्यक्ति भिन्न-भिन्न तरीके से प्रत्यक्षीकरण क्यो करते हैं?" आदि। मनोवैज्ञानिकों द्वारा मनुष्यों पर क्रमबद्ध रूप से प्रयोग किए जाते है। वे पशु-पक्षियो तथा कीटों पर भी प्रयोग करते है एव इनके व्यवहार के अध्ययन से मनुष्य के व्यवहार को अच्छी तरह समझने का प्रयास करते हैं।

मनोविज्ञान की अवधारणा

साइकॉलोजी (मनोविज्ञान) शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के दो शब्दो *साइके* जिसका तात्पर्य आत्मा से है, एव *लोगोस* जिसका तात्पर्य संभाषण या बातचीत करना है, से हुई है। इसलिए मनोविज्ञान को 'आत्मा' का अध्ययन माना गया। इस प्रकार प्रारंभिक मनोविज्ञान मे आत्मा का वर्णन, उसकी प्रकृति एव शरीर मे उसकी स्थिति आदि के बारे मे विचार हुआ। चूँकि आत्मा मनुष्य की अनिरीक्षित एव अप्रमाण्य भाग थी अतः इस परिभाषा को वैज्ञानिक

अध्ययन के लिए अस्वीकृत कर दिया गया। फिर मन और चेतना की प्रस्थापना मनोविज्ञान की विषय-वस्तु बनी। इन प्रस्थापनाओ को भी इसलिए त्याग दिया गया क्योकि इनमे भी वैज्ञानिक रूप से निरीक्षण संभव नही था तथा ये भी व्यवहार को समझने एव नियंत्रित करने मे सहायक नहीं हुए।

परिभाषा

समकालीन मनोवैज्ञानिक मनोविज्ञान को व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन मानते हैं। व्यवहार को मूर्त, तथ्यपरक और निरीक्षण योग्य माना गया है जो आत्मा और मन में नहीं है। इस प्रकार अब मनोविज्ञान को *व्यवहार के वैज्ञानिक अध्ययन* के रूप मे पारिभाषित किया गया है। इसी विषय वस्तु मे व्यावहारिक प्रक्रियाएँ, जिनका निरीक्षण सभव है जैसे हाव-भाव, वक्तव्य तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तन तथा वे प्रक्रियाएँ जिनका अनुमान विचारों और स्वप्नो से लगाया जा सकता है, शामिल हैं। अतः मनोविज्ञान निरीक्षण किए जाने वाले व्यवहार के वस्तुनिष्ठ अध्ययन से सबधित है। मनोविज्ञान में उन मानसिक प्रक्रियाओ के अध्ययन को भी महत्त्व दिया जाता है जिनका प्रत्यक्ष रूप से निरीक्षण कठिन है किन्तु व्यावहारिक एवं शारीरिक आंकडों से अनुमान लगाया जाता है।

वैज्ञानिक मनोविज्ञान का उद्‌भव

मनोविज्ञान के मानव व्यवहार विज्ञान के रूप मे उदय का श्रेय शरीर क्रिया विज्ञान तथा भौतिकी मे विकास के साथ-साथ विल्हेल्म वुण्ट के प्रयासों को जाता है जिन्होंने 1879 मे मनोविज्ञान की प्रथम प्रयोगशाला स्थापित की। वुण्ट ने शरीरविज्ञान तथा भौतिकी में प्रयोगात्मक कार्य प्रणाली को अपनाने के महत्व को पहचाना था। शरीर क्रिया शास्त्रियों ने ज्ञानेन्द्रियों की उत्तेजना तथा उद्दीपनों के गुण को जो शरीर पर टकराते हैं, का संबध ढूँढ़ लिया था। उदाहरणार्थ यह पाया गया कि ध्वनि सवेदना ध्वनि तरगो की आवृत्तियों पर निर्भर करती है। जितनी अधिक ध्वनि तरगों की आवृत्ति होगी उतनी ही ऊँची इसकी नाद होगी। इसी प्रकार रंग की सवेदना प्रकाश तरंगो की लम्बाई पर निर्भर करती है। शरीर शास्त्रियो ने ज्ञानेन्द्रियो तथा मस्तिष्क की सरचना एव कार्यों की सूचनाओ को एकत्र किया जिनकी उत्तेजना के परिणामस्वरूप न केवल सवेदना बल्कि प्रतिवर्त तथा दूसरे प्रकार के व्यवहार होते हैं। इनके फलस्वरूप उत्तेजना की तीव्रता तथा चेतन अनुभवो के बीच सबध का मापन एव प्रतिपादन होता है। इन विकासों ने इंगित किया कि मनोविज्ञान स्वयं प्रयोगात्मक विज्ञान बन सकता है। वुण्ट ने 1879 मे लिपजिग विश्वविद्यालय मे मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला स्थापित की तथा मनोविज्ञान में उच्च उपाधियाँ देनी प्रारंभ की। इससे मनोविज्ञान एक अलग विज्ञान के रूप में विकसित हुआ।

वुण्ट की प्रयोगशाला मे किए गए प्रयोगों में मानव जीवन के चेतन पहलुओ को समझने का प्रयास किया गया। चेतन अनुभवो तथा उनके तत्वो के विश्लेषण के प्रयास हुए। उस समय स्व-निरीक्षण को मनोविज्ञान के अध्ययन की आधारभूत विधि के रूप मे बल दिया गया। यह निरीक्षण भौतिक विज्ञान के निरीक्षण से अलग है क्योकि इसमें व्यक्ति स्वय मे झाँकता है अथवा अपने भीतर का निरीक्षण करता है, जिसे अन्तःनिरीक्षण के रूप मे जाना जाता है। किन्तु अन्तःनिरीक्षण विधि में निरीक्षण की व्यक्तिनिष्ठता के कारण इसकी तीव्र आलोचना की गई तथा बाद के वर्षों मे मनोवैज्ञानिको ने निरीक्षण तथा प्रयोगो की वस्तुनिष्ठ विधियो को अपनाया।

व्यक्ति के चेतन अनुभवो पर अधिक बल देने के कारण कुछ मनोवैज्ञानिको ने मनोविज्ञान को चेतन अनुभवो के विज्ञान के रूप मे पारिभाषित किया। किन्तु मनोविज्ञान की यह परिभाषा अधिक दिन नही रह सकी। शीघ्र ही यह अनुभव किया गया कि चेतन अनुभवों के अतिरिक्त अचेतन विचार भी मानव व्यवहार को बहुत कुछ प्रभावित करते है। चूँकि उपरोक्त परिभाषा मे अचेतन अनुभवो को सम्मिलित नहीं किया गया था जो मानव व्यवहार मे महत्वपूर्ण

भूमिका अदा करते हैं इसीलिए मनोविज्ञान को मन के रूप मे पारिभाषित किया गया। इसी तरह कालान्तर मे इन परिभाषाओ के स्थान पर मनोविज्ञान को व्यवहार के विज्ञान के रूप मे पारिभाषित किया गया।

मनोविज्ञान की प्रयोगशाला की स्थापना के बाद के वर्षों में मनोविज्ञान ने एक विज्ञान के रूप मे तेज़ी से विकास किया। अनेको मनोविज्ञान प्रयोगशालाओ की स्थापना हुई एवं मनोवैज्ञानिक अनुसधानो को मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे प्रयुक्त किया गया।

विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान

आज मनोविज्ञान को विज्ञान के रूप मे जाना जाता है जिसमे मानव व्यवहार को समझने एव वर्णन करने का प्रयास किया जाता है तथा मानव को पर्यावरण की आवश्यकताओ के साथ समायोजन के योग्य बनाने के लिए उसके व्यवहार मे सुधार करने का प्रयास किया जाता है। अन्य भौतिक विज्ञानो की भाँति मनोविज्ञान मे भी मानव व्यवहार से संबंधित प्रश्नो के समाधान के लिए वैज्ञानिक विधियो तथा कार्य-प्रणालियो का उपयोग किया जाता है। अन्य भौतिक विज्ञानो जैसे भौतिकी, रसायन, वनस्पति विज्ञान आदि की भाँति ही मनोविज्ञान की भी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं जैसे (अ) वस्तुनिष्ठता, (ब) क्रमबद्ध अध्ययन, (स) नियंत्रित प्रयोगात्मकता तथा (द) मात्रात्मकता।

(अ) वस्तुनिष्ठता

मनोविज्ञान मे व्यवहार के अध्ययन के लिए वस्तुनिष्ठता पर बल दिया जाता है। वस्तुनिष्ठता में घटना या परिदृश्य का प्रत्यक्ष प्रमाण होता है। ऐसे निरीक्षण सर्वविदित, अन्य लोगों द्वारा भाग लिए जा सकने वाले तथा दोहराये जा सकने वाले होते हैं।

(ब) क्रमबद्ध अध्ययन

मनोविज्ञान किसी प्रक्रिया अथवा समस्या के आकस्मिक अध्ययन की अपेक्षा क्रमबद्ध अध्ययन पर बल देता है। अधिगम, चिन्तन अथवा स्वप्न देखना आदि प्रक्रियाओं अथवा व्यवहार संबधी समस्याएँ जैसे क्रोध, दुश्चिन्ता, नैराश्य आदि की विभिन्न दृष्टिकोणो से जाँच की जाती है। शोधकर्ता वैज्ञानिक कार्य-प्रणाली का अनुगमन करते हैं। वे परिकल्पना से प्रारम्भ करते हैं और विभिन्न निश्चित चरो के बीच सबंध निर्धारित करते हुए अपना अनुसधान करते हैं।

(स) नियन्त्रित प्रयोगात्मकता

मनोविज्ञान विभिन्न तरीकों के प्रायोगिक नियंत्रण प्रयुक्त करता है। उदाहरणार्थ जब एक प्रयोग में एक कविता को कैसे याद किया जाए, का अध्ययन किया जाता है तो इस बात को निश्चित किया जाता है कि व्यवधान उत्पन्न करने वाली ध्वनियाँ न हो तथा अधिगमित विषय वस्तु को स्पष्टता एवं एकरूपता के साथ प्रस्तुत किया जाए। मनोवैज्ञानिक शोध की सफलता बहुत सीमा तक घटना को प्रभावित करने वाले सबद्ध कारको द्वारा निर्धारित होती है। किन्तु मानव व्यवहार की जटिलताओ के कारण मनोवैज्ञानिक प्रयोगो पर पूर्ण नियंत्रण संभव नही हो सकता।

(द) मात्रात्मकता

मात्रात्मकता वैज्ञानिकता की महत्वपूर्ण विशेषताओ मे से एक है। मनोविज्ञान में प्रायः मात्रात्मक मापको के लिए साख्यिकीय प्रविधियो का प्रयोग किया जाता है। मनोवैज्ञानिक प्रायः व्यवहार के विभिन्न पहलुओ जैसे बुद्धि, स्मृति, आक्रमण, स्व-प्रत्यय आदि को मापन तथा इगित करने मे मात्रात्मक शब्दो का प्रयोग करते हैं।

वस्तुनिष्ठता, क्रमबद्ध अध्ययन, नियन्त्रण तथा मात्रात्मकता मनोविज्ञान की विषयवस्तु को अधिक प्रामाणिक बनाते है। इस प्रकार निरीक्षणकर्ता के निजी पक्षपात, पूर्व धारणाओ तथा दृढ धारणाओ को हटाया जा सकता है जिनसे निरीक्षित घटना या परिदृश्य विकृत अथवा अस्पष्ट हो सकता है।

व्यवहार

मनोविज्ञान की विषयवस्तु व्यवहार है। दूसरे शब्दो

में इसमें मानव जीवन के जन्म से मृत्यु तक की सभी क्रियाएँ विशेष रूप से तथा अन्य जीवों की क्रियाएँ सामान्य रूप से सम्मिलित हैं। क्रियाएँ अथवा व्यवहार प्रत्यक्ष अर्थात् जिनका निरीक्षण दूसरे के द्वारा संभव होता है जैसे चलना, बातचीत करना आदि, तथा प्रच्छन्न अर्थात् जो व्यक्ति के अन्दर होती हैं जैसे स्मरण, चिन्तन, कल्पना करना आदि हो सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सभी प्रकार की क्रियाएँ व्यवहार हैं जो प्रायः किसी उद्दीपन की अनुक्रिया अथवा प्रतिक्रिया स्वरूप अभिव्यक्त होता है। पर्यावरण का प्रभाव जो शरीर पर पड़ता है और शरीर को क्रिया करने के लिए उत्तेजित करता है, *उद्दीपन* कहलाता है तथा इस प्रकार प्रेरित क्रिया *अनुक्रिया* कहलाती है।

मनोवैज्ञानिक निरन्तर प्रश्न उठा रहे हैं और उनके उत्तर खोज रहे हैं कि लोग क्यों और कैसे वैसा व्यवहार, विश्वास तथा क्रिया करते हैं जो कि वे करते हैं। मनोविज्ञान के उद्देश्य अन्य विज्ञानों की भाँति व्यवहार का वर्णन करना, व्याख्या करना तथा उसके बारे में पूर्वकथन करना है। व्यवहार अनेक प्रकारों से भिन्न हो सकता है जैसे मानव अथवा पशु, सरल अथवा जटिल, शारीरिक अथवा मानसिक व्यवहार आदि। मनोविज्ञान का एक सशक्त व्यावहारिक पक्ष भी है जिसमें इसके ज्ञान को मानव समस्याओ के समाधान हेतु प्रयोग किया जाता है। यह परिपूर्ण सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पर्यावरण का सृजन करने का प्रयत्न करता है तथा लोगों को परिवर्तनशील संसार के साथ समायोजन करने मे सहायता करता है।

व्यवहार के प्रकार

व्यवहार प्रायः प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न दो भागों मे बाँटा जाता है। प्रत्यक्ष व्यवहार में बातचीत करना एवं भावभंगिमा जैसी क्रियाएँ शामिल हैं। इसमें वे प्रतिक्रियाएँ सम्मिलित हैं जो दिखाई देती हैं। प्रच्छन्न शब्द का प्रयोग उस व्यवहार के वर्णन के लिए किया जाता है जिसका प्रत्यक्षतः निरीक्षण नहीं किया जा सकता जैसे विचार, भावनाएँ, ग्रन्थियों की प्रतिक्रियाएँ इत्यादि। किसी विशेष व्यवहार को उचित रूप से समझने के लिए मनोवैज्ञानिक उस व्यवहार के प्रत्यक्ष एवं प्रच्छन्न दोनों पहलुओं का अध्ययन करते हैं। यदि मनोवैज्ञानिक किसी क्रुद्ध बच्चे के व्यवहार का अध्ययन कर रहे हैं तो उन्हें चेहरे की भावाभिव्यक्ति, स्वर में परिवर्तन के साथ श्वसन संबंधी परिवर्तन, अन्तःस्रावी परिवर्तन तथा बच्चा क्रोधावस्था में क्या करना चाहता है, आदि को सावधानीपूर्वक देखना चाहिए। प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न व्यवहार की पहचान तथा मापन विशिष्ट उपकरण अथवा यन्त्रों की सहायता से करते हैं।

मनोविज्ञान की विधियाँ

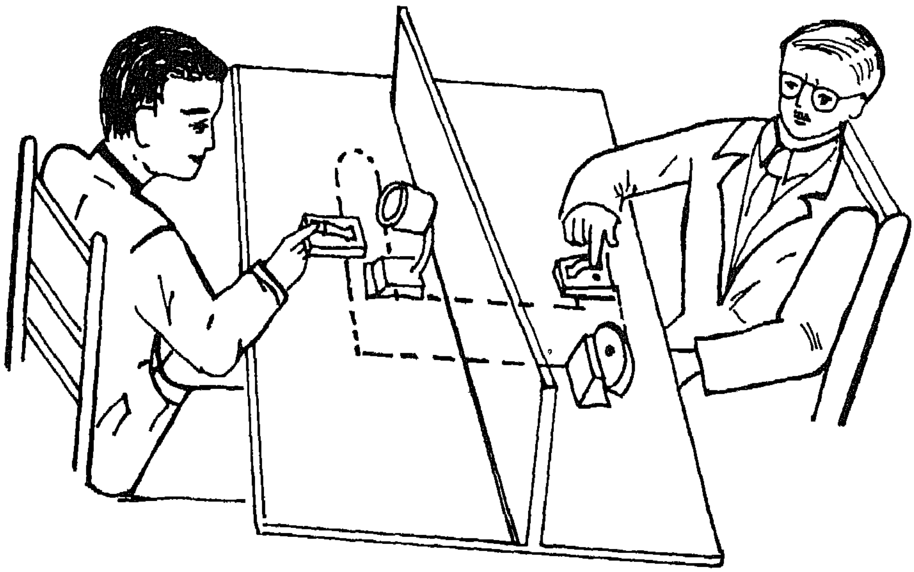
भौतिकी, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान एवं अन्य विज्ञानों की भाँति मनोविज्ञान भी मानव पशुओं के व्यवहार संबंधी प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए वैज्ञानिक विधियों का अनुसरण करता है। विज्ञान के रूप में खगोल विज्ञान ग्रहो तथा तारों की प्रकृति एव स्थिति को जोड़तोड़ नहीं सकता। इसे दूरबीन द्वारा उनका निरीक्षण करके तथा अन्य अप्रत्यक्ष स्रोतों से निष्कर्ष निकालकर ही संतोष करना पड़ता है। दूसरी तरफ रसायन विज्ञान प्रत्यक्ष विधि का प्रयोग करता है। इसमें वैज्ञानिक दो रसायनों को परखनली में रखकर उनकी प्रकृति एवं प्रतिक्रियाओं का अध्ययन कर सकते हैं। मानव व्यवहार का अस्तित्व अनेक रूपों में होता है। कुछ व्यवहारों का प्रत्यक्ष तथा कुछ का परीक्षणो तथा यंत्रो की सहायता से अध्ययन किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिक जिन क्रियाओ में रुचि रखते हैं उन सबके अध्ययन मे एक ही विधि प्रयुक्त नहीं हो सकती। इसीलिए व्यवहार के अध्ययन के लिए उन्हें अनेकानेक विधियो का सहारा लेना पड़ता है।

मनोवैज्ञानिक किसी व्यवहार के अध्ययन एव विश्लेषण के लिए अध्ययन प्रणाली के विशिष्ट विन्यास

को अपनाते हैं। वे प्रारम्भ में समस्या चुनते हैं, समस्या से संबद्ध प्रश्नों एवं परिकल्पनाओं की रचना करते हैं तथा अन्ततः समस्या का समाधान ढूँढ़ते हैं। समस्या का चयन किसी विद्यमान सिद्धांत की पृष्ठभूमि अथवा किसी परिदृश्य के प्रति मनोवैज्ञानिकों का निरीक्षण अथवा मानव प्रकृति के किसी पहलू के विषय मे जिज्ञासा से निर्धारित किया जा सकता है।

मनोविज्ञान में सूचना एव आंकड़े इकट्ठे करने के लिए प्रयुक्त कुछ विधियाँ हैं : (अ) प्रयोगात्मक, (ब) निरीक्षण, (स) व्यक्ति वृत्त अध्ययन तथा (द) सर्वेक्षण।

बाहर किया जा सकता है। जब प्रयोगशाला के बाहर प्रयोग किया जाता है जहाँ घटना या परिदृश्य प्राकृतिक रूप से घट रहा हो, तो इसे क्षेत्र प्रयोग कहा जाता है। उदाहरणार्थ भोज समारोह मे भोजन की मात्रा में फेर-बदल कर मोटे लोगों के खाने के व्यवहार का मापन करना अथवा शिशु विद्यालयों में प्रारम्भिक कुछ दिनो मे पूर्व विद्यालयी बच्चों की असुरक्षा और चिन्ता की भावना का मापन विद्यालय परिसर में ही करना, क्षेत्र प्रयोग माने जाते हैं। मनोविज्ञान मे इस तरह के क्षेत्र प्रयोग अधिकाधिक लोकप्रिय हो रहे हैं।



चित्र 1.1 प्रयोग

(अ) प्रयोगात्मक विधि

सीधेसादे शब्दों में प्रयोग को "परिदृश्य का नियन्त्रित निरीक्षण" के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है। प्रयोग के अन्तर्गत घटना या परिदृश्य का सावधानीपूर्वक निरीक्षण, परिवर्तन तथा अनुमान लगाने के लिए कुछ स्थितियाँ व्यवस्थित एवं नियन्त्रित की जाती हैं। प्रयोगों को प्रयोगशाला के अन्दर अथवा

किन्तु अधिगम, प्रत्यक्षीकरण तथा अभिप्रेरण पर अधिकतर प्रयोग प्रयोगशाला में ही किए जाते हैं क्योकि उनकी स्थितियो पर नियन्त्रण करने के लिए ऐसे विशेष उपकरणो की आवश्यकता होती है जो व्यवहार अथवा अध्ययन मे प्रयुक्त चरों के सबधो का मापन तथा उनमें परिवर्तन कर सकें।

आइये अब हम उदाहरण के लिए एक प्रयोग

लेकर उसमें निहित महत्वपूर्ण कारको को समझने के लिए उस पर विचार करें। एक मनोवैज्ञानिक की रुचि उन स्थितियों के अध्ययन में थी जिनमे लोग दूसरों का साथ ढूँढ़ते हैं। उनकी पूर्वधारणा थी कि जब लोग चिन्ताग्रस्त अथवा भयग्रस्त होते हैं तो उनमें दूसरे लोगो का साथ ढूँढ़ने की अधिक संभावना होती है।

इस समस्या का उत्तर पाने के लिए मनोवैज्ञानिक ने एक प्रयोग की योजना बनाई तथा इसे एक उच्च विद्यालय (हाई स्कूल) की छात्राओ पर किया। जब छात्राएँ प्रयोग के लिए प्रयोगशाला में पहुँची तो उन्हें चलचित्र प्रक्षेपक एवं अन्धकारयुक्त कक्ष दिखाया गया तथा यह बताया गया कि उन्हें एक अत्यन्त भयावह भूतो से संबंधित चलचित्र दिखाया जाएगा। उनको प्रयोग के विषय में इस प्रकार चिन्तित करने के पश्चात् बताया गया कि उन्हें अपनी बारी आने की प्रतीक्षा करनी है। उन्हें इस बात की छूट दी गई कि वे अकेले या दूसरी छात्राओं के साथ इन्तज़ार कर सकती है। मनोवैज्ञानिक ने उनके निर्णय एवं व्यवहार को, जब वे प्रतीक्षारत थी, ध्यानपूर्वक लिख लिया। यह पाया गया कि ऐसी स्थितियो में उनमें से अधिकांश ने दूसरो के साथ प्रतीक्षा करना अधिक पसन्द किया।

स्वतन्त्र, निर्भर तथा मध्यवर्ती चर : प्रत्येक प्रयोग का प्रयत्न उन दशाओ अथवा घटनाओं मे सबधों की खोज करना होता है जिन्हें परिवर्तित किया जा सकता है अथवा जो परिवर्तन के परिणामस्वरूप होते हैं। इनको चर कहा जाता है। प्रयोगकर्ता चरों एवं दशाओं को चुनते हैं, उनको नियंत्रित और उनमे परिवर्तन करते हैं। *प्रयोग मे विचलित की जाने वाली कोई भी दशा जिसका विन्यास प्रयोज्य* (वह व्यक्ति जिस पर प्रयोग किया जाता है) *से स्वतन्त्र रूप से किया जाता है, स्वतन्त्र चर कहलाती है। प्रयोज्य के व्यवहार में परिवर्तन जो स्वतत्र चर में परिवर्तन के परिणामस्वरूप प्राप्त होता है उसे निर्भर चर कहा जाता है।* उपरोक्त प्रयोग मे प्रयोज्यों में चिन्ता जागृत करना स्वतन्त्र चर था। प्रयोज्यों का स्वतत्र चर की अनुक्रिया स्वरूप व्यवहार जैसे अकेले अथवा किसी के साथ प्रतीक्षा करने का उनका निर्णय निर्भर चर था।

मध्यवर्ती चर वह दशा अथवा कारक है जो स्वतत्र तथा निर्भर चरो के मध्यस्थ होते हैं तथा उनके सबध को प्रभावित करते हैं। ये कारक प्रयोज्य के अन्दर अथवा उसके पर्यावरण में हो सकते हैं जो स्वतत्र तथा निर्भर चरों के संबध को प्रभावित करते हैं। इस प्रयोग मे मध्यवर्ती चर प्रयोगकर्ता अथवा दूसरे प्रयोज्यो से जान पहचान हो सकती है। प्रयोग की रूपरेखा बनाने एवं प्रयोग करने मे त्रुटियों को कम करने के लिए मध्यवर्ती चरो का ध्यान रखना पड़ता है। उपरोक्त प्रयोग मे यह पाया गया कि छात्राओ ने एक दूसरे का साथ अपनी जान पहचान के कारण ढूँढ़ा न कि चिन्ता के कारण। अतः उन कारकों को नियन्त्रित किया जाता है जो अध्ययन किये जाने वाले चरों को प्रभावित करते हैं। अधिकाश दशाओं मे प्रयोगशाला के अन्दर तथा बाहर के चर भी प्रयोग को प्रभावित करते हैं और प्रयोगकर्ता अध्ययन की आवश्यकतानुसार उन्हें नियंत्रित करने का प्रयास करता है। इस प्रयोग में प्रयोगकर्ता चूँकि यह नही चाहता था कि विद्यार्थियों के लिंग का प्रभाव अध्ययन परिणामों पर पड़े अतः केवल लडकियों का प्रयोज्य के रूप में अध्ययन किया गया। प्रयोगकर्ता ने अपना न्यादर्श केवल विद्यालय मे पढ़ने वाली लड़कियो तक ही सीमित रखा न कि किसी दूसरे स्तर की लड़कियो को न्यादर्श के लिए चुना। प्रयोगकर्ता ने केवल एक स्वतन्त्र चर, चिन्ता की मात्रा का अध्ययन किया। निर्भर चर, प्रयोज्य की साथी के साथ रहने की प्रवृत्ति थी।

इस सभावना को दूर करने के लिए कि परिणाम आकस्मिक थे अथवा पूर्वनिर्धारित धारणाओं द्वारा पक्षपातपूर्ण थे, किसी भी प्रयोग की पुनरावृत्ति कोई दूसरा प्रयोगकर्ता दूसरे स्थान और समय पर कर सकता है। मनोवैज्ञानिक उपयुक्त उपकरणो एव यन्त्रो की सहायता से पशु अथवा मानव प्रयोज्यों पर किए गए प्रयोगो से सही मापन कर सकते हैं। ज्ञानात्मक

प्रक्रियाएँ जैसे अधिगम, स्मृति, प्रत्यक्षीकरण आदि का अध्ययन प्रयोगो द्वारा विस्तृत रूप से प्रयोगशाला मे किया गया है। आजकल अनेक समाज मनोवैज्ञानिक परिदृश्यो जैसे अनुरूपता, स्पर्धा, अधिगमित असहायता आदि का प्रयोगशाला मे तथा प्रयोगशाला के बाहर की स्थितियो मे अध्ययन किया गया है।

(ब) *निरीक्षण*

हर प्रकार के व्यवहारो पर प्रयोग करना सभव नही है। कुछ ऐसे प्रयोग करना बहुत अनैतिक होगा जो प्रयोज्यो के व्यक्तित्व को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करें। उदाहरणार्थ हम ऐसा नही कर सकते कि मानव प्रयोज्यो के एक समूह को भोजन, प्यार तथा आराम से वचित रखकर पाला पोसा जाए और उसकी तुलना दूसरे ऐसे समूह से करें जिसे ये सब सामान्य रूप से मिला हो। इसीलिए मनोवैज्ञानिक निरीक्षण विधि का सहारा लेते हैं जिसमे समस्या से संबधित व्यवहार का अत्यन्त सावधानी तथा सूक्ष्मता के साथ निरीक्षण करते हैं। वे परिणामो का अभिलेखन तथा विश्लेषण करते हैं। निरीक्षण के कुछ प्रकार जिनका वर्णन यहाँ किया जा रहा है, निम्नलिखित है : (i) सहभागी, (ii) असहभागी, (iii) प्रकृतिवादी, तथा (iv) व्यक्तिपरक।

(i) *सहभागी निरीक्षण :* कुछ अध्ययनों मे मनोवैज्ञानिक सहभागी निरीक्षण विधि का प्रयोग करते है जिसमे वे स्वय घटना मे अथवा जिस व्यवहार का अध्ययन करते है, उसमे सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। उदाहरण के लिए किसी उद्योग मे श्रमिको की समस्याओ को भली प्रकार समझने के लिए मनोवैज्ञानिक श्रमिक के रूप मे प्रवेश लेते हैं तथा श्रमिको की क्रियाओ में किसी अन्य श्रमिक की भाँति भाग लेते हैं। इस विधि को सहभागी निरीक्षण कहते है। इस विधि का प्रयोग बच्चों के कुछ व्यवहार अध्ययन जैसे खेल क्रियाएँ, सामूहिक चिकित्सा आदि मे किया जाता है।

(ii) *असहभागी निरीक्षण :* असहभागी निरीक्षण वह विधि है जिसमे निरीक्षणकर्ता, जिस व्यवहार का



चित्र 1.2 निरीक्षण

अध्ययन किया जा रहा है उन क्रियाओ में भाग नहीं लेते। इसमें निरीक्षणकर्ता दूर से उस व्यवहार का अध्ययन करते हैं। इस विधि का प्रयोग अधिकतर नैदानिक, शैक्षिक, औद्योगिक, सामाजिक, सामुदायिक तथा कई अन्य स्थितियों में व्यवहार के अध्ययन के लिए किया जाता है।

(iii) *प्रकृतिवादी निरीक्षण* : प्राकृतिक स्थिति मे व्यवहार का निरीक्षण द्वारा अध्ययन करना प्रकृतिवादी निरीक्षण कहलाता है। बन्दरो, मधुमक्खियो तथा चींटियों को उनके प्राकृतिक पर्यावरण मे निरीक्षण करने से आक्रमण, प्यार, प्रणय-निवेदन, सामाजिक संगठन में व्यवहार तथा पशु समाजो में कार्य करने की आदतों को समझने में बहुत योगदान मिला है। इस प्रकार के मामलों में घटनाओं को बिना किसी जीव अथवा पर्यावरण को हेरफेर किये अथवा विघ्नबाधा डाले उनके प्राकृतिक रूप में निरीक्षित किया जाता है।

इस विधि को बच्चों, पशुओं, पक्षियों, कीटों आदि से संबंधित अध्ययनों में विस्तृत रूप से प्रयुक्त किया जाता है। कभी-कभी नवजात शिशुओं तथा बच्चो के अध्ययन के लिए निरीक्षणकर्ता अपने को एकतरफा शीशे के पीछे अदृश्य रखने का प्रयत्न करते हैं (बाहर से यह पटल एक साफ शीशे की चादर की भाँति होता है और अन्दर की ओर से दर्पण की भाँति दिखाई देता है) ताकि जिस व्यवहार का अध्ययन किया जा रहा है वह निरीक्षणकर्ता की उपस्थिति से प्रभावित न हो।

(iv) *व्यक्तिपरक निरीक्षण* : निरीक्षण का एक अन्य प्रकार जो मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त होता है वह व्यक्तिपरक निरीक्षण अथवा अन्तःनिरीक्षण है। इस विधि में प्रयोज्य स्वयं के विचार एवं भावनाओ की ध्यानपूर्वक जाँच करके विवरण देते हैं। प्रयोज्यो को उन सब मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों तथा अनुभवों का विवरण देने को कहा जाता है जो उद्दीपन प्रस्तुति के बाद से उसमें हो रहे हैं। इस विधि का प्रयोग स्वप्नो, दिवास्वप्नो और संवेगात्मक अनुभवो के परिदृश्यो के अध्ययन के लिए किया जाता है। व्यक्तिपरक निरीक्षण विधि को हम क्रमबद्ध ढग से तभी प्रयोग कर सकते हैं जब प्रयोज्य को कैसे और क्या निरीक्षण करना है, का प्रशिक्षण दिया हो।

(स) *व्यक्ति वृत्त अध्ययन विधि*

व्यवहार के अध्ययन मे प्रयुक्त विधियों मे से एक महत्वपूर्ण विधि व्यक्ति वृत्त अध्ययन विधि है। मनोविज्ञान ने इस विधि को चिकित्सा विज्ञान से लिया है। इस विधि मे एक ही व्यक्ति के निरीक्षण तथा उसके बारे में विस्तृत जानकारी एकत्रित करने पर बल दिया जाता है। अधिकतर जीवन वृत्तों के अध्ययनों को प्रायः याद की गई घटनाओ, अभिलेखों और व्यक्ति से संबंधित लोगों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर व्यक्ति की आत्मकथा का रूप देकर तैयार किया जाता है। व्यक्ति का विस्तृत इतिहास अथवा व्यक्ति वृत्त इतिहास प्रायः साक्षात्कार, व्यक्तित्व परीक्षणों के प्रशासन तथा माप प्रविधियो के प्रयोग करने से प्राप्त किया जाता है। व्यक्ति वृत्त सामान्यतः व्यक्ति, उसके माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्य, अध्यापक तथा अन्य संबधियो से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त होता है।

इस विधि का प्रयोग सामान्यतः मनोवैज्ञानिकों तथा मनोचिकित्सकों द्वारा विभिन्न प्रकार की व्यवहार संबंधी व्याधियों के रोग के निदान एवं उपचार के लिए किया जाता है। इस विधि द्वारा व्यक्ति की समस्याओ अथवा व्यावहारात्मक व्याधियो के कारणो तथा कारको को पहचानने में सहायता मिलती है।

(द) *सर्वेक्षण विधि*

मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त एक अन्य विधि सर्वेक्षण विधि है। इस विधि का प्रयोग मनोवैज्ञानिक प्रायः तभी करते है जब उनकी रुचि लोगो के किसी समूह में पाये जाने वाले विशेष व्यवहार के ढग को जानने मे होती है। समूहो के व्यवहार का सर्वेक्षण करने

के लिए मनोवैज्ञानिक साक्षात्कार, प्रश्नावलियाँ तथा अभिवृत्ति माप आदि का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ किसी धुलाई के साबुन की बिक्री एकदम क्यो कम हो गई है, जानने के लिए कुछ विशिष्ट समूहों जैसे गृहणियों तथा धुलाई करने वालो का सर्वेक्षण किया जा सकता है। अतः *सर्वेक्षण एक विस्तृत एव विशाल अध्ययन है जिसकी रूपरेखा विशेष सूचना प्राप्त करने के लिए बनाई जाती है* । लोगों के सामाजिक एवं राजनीतिक विचारों को जानने एव मूल्याकन करने के लिए भी सर्वेक्षण किया जा सकता है।

मनोविज्ञान में प्रयुक्त परीक्षण एवं प्रविधियाँ

मनोविज्ञान मे प्रयुक्त कुछ लोकप्रिय परीक्षण एव प्रविधिया : (अ) मनोवैज्ञानिक परीक्षण, (ब) साक्षात्कार, तथा (स) प्रश्नावली हैं।

(अ) *मनोवैज्ञानिक परीक्षण*

परीक्षण प्रश्नो तथा समस्याओ का वैज्ञानिक तरीके से बनाया हुआ व्यवस्थित विन्यास होता है जिसको शाब्दिक ढंग से अथवा हाथो, उँगलियो, इत्यादि से कार्य करके हल करना पड़ता है । ऐसे ही कुछ परीक्षण हैं जो बुद्धि, व्यक्तित्व, भावनाओ, अभिप्रेरकों, अभिवृत्तियो आदि का मापन करते हैं। मानव व्यवहार की जानकारी और विशेष रूप से एक व्यक्ति के व्यवहार की दूसरे व्यक्ति के साथ तुलना करने के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षण अत्यन्त महत्वपूर्ण विधि है।

(ब) *साक्षात्कार*

साक्षात्कार एक प्रविधि है जिसका प्रयोग प्रयोज्य के साथ आमने-सामने परस्पर व्यवहार की स्थिति में उससे प्रश्न पूछकर, वर्णन तथा विस्तृत स्पष्टीकरण आदि द्वारा प्रत्यक्ष रूप से सूचना एकत्र करने के लिए किया जाता है । इस प्रविधि का प्रयोग नैदानिक स्थितियों में तथा विद्यालयो, उद्योगो एव बैंको मे लोगों के चयन के लिए किया जाता है।

(स) *प्रश्नावली*

प्रश्नावली साक्षात्कार से काफी मिलती-जुलती विधि है जिसका प्रयोग अधिक लोगो से जल्दी सूचना एकत्रित करने के लिए किया जाता है। *प्रश्नावली लिखित प्रश्नो का एक विन्यास है जिनका उत्तर उचित स्थान पर चिन्ह बनाकर दिया जा सकता है।* आज हमारे पास व्यक्तित्व, बुद्धि, दुश्चिता तथा भय की प्रतिक्रियाओ आदि के मापन के लिए क्रमबद्ध तरीके से रचित तथा प्रामाणिक प्रश्नावलियाँ हैं। साक्षात्कार तथा प्रश्नावलियाँ सदैव सभी कुछ प्रकट नहीं कर पातीं फिर भी यदि इन्हें ध्यानपूर्वक नियोजित ढंग से बनाकर प्रयोग मे लाया जाए तो यह अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

मनोविज्ञान के क्षेत्र

मनोविज्ञान को व्यवहार के विज्ञान के रूप मे पारिभाषित किया गया है। इसमे मानव जीवन के जन्म से मृत्यु तक के लगभग सभी व्यवहार आ जाते हैं। इस प्रकार मनोविज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। मनोविज्ञान के जिन कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों की विवेचना अगले पृष्ठो पर की गई है, वे हैं : (क) सामान्य, (ख) शरीरक्रिया, (ग) तुलनात्मक, (घ) शैक्षिक, (ङ) विकासात्मक, (च) औद्योगिक एवं सगठनात्मक, (छ) ज्ञानात्मक, (ज) असामान्य एवं नैदानिक, तथा (झ) सैन्य।

(क) *सामान्य मनोविज्ञान*

सामान्य मनोविज्ञान का सबध सभी जीवित प्राणियो के व्यवहार की मूलभूत विशेषताओ का अध्ययन करने से है। सामान्य मनोविज्ञान शोध प्रमाणो के आधार पर सिद्धातो एवं नियमो पर पहुँचता है। इस प्रकार सामान्य मनोविज्ञान मे सामान्य एवं मूलभूत प्रक्रियाओ जैसे अधिगम, स्मरण, चिन्तन, अभिप्रेरण आदि के विषय में जानकारी तथा उनको शासित करने वाले नियमो की व्याख्या की जाती है। इन प्रक्रियाओं के समझने से हमे मनोविज्ञान के अन्य क्षेत्रों को समझने मे सहायता मिलती है।

(ख) शरीर क्रिया मनोविज्ञान

व्यवहार का आधार शरीर है तथा मनोवैज्ञानिक व्यवहार के इस पक्ष का अध्ययन करने में अत्यन्त रुचि रखते हैं। शरीर क्रियात्मक पक्षों के अध्ययन के लिए मनोवैज्ञानिक प्राणीशास्त्री, शरीर शास्त्री, रसायन शास्त्री, चिकित्सक एवं अन्य जो भी शारीरिक प्रक्रियाओं के विस्तृत अध्ययन मे रत हैं, उनके साथ मिलकर कार्य करते हैं। मनोवैज्ञानिको ने मस्तिष्क, तंत्रिका तंत्र तथा अन्तःस्रावी ग्रंथियों पर अध्ययन किये हैं जो व्यवहार को समझने के लिए बहुत लाभप्रद हैं।

(ग) तुलनात्मक मनोविज्ञान

मनोवैज्ञानिक न केवल मानवो के बल्कि पशुओं के व्यवहार का भी अध्ययन करने में सदैव रुचि रखते हैं। डार्विन द्वारा प्रतिपादित जैविकीय क्रम विकास का सिद्धांत मनुष्यो एवं पशुओं के व्यवहार में समानताओं एव असमानताओं को समझने मे बहुत सहायक सिद्ध हुआ है। यह सिद्धात इस बात पर बल देता है कि जीवित प्राणी बहुत सरल जीवधारी से लेकर अत्यन्त जटिल जीवधारी मानव तक धीरे-धीरे विकसित हुए है। इसी निरन्तरता के कारण पशुओ के व्यवहार के बारे में ज्ञान मानव व्यवहार को समझने मे महत्वपूर्ण प्रतीत होता हैं। अतः पशुओ तथा मानव व्यवहार से सबधित खोज अध्ययन विभिन्न जीवों अथवा पशु-प्रजातियों जैसे कुत्तो, बिल्लियों, चूहो, बन्दरों, पक्षियो, मधुमक्खियों तथा चींटियों आदि का तुलनात्मक चित्रण जानने के लिए किया जाता है।

(घ) शैक्षिक मनोविज्ञान

मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के ज्ञान का प्रयोग शैक्षिक स्थितियों में विशेष रूप से विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रियाओं के अध्ययन एवं सुधार के लिए किया जाता है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षण में सहायक बहुत सी सामग्री जैसे दृश्य, श्रव्य एवं संचार सहायक सामग्री विकसित की है। उन्होने अधिगम, स्मृति, चिन्तन के मापन की प्रविधियाँ भी विकसित की हैं तथा इन प्रक्रियाओ को सुधारने के लिए प्रभावी विधियों का सुझाव दिया है। शिक्षा मनोवैज्ञानिको ने मन्द गति से सीखने वाले तथा मानसिक रूप से विकलांगों के लिए प्रभावी योजनाओं की रूपरेखा भी बनाई है। विभिन्न क्रियाओ में उत्कृष्ट बच्चों का भी पता लगाया जाता है ताकि उनकी शक्तियो को सही दिशा की ओर अग्रसर किया जा सके।

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य विद्यार्थियों के लिए सलाहकार तथा परामर्शदाता का है। वे प्रायः सस्था के सुचारू रूप से कार्य सचालन में विद्यार्थियों, अध्यापकों, माता-पिता तथा अन्य कर्मचारियों के लिए सलाहकार का कार्य करते हैं। वे विद्यार्थियो को आधुनिकतम व्यावसायिक सूचना देकर उनके व्यवसाय चयन मे भी सहायता करते हैं।

(ङ) विकासात्मक मनोविज्ञान

विकासात्मक मनोविज्ञान में व्यक्ति की शैशवावस्था से वृद्धावस्था तक के विकास की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। इस क्षेत्र का उद्देश्य गर्भावस्था से मृत्यु तक विकास की विभिन्न अवस्थाओं मे कैसे ज्ञानात्मक, सामाजिक, नैतिक तथा व्यक्तित्व के अन्य पक्ष परिवर्तित होते हैं इन सबका अध्ययन करना होता है। यह आनुवंशिकी, परिपक्वन, पारिवारिक, परिवेश, संस्थाएँ, सामाजिक-आर्थिक भेद जैसे कारको की भूमिका तथा व्यवहार के विकास पर उनके प्रभाव का भी अध्ययन करता है।

(च) औद्योगिक एवं सगठनात्मक मनोविज्ञान

उद्योग एक अन्य बड़ा क्षेत्र है जो मनोविज्ञान के सिद्धातो एवं नियमो का उपयोग करता है। बुद्धि, उपलब्धि, अभिक्षमता संबंधी अनेकों परीक्षणो का उद्योगों में चयन, नियुक्ति, तथा कर्मचारियो की सही कार्य स्थितियों में पदोन्नति के लिए प्रयोग किया जाता है। इसके साथ-साथ पुरस्कार, पुनर्बलन अन्तर्वैयक्तिक

सबधो तथा विज्ञापन आदि पर किए गए अध्ययनो का उपयोग उद्योगो में श्रमिको के लिए अनुकूल वातावरण का सृजन करने के लिए किया जाता है ताकि उनके .उत्पादनो की गुणवत्ता तथा मात्रा में सुधार हो सके।

मनोवैज्ञानिको ने सही प्रकार की मशीनो अथवा उपकरणो के निर्माण मे भी योगदान किया है जिससे कर्मचारी अनावश्यक क्रियाओ को हटाकर तनाव को कम से कम करके गलतियो एव उलझनो का निराकरण करे ताकि उनकी कार्य कुशलता बढ़े और वे अपनी पूर्ण क्षमता के अनुसार कार्य. कर सके। सगठनात्मक मनोविज्ञान औद्योगिक मनोविज्ञान का परिणाम है। इसमे न केवल उद्योगो को सगठनो के रूप मे देखा जाता है बल्कि अन्य दूसरे प्रकार के सगठन जैसे अस्पताल, विद्यालय तथा सरकारी कार्यालयो आदि का भी अध्ययन किया जाता है।

(छ) *ज्ञानात्मक मनोविज्ञान*

ज्ञानात्मक मनोविज्ञान मे प्रत्यक्षीकरण, अधिगम, चिन्तन, बुद्धि, स्मृति आदि मानसिक प्रक्रियाओ के महत्व पर बल दिया जाता है। ज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिको का दावा है कि व्यबहार की उद्दीपन-अनुक्रिया सबधो के रूप मे पूर्णत. व्याख्या नही की जा सकती है तथा मानव मस्तिष्क 'मानसिक प्रशासक' का कार्य करता है। यह सक्रियता से तुलना करके तथा निर्णय लेकर प्राप्त सूचना को नये आकारो तथा वर्गों मे ढालता है। इन मनोवैज्ञानिको का विश्वास है कि प्रत्येक उद्दीपन की प्रतिक्रिया मे निर्णय लेने की प्रक्रिया होती है। प्रत्येक निर्णय करने की प्रक्रिया मे दूसरे उद्दीपन से तुलना, समझ एव अर्थो की खोज तथा उन सिद्धातो को ढूँढ़ने मे पुराने ज्ञान का प्रयोग होता है जो चिन्तन एव समस्या समाधान मे सहायक हो।

(ज) *असामान्य तथा नैदानिक मनोविज्ञान*

मनोविज्ञान के एक क्षेत्र के रूप मे असामान्य मनोविज्ञान उस व्यवहार को समझने तथा व्याख्या करने से सबधित है जो सामान्य नही है। कुछ ऐसे भी व्यवहार के ढंग हैं जो देखने मे अजीब तथा अर्थहीन लगते है जैसे व्यक्ति का छिपकली, तिलचट्टा देखकर डरना अथवा लिफ्ट मे सफर करने या अकेले होने पर भयभीत होना। अनेक मनोवैज्ञानिक व्याधियो की भी असामान्य मनोविज्ञान व्याख्या करता है।

नैदानिक मनोविज्ञान एक अन्य क्षेत्र है जिसका असामान्य मनोविज्ञान से घनिष्ठ सबध है। इस क्षेत्र का सबध असामान्य व्यवहार के निदान एव उपचार से है। नैदानिक मनोवैज्ञानिक पहले समस्या का इतिहास तैयार करते हैं और बाद मे उन कारको का अध्ययन करते है जिनके कारण समस्या की निरन्तरता मे योगदान हुआ है। साथ ही सबंधित व्यक्ति को समस्या से उबारने के लिए उपयुक्त उपचार प्रक्रियाओ की कार्य-प्रणाली की योजना बनाई जाती है तथा उपचार किया जाता है।

(झ) *सैन्य मनोविज्ञान*

सैन्य सस्था मनोविज्ञान को अपनाने वाली महत्वपूर्ण सस्थाओ मे से एक है। अमरीका की सशस्त्र सेनाएँ इस क्षेत्र मे अग्रणी थी। जब से अमरीकी सशस्त्र सेनाओ ने आधुनिक मनोविज्ञान का प्रयोग प्रारम्भ किया तब से दुनिया के बहुत से देशों की सशस्त्र सेनाओं ने मनोविज्ञान की खोजो के परिणामो को विभिन्न प्रकार से सहायक पाया है। भारतवर्ष मे द्वितीय विश्व युद्ध से ही सशस्त्र सेनाएँ मनोविज्ञान का विस्तृत प्रयोग कर रही हैं। सुरक्षा सेनाओ के निम्न पहलुओ मे मनोविज्ञान का उपयोग प्रभावी सिद्ध हुआ है

(i) विभिन्न स्तरो पर कर्मचारियो के चयन मे।

(ii) शारीरिक, मानसिक तनाव को सहने, सुरक्षा, आक्रमण तथा बचाव इत्यादि की विभिन्न युद्ध नीतियो को सिखाने आदि के प्रशिक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा बनाने मे।

(iii) विशेष कार्यक्रमो जैसे नेता बनने के गुणों के

विकास करने के कार्यक्रमों को चलाना जिन्हे अधिकारी-जैसे-गुण कार्यक्रम की संज्ञा दी जाती है।

(iv) सेना तथा सेनाओं से बाहर मनोबल बनाये रखने के लिए प्रचार संगठित करना।

(v) प्रतिबल, अत्यन्त ऊँचाई वाली स्थितियो मे तथा सामुद्रिक दशाओं मे व्यवहार जैसी समस्याओ पर अनुसंधान करना।

मनोविज्ञान के उभरते हुए क्षेत्र

बदलते हुए संसार के साथ-साथ मनोविज्ञान भी निरन्तर विकास कर रहा है तथा उसमें शाखाएँ, उप-शाखाएँ जन्म ले रही हैं। परिवर्तन के परिणामस्वरूप नई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं तथा मनोवैज्ञानिक उन चुनौतियो का सामना करने के लिए अपने अध्ययन केन्द्र का विस्तार करते हैं। अतः वर्तमान समय की माँगो एवं समस्याओ को सुलझाने के प्रयत्न में कुछ नए क्षेत्र उभरकर आए है। उनमें से कुछ उभरते हुए क्षेत्र जिनकी व्याख्या यहाँ दी जा रही है, वे हैं : (क) स्वास्थ्य, (ख) पर्यावरण, (ग) समुदाय, (घ) सुधारात्मक, (ङ) वायु-अन्तरिक्ष, (च) खेल, तथा (छ) राजनीतिक।

(क) स्वास्थ्य मनोविज्ञान

इस क्षेत्र का सबध मनोवैज्ञानिक चरो के शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव से हैं। यह क्षेत्र ऐसी समस्याओं का परीक्षण करता है जैसे प्रतिबल जिससे कैंसर विकास तथा हृदय रोग की सभावना पर प्रभाव पड़ता हैं। अस्पताल के पर्यावरण, चिकित्सक-रोगी सबध आदि की समस्याओ पर भी यह ध्यान केन्द्रित करता है।

(ख) पर्यावरण मनोविज्ञान

इस क्षेत्र मे विश्लेषण किया जाता है कि किस प्रकार पर्यावरणीय कारको जैसे घर, विद्यालय, मौसम, स्थान, भीड़, शोरगुल तथा प्रदूषण आदि से व्यवहार प्रभावित होता है। अनेक अध्ययनो द्वारा सिद्ध किया जा चुका है कि पर्यावरण तथा व्यवहार मे घनिष्ठ सबध है।

(ग) सामुदायिक मनोविज्ञान

यह क्षेत्र सामुदायिक स्तर पर मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने का कार्य करता है। समुदाय का समग्र रूप में मूल्यांकन तथा सुधार करके मनोवैज्ञानिक समस्याओं को रोकने तथा सुलझाने का प्रयत्न सामुदायिक मनोवैज्ञानिक करते है। वे समुदाय की अनेको समस्याएँ जैसे विकलागो को रोजगार दिलाना, किशोर अपराधियों को पुनःस्थापित करना, तथा वृद्धो के कल्याण कार्यक्रम, इत्यादि कार्य करते हैं।

(घ) सुधारात्मक मनोविज्ञान

इस क्षेत्र के अन्तर्गत कानून एव व्यवस्था का उल्लघन करने वालो के व्यवहार को समझना तथा परिवर्तित करना है। यह सामाजिक तथा कानूनी रूप से विचलित लोगो जैसे अपराधियो एवं किशोर अपराधियों इत्यादि के सुधारात्मक व्यवहार से संबध रखता है।

(ङ) वायु-अतरिक्ष मनोविज्ञान

इस क्षेत्र का सबंध उन शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तनो के अध्ययन से है जो व्यक्तियों मे अन्तरिक्ष, अन्तरिक्षयान तथा बहुत ऊँचाई पर उड़ने वाले वायुयानो में रहने पर होते है। व्यक्ति जब एक विशेष ऊँचाई से ऊपर जाता है और लम्बे समय तक पृथ्वी से दूर रहता है तब वातावरणीय तथा अन्य परिस्थितियाँ बिल्कुल भिन्न होती है। ऐसी परिस्थितियो मे रहने से व्यवहार बहुत अधिक प्रभावित होता है। इसके परिणामस्वरूप व्यक्ति को पर्यावरण के साथ समायोजन सबधी समस्याओ का सामना करना पड़ता है।

(च) खेल मनोविज्ञान

इसका सबंध मानव जीवन मे खेल एव खेलकूद संबधी क्रियाओ से है। यह इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर

देने का प्रयत्न करता है कि खिलाड़ी क्यो अत्यत जोखिम भरी क्रियाएँ करते है तथा दर्शको एव खिलाड़ियों के अभिप्रेरक क्या हैं। ऐसा समझा जाता है कि खेल एव खेल व्यवहार से सामाजिक एवं ज्ञानात्मक कौशलों में सुधार होता है। इसे नैदानिक स्थितियो मे तथा अस्पतालों में उपचारात्मक प्रविधि के रूप मे भी प्रयोग किया जाता है।

(छ) *राजनीतिक मनोविज्ञान*

यह क्षेत्र लोगो के उन मसलो तथा समस्याओ से संबंधित है जो उनके और अधिकारियों के जो प्रायः राजनीतिक होते हैं, सबंधों के बारे मे है। यह ऐसी समस्याएँ जैसे विद्रोह, राजनीतिक नेतृत्व, प्रभावपूर्ण राजनीतिक दावपेच जिनसे राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय स्तरो पर शान्ति स्थापित हो सके, के अध्ययन का प्रयत्न करता है।

यह याद रखना चाहिए कि ये सभी क्षेत्र एक दूसरे से स्वतन्त्र नहीं हैं। मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रो का एक दूसरे से घनिष्ठ सबंध है तथा किसी भी क्षेत्र मे सिद्धात तथा अनुसधान, मनोविज्ञान के लिए महत्त्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ शिक्षा मनोवैज्ञानिको को यह जानना आवश्यक है कि बच्चो मे चिन्तन कैसे विकसित होता है, वे किस अवस्था में अमूर्त अधिगम सामग्री को समझने में समर्थ होगे (विकासात्मक मनोविज्ञान)। इस प्रकार विशेषज्ञ बनने के लिए मनोवैज्ञानिक को पहले मनोविज्ञान के सामान्य ज्ञान की पृष्ठभूमि जाननी होगी तथा उसके पश्चात् अपने निरीक्षण को पूर्ण बनाने के लिए दूसरे सबद्ध क्षेत्रो की सूचना भी प्राप्त करनी होगी।

सारांश

मनोविज्ञान वह विज्ञान है जो व्यवहार का क्रमबद्ध अध्ययन तथा व्याख्या करने का प्रयत्न करता है । अन्य विज्ञानो की भाँति मनोविज्ञान भी वस्तुनिष्ठता, क्रमबद्ध अध्ययन, प्रयोगात्मक नियत्रण तथा मात्रात्मकता पर बल देता है। व्यवहार मे शारीरिक , मानसिक , प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न क्रियाएँ सम्मिलित है। प्रयोगात्मक, निरीक्षण , व्यक्ति वृत्त तथा सर्वेक्षण कुछ महत्त्वपूर्ण विधियाँ हैं। विधियो मे प्रयुक्त कुछ लोकप्रिय परीक्षण एव प्रविधियाँ मनोविज्ञानिक परीक्षण, साक्षात्कार तथा प्रश्नावलियाँ हैं। मनोविज्ञान के ज्ञान तथा विशिष्टीकरण मे बढ़ोत्तरी के परिणामस्वरूप उसमे अनेक क्षेत्र सामान्य मनोविज्ञान, शरीरक्रिया मनोविज्ञान, तुलनात्मक मनोविज्ञान, शैक्षिक मनोविज्ञान, विकासात्मक विज्ञान, औद्योगिक एव संगठनात्मक मनोविज्ञान, ज्ञानात्मक मनोविज्ञान, असामान्य एव नैदानिक मनोविज्ञान, सैन्य मनोविज्ञान, स्वास्थ्य मनोविज्ञान, पर्यावरण मनोविज्ञान, सामुदायिक मनोविज्ञान , सुधारात्मक मनोविज्ञान, वायु-अतरिक्ष मनोविज्ञान, खेल मनोविज्ञान तथा राजनीतिक मनोविज्ञान आदि का विकास हुआ।

प्रश्न

1. मनोविज्ञान को पारिभाषित कीजिए तथा मनोविज्ञान की विज्ञान के रूप मे उत्पत्ति का वर्णन कीजिए।
2. सोदाहरण व्यवहार के प्रकारो का वर्णन कीजिए।
3. क्या मनोविज्ञान को विज्ञान माना जा सकता है? विवेचना कीजिए।
4. व्यवहार के अध्ययन मे प्रयोगात्मक विधि के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

5. उदाहरणो की सहायता से स्वतन्त्र, निर्भर एव मध्यवर्ती चरो की व्याख्या कीजिए।

6. निरीक्षण विधि तथा इसके प्रकारो की व्याख्या कीजिए।

7. मनोविज्ञान के महत्वपूर्ण क्षेत्रो का वर्णन कीजिए।

8 मनोविज्ञान के उभरते हुए क्षेत्रो का वर्णन कीजिए।

सही विकल्पो पर यह (√) निशान लगाइए :

9. मनोविज्ञान इसका अध्ययन है :

(अ) आत्मा, (ब) चेतना, (स) व्यवहार, (द) मानव व्यवहार

10. किसी अध्ययन के लिए मूलभूत विधि यह है :

(अ) निरीक्षण, (ब) सर्वेक्षण, (स) व्यक्ति वृत्त, (द) क्षेत्र अध्ययन

11. अस्पतालो, अधिकारियो, विद्यालयो आदि का मनोविज्ञान सबधी अध्ययन यह क्षेत्र करता है .

(अ) प्रायोगिक मनोविज्ञान, (ब) सगठनात्मक मनोविज्ञान, (स) सुधारात्मक मनोविज्ञान, (द) सामान्य मनोविज्ञान

12. यह मनोवैज्ञानिक उन व्यक्तियो पर विचार करते है जो कानून तथा व्यवस्था का उल्लघन करते हैं .

(अ) नैदानिक मनोवैज्ञानिक, (ब) शैक्षिक मनोवैज्ञानिक, (स) असामान्य मनोवैज्ञानिक, (द) सुधारात्मक मनोवैज्ञानिक

13. काव्य अधिगम पर दण्ड के प्रभाव के अध्ययन के प्रयोग मे यह स्वतन्त्र चर है :

(अ) दण्ड, (ब) काव्य, (स) अधिगम, (द) प्रयोग

एकक 2

व्यवहार का शरीर क्रियात्मक आधार

इस एकक को पढ़ने के पश्चात् विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- मस्तिष्क के मुख्य भाग तथा उनके कार्यों को जानें;
- सुषम्ना नाड़ी की रचना तथा कार्यों को समझें;
- स्वायत्त तंत्रिका तंत्र की रचना तथा कार्यों को जानें;
- संग्राहकों, प्रभावकों तथा संयोजकों के कार्यों का वर्णन करें;
- तंत्रिका तंत्र की आधारभूत इकाई तथा उसकी कार्य प्रणाली को समझें;
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों द्वारा स्रावित न्यासर्ग तथा व्यवहार पर उनके प्रभावों की व्याख्या करें।

प्रथम एकक में मनोविज्ञान की ऐसे विज्ञान के रूप मे व्याख्या की गई है जिसका सबध व्यवहार को समझने, नियत्रण करने तथा उसका पूर्वानुमान लगाने से है। यह तो स्पष्ट है कि व्यवहार मे क्रिया अवश्यमेव होती है तथा क्रिया मे मानव शरीर विभिन्न स्तरो पर कार्य करता है। शरीर कभी सम्पूर्ण शामिल होता है तो कभी आंशिक। जैसे दौड़ने की क्रिया मे पूरे शरीर का सबध स्पष्ट दिखाई देता है किन्तु गणित की किसी समस्या को हल करने में शारीरिक क्रिया काफी कम होती है। इस प्रकार व्यक्ति की प्रत्येक क्रिया में शरीर सम्मिलित होता है यद्यपि शारीरिक क्रिया का प्रकार भिन्न होता है।

मानव शरीर विभिन्न अगो तथा ऊतको जैसे मांसपेशियो, हड्डियो, तत्रिकाओ तथा ग्रन्थियो से बना है। प्रत्येक को विशिष्ट कार्य करना होता है जैसे मांसपेशियाँ गति मे सहायक होती हैं तथा सकुचन एवं शिथिलन द्वारा क्रिया करती हैं। हड्डियाँ स्थिरता तथा आकार देती हैं। ग्रन्थियाँ भोजन को पचाने तथा शारीरिक शक्ति के विनियमन एव रसायनों के स्राव जो विभिन्न स्थितियो मे प्राणी को प्रतिक्रिया करने योग्य बनाते हैं, में विशेष भूमिका अदा करती हैं। अतः मानव शरीर में बहुत-सी विशिष्ट क्रियात्मक इकाइयाँ है जो समन्वित रूप से कार्य कर रही हैं।

प्राणी की क्रिया

अब देखें कि कैसे एक प्राणी व्यवहार अथवा क्रिया करता है। कोई भी क्रिया अथवा व्यवहार तब शुरू होता है जब कोई उद्दीपन इसे उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए कल्पना कीजिए, एक माँ सो रही है। एकाएक वह अपने बच्चे का रोना सुनती है।

बच्चे का रोना माँ को परेशान कर देता है। दूसरे शब्दो में रोना एक श्रवण उद्दीपन की तरह काम करता है। माँ रोना सुनती है। यह सदेश या ध्वनि उद्दीपन ग्रहण किया जाता है तथा उस पर आगे कार्यवाही होती है। यदि बच्चा रोना बन्द कर देता है तो माँ सोती रहती है। किन्तु यदि बच्चा लगातार रोता रहता है तो वह निरन्तर उद्दीपन माँ को जगा देता है। हम यहाँ तीन विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ तीन विभिन्न अवस्थाओ मे देखते हैं : (i) बालक का रोना ग्रहीत अथवा संवेदन किया गया, (ii) उद्दीपन का संदेश संचरित हुआ और उस पर कार्यवाही हुई, तथा (iii) यह एक प्रतिक्रिया या प्रभाव हुआ। यह इसलिए संभव है क्योकि मानव शरीर में इनको करने के लिए विशिष्ट अंग हैं। इन अंगो तथा इनके विशेष कार्यों के बारे मे विस्तृत विवेचना निम्नलिखित है।

तंत्रिका तंत्र

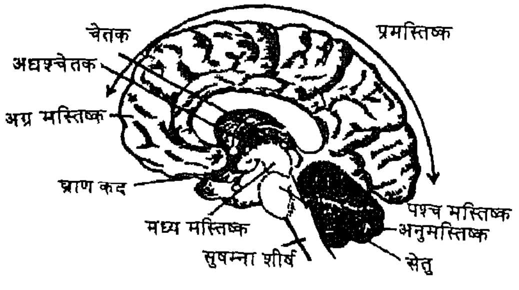
तंत्रिका तंत्र दो मुख्य तंत्रो मे विभक्त है जिन्हे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र तथा परिधीय तंत्र कहा जाता है।

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

केन्द्रीय तन्त्रिका तत्र मे मस्तिष्क तथा सुषम्ना नाड़ी आते हैं।

मस्तिष्क

केन्द्रीय तन्त्रिका तत्र के महत्वपूर्ण अगो मे से एक अग मस्तिष्क है। मस्तिष्क के विभिन्न भागो के प्रभावी तथा कुशल कार्य सम्पादन के कारण ही व्यवहार सभव होता है। वे भाग हैं—प्रमस्तिष्क, अनुमस्तिष्क, अधश्चेतक, चेतक तथा सुषम्नाशीर्ष।



चित्र 2.1 मानव मस्तिष्क के महत्वपूर्ण भाग

मानव मस्तिष्क अपनी प्रत्यक्षीकरण, समाकलन, संचयन तथा सूचना के प्रत्यानयन की योग्यता के कारण जटिल तथा अद्वितीय अग माना जाता है। इसके मुख्य उपविभाजन : (i) पश्चमस्तिष्क, (ii) मध्य मस्तिष्क, तथा (iii) अग्रमस्तिष्क हैं।

(i) *पश्चमस्तिष्क*

स्तनीय प्राणियो में पश्चमस्तिष्क दूसरे प्राणियों की अपेक्षा अधिक जटिल होता है। इसमे (अ) सुषम्नाशीर्ष (ब) सेतु, तथा (स) अनुमस्तिष्क आते हैं।

(अ) *सुषम्ना शीर्ष* : मस्तिष्क स्तभ का सबसे नीचे का भाग है। इसका मुख्य कार्य शरीर की प्राणभूत प्रक्रियाओ जैसे श्वसन क्रिया, हृदय की गति, पाचन क्रिया इत्यादि का समन्वय करना है। साथ ही यह स्वायत्त तन्त्रिका तत्र की क्रियाओ का भी नियंत्रण करता है जो निष्क्रिय तथा सकटकालीन कार्यों से सबंधित हैं।

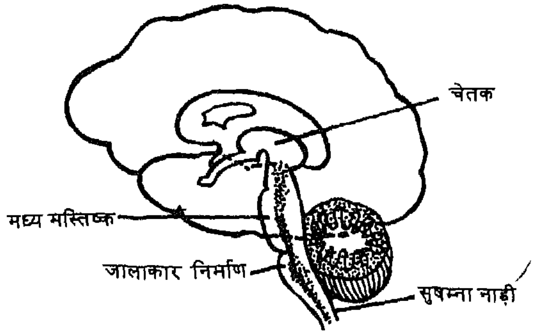
(ब) *सेतु* : सेतु पश्चमस्तिष्क का दूसरा भाग है। यह श्रवण प्रणाली के लिए प्रसारण केन्द्र का कार्य करता है। इसमे केन्द्रक होते है जो श्वसन गतियों तथा मुखमुद्राओ को प्रभावित करते हैं।

(स) *अनुमस्तिष्क* : अनुमस्तिष्क एक बेहद उच्चस्तरीय लहरदार संरचना है जो प्रायः मुट्ठी के आकार का होता है। मस्तिष्क का यह भाग कंचे खेलने से जूते के फीते बाँधने तक की सभी बारीक पेशीय गतियों का विनियमन करता है। साथ ही अनुमस्तिष्क का शरीर का सतुलन बनाए रखने, आसन, मासपेशी, सकुचन इत्यादि से सीधा सबंध है। सभी गति परिवहन इसके नियत्रण मे हैं। यदि अनुमस्तिष्क को निकाल दिया जाता है अथवा उसे कोई हानि पहुँचती है या तंत्रिकामार्ग क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तो व्यक्ति बारीक गत्यात्मक क्रियाओ पर अपना नियत्रण खो बैठता है। अधिकाश पशु तथा मानव अनुमस्तिष्क के निकाल देने के बाद फूहड़ तथा असमन्वित हो जाते हैं। वृद्धों का गर्दन तथा हाथ काँपना कई बार अनुमस्तिष्क की क्षीणता के परिणामस्वरूप होता है।

(ii) *मध्यमस्तिष्क*

मध्य मस्तिष्क मुख्यतः एक प्रसारण केन्द्र है जो पश्चमस्तिष्क तथा अग्रमस्तिष्क के बीच सबंध बनाता है। मध्यमस्तिष्क के ऊपरी भाग की छत की दृश्य तथा श्रवण क्रियाओ में विशेष भूमिका होती है। मध्यमस्तिष्क के जिस भाग मे कोशिकाओ का घना जाल होता है। उसे जालाकार सक्रियण तत्र (जा स तं) कहते हैं। ये कोशिकाएँ पश्चमस्तिष्क मे उत्पन्न होती हैं तथा इनका विस्तार अधश्चेतक तथा चेतक तक होता है। वे आड़ी-तिरछी अथवा मस्तिष्क के बहुत बड़े भाग मे ऊपर तथा नीचे बिछे हुए जालीदार विन्यास जैसी दिखाई देती हैं।

जा स तं के आरोही तंतु मस्तिष्क के उच्च केन्द्रों को सक्रिय करके जीवधारी मे सतर्कता की दशा का विनियमन करते हैं।

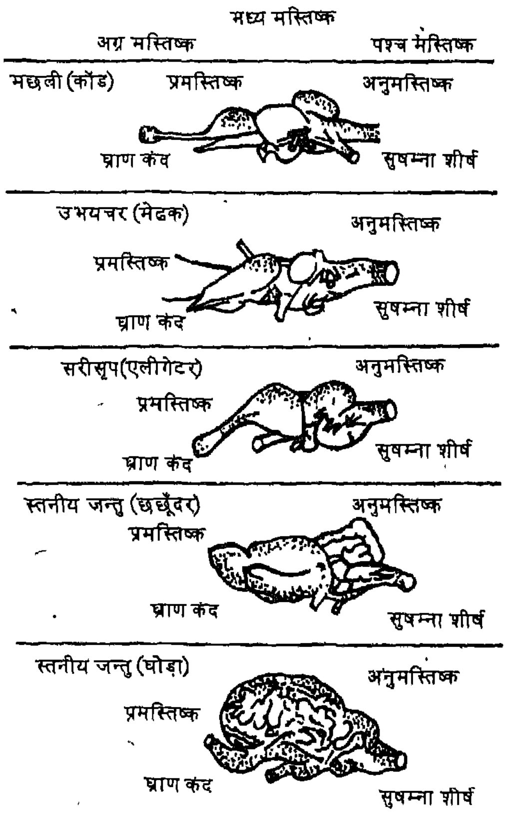


चित्र 2.2 मानव मस्तिष्क में जालीदार निर्माण की अवस्थिति

हमारे कानों मे बहुत से श्रवण संकेत पहुँचते हैं तथा हमारे दृष्टिपटल पर बहुत से दृश्य उद्दीपन पड़ते हैं किन्तु हम उन सभी उद्दीपनो से अवगत नही होते। किसी क्षण मे केवल एक या दो की तरफ ध्यान जाता है तथा उनके लिए अनुक्रिया की जाती है। यहाँ पर छानने की प्रक्रिया होती है जिसे सवेदन द्वारी कहा जाता है। सवेदन द्वारी का तात्पर्य है किसी एक प्रकार की ज्ञानेन्द्रिय संवेदना का कम तीव्र अथवा कम महत्वपूर्ण होने के कारण उसका रोका जाना। इसके साथ ही जा स त ज्ञानेन्द्रियो को किसी प्रकार का पुनर्निवेशन देता है क्योकि यह काफी समय तक कम महत्व के सदेश को रोक सकने मे समर्थ होता है जब तक कि मस्तिष्क उस-पर कार्यवाही न करे। जा स तं के अवरोही तन्तु उस वृहत् प्रणाली के भाग हैं जो गति में मध्यस्थता करते हैं। मध्यमस्तिष्क सिर तथा गर्दन की गतियो जो सवेदात्मक उद्दीपन से प्रेरित हो जाती हैं, उनको नियमित करने मे भूमिका अदा करता है।

(iii) *अग्रमस्तिष्क*

स्तनधारियो के अग्रमस्तिष्क में दूसरी रीढ़धारी प्रजातियों की अपेक्षा आकार, आकृति, सरचना तथा



चित्र 2.3 मछली से लेकर स्तनधारी जीवो मे मस्तिष्क का विकास (पश्चमस्तिष्क, मध्यमस्तिष्क तथा अग्रमस्तिष्क के महत्वपूर्ण विभेद देखे जा सकते हैं)।

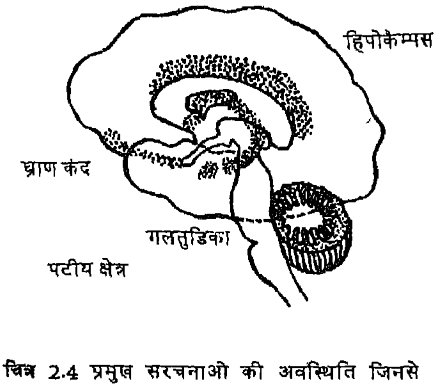
कार्यों की जटिलता मे बहुत परिवर्तन हुए हैं। मानवो में मस्तिष्क के दूसरे भागो की अपेक्षा यह अधिक बड़ा तथा जटिल है।

यह देखा जा सकता है कि विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत मस्तिष्क के प्रमस्तिष्कीय भागो का सबसे अधिक विकास हुआ है। मछली से मनुष्य तक सुषम्ना नाड़ी में बहुत कम परिवर्तन हुआ है लेकिन मस्तिष्क मे पर्याप्त परिवर्तन हुए है। प्रमस्तिष्कीय वल्कुट ने केवल स्तनधारियों में ही प्रमुखता पाई है। इस सबंध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि जब-जब नये आकारों का विकास हुआ पुराने लुप्त नही हुए तथा परिणाम स्वरूप वे आकार तथा सयोजन जो आदिम पशुओं जैसे मछली मे पाये जाते हैं, मानव मे अभी भी पाये जाते हैं। अग्रमस्तिष्क के मुख्य भाग हैं . (अ) चेतक, (ब) अधश्चेतक, (स) उपवल्कुटीय तत्र, तथा (द) प्रमस्तिष्क।

(अ) *चेतक* : अधश्चेतक के बिल्कुल ऊपर चेतक अवस्थित है। यह समूहो में विभक्त भूरे रंग के पदार्थ का पिंड है। चेतक एक प्रसारण केन्द्र है जो दूसरे केन्द्रों को प्रायः सभी संवेदी संदेश पहुँचाता है। स्पर्शेन्द्रिय को छोड़कर सभी ज्ञानेन्द्रियो के मार्ग चेतक से संयोजित है। निम्न श्रेणी के जीवधारियो मे चेतक प्रधान माना जाता है जैसे मेढ़क मे दृश्य तथा श्रव्य शक्ति बहुत विकसित होती है। इस प्रजाति मे चेतक सवेदी सूचना का प्रमुख समन्वयक माना जाता है। किन्तु स्तनधारी विशेषतया मानवो मे प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्धों ने इनमें से कुछ कार्यों को ले लिया है।

(ब) *अधश्चेतक* · अधश्चेतक चेतक तथा मध्यमस्तिष्क के बीच सन्धि स्थल बनाता है। यह जीवधारियो के प्राणभूत कार्यों के अतिजीवन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अधश्चेतक खाने, पीने, यौन व्यवहार तथा सवेगात्मक प्रतिक्रियाओ जैसे भय, क्रोध इत्यादि क्रियाओ को विनियमित करता है। मस्तिष्क के इस भाग मे बहुत से तन्त्रिका कोशिका अथवा केन्द्रक होते हैं जो उत्तेजना अथवा प्रावरोध के केन्द्र के रूप में कार्य करते हैं। क्षुधा, तृप्ति, प्यास तथा यौन अतर्नोद अधश्चेतक केन्द्रो को उत्तेजित करके उत्पन्न की जा सकती हैं। इन कार्यों के साथ साथ अधश्चेतक शरीर के आन्तरिक परिवेश को विनियमित तथा नियन्त्रित करता है। इसे समस्थिति कहते हैं। इसमे हृदय गति, रक्तचाप, तापमान इत्यादि आते हैं। अधश्चेतक का एक अन्त.स्रावी पीयूष ग्रन्थि से अन्तरंग सबध भी होता है। ये संबंध तन्त्रिका क्रिया के साथ साथ वाहिका क्रिया वाले भी होते है। अधश्चेतक मे तन्त्रिका स्रावक कोशिकाएँ होती हैं जो न्यूरोपेप्टाइड्स तथा मुक्त न्यासर्ग नामक रासायनिक पदार्थों को स्रावित करती हैं। मुक्तन्यासर्ग एडिनोहापोफाइसिस के विशेष कोशिका प्रकारो को उत्तेजित करता है जो बदले मे सश्लिष्ट हो जाते हैं तथा विभिन्न प्रकार के न्यासर्ग छोड़ते हैं।

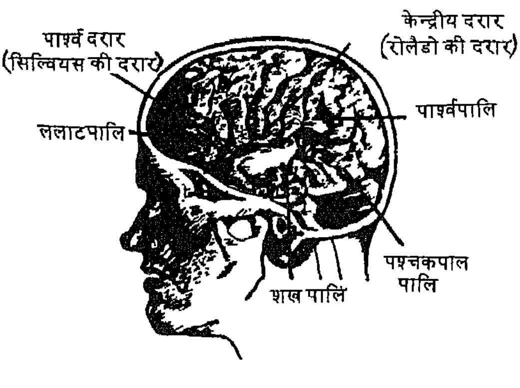
(स) *उपवल्कुटीय तंत्र* . यह प्रणाली आपस मे जुड़ी हुई संरचनाओ का समूह है जो उत्पत्ति में वल्कुटीय तथा अधो वल्कुटीय होती है। ये विभिन्न सवेगात्मक अवस्थाओ से सबधित हैं। ललाट पालि तथा शखपालि के भाग भी उपवल्कुटीय तंत्र मे होते हैं।



चित्र 2.4 प्रमुख सरचनाओ की अवस्थिति जिनसे उपवल्कुटीय तत्र बना है

उपवल्कुटीय तत्र खाने पीने इत्यादि जैसे आन्तरागी कार्य जो प्रकृति से स्वपरिरक्षक हैं तथा सवेगात्मक दशाओ विशेषतया यौन से सबधित है। पूरी प्रणाली एक इकाई की भाँति कार्य करती है। यह सामान्य तथा असामान्य सवेगात्मक व्यवहार मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(द) *प्रमस्तिष्क* : अग्रमस्तिष्क का एक मुख्य भाग प्रमस्तिष्क है। यह दो गोलार्द्धों जिन्हें दाहिना तथा वाम प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध कहा जाता है, मे बँटा है। यह प्रमस्तिष्कीय वल्कुट जो भूरे द्रव्य की परत और श्वेत द्रव्य महासयोजक पिड से जुडी है, से बना है। महासयोजक पिड तन्तुमय पथ हैं जो दोनो गोलार्द्धों को सयोजित करता है। चूँकि वल्कुट मस्तिष्क की उद्विकसन दशा का अन्तिम भाग था अत यह मुनष्यों तथा दूसरे आदिम प्राणियों में बहुत बडा है। वल्कुट मे बहुत सी दरारें अथवा खाँचे तथा सवलन हैं जिनसे प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्धों की सतह बनी है।



चित्र 2.5 प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध मे पालियो तथा दरारो की अवस्थिति

दोनों प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध एक बड़ी दरार द्वारा अलग होते है जो आगे से पीछे तक जाती है तथा जिसे *लम्बाकार दरार* कहते है। पुन : प्रत्येक गोलार्द्ध को चार पालियो मे बाँटा गया है: (अ) ललाटपालि, (ब) पार्श्वपालि, (स) शखपालि, तथा (द) पश्चकपाल पालि। इन चारो पालियो के कार्यों का वर्णन निम्नलिखित हैं।

(अ) *ललाटपालि* · केन्द्रीय दरार के आगे की ओर ललाटपालि स्थित है। इस पालि के प्रमुख कार्य निम्न प्रकार हैं ·

(i) यह खाना, बोलना तथा चलना जैसी विभिन्न क्रियाओ तथा ऐच्छिक गतिविधियो को प्रारम्भ करती, बनाये रखती तथा उनका नियत्रण करती है।

(ii) वाम ललाटपालि शरीर के दाहिने पक्ष के कार्य सम्पादन से सबधित है तथा दाईं ललाटपालि वाम पक्ष से। इसे प्रतिपक्षीय विनियमन भी कहा जाता है।

(iii) यह मानसिक क्रियाएँ जैसे चिन्तन, अवधान, स्मृति, अधिगम, तर्क इत्यादि को विनियमित करती है।

(iv) यह मनोगत्यात्मक क्रियाएँ जैसे कार चलाना, चित्रकारी बनाना, इत्यादि के उचित समन्वय को सुगम बनाती है।

(v) यह स्वायत्त सवेगात्मक प्रतिक्रियाओ को प्रावरोधित तथा नियत्रित करती है। ललाटपालि मे क्षतिग्रस्त हुए लोग व्यक्तित्व में स्पष्ट परिवर्तन दिखाते है। उन लोगो को प्रायः अग्रिम योजना न कर पाने वाले, अविश्वसनीय, बेढंगा तथा आवेगी कहा जाता है। इससे उनके वाणी के और बौद्धिक कार्य भी असंगत हो सकते हैं।

(ब) *पार्श्वपालि* केन्द्रीय दरार के पीछे मस्तिष्क के बाईं तथा दाहिनी ओर पार्श्वपालि स्थित है। इसके मुख्य कार्य हैं :

(i) सवेदी आगत तथा गत्यात्मक निर्गत का समन्वय

(ii) वाणी

(iii) दृश्य तथा श्रव्य उद्दीपनो का शारीरिक उद्दीपनो से युग्मन तथा इनका अनुस्थापन

(iv) त्रि-आयामीय स्तर पर उद्दीपनों को समझना तथा समन्वित करना।

इस पालि के क्षति होने से संवेदनो की क्षीणता, देशीय स्थिति भ्रान्ति, दाईं तथा बाईं की स्थिति भ्रान्ति तथा दृश्य क्षेत्र में दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

(स) *शंखपालि* : कानों के ऊपर शंखपालियाँ स्थित हैं। उनके कुछ कार्य इस प्रकार हैं :

(i) श्रवण ग्राह्यता

(ii) सांकेतिक ध्वनियो अथवा शब्दो की स्मृति

(iii) दृश्य तथा शाब्दिक स्मृति का भण्डारण।

शंखपालि की क्षति के परिणामस्वरूप स्मृति ह्रास, शंख अनुक्रम, वाणी तथा मनोवैज्ञानिक अन्धापन तक भी हो सकता है। शखपालि के क्षतिग्रस्त भाग को शल्य क्रिया द्वारा निकाल देने पर मिर्गी के रोगियो में दौरों की आवृत्ति कम हो जाती है।

(द) *पश्चकपालपालि* : इस पालि के मुख्य कार्य इस प्रकार हैं :

(i) आँखों की उत्तेजनाएँ ग्रहण करना

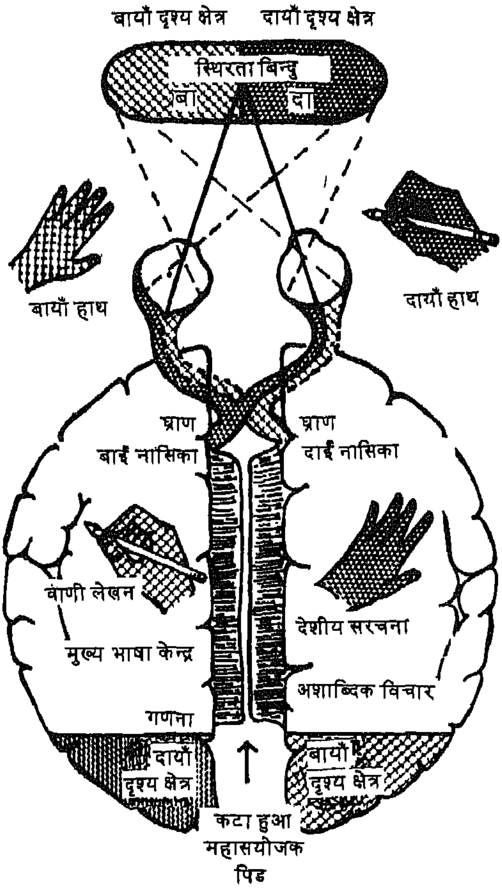
(ii) दृश्य उत्तेजनाओं की व्याख्या करना

(iii) दृश्य उद्दीपनों की स्मृति तथा रंग, दृश्य अनुस्थापन।

इस पालि को क्षति पहुँचने से दृश्य विभेदीकरण में क्षीणता तथा रंग, आकृति, आकार इत्यादि पहचानने की योग्यता में कमी आ जाती है। मनुष्यो मे इन क्षेत्रों की क्षति होने से आँखें शारीरिक रूप से बिल्कुल ठीक रहने पर भी पूर्ण अथवा आशिक अन्धापन हो सकता है। मानव व्यवहार इन सभी पालियो के समाकलित तथा समन्वित रूप से कार्य करने के कारण ही सम्पन्न हो पाता है।

प्रमस्तिष्कीय प्रभुत्व

हमने यह देखा कि मस्तिष्क एक अद्वितीय सगठित संरचना है। यह बात स्मरणीय है कि दोनो गोलार्द्धों मे से प्रत्येक गोलार्द्ध शरीर के विपरीत पक्ष से सबंध रखता है। उदाहरण के लिए दाहिनी ओर के वल्कुट को क्षति के परिणामस्वरूप बाईं आँख का अन्धापन हो जाता है। उसी प्रकार वाम-वल्कुट के गत्यात्मक क्षेत्र को उत्तेजित करने से शरीर के दाहिने पक्ष में गति उत्पन्न होती है। किन्तु कुछ कार्यों का संबंध केवल एक ही गोलार्द्ध से होता है जैसे कि वाणी के मामले में। अध्ययनों द्वारा ज्ञात हुआ है कि अधिकतर लोगों में भाषायी कार्यों में वाम गोलार्द्ध ही प्रमुख गोलार्द्ध होता है।



चित्र 2.6 बाएँ तथा दाएँ हाथ की प्रधानता का स्पष्टीकरण

चित्र 2.6 में दिखाया गया है कि बाईं ओर के उद्दीपन दाहिने प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध को तथा दाईं ओर के उद्दीपन बाएँ गोलार्द्ध को जाते हैं। बाएँ और दाएँ नासारन्ध्रों (नथुनो) के उद्दीपन गोलार्द्धों के उसी ओर आते हैं। अधिकतर व्यक्तियों में वाणी तथा लेखन पर नियंत्रण के लिए बायाँ गोलार्द्ध प्रमुख होता है। देशीय रचना और अशाब्दिक चिंतन दाईं ओर से होते हैं।

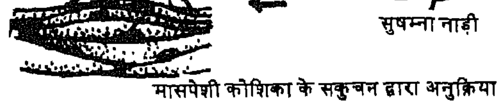
गोलार्द्धीय प्रभुत्व का हाथ से काम करने की प्रधानता (शरीर के दाएँ तथा बाएँ पक्ष की कार्यक्षमता) से संबंध माना जाता है। दाएँ हाथ से काम करने वाले पुरुषो तथा स्त्रियो मे से 90 प्रतिशत मे वाणी मस्तिष्क के बाएँ गोलार्द्ध से नियत्रित होती है। बाएँ हाथ से काम करने वालों में से दो तिहाई लोगों की वाणी दाहिने गोलार्द्ध के द्वारा नियन्त्रित होती है। कुछ लोगों में भाषा के लिए कोई भी गोलार्द्ध प्रमुख नहीं होता। जीवन के प्रारम्भिक वर्षो मे मस्तिष्क, विशेषकर बाएँ गोलार्द्ध की क्षति होने पर भाषा कार्य की पार्श्वता संपूर्ति दाहिना गोलार्द्ध कर लेता है। तात्पर्य यह है कि यद्यपि वाणी अथवा कोई अन्य कार्य एक गोलार्द्ध में अवस्थित हैं किन्तु जीवन के प्रारंभिक वर्षो मे दूसरा गोलार्द्ध उसे ले सकता है क्योंकि इस अवस्था मे मस्तिष्क लचीला होता है।

क्षतिग्रस्त मस्तिष्क वाले व्यक्तियो पर किये गये अध्ययनों से मस्तिष्क में भाषा तथा इससे सबधित क्रियाओं के बारे में रोचक सूचना प्राप्त हुई है। बहुत से अध्ययनों से ऐसे प्रमाण मिले हैं कि लोगों के मस्तिष्क के किन्ही विशेष क्षेत्रो मे क्षति होने से वे पढ तो सकते हैं किन्तु लिख नहीं सकते या इसका उलटा होता है। जिनको पक्षाघात (अधरंग) होता है उनमें ऐसा देखने में आता है। इससे यह संकेत मिलता है कि मस्तिष्क में पढ़ने तथा लिखने की क्रियाएँ अलग-अलग हैं।

महा संयोजक पिंड द्वारा इन दोनों गोलार्द्धों का युग्मन संभव होता है। मस्तिष्क का यह भाग विभिन्न क्रियाओं के समन्वय में निर्णायक भूमिका निभाता है। उदाहरणार्थ जैसा हम जानते हैं बायाँ गोलार्द्ध वाणी उत्पन्न कर सकता है तथा दायाँ गोलार्द्ध, चाँद, तारे तथा बादलो आदि को दिखा सकता है फिर भी उस अनुभव के वर्णन के लिए दोनो को मिलकर काम करना होगा।

प्रतिवर्त

व्यवहार का प्रारम्भिक प्रकार साधारण प्रतिवर्त क्रिया है। *प्रतिवर्त क्रिया उद्दीपन के प्रति एक सरल, जन्मजात तथा अनैच्छिक अनुक्रिया है*। उदाहरणार्थ जब कोई तेज प्रकाश या हवा का झोका आँख पर पड़ता है तो हम अपनी पलकें बन्द कर लेते हैं। इसी प्रकार जब घुटने के एक विशेष स्नायु पर चोट दी जाती है तो उसे झटका सा लगता है तथा पैर आगे की ओर लत्ती मारता है। इसे घुटना झटका प्रतिवर्त कहते हैं। इस प्रकार की क्रियाओं में केवल संवेदन तथा गत्यात्मक कोशिकाओं का ही संबंध होता है। किन्तु कुछ प्रतिवर्तों का सबंध संयोजकों से भी होता है क्योंकि वे सुषम्ना नाड़ी (मेरुरज्जु) से जुड़े होते हैं और उन्हें मेरु प्रतिवर्त कहा जाता है। क्रिया का यह साधारण परिभ्रमण प्रतिवर्त-चाप कहलाता है।



चित्र 2.7 सानवाही कोशिकाएँ सुषम्ना नाड़ी तथा मस्तिष्क की ओर संकेत ले जाती हैं तथा उपवाही कोशिकाएँ मांसपेशी तथा ग्रन्थियों की ओर संकेत ले जाती है।

सुषम्ना नाड़ी

सुषम्ना नाड़ी एक लम्बी रस्सी की भाँति तंत्रिका तन्तु का संग्रह है जो शरीर की लम्बाई के साथ चलती है। वह मस्तिष्क के पीछे से प्रारम्भ होती है तथा पूरी पीठ की रीढ में नीचे तक होती है। सुषम्ना नाडी के दो मुख्य कार्य है .

(i) यह प्रतिवर्तो के लिए संयोजक तत्र देती है अथवा प्रथम स्तर के युग्मन मे सहायता करती है।

(ii) यह तत्रिका तन्तु के आरोही तथा अवरोही पथो द्वारा मस्तिष्क के उच्च केन्द्रो को सदेश देती है तथा वहाँ से सदेश लाती है।

सुषम्ना नाडी की भूमिका एक बड़े मोटे तन्त्रिका तन्तुओ के तारो से बने हुए रज्जु जैसी है जो केन्द्रीय ग्रहण तथा प्रेषण केन्द्र से असख्य सूचनाओं का आदान प्रदान करती है। उदाहरणार्थ मान लीजिए आप एक जलती हुई मोमबत्ती लेकर जा रहे है और अकस्मात् मोम की कुछ बूँदे आपकी त्वचा अथवा हाथ पर गिर जाती हैं तो सबसे पहले आप या तो अपना हाथ हटा लेगे या यहाँ तक कि मोमबत्ती गिरा देगे। यहाँ हम प्रत्याहार की प्रतिवर्त क्रिया देखते हैं। लेकिन बाद में आप यह अनुभव करेगे कि यह तो सिर्फ मोम की कुछ बूँदे थी जिन्हे आप जरा सा खुरचकर पोछ सकते थे और कोई दवा लगा सकते थे। प्रत्याहार के पहले उदाहरण में हमे केवल सयोजक तत्र का कार्य दिखता है जैसे दर्द का सवेदन तथा प्रभावक अगों को इसका प्रेषण जिसके परिणामस्वरूप प्रत्याहार प्रतिक्रिया हुई। ध्यानपूर्वक मोम को खुरचना, पोछना, दवा लगाने की योजना बनाना आदि एक समाकलित व्यवहार है जो केन्द्रीय तत्रिका तत्र के विभिन्न भागो के बीच सूचनाओं के आदान-प्रदान के कारण सभव हुआ।

सुषम्ना नाडी के केन्द्र मे स्थित तितली के आकार का भूरे रंग के द्रव्य के पिड मे साहचर्य तत्रिका तथा दूसरी कोशिकाएँ होती है। भूरे द्रव्य को घेरता सुषम्ना नाड़ी का श्वेत द्रव्य होता है जो आरोही तथा अवरोही तंत्रिका पथो से बना होता है। ये पथ दिखने मे सफेद रग के होते है क्योकि उनके अन्दर के तन्तु धवल मज्जाच्छद से ढके होते है। चूँकि भूरे द्रव्य मे प्रतिवर्त के लिए आवश्यक साहचर्य तत्रिकाएँ होती हैं यह प्रथम स्तर के युग्मन से सबधित होता है। श्वेत द्रव्य मे आरोही तथा अवरोही तन्तु होते है जो युग्मन के उच्च केन्द्रो अर्थात् मस्तिष्क से उत्तेजनाओं का प्रेषण करते है और इस प्रकार यह सुषम्ना नाड़ी का दूसरा उद्देश्य सिद्ध करता है।

फिर भी मानव की सभी क्रियाएँ प्रतिवर्त क्रियाओं पर आधारित नही होती। और भी अधिक जटिल क्रियाएँ होती हैं जिनकी प्रतिक्रिया मे अधिक समय लगता है तथा वे बहुत कुछ अधिगम अनुभवों पर निर्भर करती हैं। कुछ प्रतिक्रियाओ मे समन्वय की अधिक मात्रा होती है क्योकि ये सुषम्ना नाड़ी के स्तर पर घटित न होकर मस्तिष्क के स्तर पर होती है।

सग्राहक, प्रभावक तथा सयोजक तंत्रिकाएँ

(अ) *सग्राहक · सग्राहक वे सरचनाएँ हैं जो या तो बाह्य परिवेश अथवा आन्तरिक परिवेश अर्थात् शरीर से सूचना प्राप्त करते हैं।* प्रभावक ऊतक जैसे मासपेशियाँ, ग्रन्थियाँ तथा वर्णक कोशिकाएँ इनको अनुक्रिया देती है। अनुक्रिया के प्रकटन मे (i) सदेश प्राप्ति (ii) सदेश प्रेषण, (iii) उच्च केन्द्रों के स्तर पर युग्मन, तथा (iv) अनुक्रिया उत्पन्न करने के लिए प्रभावको की उत्तेजना सम्मिलित है। सग्राहको का कार्य वाह्य जगत और कभी कभी शरीर के भीतर से उत्तेजना तथा प्रभाव ग्रहण करना है। ज्ञानेन्द्रियॉ जैसे कान, ऑखे, नाक, जिह्वा तथा त्वचा विशेषतया ध्वनि, प्रकाश, घ्राण, स्वाद, तापमान, स्पर्श तथा दबाव इत्यादि सवेदी सकेत के प्रत्यक्षीकरण करने के लिए बने है। कुछ तत्रिका अन्तःस्रावी यत्र होते हैं जो न केवल परिवेश के उद्दीपनो मे परिवर्तन के प्रति

अनुक्रिया करते हैं बल्कि शरीर के बदलते हुए आन्तरिक परिवेश के प्रति भी अनुक्रिया करते हैं।

(ब) *प्रभावक : प्रभावक वे सरचनाएँ हैं जो शरीर को सग्राहको द्वारा प्राप्त सदेशो के प्रति अनुक्रिया करने के योग्य बनाते है।* प्रभावक जैसे मासपेशियाँ तथा ग्रन्थियाँ अपवाही अर्थात् गत्यात्मक कोशिकाओ द्वारा भेजी गई उत्तेजनाओ के प्रति अनुक्रिया करते है। इस प्रकार जीवधारी की अनुक्रिया सग्राहको के सक्रियण पर प्रारंभ होती है तथा प्रभावकों की अनुक्रिया पर समाप्त होती है। उदाहरण के लिए डोरीदार मासपेशियाँ जिन्हें ऐच्छिक मांसपेशियाँ भी कहा जाता है, व्यक्ति की इच्छा पर गतिशील हो सकती हैं। ये मासपेशियाँ अगो तथा शरीर की दूसरी कंकालीय सरचनाओ की गतियो को उचित क्रियाएँ करने जैसे चलना, सिर घुमाना, हाथ उठाना आदि मे सहायता करती हैं। इसी प्रकार अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ शरीर की बहुत सी प्रक्रियाएँ तथा क्रियाएँ विनियमित करने के लिए न्यासर्गों को सीधे रक्त मे स्रावित करती हैं।

(स) *सयोजक : सयोजक तन्त्रिकाएँ सग्राहको और प्रभावको को जोड़ती हैं।* ये केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र द्वारा मध्यस्थित समन्वय तथा युग्मन प्रक्रियाओ के क्रमो द्वारा आने वाले सदेशो की पुष्टि करने मे सहायता करते हैं।

उपरोक्त वर्णन से हमे ज्ञात हुआ कि व्यक्ति अपने मस्तिष्क, सुषम्ना नाडी, सग्राहको, प्रभावको तथा सयोजको आदि की क्रियाओ द्वारा अपने परिवेश से अवगत होता है। तन्त्रिका की आधारभूत तथा सबसे छोटी संरचना जिसे कोशिका कहते हैं, का वर्णन निम्नलिखित है।

कोशिका

तन्त्रिका तंत्र की आधारभूत इकाई कोशिका है। मानव शरीर मे लगभग 1 अरब 20 करोड कोशिकाएँ है। ये वे विशिष्ट कोशिकाएँ हैं जिनमे उद्दीपनो के विभिन्न प्रकारों को विद्युत उत्तेजना मे परिवर्तित करने का अद्वितीय गुण होता है। अपने इसी गुण के कारण उन्हें *जैविक पारेषक* भी कहा जाता है।

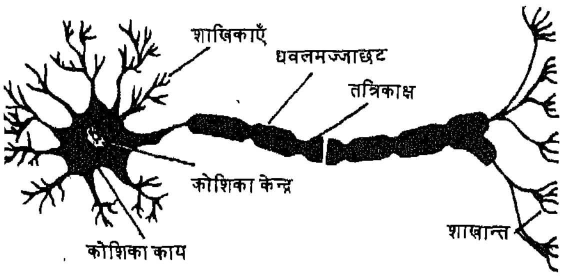
कोशिका की सरचना : प्रत्येक कोशिका मे (अ) कोशिका शरीर (काय), (ब) शाखादार विस्तार जिन्हें शाखिकाएँ कहा जाता है, तथा (स) एक लम्बी प्रक्रिया जिसको तन्त्रिकाक्ष कहा जाता है जो विद्युत उत्तेजनाओ को प्रेषित करती है, होती है। शाखिकाएँ उद्दीपन अथवा उत्तेजनाओ को ग्रहण करती हैं और उन्हें अपने कोशिका शरीरो की ओर ले जाती हैं और तन्त्रिकाक्ष कोशिका शरीरो से तन्त्रिका उत्तेजनाओ को ले जाते है। कुछ तन्त्रिकाक्ष एक चर्बीदार परत जिसे धवलमज्जाच्छद कहा जाता है, उसके द्वारा अवरोधित होते है। ऐसे तन्त्रिकाक्ष को धवलमज्जाच्छदयुक्त कहते हैं। जिन तन्त्रिकाक्षो पर धवलमज्जाच्छद नहीं होती उन्हें बिनाधवलमज्जाच्छद तन्त्रिकाक्ष कहा जाता है। धवलमज्जाच्छद तन्त्रिकाक्ष उत्तेजनाओ को अधिक तेजी से तथा बिना बाधा के ले जाते हैं।

कोशिका के प्रकार : कोशिकाओ को अपने कार्यों के आधार पर निम्न तीन प्रकारो मे बाँटा गया है :

(i) *सवेदी अथवा सानवाही कोशिका* . ये कोशिकाएँ ज्ञानेन्द्रियो से सुषम्ना नाड़ी, मस्तिष्क अथवा किसी अन्य केन्द्र को उत्तेजनाएँ प्रेषित करती हैं। जब ये उत्तेजनाएँ मस्तिष्क मे पहुँचती हैं तब मनुष्य सुनता, सूँघता है इत्यादि।

(ii) *गत्यात्मक अथवा अपवाही कोशिकाएँ :* ये कोशिकाएँ प्रभावको जैसे मास पेशियो को उत्तेजनाएँ भेजती है तथा उसके परिणामस्वरूप मनुष्य अपनी टाँगे, बाहें तथा गर्दन आदि हिला सकता है।

(iii) *सयोजी कोशिकाएँ अथवा सयोजक कोशिकाएँ या साहचर्य कोशिकाएँ* . ये कोशिकाएँ सानवाही तथा अपवाही तन्तुओ को जोड़ती हैं। दूसरे शब्दो मे आने तथा जाने वाले सदेशो के बीच का मण्डलाकार पथ पूर्ण करती हैं। उदाहरण के लिए जब साइकिल चलाते समय आप लाल सकेत देखते है तो आप साइकिल रोक लेते है जिसका तात्पर्य है कि आपकी



चित्र 2.8 एक प्रतीकात्मक कोशिका

आँखों की सवेदी कोशिकाओ ने सग्राहकों का सदेश आपके उच्च केन्द्रों जैसे मस्तिष्क तक पहुँचा दिया है। वहाँ से गत्यात्मक कोशिकाओ ने प्रभावको को आवश्यक हाथ पाँव की गतियाँ प्रयोग कर साइकिल रोकने का सदेश प्रेषित कर दिया होगा। सयोजक कोशिकाओ ने इस व्यवहार की मध्यस्थता करनेवाले जटिल संयोजक प्रदान कर दिये।

तंत्रिका उत्तेजना उत्पति तंत्र : कोशिका की अधिकतर क्रिया तंत्रिका कोषाणु के अन्दर तथा बाहर स्थित रसायनो के अन्तर पर निर्भर करती है। वह रासायनिक कण जो विद्युत/ आवेश ले जाता है उसे विद्युत शक्ति उत्पन्न करने वाला गतिमान परमाणु 'आयन' कहते हैं। 'आयन' मे या तो धनात्मक (+) अथवा ऋणात्मक (—) विद्युत आवेश होते हैं। यह ध्यान मे रखने योग्य बात है कि विरोधी विद्युत आवेश एक दूसरे को आकृष्ट करते हैं तथा समान विद्युत आवेश एक दूसरे को अस्वीकार करते हैं। कोशिका झिल्ली के बीच मे तथा आसपास तरल पदार्थ होता है तथा 'आयन' इसका हिस्सा होते हैं। झिल्ली के अदर के तरल पदार्थ को अतराकोशिकीय तरल पदार्थ तथा झिल्ली के बाहर के तरल पदार्थ को बाह्य कोशिकीय तरल पदार्थ कहते हैं। इन दोनो तरल पदार्थों में 'आयन' का भिन्न मात्रा मे केन्द्रीकरण होता है जैसे सोडियम, पोटेशियम तथा क्लोराइड तथा अन्य दूसरे पदार्थ। हमारी सभी क्रियाएँ जैसे चिन्तन, बोलना, चलना इत्यादि इन्हीं 'आयन' के कारण होती हैं जिनका विनिमय तंत्रिका उत्तेजनाओ को उत्पन्न करता है।

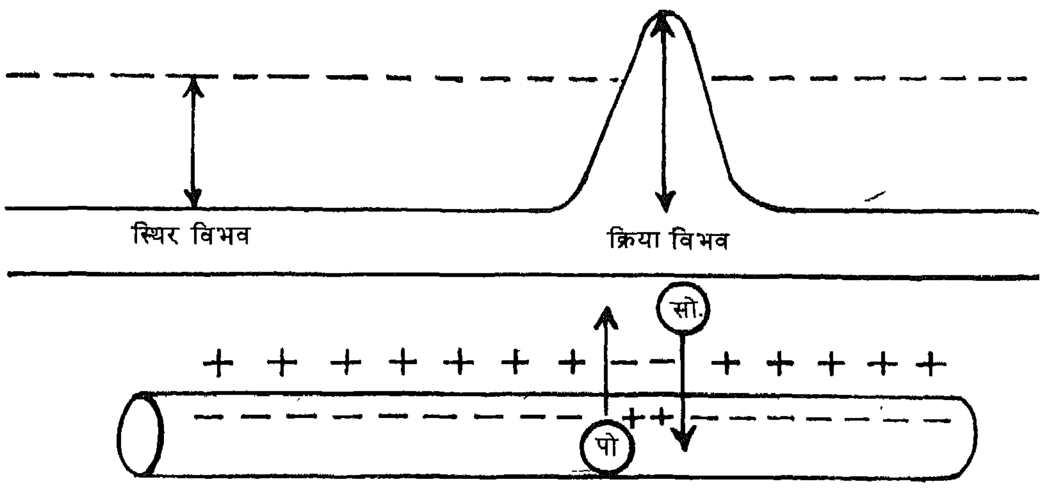
कोशिका की झिल्ली में रोमछिद्र होते हैं जो पोटेशियम तथा सोडियम जैसे छोटे 'आयन' को उनके बीच मे से निकलने के लिए काफी बडे होते है। चूँकि कुछ 'आयन' को छिद्रो मे से निकलने दिया जाता है और कुछ को नहीं अतः झिल्ली को चयनित रूप से प्रवेश कराने योग्य कहा जाता है। छोटे धनात्मक 'आयन' बड़े 'आयन' के ऋणात्मक विद्युत आवेश को सतुलित कर देते हैं। ऋणात्मक प्रोटीन 'आयन' के आसपास गुच्छे के रूप मे घेरा डाले धनात्मक पोटेशियम 'आयन' होते हैं और थोड़े से धनात्मक सोडियम 'आयन' होते हैं। यह तथ्य कि कोशिका के अन्दर थोड़े सोडियम 'आयन' होते हैं इसे कोशिका की झिल्ली के एक और गुण *सोडियम-पोटेशियम पिचकारी* द्वारा समझाया गया है।

साधारणतया कोशिका के अन्दर के ऋणात्मक प्रोटीन 'आयन' से झिल्ली के अन्दर रोमछिद्रों द्वारा सोडियम आयन आकृष्ट होते है। किन्तु झिल्ली सोडियम 'आयन' के प्रवेश को रोकती है और जो 'आयन' कोशिका के भीतर प्रवेश करने में सफल हो जाते हैं उन्हें सोडियम-पोटेशियम पिचकारी द्वारा बाहर फेंक दिया जाता है। सोडियम-पोटेशियम पिचकारी का तात्पर्य है कि झिल्ली सक्रियता से सोडियम 'आयन' को बाहर फेंक देती है तथा पोटेशियम को कोशिका के अन्दर खीच लेती है। सोडियम-पोटेशियम पिचकारी तथा सोडियम बाधा इसलिए कार्य करते हैं क्योकि बाह्य कोशिकीय द्रव्य मे अतराकोशिकीय द्रव्य की अपेक्षा अधिक सोडियम 'आयन' होते हैं। अगर वे अपना कार्य न करें तो सोडियम 'आयन' कोशिका मे तब तक बहकर चले आते रहेंगे जब तक कोशिका के अन्दर तथा बाहर के तरल पदार्थों मे उनकी सख्या बराबर न हो जाए।

जब कोशिकाएँ तंत्रिका उत्तेजना का निर्वाह नही कर रही होतीं वे विश्राम की अवस्था अथवा ध्रुवण अवस्था में होती हैं। ध्रुवण की अवस्था में अन्तराकोशिकीय द्रव्य ऋणात्मक होता है तथा बाह्य कोशिकीय द्रव्य धनात्मक होता है। जब कोशिका विध्रुवण अवस्था में होती है तो इससे विपरीत अवस्था होती है। जैसा चित्र 2.9 में दिखाया गया है कि क्रिया विभव के बढ़ने से सोडियम 'आयन' तन्तु में प्रवेश कर जाते हैं तथा इसे धनात्मक बना देते हैं। विश्राम की अवस्था मे पोटेशियम 'आयन' तन्तु के भीतरी भाग को ऋणात्मक रखते हैं।

क्रिया विभव : तंत्रिकाक्ष की ओर पहुँचने वाले पर्याप्त उद्दीपन कोशिका में विद्युत रसायन परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। यह परिवर्तन स्थिर कोशिका को सक्रिय अवस्था में परिवर्तित कर देता है। स्थिर विभव से यह क्रिया विभव बन जाता है। स्थिर झिल्ली विभव लगभग 70 मिली वोल्ट (विद्युत आवेशित) होता है। उद्दीपन स्थिर अवस्था में असंतुलन पैदा कर देता है (विद्युत आवेश को लगभग 60 मिली वोल्ट में बदल देता है) इससे कुछ रासायनिक परिवर्तन होते हैं। सोडियम, पोटेशियम तथा क्लोराइड 'आयन' झिल्ली के अन्दर तथा बाहर आते जाते हैं परिणामतः झिल्ली अन्दर अधिक ऋणात्मक तथा बाहर अधिक धनात्मक हो जाती है। झिल्ली विध्रुवण की यह अवस्था 'क्रिया विभव' कहलाती है।

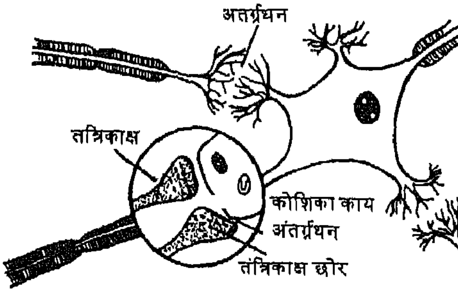
अननुक्रिया काल : क्रिया विभव के बाद कुछ थोड़ा समय ऐसा होता है जब झिल्ली *अति ध्रुवण* की अवस्था में होती है। इस अवस्था में सोडियम 'आयन' तत्रिकाक्ष में प्रवेश नही कर सकते क्योकि उत्तेजना तभी घटित हो सकती है जब मोडियम 'आयन' तंत्रिकाक्ष मे प्रवेश करें। वह काल जब कोशिकाएँ उत्तेजना नहीं निर्वाह कर सकतीं *पूर्ण अननुक्रिया काल* कहलाता है। किन्तु इसके बाद कुछ मिली सैकंड का समय आता है जब पोटेशियम 'आयन' आन्तरिक कोशिका द्रव्य की ओर वापिस लौटने लगते हैं लेकिन अपने केन्द्रीकरण विश्राम स्तर तक अभी भी नही पहुँच पाते। इस समय झिल्ली अभी भी अतिध्रुवण अथवा विश्राम अवस्था से अधिक ऋणात्मक होती है। तंत्रिकाक्ष अभी भी उत्तेजना का निर्वाह कर सकता है किन्तु इसकी सीमा विश्राम अवस्था की अपेक्षा ऊँची होती है। दूसरे शब्दो



चित्र 2.9 कोशिका उत्तेजना

में तंत्रिकाक्ष की सीमा तक पहुँचने तथा उत्तेजना उत्पन्न करने के लिए अधिक विद्युत आवेग की आवश्यकता होती है। यह काल *सापेक्षिक अननुक्रिया काल* कहलाता है। सापेक्षिक अननुक्रिया काल में सवेदना कोशिका को और अधिक तीव्र पर्यावरणीय उद्दीपन उत्पन्न करने के लिए अधिक आवाज अथवा अधिक दबाव की आवश्यकता होती है।

अंतर्ग्रथन : जब कोशिका उत्तेजना तन्त्रिकाक्ष अथवा तंत्रिकाक्ष के छोर पर पहुँच जाती है तो इसे अगली कोशिका तक पहुँचने के लिए एक अन्तराल को पार करना पड़ता है। इस अन्तराल को अन्तर्ग्रथन कहते हैं—जो एक अति लघु द्रव्य से पूर्ण संगम स्थल है जिससे कोशिकाएँ रासायनिक दौर पर सप्रेषण करती हैं। जिन रसायनो द्वारा यह संप्रेषण होता है उन्हे *तंत्रिका सप्रेषक* कहा जाता है। ये तत्रिका संप्रेषक सम्पूर्ण शरीर में फैली लाखों कोशिकाओ के संदेश लाने, ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमे से कुछ महत्वपूर्ण तंत्रिका सप्रेषक एसीटीलकोलीन, सेरोटोनिन, यहाँ तक कि एपीनेफ्रीन तथा नोरएपीनेफ्रीन जैसे न्यासर्ग हैं।



चित्र 2.10 अतर्ग्रंथन

परिधीय तंत्रिका तंत्र

तंत्रिका तंत्र का एक और मुख्य विभाजन परिधीय तंत्रिका तन्त्र है। इसको इसलिए ऐसा नाम दिया गया है क्योंकि इस तत्र की अधिकतर तन्त्रिकाएँ मस्तिष्क तथा सुषम्ना नाड़ी से बाहर स्थित होती हैं। परिधीय तंत्रिका तंत्र दो शाखाओं—कायिक तन्त्रिकातंत्र तथा स्वायत्त तंत्रिकातत्र मे बँटा है।

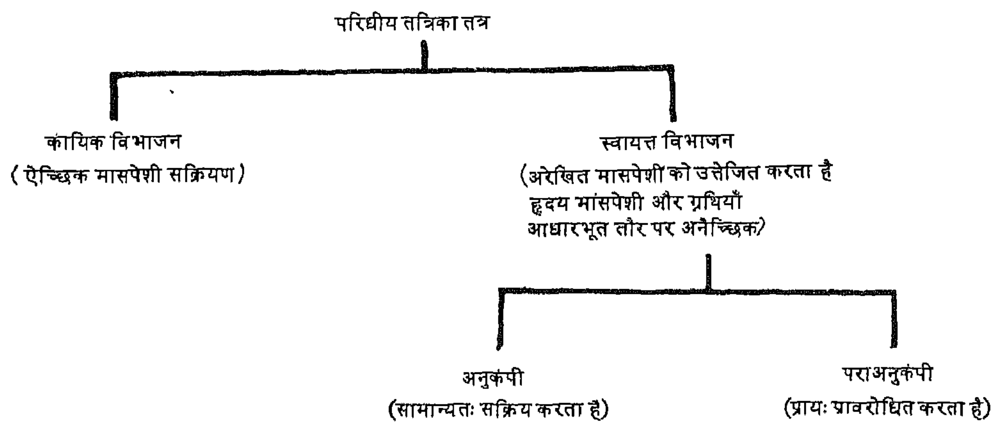
(i) *कायिक तन्त्रिका तत्र*

कायिक तन्त्रिका तत्र मुख्यतः ऐच्छिक क्रियाओं से सबधित होता है जबकि स्वायत्त तन्त्रिका तंत्र शरीर के आंतरिक परिवेश को नियंत्रित करता है। कायिक विभाजन शरीर के बाह्य परिवेश से संबध रखने वाले अंगों जैसे मास पेशियो, बाहो तथा टाँगो की गति को अथवा टाँग के छटपटाने वाले पंजे आदि को नियत्रित करता है।

(ii) *स्वायत्त तन्त्रिका तंत्र*

स्वायत्त तंत्रिका तत्र शरीर के विभिन्न आन्तरिक कार्य जैसे श्वसन क्रिया, रक्त भ्रमण, लार क्रिया, पेट मे सिकुड़न तथा बहुत सी दूसरी सवेगात्मक प्रतिक्रियाएँ नियत्रित करता है। इस तत्र को अनैच्छिक तन्त्रिका तत्र भी कहा जाता है क्योंकि इसका मुख्य कार्य आन्तरिक परिवर्तनो का नियत्रण करना है। स्वायत्त तन्त्रिका तत्र को आगे दो भागों में बाँटा गया है : (अ) अनुकंपी तन्त्रिका तत्र, तथा (ब) पराअनुकंपी तंत्रिका तत्र।

(अ) *अनुकंपी तंत्रिका तत्र* : अनुकंपी तन्त्रिका तत्र सुषम्ना नाड़ी के पास तन्त्रिका केन्द्रों के समूह से बना है। इन्हीं केन्द्रो से तन्तु शरीर के विभिन्न अंगो जैसे हृदय, फेफड़े, पेट तथा यकृत इत्यादि में फैले हुए हैं। जब यह तंत्र सक्रिय हो जाता है तब शरीर प्रबोधन की अवस्था में अथवा सचेत कहा जाता है। यह तत्र उस अवस्था के दौरान ऊर्जा देता है जहाँ क्रिया करने की आवश्यकता होती है तथा वह की जाती है। जब कोई व्यक्ति सकट की स्थिति मे होता है तब उसके हृदय की धड़कन बढ़ जाती है, उसकी श्वसन क्रिया तेज़ हो जाती है, उसका यकृत अतिरिक्त ऊर्जा के लिए अधिक मात्रा मे रक्त में शर्करा स्रावित करता है आदि। आपने भी अचानक भयभीत होने पर अथवा भय के अनुभव के दौरान स्वयं के साथ यह सब होता हुआ पाया होगा।



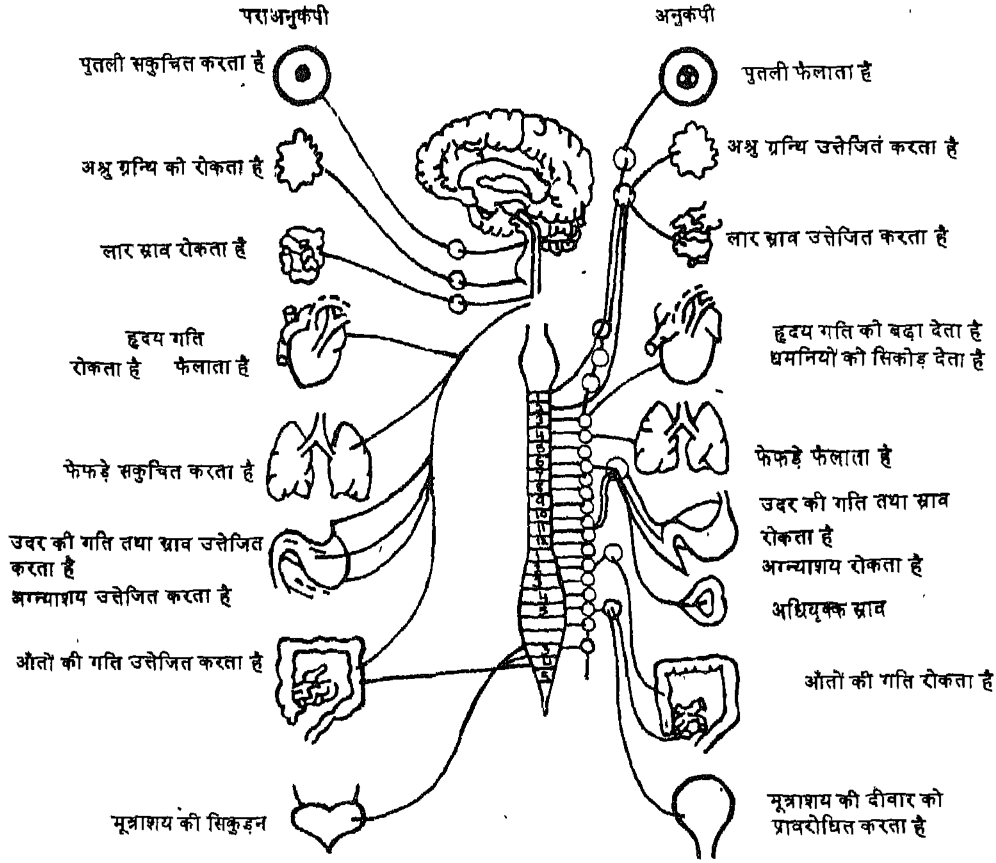
चित्र 2.11 परिधीय तन्त्रिका तंत्र का आरेखी प्रस्तुतीकरण

(ब) *पराअनुकंपी तंत्र* : यह तंत्र मुख्यतः ऊर्जा संरक्षण से संबंधित है और अनुकंपी तंत्र से बिल्कुल उलटा है जो ऊर्जा व्यय करता है। यह तंत्र अनुकंपी सक्रियण के दौरान क्षत हुई ऊर्जा का संरक्षण तथा पूर्ति करता है। यद्यपि ये दोनो तंत्र विरोधी दिखते हैं किन्तु एक दूसरे के पूरक के रूप मे कार्य करते हैं। पराअनुकंपी तंत्र सब मिलाकर शारीरिक ससाधनो को निर्मित रखने से संबंधित होता है। यह हृदयगति को धीमा कर देता है, श्वसन क्रिया को कम कर देता है, रक्त मे शर्करा का प्रवाह बन्द कर देता है तथा पाचन क्रिया को तीव्र कर देता है। जब शरीर आराम करता है तथा व्यक्ति विश्राम की अवस्था मे होता है, इसका तात्पर्य होता है कि उसको पराअनुकंपी तंत्र निहित आधार दे रहा है।

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के ये दो भाग शरीर का स्वास्थ्य तथा संतुलन बनाये रखने के लिए सामान्यतया समन्वित रूप से कार्य करते हैं।

अन्तःस्रावी तंत्र

शरीर की बहुत सी प्रतिक्रियाएँ स्वायत्त तंत्रिका की क्रियाओ के परिणामस्वरूप होती हैं जो ग्रन्थि तंत्र द्वारा प्रभावित होता है। ग्रन्थि तंत्र शरीर मे विभिन्न ग्रन्थियों का बना है जो शरीर के विकास तथा पोषण के लिए आवश्यक विभिन्न रासायनिक पदार्थों का स्राव करती हैं। ये ग्रन्थियाँ दो प्रकार की होती हैं : (i) बहिःस्रावी, तथा (ii) अन्तःस्रावी। बहिःस्रावी ग्रन्थियो को नलिका ग्रन्थियाँ कहा जाता है जो न्यासर्गों के अतिरिक्त दूसरे रासायनिक पदार्थों का स्राव करती हैं। ये पदार्थ नलिकाओ अथवा वाहिनियो द्वारा शरीर के विभिन्न भागो मे ले जाए जाते हैं जैसे अश्रु ग्रंथियाँ। दूसरे प्रकार की ग्रन्थियाँ नलिकाविहीन अथवा अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ कही जाती हैं। इन ग्रन्थियों का स्राव वाहिनियों द्वारा प्रवाहित नहीं होता बल्कि सीधे रक्त नलिकाओं मे विसर्जित किया जाता है। इन ग्रन्थियों द्वारा स्रावित रासायनिक पदार्थों को न्यासर्ग कहा जाता है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ स्वयं कोई विशिष्ट



चित्र 2.12 अनुकंपी तत्र तथा पराअनुकंपी तन्त्रिका तत्र की शारीरिक रचना तथा कार्य

क्रिया प्रारम्भ नही करती किन्तु विभिन्न अंगो जैसे हृदय, यकृत आदि की क्रिया को प्रभावित करती हैं। ये न्यासर्ग शरीर की आन्तरिक क्रियाओं का अवरोधन, उन्नति, सतुलन तथा विनियमन करते हैं तथा बदले में ये स्पष्ट व्यवहार को प्रभावित करते हैं अतः प्रत्येक ग्रन्थि का स्राव शरीर के रासायनिक संतुलन को बनाये रखने के लिए आवश्यक है। न्यासर्ग के स्राव मे कमी (अल्पस्राव) अथवा अधिकता (अधिक स्राव) गम्भीर शारीरिक तथा मनोशारीरिक परिवर्तनो को पैदा कर सकती है। कुछ महत्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ तथा उनके न्यासर्गों की व्याख्या नीचे की गई है।

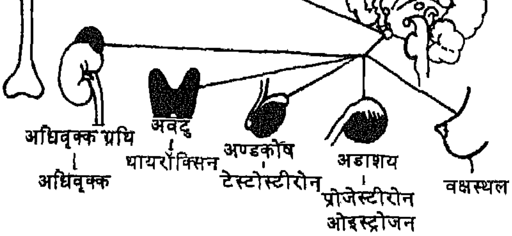
1. पीनियल ग्रन्थि

पीनियल ग्रन्थि मस्तिष्क के अन्दर स्थित है। इसका आकार मटर के दाने जितना होता है। इस ग्रन्थि

द्वारा स्रावित मुख्य न्यासर्ग मेलाटोनिन है। यह न्यासर्ग शरीर के विकास तथा पुनरुत्पादक कार्यों को प्रभावित करता है।

2. पीयूष ग्रन्थि (पीयूषिका)

पीयूष ग्रन्थि मस्तिष्क स्तभ के नीचे स्थित है। यह भी छोटे आकार की होती है। यह नौ न्यासर्गों को स्रावित करती है जो दूसरी अन्तःस्रावी ग्रन्थियो तथा शरीर के कार्यों का विनियमन करते हैं। यह पाया गया है कि जबकि बौनो मे सामान्यतः पीयूष ग्रन्थि अल्प क्रियाशील होती है, भीमकाय लोगों मे पीयूष ग्रन्थि अत्यधिक सक्रिय होती है। यह ग्रन्थि अडकोष तथा अंडाशय को भी प्रभावित करती है। इस ग्रन्थि के उत्तेजित होने पर निकलने वाले न्यासर्गों का अल्प अथवा अत्यधिक स्राव यौन क्रियाओं को कम अथवा अधिक कर देता है क्योंकि ये न्यासर्गों के साथ-साथ यौन कोशिकाएँ भी उत्पन्न करते हैं। पीयूष ग्रन्थि द्वारा स्रावित न्यासर्ग अधश्चेतक द्वारा विनियमित होते हैं जो शरीर की मुख्य तथा प्राणभूत प्रक्रियाओ पर नियंत्रण करता है।



चित्र 2.13 पीयूष ग्रन्थि तथा दूसरी ग्रन्थियो पर इसके प्रभाव

3. अग्न्याशय ग्रन्थि

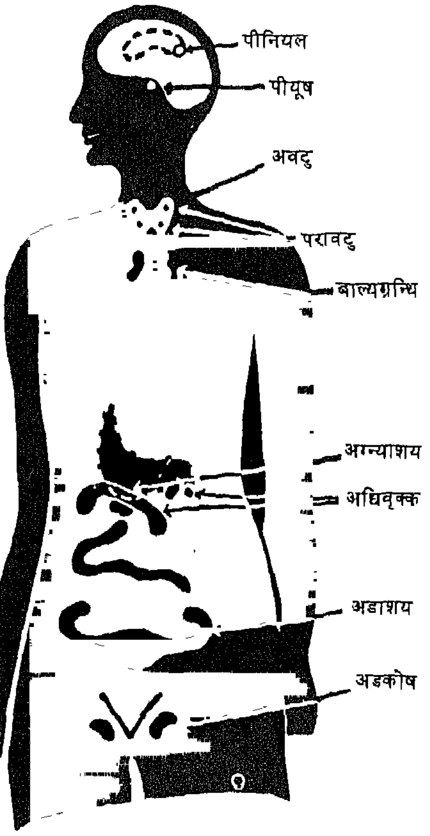
अग्न्याशय ग्रन्थि शरीर के मध्य भाग मे स्थित है। यह अपने स्रावण कार्यों मे बहिःस्रावी तथा अन्तःस्रावी दोनों है। अग्न्याशय की बहिःस्रावी कोशिकाएँ पाचक रसयुक्त अग्न्याशयिक स्राव के लिए उत्तरदायी हैं। इसका अन्तःस्रावी भाग मधुसूदनी का स्राव करता है जो ग्लायकोजन के रूप मे यकृत तथा मांसपेशियो में ग्लूकोज का निक्षेपण बढ़ाकर रक्त शर्करा का विनियमन करता है। यह ग्लूकागॉन का भी स्राव करता है जो मधुसूदनी के विरोधी के रूप में कार्य करता है।

4. अवटु ग्रन्थि

अवटु ग्रन्थि गर्दन के निचले भाग मे स्थित है। यह थायरॉक्सिन उत्पन्न करती है। यह आधारभूत चयापचय मान का नियत्रण करती है। बाल्यावस्था मे थायरॉक्सिन का वंचन जड़मानवता अथवा एक प्रकार की दुर्बल मानसिकता की ओर अग्रसर करता है। इस न्यासर्ग के अल्पस्राव के परिणामस्वरूप तंत्रिकीय, हृद्वाहिका, वृक्क सबधी तथा श्वसन व्याधियाँ हो जाती हैं। इस ग्रन्थि के अधिक स्राव से बेचैनी, तनाव इत्यादि हो जाते हैं। प्रौढ़ावस्था में अवटुस्राव की न्यूनता एक ऐसी अवस्था की ओर अग्रसर करती है जिसे मिक्सोडीमा कहते हैं जिसका लक्षण मोटापा तथा सामान्य आलस्य होता है। थायरॉक्सिन की कमी मानसिक मदन तथा अन्य नैदानिक व्याधियो की ओर भी अग्रसर करती है।

5. परावटु ग्रन्थि

अवटु के नीचे परावटु नामक एक छोटी सी सरचना स्थित है। यह ग्रन्थि परावटु न्यासर्ग स्रावित करती है जो कैलशियम तथा फासफोरस चयापचय का विनियमन करता है। इस ग्रन्थि का मुख्य कार्य शरीर की अस्थि संरचना बनाये रखना है। इस ग्रन्थि के क्षतिग्रस्त होने अथवा निकाल देने से एक प्रकार की तंत्रिका व्याधि हो जाती है, जिसे *धनुस्तभ* कहते



चित्र 2.14 शरीर की अन्तःस्रावी ग्रन्थियो की अवस्थिति

हैं तथा यह अवस्था विशेषतया हाथो, पैरो तथा जबड़े की हड्डी के पेशीय आक्षेप से संबंधित है। इस ग्रन्थि की क्षति से कैलशियम की कमी हो जाने के कारण अस्थियो की कमजोरी को बढ़ा देती है तथा इसको प्रायः निरन्तर पीड़ा, दर्द तथा कराहने से जाना जा सकता है।

6. अधिवृक्क

अधिवृक्क ग्रन्थियाँ शरीर के मध्य भाग मे गुर्दों के ऊपर होती है। प्रत्येक ग्रन्थि के दो भाग हैं—बाह्य भाग जिसे 'अधिवृक्क वल्कुट' कहते हैं तथा आन्तरिक भाग जिसे 'अधिवृक्क मध्यांश' कहते हैं। अधिवृक्क मध्यांश दो न्यासर्ग एड्रीनेलीन (एपीनेफ्रीन) तथा नोर एड्रीनेलीन (नोरएपीनेफ्रीन) स्रावित करता है। ये न्यासर्ग मुख्यतः भय, क्रोध, आक्रमण, द्वन्द्व से उत्पन्न होने वाले तनाव के दौरान उत्पन्न होते हैं। इन न्यासर्गों के अपर्याप्त स्राव के परिणामस्वरूप थकावट, भूख न लगना, रक्ताल्पता, दुर्बलता, अनिद्रा तथा त्वचा का कालापन हो जाता है। इसे जनसाधारण की भाषा मे एडीसन रोग के नाम से जाना जाता है। अधिवृक्क वल्कुट विभिन्न न्यासर्गों को स्रावित करती है जैसे एल्डोस्टीरोन, कोर्टीजोल तथा यौन न्यासर्ग। अत्यधिक वल्कुटीय स्राव से निम्नलिखित प्रभाव उत्पन्न हो सकते हैं :

> वयस्को में कुशिंग सलक्षण हो जाता है जिसे मोटापे, बालो की अत्यधिक बढ़ोतरी, मधुमेह, तथा जनन ग्रन्थियो की कार्यक्षमता में कमी से पहचाना जा सकता है। स्त्रियों में अत्यधिक पुंस न्यासर्ग से पुंसत्व हो सकता है, पुरुषों मे अत्यधिक स्त्रीकामोन्माद से स्त्रीत्व विशेषकर स्तनो का बढ़ना हो सकता है। बच्चो मे अत्यधिक यौन न्यासर्गों के कारण अकालिक यौवन अर्थात् शीघ्र यौन परिपक्वता हो जाती है।

7. पुनरुत्पादक ग्रन्थियाँ (जनन ग्रन्थियाँ)

ग्रन्थियाँ जो यौन न्यासर्ग बनाती हैं वे स्त्रियो मे अंडाशय तथा पुरुषो मे अंडकोष होती हैं। इन दोनो को जननग्रन्थियाँ कहते है। महत्वपूर्ण पुरुष यौन न्यासर्ग पुंस न्यासर्ग या टेस्टोस्टीरोन होते हैं जो पुरुषो की यौन विशेषताओं जैसे यौवन में चेहरे पर बाल तथा आवाज़ मे परिवर्तन होने के लिए उत्तरदायी हैं। पुंस न्यासर्ग अस्थि विकास तथा यौन अंतर्नोद से संबंधित शारीरिक परिवर्तनो के लिए उत्तरदायी हैं। अंडाशय दो महत्वपूर्ण न्यासर्ग ओइस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टीरोन स्रावित करता है। स्त्रीकामोन्माद स्त्री के आन्तरिक पुनरुत्पादक संरचना की परिपक्वता तथा

सारणी 2.1

मानव शरीर की ग्रन्थियाँ उनसे स्रावित न्यासर्ग तथा व्यवहार पर उनके प्रभाव

क्रम संख्या	ग्रन्थि	न्यासर्ग	व्यवहार पर प्रभाव
1.	पीनियल	मेलाटोनिन	विकास तथा पुनरुत्पादन का विनियमन करती है।
2.	पीयूष	विकास न्यासर्ग	अस्थियो तथा मासपेशियो के विकास पर नियत्रण करती है। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स तथा वसा चयापचय को विनियमित करती है।
3.	अग्न्याशय	मधुसूदनी	शर्करा का प्रयोग विनियमित करती है तथा ग्लूकोज का ग्लाइकोजन के रूप मे भडारण करती है।
		ग्लूकागॉन	मधुसूदनी के विरोधी के रूप मे कार्य करती है।
4.	अवटु	थायरॉक्सिन	आधारभूत चयापचय माप को विनियमित तथा नियत्रित करती है।
5.	परावटु	पैराथोर्मोन	कैलशियम तथा फॉसफेट के स्तरो का विनियमन।
6.	अधिवृक्क वल्कुट	एल्डोस्टीरोन	शरीर के जल सतुलन का नियत्रण।
		ग्लूकोकॉरटीकॉयड्ज़	शर्करावर्गीय चयापचय का विनियमन।
		यौन न्यासर्ग	यौन विकास को विनियमित करती है।
	अधिवृक्क मध्याश	एड्रीनेलिन, नोरएड्रीनेलिन	शरीर के कार्य विनियमित करते हैं।
7.	पुनरुत्पादक ग्रन्थियाँ		
	(जनन) स्त्री	स्त्रीकामोन्माद	मासिक चक्र का नियत्रण ।
		प्रोजेस्टीरोन	गर्भ का पोषण।
	पुरुष	पुरुष-पुस न्यासर्ग	पुरुष की लैगिक विशेषताओ तथा विकास की प्रोन्नति।

गौण यौन विशेषताओ जैसे स्तनो का बढ़ना तथा जननेन्द्रिय पर बाल आना इत्यादि के लिए उत्तरदायी है। यह न्यासर्ग मासिक चक्र के विनियमन मे भी महत्वपूर्ण भमिका निभाता है। प्रोजेस्टीरोन गर्भाशय को निषेचित डिम्ब के आरोपण के लिए तैयार करता है तथा जन्म पूर्व विकास की पूर्व अवस्थाओं के दौरान गर्भांक को पोषित करता है।

इस प्रकार हमने व्यक्ति के जीवन की विभिन्न अवस्थाओं के व्यवहार मे अन्त.स्रावी ग्रन्थियो की भूमिका तथा इसके महत्व के बारे मे देखा। यह सारणी 2. 1 में सक्षिप्त रूप से दिया गया है। यह स्मरणीय है कि अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ स्वतन्त्र रूप से कार्य नहीं करतीं किन्तु मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रो द्वारा नियत्रित तथा विनियमित होती हैं।

आनुवंशिक कूटसकेतन, पाचकरस, तथा चयापचय

हमने देखा कि किस प्रकार विभिन्न तंत्रों जैसे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र तथा अन्तःस्रावी तत्र इत्यादि की समाकलित क्रियाएँ व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती हैं। किन्तु आधुनिक अनुसधानो से यह सकेत मिलता है कि इन तत्रो से परे कुछ और प्रणालियाँ जैसे रासायनिक, चयापचयशील तथा आनुवशिक कूटसकेतन आदि भी होते है जिनका व्यवहार पर गहन प्रभाव पडता है।

आनुवंशिक कूट सकेतन

आनुवशिक कूट सकेतन का तात्पर्य एक आनुवंशिक पदार्थ जिसे डी एन ए कहते हैं, द्वारा प्राप्त कूट संकेतित आनुवशिक सदेश है। यह कूट सकेतन विकास, सवृद्धि, तथा विभेदीकरण प्रक्रियाओ का आधार है।

डी एन ए (डीऑक्सीराइबोन्यूक्लियक एसिड)

डी एन ए वह आनुवंशिक सामग्री है जो व्यक्ति के जीवन के लिए आवश्यक सम्पूर्ण आनुवशिक सूचनाएं संचयन, प्रत्यानयन तथा प्रतिलिपि करती है। यह वंशानुसंक्रमण का आधार भी है।

आर एन ए (राइबोन्यूक्लियक एसिड)

आर एन ए, डी एन ए द्वारा कूट संकेतित होता है। ये तीन प्रकार के होते हैं : (अ) संदेश वाहक आर एन ए (सं आ एन ए), (ब) स्थानान्तर आर एन ए (स्था आर एन ए), तथा (स) रिबोसोमल आर एन ए (रि आर एन ए)। ये प्रोटीन संश्लेषण में भाग लेते हैं।

पाचक रस

पाचक रस आनुवंशिक कूट संकेतन के अनुसार कोशिकाद्रव्य में संश्लिष्ट प्रोटीन होते हैं। वे चया पचयशील पथों को उत्प्रेरित करते हैं जिससे संवृद्धि, विकास, तथा विभेदीकरण का नियंत्रण होता है। कोशिकाद्रव्य अर्थात् आरगेनल्स में विभिन्न प्रकार के पाचक रस उपस्थित होते हैं जैसे लाइजोज़ोम्स तथा सूत्र कणिका।

चयापचय

इसमें कोशिका की चय (निर्मित करना) तथा अपचय (अनुविभाजन) क्रियाएँ आती हैं। इसमें वे तंत्र भी आते है जो शर्करावर्गीय, वसा तथा प्रोटीन इत्यादि के अनुविभाजन को तीव्र करते हैं जिसके परिणामस्वरूप एडीनोसीन ट्राइफॉस्फेट (ए टी पी) के रूप में ऊर्जा का उत्पादन होता है तथा सश्लेषण जिसमे शरीर की आवश्यकता के लिए परमाणुओ का उत्पादन होता है।

आपको आश्चर्य हो सकता है कि यह सभी व्यवहार से किस प्रकार सबंधित हैं। यह जानना रुचिकर होगा कि आपका रंग, स्वरूप, नाक का आकार तथा कुछ सीमा तक स्मरणशक्ति, बुद्धि इत्यादि सभी आनुवशिक कूट सकेतन से शासित होते हैं। आनुवशिक कूट सकेतन पाचक रसों तथा चयापचयशील प्रक्रियाओं द्वारा हमारे व्यवहार की आधारभूत प्रक्रियाओं को निर्णीत करते हैं। डी एन ए की रासायनिक सरचना में वहन किये जाने वाले निर्देश आपकी ऊँचाई, अस्थि संरचना तथा अन्य बहुत से विशेषकों का निर्णय करते हैं। डी एन ए का संबंध पाचक रस उत्पन्न करने से होता है। डी एन ए निर्देशों के कारण ही उँगलियो की कोशिकाएँ नाक की कोशिकाएँ नहीं बन जातीं। डी एन ए परमाणु मे निहित आनुवंशिक निर्देश विभिन्न पाचक रसों की उत्पत्ति द्वारा वहन किये जाते हैं जो फिर कोशिकाओ को तंत्रिका कोशिका, आँख या नाक बनने के लिए निर्देश देते हैं। आर एन ए परमाणु केन्द्रक से संदेश ले जाने तथा उन्हें प्रोटीन के आकारों में रूपान्तरित करने में सहायता करते हैं।

ये सब व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करते हैं? यदि दवाइयाँ, एक्स किरण आदि से डी एन ए को क्षति होती है तो उसके परिणामस्वरूप किसी विशेष पाचक रस की प्रोटीन रसायन क्षति या बहुत से दूसरे चया पचयशील परिवर्तन होंगे। पाचक रस तथा कोषाणु उचित रूप से विकसित नहीं होंगे। उदाहरणार्थ चया पचयशील दोषों के कारण कई प्रकार का मानसिक मंदन अथवा बीमारी हो सकती है। कुछ प्रकार की मानसिक बीमारियाँ तंत्रिका प्रेषण अथवा न्यासर्ग में पाचक रस के दोष तथा न्यूनता के परिणामस्वरूप हुए असंतुलनों के कारण होती हैं। तंत्रिका तथा अन्तःस्रावी तंत्रों एवं उनके चया पचयशील कार्यों का समाकलित कार्य सम्पादन व्यक्ति के व्यवहार पर गहन प्रभाव डालते हैं।

सारांश

मानव की प्रत्येक क्रिया में शरीर का सबध होता है जो विशिष्ट कार्य सबंधी इकाइयों के समन्वित तरीके से कार्य करते रहने से बना है। किसी भी क्रिया अथवा व्यवहार के तीन पहलू उद्दीपन को ग्रहण करना या संवेदन करना, अनुक्रिया या क्रिया करना तथा ग्रहण करने और क्रिया के बीच की प्रक्रिया अथवा सयोजन कार्य होता है। इन पहलुओं की समन्वित कार्य विधि तंत्रिका तत्र के कारण संभव है।

तंत्रिका तंत्र मानव व्यवह.र को बहुत से महत्वपूर्ण तरीकों से नियंत्रित करता है। तत्रिका तत्र दो मुख्य तत्रों मे बँटा है जिन्हें केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र तथा परिधीय तंत्रिका तंत्र कहते हैं। केन्द्रीय तंत्रिका तत्र मे मस्तिष्क तथा सुषम्ना नाड़ी आते हैं। मस्तिष्क तीन उपभागों पश्चमस्तिष्क, मध्यमस्तिष्क तथा अग्रमस्तिष्क से बना है। पश्चमस्तिष्क में सुषम्नाशीर्ष, सेतु तथा अनुमस्तिष्क होते हैं। मध्यमस्तिष्क, पश्चमस्तिष्क तथा अग्रमस्तिष्क के बीच सबध बनाता है। मध्यमस्तिष्क के एक भाग में तत्रिका का घना जाल होता है जो जालाकार सक्रियण तत्र कहलाता है। पश्चमस्तिष्क तथा मध्यमस्तिष्क में स्थित विभिन्न सरचनाओं द्वारा बहुत सी सवेदन तथा गत्यात्मक कार्यप्रणालियाँ नियत्रित की जाती हैं।

मानव व्यवहार के लिए अग्रमस्तिष्क का बहुत अधिक महत्व है क्योकि इसके प्रभाग वाणी, लिखने, प्रत्यक्षीकरण तथा चिन्तन इत्यादि से संबंधित हैं। अग्रमस्तिष्क के महत्वपूर्ण अग चेतक, अधश्चेतक, उपवल्कुटीय तत्र तथा प्रमस्तिष्कीय वल्कुट हैं। ये दो भागो दायाँ तथा बायाँ प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध मे बँटा है। प्रत्येक गोलार्द्ध के चार उपविभाग हैं जिनसे अधिगम, चिन्तन, स्मृति (ललाटपालि), पर्यावरण मे उद्दीपनो का समन्वय, शरीर की स्थिति (पार्श्वपालि) श्रवण ग्रहण, ध्वनियो के लिए स्मृति (शंखपालि) तथा दृष्टि (पश्चकपालपालि) आदि प्रक्रियाएँ शासित होती हैं।

सुषम्ना नाडी एक लम्बी रज्जु की भाँति तत्रिका ततुओं का समूह है जो शरीर की लम्बाई मे चलता है इससे घुटनाझटका प्रतिवर्त जैसी अनेक अनैच्छिक अनुक्रियाएँ नियन्त्रित होती हैं। सग्राहक बाह्य अथवा आन्तरिक परिवेश से सूचनाएँ प्राप्त करते हैं। प्रभावक सग्राहको द्वारा ग्रहण की हुई सूचनाओ के प्रति शरीर को अनुक्रिया करने योग्य बनाते हैं। सयोजक तंत्रिकाएँ संग्राहकों तथा प्रभावकों को जोड़ती हैं।

कोशिका केन्द्रीय तत्रिका तंत्र की आधारभूत इकाई या निर्माण खड है। यह कोशिका काय, शाखिका तथा तत्रिकाक्ष की बनी है। तत्रिकाक्ष एक कोशिका से अगली कोशिका में विद्युत रासायनिक तौर पर तत्रिका उत्तेजना प्रेषित करने में केन्द्रीय भूमिका निभाता है।

तत्रिका तत्र का दूसरा मुख्य भाग परिधीय तत्रिका तत्र है। इस तत्र की तत्रिकाएँ मस्तिष्क तथा सुषम्ना नाड़ी से बाहर होती हैं। परिधीय तत्रिका तत्र कायिक तथा स्वायत्त तत्रिका तंत्र मे बँटा है। कायिक तत्रिका तत्र मुख्यतः बाह्य परिवेश से सबध रखने वाली क्रियाओं से सबधित है जैसे हाथ-पैर उठाना इत्यादि। स्वायत्त तत्रिका तत्र अनुकंपी तथा पराअनुकंपी तत्रिका तंत्र में विभाजित है। अनुकंपी तत्र सकटकालीन स्थितियो के लिए तैयार रहने के लिए शारीरिक ससाधनो को सक्रिय करने के लिए उत्तरदायी है। इसके विरुद्ध पराअनुकंपी तंत्र शरीर को आराम तथा विश्राम की स्थिति मे रखने तथा उसे पोषित करने का कार्य करता है। शरीर की बहुत सी प्रतिक्रियाएँ ग्रन्थि तत्र की क्रियाओ के परिणामस्वरूप होती हैं।

अन्त:स्रावी तत्र जो ग्रन्थि तत्र का एक भाग है शरीर मे विभिन्न ग्रन्थियो से बना है जो शरीर की सवृद्धि तथा पोषण के लिए रासायनिक पदार्थ जिन्हें न्यासर्ग कहते हैं, स्रावित करती है। मुख्य अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ पीनियल, पीयूष, अग्न्याशय, अवटु, परावटु, अधिवृक्क तथा पुनरुत्पादक हैं। इनके अल्प अथवा अत्यधिक स्राव विभिन्न व्यवहारो की ओर अग्रसर करते हैं।

उपरोक्त तत्रो के अतिरिक्त दूसरी प्रक्रियाएँ जैसे रासायनिक, चयापचय, तथा आनुवशिक कूटसकेतन का व्यक्ति के व्यवहार पर गहन प्रभाव पड़ता है।

प्रश्न

1. मस्तिष्क तथा उसके विभिन्न भागो तथा उनके कार्यों की आरेखित व्याख्या कीजिए।
2. सुषम्ना नाड़ी की संरचना तथा कार्यों की व्याख्या कीजिए।
3. स्वायत्त तन्त्रिका तंत्र के कार्यों का वर्णन कीजिए।
4. रेखाचित्र की सहायता से प्रमस्तिष्कीय पालियो की अवस्थिति तथा उनके कार्यों की व्याख्या कीजिए।
5. न्यासर्ग व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?
6. विभिन्न प्रकार की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों, उनके स्राव तथा व्यवहार पर उनके प्रभावो का वर्णन कीजिए।
7. निम्न पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। जहाँ आवश्यक हो चित्र बनाइए।
   (क) अधश्चेतक के कार्य
   (ख) जालाकार सक्रियण तत्र
   (ग) कोशिका
   (घ) तन्त्रिका उत्तेजना उत्पत्ति
   (ङ) क्रिया विभव
   (च) अन्तर्ग्रथन
   (छ) प्रतिवर्त
   (ज) सग्राहक, प्रभावक तथा सयोजक तंत्रिका
   (झ) प्रमस्तिष्कीय प्रभुत्व
   (ञ) आनुवशिकीय कूट सकेतन
8. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए
   (अ) मस्तिष्क .... भागो मे बैटा है।
   (आ) मस्तिष्क के दो गोलार्द्ध .... तथा .... हैं।
   (इ) स्वायत्त तन्त्रिका तत्र .... तथा .... से मिलकर बना है।
   (ई) .... तन्त्रिका प्रेषक पदार्थों के कुछ उदाहरण हैं।
   (उ) आनुवंशिक कूट-सकेतन का तात्पर्य .... है।

सही विकल्प को इस प्रकार चिन्हित (√) कीजिए

9. मस्तिष्क का वह भाग जो यौन अन्तर्नोदो, पीयूष विनियमन तथा प्यास से संबधित है यह कहलाता है :
   (अ) प्रमस्तिष्कीय वल्कुट (ब) चेतक
   (स) अधश्चेतक (द) सेतु
10. वाणी केन्द्र इसमे स्थित है
   (अ) ललाटपालि (ब) पश्चकपालपालि
   (स) शखपालि (द) पार्श्वपालि

एकक 3

अभिप्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक पक्ष

ऐसी इच्छाएँ तथा आवेग जो आप बना लेते हैं, उनका श्रेय सामान्यतः ऐसी प्रक्रिया को जाता है जिसे 'अभिप्रेरण' कहते हैं। इस प्रकार अभिप्रेरण व्यक्ति की वह आन्तरिक शक्ति है जो किसी जीवधारी मे कोई क्रिया जागृत अथवा प्रारम्भ करती है। इसके साथ ही हमारी सभी इच्छाओ अथवा उद्देश्यो को पूर्ण करने के लिए सभी क्रियाओ का विनियमन करती है, तथा बनाए रखती है। दूसरे शब्दों मे *अभिप्रेरण वह शक्ति है जो व्यवहार को प्रारम्भ करती है, उसे दिशा देती है तथा इसके अन्त अथवा समाप्ति का कारण बनती है*। इस प्रकार अभिप्रेरित दशा व्यवहार

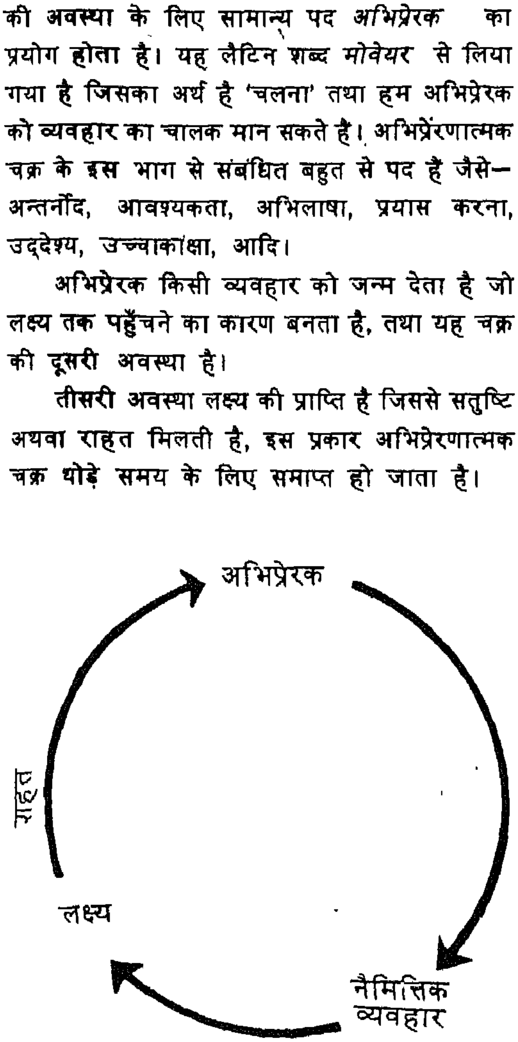
ओर बढ़ता है तथा जब लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है तो अभिप्रेरक कम से कम अस्थायी तौर पर शांत हो जाता है।

अभिप्रेरणात्मक चक्र

अभिप्रेरणात्मक चक्र मे तीन अवस्थाएँ होती हैं— अभिप्रेरक, व्यवहार तथा लक्ष्य। अभिप्रेरणात्मक चक्र की अवस्था के लिए सामान्य पद *अभिप्रेरक* का प्रयोग होता है। यह लैटिन शब्द *मोवेयर* से लिया गया है जिसका अर्थ है 'चलना' तथा हम अभिप्रेरक को व्यवहार का चालक मान सकते हैं। अभिप्रेरणात्मक चक्र के इस भाग से संबंधित बहुत से पद हैं जैसे— अन्तर्नोद, आवश्यकता, अभिलाषा, प्रयास करना, उद्देश्य, उच्चाकांक्षा, आदि।

अभिप्रेरक किसी व्यवहार को जन्म देता है जो लक्ष्य तक पहुँचने का कारण बनता है, तथा यह चक्र की दूसरी अवस्था है।

तीसरी अवस्था लक्ष्य की प्राप्ति है जिससे सतुष्टि अथवा राहत मिलती है, इस प्रकार अभिप्रेरणात्मक चक्र थोड़े समय के लिए समाप्त हो जाता है।



चित्र 3.1 अभिप्रेरणात्मक चक्र

यह चक्र निम्न उदाहरण से समझा जा सकता है। मान लीजिए आप अपने विद्यालय में हैं तथा जलपान की छुट्टी के समय आप एक आइसक्रीम बेचनेवाले को देखते है। आपकी आइसक्रीम के प्रति रुचि आप में उसे खरीदने की चाह पैदा करती है (अभिप्रेरक)। यदि आपके पास खरीदने को धन नहीं है तो आप यहाँ तक कि इसे खरीदने के लिए किसी से उधार ले सकते हैं (नैमित्तिक व्यवहार) परिणामस्वरूप आपकी आइसक्रीम की इच्छा की संतुष्टि हो जाएगी (लक्ष्य)। इसी सतुष्टि की भावना के कारण आप कहेंगे "इस समय के लिए तो काफी है, मेरी इच्छा पूर्ण हो गई, अब और आइसक्रीम की आवश्यकता नही" (राहत)। इस उदाहरण में हम यह देखते हैं कि व्यवहार अथवा क्रिया प्रारम्भ होती है, उसे दिशा मिलती है तथा राहत मिलने पर समाप्त हो जाती है।

अभिप्रेरणात्मक व्यवहार की विशेषताएँ

अभिप्रेरक प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखे जा सकते बल्कि उनके प्रभावों के रूप में पहचाने जा सकते हैं। कुछ विशेषताएँ जो हमें यह समझने में सहायक होंगी कि व्यक्ति किस सीमा तक अभिप्रेरित है, निम्नलिखित हैं:

1. अनिभिप्रेरित व्यक्ति की अपेक्षा एक अभिप्रेरित व्यक्ति अधिक शक्ति व कुशलता पूर्वक कार्य करेगा। एक विद्यार्थी जो कक्षा में प्रथम आना चाहता है सामान्यतः दूसरों की अपेक्षा अधिक मेहनत करता है और अधिक *शक्ति* लगाता है।
2. अभिप्रेरण किसी विशेष क्रिया पर *केन्द्रित* होता है। उदाहरण के लिए एक प्यासा व्यक्ति पानी ढूँढ़ने के लिए तैयार रहता है तथा जो किसी दर्द से पीड़ित है वह पीड़ा से बचने का प्रयत्न करता है।
3. अभिप्रेरक जितना शक्तिशाली होता है व्यवहार उतना ही दृढ़ होता है। यदि बच्चो को वह वस्तु नहीं दी जाए जिसे वे चाहते हैं उदाहरण के लिए साइकिल, तो हम प्रायः देखते हैं कि

वे अपनी वही बात बार-बार घण्टो तथा कभी-कभी कई दिनो तक दोहराते है। उनके लक्ष्य तक पहुँचने का अभिप्रेरण उस बच्चे की अपेक्षा अधिक तीव्र है जो पहले ही प्रयत्न के पश्चात् प्रयास करना छोड देता है।

4. जब व्यवहार का एक रूप लक्ष्य की ओर अग्रसर नही करता तो व्यक्ति कुछ दूसरे प्रयास करते हैं। वे लक्ष्य को परिवर्तित नही करते अपितु उसे प्राप्त करने के तरीके बदल सकते हैं। अतः *विचलन* अभिप्रेरणात्मक व्यवहार की विशेषताओ मे से एक है।

आप देख सकते हैं कि अभिप्रेरण एक जटिल प्रक्रिया है और आज भी कदाचित मनोवैज्ञानिक बहुत से अक्सर उठाए जाने वाले प्रश्नो का उत्तर देने मे असमर्थ हैं। कुछ अधिकतर उठाए जाते प्रश्न हैं, "क्या अभिप्रेरक अन्तर्जात अर्थात् जन्मजात हैं या सीखे जाते हैं ?" "विविध अभिप्रेरकों मे परस्पर क्या सबध हैं ?" "जब अभिप्रेरक परस्पर विरोधी व्यवहार को अभिप्रेरित करते हैं तब क्या होता है ?" इन प्रश्नो का उत्तर देने के प्रयास मे अभिप्रेरण की व्याख्या को लेकर अनेक विचारधाराओ एव प्रत्ययो का उद्‌गमन हुआ। इनमे से कुछ प्रत्यय मूल प्रवृत्तियाँ, आवश्यकताएँ, अन्तर्नोद आदि हैं। ये प्रत्यय इस बात की व्याख्या करते हैं कि कोई व्यवहार हम क्यों करते हैं। वे एक दूसरे से स्वतन्त्र नही हैं। वे अभिप्रेरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया मे समाकलित, परस्परव्यापी, एव अभिपूरक सरचना के रूप में कार्य करते है।

मूल प्रवृत्तियाँ

पूर्वकालिक मनोवैज्ञानिको ने यह दावा किया था कि जीवित प्राणियो का व्यवहार उनकी जन्मजात अथवा अन्तर्जात प्रवृत्तियो द्वारा निश्चित होता है। यह *पूर्व निश्चित क्रिया होती है जिससे प्राणी अपना अस्तित्व तथा अपनी प्रजाति को जीवित रख पाता है* । मूल प्रवृत्ति की ऐसी व्याख्या चार्ल्स डार्विन के सिद्धात के कारण लोकप्रिय हुई जो निम्न प्राणियो से मानव तक की जैविक निरन्तरता पर बल देता है। इससे सुझाव मिला कि व्यवहार तथा अभिप्रेरको मे भी कुछ निश्चित मात्रा में निरन्तरता है। विलियम मैकडूगल ने दावा किया कि जीवन की समस्त प्रक्रियाएँ उद्‌देश्यपूर्ण होती हैं तथा व्यक्ति एव अन्य जानवरो का व्यवहार उन लक्ष्यो या ध्येयो की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने से ज्ञात होता है। उन्होने बहुत सी मानव मूलप्रवृत्तियो व उनसे जुडे उपयुक्त सवेगो की पहचान की जैसे पलायन के साथ भय, जिज्ञासा के साथ आश्चर्य, युयुत्सा के साथ क्रोध इत्यादि। मानव अभिप्रेरण की व्याख्या करने मे मूलप्रवृत्तियों को अनुपयुक्त पाया गया जिसके परिणामस्वरूप मनोवैज्ञानिकों ने इनकी ओर कम ध्यान दिया।

उपजातियों का विशिष्ट व्यवहार

हाल के वर्षों मे पशुओ तथा पक्षियो पर अनुसधान किए जाने के कारण मूलप्रवृत्ति पद ने विस्तृत महत्ता प्राप्त कर ली है। के. लोरेंज और एन. टिनबर्जन ने मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार की इस पुनर्जीवित रुचि मे योगदान दिया। उन्होने व्यवहार के मूल प्रवृत्यात्मक प्रतिरूपो पर कई परीक्षण विशेषतया मछलियों व पक्षियो पर किए। पक्षियो व जानवरो के कुछ अनुक्रिया व्यवहार प्रतिरूपो जैसे घोसला बनाना, मातृत्व कर्तव्य, तथा प्रणयनिवेदन आदि ने मूल प्रवृत्ति की उपस्थिति का सुझाव दिया। एनथोलोजिस्ट ने पशुओं के ऐसे व्यवहार को उनके प्राकृतिक वातावरण मे अध्ययन करने का प्रयत्न किया। उन्होने *पशुओ के ऐसे व्यवहार का भी अध्ययन किया जो किसी विशेष उपजाति मे विशिष्ट है तथा यह ढूँढ़ने का प्रयास किया कि क्या वह व्यवहार उसी रूप मे उस उपजाति के सभी सदस्यो मे पाया जाता है* । उदाहरण के लिए क्या चूहो अथवा चीतो मे मादा उस उपजाति की सभी दूसरी मादाओ की तरह माँ के कर्तव्य को उसी प्रकार से निभाती है। क्या इनकी देखभाल तथा चिन्ता प्रत्येक बच्चे के लिए एक सी होती है ? आजकल एनथोलोजिस्ट 'मूलप्रवृत्ति' शब्द के प्रयोग की अपेक्षा

उपजाति का विशिष्ट व्यवहार कहना अधिक पसंद करते हैं। यह अधिक उचित जान पड़ता है क्योंकि वे उस व्यवहार का अध्ययन करते हैं जो एक उपजाति के जीवों में विशिष्ट होता है।

चिन्हन

एनथोलोजिस्टों ने जिस एक और संबंधित प्रत्यय को प्रवृत्त किया है, जिसे इस संदर्भ में समझना आवश्यक है, उसे *चिन्हन* कहते हैं। चिन्हन शब्द का प्रयोग विशेष रूप में एक जटिल किन्तु मूलप्रवृत्ति जैसे व्यवहार के वर्णन के लिए किया जाता है। किन्तु मूलप्रवृत्तियों की भाँति *चिन्हन व्यवहार पूर्णतः जन्मजात नहीं होता अपितु सीखा हुआ होता है* क्योंकि यह तभी प्रकट होता है जब प्राणी को उचित उत्तेजना मिलती है। उचित उत्तेजना में अनुक्रिया के विशिष्ट प्रतिरूप की प्रक्रिया को मुक्तिकर या मुक्तिकारी कहा जाता है और उचित समय अथवा काल को *क्रांतिक अवधि* कहा जाता है। इन दोनों विचारों को नवजात पक्षियो तथा पशुओ के व्यवहारों का अध्ययन करने के लिए किए गए प्रयोगों के सदर्भ में समझा जा सकता है।

सामान्यतः पक्षी व पशु जैसे बतख, कलहंस, बकरी, जेबरा व हिरण आदि जन्म के शीघ्र पश्चात् सर्वप्रथम दिखनेवाली गतिशील बड़ी वस्तुओं का पीछा करना शुरू कर देते हैं तथा उनसे सबद्ध हो जाते हैं। के. लोरैन्ज ने इसे एक प्रयोग द्वारा प्रदर्शित किया जिसमें नये पैदा हुए बतख के बच्चे ने जिसे बिना माँ की उपस्थिति के कृत्रिम रूप से उद्भवन किया गया था, एक मनुष्य का पीछा किया।

दूसरे उदाहरणों मे बतख के बच्चों ने तैरती हुई गेंद तथा लकड़ी की बनाई हुई चिड़िया (प्रलोभन) का पीछा किया और उनसे संबद्ध हो गए। इस मामले में लकड़ी से बने *प्रलोभन के पीछे केवल 10 या 15 मिनट जाना ही बतखों के बच्चों में चिन्हन पैदा करने के लिए काफी था* । यह बतखों के बच्चे लकड़ी की बनी प्रलोभन से अधिक सबद्ध रहे तथा उन्होने



चित्र 3.2 सेने के शीघ्र बाद बतख के बच्चे लोरेंज के पीछे जाते हुए

जीवित बतख की अपेक्षा लकड़ी के प्रलोभन को अधिक पसंद किया। यह पाया गया कि बतखों में चिन्हन सेने के बाद के 13 या 14 घटों के बाद आसानी से हो जाता है, किन्तु जीवन के प्रथम दो दिनो में किसी भी समय हो सकता है तथा वह समय जिसमे

चिन्हन होता है उसे क्रातिक अवधि कहा जाता है। सामान्यतः इस समय के बाद चिन्हन कठिन होता है। इन क्षेत्रों में ऐसे और अधिक रुचिकर प्रयोग किए गए थे।

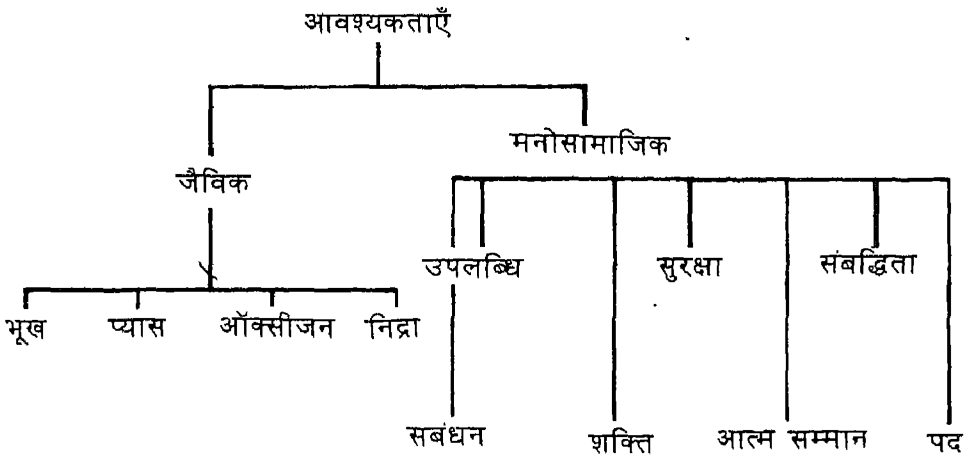
आवश्यकता

आवश्यकता किसी प्राणी में किसी वस्तु की कमी के कारण उत्पन्न होती है। कमी अथवा अभाव की यह दशा प्राणी को किसी विशेष लक्ष्य अथवा सीमा दशा की ओर ले जाती है। यह लक्ष्य पर्यावरण मे कोई वस्तु या व्यक्ति हो सकता है अथवा सतुष्टि की कोई आंतरिक अवस्था हो सकती है।

आवश्यकता बिना किसी वचन के भी उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए कोई छात्रा हिमालय की चोटियों पर पर्वतारोहण अभियान के लिए जाना चाहती है। यहाँ एक बात देखी जा सकती है कि यह इच्छा न किसी कमी के कारण पैदा हुई है और न पिछले अनुभवों के कारण । बस यह एक विशेष इच्छा जागृत हुई है। इसका कारण यह भी हो सकता है कि छात्रा ने पर्वतारोहण के बारे में जाना और पढ़ा होगा। किन्तु आवश्यकता किसी भी कमी के कारण उत्पन्न हो सकती है जैसे भूख या नीद के विषय मे होता है। अतः सक्षेप मे *आवश्यकता इच्छा अथवा कमी की सामान्यीकृत अवस्था है जिसके परिणामस्वरूप प्राणी किसी विशेष लक्ष्य को पहचानता है और अपनी क्रियाओं को उसकी प्राप्ति की दिशा में लगा देता है* ।

इस स्थान पर यह इंगित किया जा सकता है कि अन्तर्नोद तथा मूलप्रवृत्ति के प्रत्यय पशुओं पर किए गए प्रयोगों के विस्तृतीकरण के रूप मे मानव मनोविज्ञान के क्षेत्र मे आए। आवश्यकता का प्रत्यय मनुष्यों पर किए गए अध्ययनो के संदर्भ में विकसित हुआ है। इसका तात्पर्य है कि मानवीय स्तर पर अभिप्रेरण एक जटिल प्रक्रिया है जिस पर अन्य प्रक्रियाओं जैसे अधिगम, प्रत्यक्षीकरण, सामाजिक प्रभावों इत्यादि का असर होता है। अन्तर्नोद के प्रत्यय से भिन्न आवश्यकता एक लचीला प्रत्यय है तथा अभिप्रेरण की समाकलित एवं व्यवस्थित व्याख्या प्रस्तुत करता है।

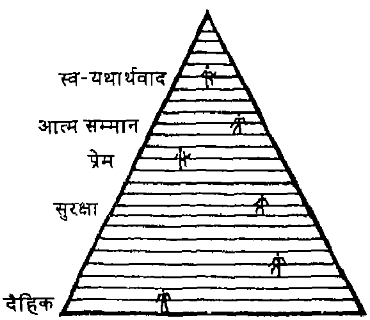
मनोवैज्ञानिकों ने आवश्यकताओं को बहुत सी श्रेणियों मे बाँटा है। इनमे से एक वर्ग दैहिक अथवा जैविक आवश्यकताओं जैसे क्षुधा, प्यास, आक्सीजन, निद्रा आदि का है। दूसरा वर्ग मनोसामाजिक आवश्यकताएँ जैसे सबधन, उपलब्धि, सत्ता, सुरक्षा, आत्म-सम्मान, सम्बद्धता तथा पद का है जैसा कि चित्र 3.3 में दिया गया है।



चित्र 3.3 कुछ जैविक और मनोसामाजिक आवश्यकताएँ

आवश्यकताओं का अनुक्रम

अब्राहम मैस्लो ने आवश्यकताओ का वर्गीकरण वरीयता के क्रम मे किया है। उनके अनुसार मनुष्य की जब तक दैहिक मूल आवश्यकताएँ सतुष्ट नही होतीं तब तक वह उन आवश्यकताओ की सन्तुष्टि के लिए प्रयास नही करता जो उससे उच्च स्तर पर होती हैं। मनुष्य के जीवनकाल मे उसकी मूल आवश्यकताओ की सतुष्टि अति महत्वपूर्ण है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते है तथा दूसरो के सम्पर्क मे आते हैं वे मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आवश्यकताएँ अर्जित करते हैं तथा उनका व्यवहार मूल आवश्यकताओ की अपेक्षा अन्य आवश्यकताओ के आधार पर अधिक निर्धारित होता है। मैस्लो की आवश्यकताओं का अनुक्रम सबधी प्रत्यय चित्र 3.4 मे दिया गया है।



चित्र 3.4 मैस्लो का आवश्यकताओ का अनुक्रम

कुछ महत्वपूर्ण मनोसामाजिक आवश्यकताओ का वर्णन नीचे किया गया है।

(अ) *सबधन*

प्रत्येक मानव मे दूसरो से सबध बनाने अथवा अन्य मानवो के साथ रहने की स्वाभाविक इच्छा होती है। सबधन का तात्पर्य दूसरे व्यक्तियो से सकारात्मक सबध स्थापित करने और उसे बनाए रखने, दूसरो के द्वारा पसन्द किए जाने तथा स्वीकृति से है। हम अपने आसपास लोगो को जोडे, त्रयी अथवा छोटे समूहो मे देखते है। वे अपना बहुत सा समय दूसरो के साथ व्यतीत करते है। प्रयोगो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सामान्यत. भय और उपयोगिता के कारण लोग सबध बनाए रखने मे प्रवृत्त होते हैं।

(ब) *उपलब्धि*

प्राय· उपलब्धि का सबध जीवन के विभिन्न प्रतिस्पर्धात्मक कार्यों से है जैसे कक्षा मे, खेल के मैदान मे तथा कौशलो इत्यादि मे। व्यक्ति निष्पादन अथवा आकाक्षा का उच्च स्तर निश्चित कर सकता है तथा अपने प्रयत्नो द्वारा सफलता के रास्ते मे आने वाली बाधाओ पर विजय प्राप्त करता हुआ इस तक पँहुच सकता है। यह प्रसिद्ध खिलाड़ियो मे देखा जा सकता है जो अपने निष्पादन के उच्च स्तर निश्चित करते है तथा अतर्राष्ट्रीय स्तर पर भाग लेते एवं विजयी होते हैं।

(स) *सत्ता*

सत्ता की व्याख्या व्यक्ति की प्रभुत्व, प्रभाव अथवा दूसरो को आज्ञा देने की प्रकृति से की जा सकती है। इस आवश्यकता से सबधित अध्ययनो से नेतृत्व व्यवहार के विषय मे महत्वपूर्ण सूचना मिलती है।

अन्तर्नोद

अब तक हमने मूलप्रवृत्ति और आवश्यकता के प्रत्ययो पर विचार किया। *अन्तर्नोद से तात्पर्य किसी व्यक्ति अथवा पशु को कार्य करने के लिए आसन्न करने से है* । अन्तर्नोद एक परिकल्पित विचार है। यह ऐसी वस्तु नही है जिसे हम देख सके अपितु इसका अनुमान व्यवहार से होता है। अन्तर्नोद के प्रत्यय द्वारा अभिप्रेरित व्यवहार की दो विशेषताएँ वर्णित होती हैं :

1. जब प्राणी अभिप्रेरित अवस्था मे होता है तब उसमे अत्यधिक सक्रियता होती है।
2. अति सक्रियता शीघ्र अथवा देर मे समाप्त हो जाती है जब वे दशाएँ जिन्होने सक्रियता मे वृद्धि की थी, हट जाती है या हटा दी जाती हैं।

प्राणी मे अन्तर्नोद की दशा अथवा अवस्था उस समय होती है जब किसी प्रकार की *बाधा अथवा कोई वचन आता है* । किसी प्रकार का वचन आने से प्राणी सक्रिय होता है परिणामस्वरूप निश्चित प्रकार की क्रिया की ओर अग्रसर होता है जिसके फलस्वरूप वह वंचन दूर हो जाता है। जब उस वंचन की सपूर्ति हो जाती है तब अन्तर्नोद की अवस्था क्रमशः उत्तरोत्तर कम सक्रिय होने लगती है तथा अंत मे एकदम कम हो जाती है। अन्तर्नोद को दो प्रकारो—*प्राथमिक* तथा *गौण* में वर्गीकृत किया जा सकता है। प्राथमिक अन्तर्नोद शारीरिक आवश्यकताओ जैसे क्षुधा, प्यास, तथा काम आदि से जुडे होते हैं। गौण अन्तर्नोद मनोवैज्ञानिक व सामाजिक आवश्यकताओ जैसे प्रतिष्ठा, पद, पहचान आदि से जुड़े होते हैं।

पुनर्बलन व लक्ष्य

पुनर्बलन के प्रत्यय का अन्तर्नोद के प्रत्यय से घनिष्ठ सबंध है क्योंकि सभी प्रकार के व्यवहार की अन्तर्नोद तथा उसके अभिप्रेरण के रूप मे कमी द्वारा व्याख्या नही की जा सकती है अतः मनोवैज्ञानिको को पुनर्बलन के प्रत्यय का आश्रय लेना पड़ा। मनोवैज्ञानिको द्वारा की गई खोजों द्वारा यह स्पष्ट हो गया है कि प्राणी हमेशा केवल आवश्यकता और अन्तर्नोद के कारण क्रिया को करने को अभिप्रेरित नही होता। मान लीजिए कोई व्यक्ति भूखा है और वह खाना खाने को है। यदि उसे यह मालूम हो जाए की सब्जी वही है जो उसे नापसन्द है तो एकाएक उसे ऐसा अनुभव होगा कि उसे अब भूख नहीं है। दूसरी ओर व्यक्ति वास्तव में भूखा न होने पर भी खा सकता है, यदि उसे पता चल जाए कि सामने स्वादिष्ट दिखनेवाले गुलाबजामुन अथवा आइसक्रीम हैं। आपको इन उदाहरणो से स्पष्ट हो गया कि व्यवहार का कारण आतरिक दशा न होकर बाह्य उद्दीपन है। इसी को पुनर्बलन कहा जाता है। जब उद्दीपन किसी व्यक्ति को किसी वस्तु की ओर गतिशील करता है जैसा कि गुलाबजामुन की स्थिति मे हुआ तब इसे सकारात्मक पुनर्बलन कहा जाता है। तथा जब कोई उद्दीपन किसी व्यक्ति को दूर ले जाता है जैसा कि किसी डरावनी वस्तु से होता है तो इसे नकारात्मक पुनर्बलन कहा जाता है। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि अन्तर्नोद उत्तेजना की वह अवस्था है जो किसी वचन की स्थिति अथवा दूसरे आंतरिक कारकों के कारण पैदा होती है जबकि पुनर्बलन एक बाह्य उद्दीपन है। *पुनर्बलन प्राणी को उत्तेजित करता है तथा व्यवहार को लक्ष्य के प्रति या उससे विपरीत निर्देशित कर सकता है* ।

ध्यान रहे कि पुनर्बलन लक्ष्य से भिन्न है। *लक्ष्य अतिम परिणाम हैं जिसकी ओर प्राणी प्रयत्नशील अथवा गतिशील होता है* । भोजन करना या क्षुधा मिटाना लक्ष्य है किन्तु भोजन की आकर्षण शक्ति पुनर्बलन है।

अभिप्रेरणात्मक क्रम

मनोवैज्ञानिक कभी-कभी अभिप्रेरित व्यवहार को आवश्यकता, अन्तर्नोद, पुनर्बलन तथा लक्ष्य के एक सम्मिलित क्रम में दिखाते हैं जैसे कि नीचे चित्र मे दिखाया गया है।

आवश्यकता ⟶ अन्तर्नोद ⟶ पुनर्बलन ⟶ लक्ष्य

चित्र 3.5 अभिप्रेरणात्मक क्रम

यह क्रम कुछ शारीरिक आवश्यकताओ जैसे क्षुधा, प्यास आदि में नियमित रूप से घटित होता है।

आवश्यकता का जन्म प्राणी के अन्दर उस समय होता है जब उसकी जैव-रासायनिक आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती। यह आवश्यकता शारीरिक दशा को जन्म देती है और यह उत्तेजना की अवस्था अन्तर्नोद कहलाती है। उत्तेजित प्राणी उत्तेजित अवस्था मे उद्दीपनो के प्रति अनुक्रिया करने को तैयार होता है तथा ये उद्दीपन पुनर्बलन कहलाते हैं। पुनर्बलन वस्तु की आकर्षण शक्ति है जिसकी ओर अभिप्रेरित व्यवहार निर्देशित होता है। जब प्रारम्भ की हुई आवश्यकता

की सतुष्टि हो जाती है तब हम कहते हैं कि व्यवहार की परिणति लक्ष्य प्राप्ति से हो गई।

आवश्यकताएँ विशेषकर जैविक आवश्यकताएँ एक चक्र के रूप में घटित होती हैं। प्राणी बहुत देर तक पूर्णतः संतुष्ट नही रहता है। शीघ्र ही या कुछ देर में दूसरे क्रम की आवश्यकता पड़ने लगती है।

अन्तर्द्वन्द्व

मानव व्यवहार प्रायः एक ही समय में बहुत सी आवश्यकताओ के परिणामस्वरूप होता है। जब व्यक्ति के अन्दर दो आवश्यकताएँ अथवा इच्छाएँ एक ही समय उत्पन्न होती हैं तथा अपनी पूर्ति की माँग करने लगती हैं तो इस अवस्था को अन्तर्द्वन्द्व की अवस्था कहा जाता है। अन्तर्द्वन्द्व कर्त्री आवश्यकताएँ तथा इच्छाएँ महत्व के अनुसार एक क्रम मे व्यवस्थित होती हैं। इस प्रक्रिया को *विन्सयन* कहते हैं। हम दिन-प्रतिदिन की क्रियाओ मे देखते हैं कि कुछ अभिप्रेरण अधिक प्राथमिकता प्राप्त कर लेते हैं तथा अन्य कम महत्वपूर्ण हो जाते हैं। उदाहरण के लिए आपने किसी स्थिति मे ऐसा अनुभव किया होगा जिसमे दो से अधिक अभिप्रेरण प्राथमिकता प्राप्त कर लेते हैं। मान लीजिए आपको अगले दिन दो भिन्न विषयों में परीक्षा की तैयारी करनी है तथा इसके साथ-साथ नाटक में भाग लेने के लिए अपनी भूमिका का अभ्यास भी करना है। यहाँ हम देखते हैं कि दो से अधिक अभिप्रेरण आपका अवधान और क्रिया एक ही साथ चाहते हैं। ऐसी परिस्थितियो मे आपका सामना एक अन्तर्द्वन्द्वपूर्ण स्थिति से है कि आप किस क्रिया को पहले करें और कितना समय उस पर लगाएँ जिससे दोनो लक्ष्यो की प्राप्ति हो जाए। मनुष्यो को प्रायः ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है तथा उन्हें कुशलतापूर्वक सुलझाना पडता है। किन्तु कभी-कभी वे इन अन्तर्द्वन्द्वों को सुलझाने मे असमर्थ हो जाते हैं, परिणामस्वरूप उनको तनाव का सामना करना पड़ता है तथा वे अभिप्रेरकों को कुशलातपूर्वक संचालित नही कर पाते हैं।

अन्तर्द्वन्द्व के प्रकार

सामान्यतः अन्तर्द्वन्द्व तीन प्रकार के होते हैं : (i) उपागम-उपागम अन्तर्द्वन्द्व, (ii) परिहार-परिहार अन्तर्द्वन्द्व, तथा (iii) उपागम-परिहार अन्तर्द्वन्द्व।

(i) *उपागम-उपागम अन्तर्द्वन्द्व* : यह एक ही जैसे दो या दो से अधिक आकर्षित करने वाले लक्ष्यों के कारण उत्पन्न होता है जैसे दो समान आकर्षक कार्यों में से एक को चुनना।

(ii) *परिहार-परिहार अन्तर्द्वन्द्व* : यह एक जैसे दो या दो से अधिक अवांछनीय व अप्रिय लक्ष्यों के कारण उत्पन्न होता है जैसे एक विद्यार्थी को परीक्षा देने का विचार अस्वीकार्य है साथ ही साथ परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने के परिणाम से डरता भी है जो कि उसे बराबर ही अस्वीकार्य हैं।

(iii) *उपागम-परिहार अन्तर्द्वन्द्व* : यह उस समय उत्पन्न होता है जब एक लक्ष्य से प्रिय-अप्रिय अथवा उचित व अनुचित भावनाएँ जुड़ी होती हैं। व्यक्ति लक्ष्य को अस्वीकार भी करता है और उससे आकृष्ट भी हो सकता है। उदाहरण के लिए एक विद्यार्थी चिकित्सक बनना चाहता है किन्तु मृत शरीर अथवा रक्त से घबराता है। इस प्रकार के अन्तर्द्वन्द्व को सुलझाना प्रायः कठिन हो जाता है क्योकि यह प्राय. बहुत अधिक सवेगात्मक असुविधा उत्पन्न करता है। अन्तर्द्वन्द्व किस प्रकार सुलझाए जाते हैं यह बहुत से कारकों पर निर्भर करता है जैसे व्यक्ति का व्यक्तित्व, उसकी योग्यता तथा पिछले अनुभव आदि। इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न अभिप्रेरक अन्तर्द्वन्द्वों को जन्म देते हैं व अन्तर्द्वन्द्व बदले में अभिप्रेरण के रूप में कार्य करते हैं।

कुण्ठा

अभिप्रेरित व्यवहार बहुधा मार्ग में विफलता अथवा बाधा आने के कारण अपने लक्ष्य को प्राप्त करने मे असफल होता है। भौतिक तथा सामाजिक बाधाएँ हस्तक्षेप करती हैं तथा लक्ष्य की प्राप्ति मे देरी करती

हैं अथवा उसे पूर्णतः असफल कर देती हैं। ऐसी परिस्थिति मे अभिप्रेरण के निष्फल होने के कारण व्यक्तियों में कुण्ठा का अनुभव होता है। तथा यही स्थिति कभी-कभी प्रतिबल पैदा कर देती है।

कुण्ठा प्रायः तब होती है जब अभिप्रेरणाओ के बीच अन्तर्द्वन्द्व होता है तथा जब दो या दो से अधिक परस्पर विरोधी प्रकार के अभिप्रेरित व्यवहार एक साथ होते हैं जैसा कि उपरोक्त प्रकार के अन्तर्द्वन्द्वो मे बताया गया है जो एक साथ क्रियान्वित नही किए जा सकते। कुछ मनोवैज्ञानिक यह दावा करते हैं कि कुण्ठा के कारण अप्रिय संवेग विशेषतः भय तथा क्रोध पैदा होते हैं। जब कुण्ठा पर विजय प्राप्त हो जाती है तो आनन्द और उल्लास की प्राप्ति होती है।

भावप्रबोधन

अभिप्रेरण तथा संवेग को तभी समझा जा सकता है जब हम भावप्रबोधन के प्रत्यय का अन्तर्नोद के सामान्य स्तर से सबंध को जानें। हम यह जानते हैं कि सामान्य अन्तर्नोद उत्तेजना के सातत्यक पर शून्य से लेकर उच्च स्तर तक जाता है। जब हम सोये हुए होते हैं तो हमारा भावप्रबोधन स्तर निम्न होता है। तन्त्रिका तंत्र अपेक्षाकृत कम सक्रिय होता है और आगत उद्दीपनो के ग्रहण की तत्परता मे कमी होती है। किन्तु जब हम उत्तेजित दशा में होते हैं तो हमारा भावप्रबोधन स्तर उच्च होता है।

द्वितीय एकक मे आपने पढ़ा कि किस प्रकार तंत्रिका तंत्र विभिन्न प्रकार के उद्दीपनों को ग्रहण करने तथा भेजमे का कार्य करता है। मस्तिष्क के अन्दर की क्रिया अनेक विद्युत यन्त्रो द्वारा मापी जा सकती है। तन्त्रिका तत्र की क्रिया में अति सूक्ष्म परिवर्तनां को जानने की योग्यता पर हुए अनेक अनुसंधानों ने इन तथ्यों की खोज की कि भावप्रबोधन का मस्तिष्क के जालाकार सक्रियण तंत्र से घनिष्ठ सबंध है। यह देखा गया है कि जब भावप्रबोधन स्तर निम्न होता है तो क्रिया अथवा निष्पादन निम्न होता है। जब कोई व्यक्ति इस दशा मे होता है तो वह उद्दीपनो के प्रति पर्याप्त रूप से संवेदनशील नही होता तथा कुशलतापूर्वक अनुक्रिया के लिए तैयार नही होता। जब भावप्रबोधन का स्तर ऊँचा होता है तब भी निष्पादन कम रहता है क्योकि व्यक्ति बहुत से उद्दीपनों के लिए प्रतिक्रिया करता है तथा बढ़ाकर अथवा अव्यवस्थित रूप से अनुक्रिया करता है। यह पाया गया है कि भावप्रबोधन अथवा अवधान की सामान्य स्थिति मस्तिष्क मे जालाकार सक्रियण तत्र के उत्तेजित होने से प्रभावित होती है। दूसरे शब्दो में इस क्षेत्र के उत्तेजित होने से प्राणी की सामान्य भावप्रबोधन दशा बढ़ जाती है। मनोवैज्ञानिकों ने ऐसे सुझाव दिए हैं कि भावप्रबोधन स्तर बहुत सीमा तक अभिप्रेरणात्मक और सवेगात्मक व्यवहार को निम्नलिखित प्रकार से निर्धारित करता है।

1. क्रिया को प्रारम्भ करने के लिए भावप्रबोधन का इष्टतम स्तर आवश्यक है।
2. भावप्रबोधन के मध्यम अथवा बिचले स्तर पर निष्पादन अति उत्तम होता है।
3. ऐसे व्यक्ति जो पर्याप्त मात्रा मे भावप्रबोधित नहीं होते वे उत्तेजना को और ढूँढ़ते हैं जो उनके भावप्रबोधन के स्तर को बढ़ाता है।
4. ऐसे व्यक्ति जो अत्यधिक भावप्रबोधित हो जाते हैं वे उत्तेजना को कम करने के लिए शान्ति तथा शान्त वातावरण ढूँढ़ते हैं।

अभिप्रेरण का मापन

दूसरी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओ की भाँति अभिप्रेरण प्रत्यक्ष रूप से देखे नहीं जाते हैं अपितु व्यवहार द्वारा उनका अनुमान लगाया जा सकता है। पशुओं तथा मनुष्यों के व्यवहार पर विचार करते हुए मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरण तथा इसकी शक्ति को मापने के लिए निम्नलिखित पाँच विधियाँ बताई हैं।

(i) *उपभोगी व्यवहार*

उपभोगी व्यवहार वह विशिष्ट व्यवहार है जो अभिप्रेरण को सतुष्ट करता है। एक भूखे प्राणी के लिए भोजन करना और प्यासे प्राणी के लिए पानी

पीना उपभोगी व्यवहार है। व्यक्ति जितना अधिक प्यासा होता है उतना ही अधिक पानी वह पीता है और जितना अधिक भूखा होता है उतना ही अधिक भोजन वह खाता है। इस तरह उपभोगी व्यवहार की मात्रा को अभिप्रेरण की शक्ति के एक माप के रूप मे प्रयुक्त किया जा सकता है।

(ii) *वंचन*

पशुओं और मनुष्य दोनों पर भोजन, जल तथा निद्रा आदि के वंचन की अवधि के विचलन से व्यवहार पर इनके प्रभाव को लेकर अनेक प्रयोग किए गए। भोजन व जल 6, 9, 12 तथा 24 घण्टों के लिए नहीं दिए गए। वंचन की अवधि की लम्बाई को अभिप्रेरण की शक्ति के माप के रूप में प्रयुक्त किया गया।

(iii) *निष्पादन*

एक अन्य विधि जो अभिप्रेरण के मापन के लिए प्रयोग में लाई जाती है उसके अतर्गत देखा जाता है कि किस प्रकार प्रयोज्य अपनी क्रियाओं का प्रयोग लक्ष्य तक पहुँचने में करेगा। उदाहरण के लिए चूहों पर किए गए कुछ प्रयोगों मे वैज्ञानिको ने लक्ष्य पर पहुँचने से रोकने के लिए बाधा (विद्युतीकृत जाली) खड़ी कर दी। दिये हुए समय मे जितनी बार चूहा उस जाली को पार करेगा वही उसके अभिप्रेरक की शक्ति थी।

(iv) *सीखना*

यहाँ अभिप्रेरण को यह जानकर मापन किया जाता है कि कोई व्यक्ति किसी समस्या स्थिति में कितनी शीघ्रता से सीखता है। उदाहरण के लिए बच्चे शिक्षक द्वारा दी गई स्वीकृति तथा प्रशंसा द्वारा अभिप्रेरित होते हैं तथा यह पुरस्कार के रूप में उन्हें शीघ्रता से सिखाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

(v) *व्यक्तित्व-परीक्षण*

मानव अभिप्रेरकों विशेषकर मनोवैज्ञानिक और सामाजिक अभिप्रेरको जैसे संबंधन तथा उपलब्धि आदि के मापन के लिए बहुत से परीक्षण बनाए गए हैं। इनसे प्रयोज्यों की आवश्यकताएँ तथा उनकी शक्ति पहचानने में सहायता मिलती है। एडवर्ड की वैयक्तिक वरीयता अनुसूची मानव की सामाजिक आवश्यकताओं को मापने के लिए बनाई गई थी। स्थितिपरक परीक्षणो का उपयोग भी अभिप्रेरण शक्ति को मापने के लिए होता है। इस परीक्षण मे किसी व्यक्ति को वास्तविक स्थिति में रखा जाता है और प्रयोगकर्ता उसकी क्रियाओं का निरीक्षण करता है। उदाहरण के लिए किसी बालक/बालिका की आक्रामकता इस तरह मापी जा सकती है कि उसे गुड्डे या गुड़ियों से खेलने को छोड़ दिया जाए और यह देखा जाए कि वह कितनी बार उनके साथ कुछ आक्रामक या तोड़फोड़ वाली क्रियाएँ करता/करती है।

अभिप्रेरण में उभरती हुई प्रवृत्तियाँ

अभिप्रेरण के क्षेत्र मे हुए अध्ययन से पता चला है कि अन्तर्नोद, पुनर्बलन तथा प्रोत्साहन आदि सामाजिक परिस्थितियों में उपयोगी सिद्ध हुए हैं। विभिन्न प्रकार के पुनर्बलन कार्यक्रम विद्यार्थियो, औद्योगिक कर्मचारियों तथा मानसिक अस्पतालों के रोगियो पर नियोजित किए जाते हैं जिनसे उन्हें निर्धारित लक्ष्य की ओर अभिप्रेरित किया जा सके। ये अध्ययन इस बात का भी दावा करते हैं कि सामाजिक व्यवहार में सुधार हो सकता है।

यह पाया गया है कि वस्तुओं के पुरस्कार जैसे धन और भेंट आदि जो व्यक्ति से बाहर हैं, प्रत्येक व्यक्ति को सदैव अभिप्रेरित नहीं कर सकते क्योंकि कुछ व्यक्ति स्व-अभिप्रेरित होते हैं। वर्तमान समाज में स्व-अभिप्रेरण अथवा आंतरिक अभिप्रेरण का विचार महत्ता प्राप्त कर रहा है। विद्यालयो तथा महाविद्यालयों में विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि सीखने के लिए सीखिए अथवा सीखने को प्यार करिए न कि पुरस्कारों जैसे श्रेणी, पद अथवा इनाम को। बाह्य पुरस्कार द्वारा बालक/बालिका का सीखना पुरस्कार पर आधारित बना देता है तथा बाद के जीवन मे बालक/बालिका

तभी सीखता/सीखती है जब अधिगम के साथ पुरस्कार भी संबंधित हो।

क्षुधा, भोजन व्यवहार, निद्रा तथा यौन आदि क्षेत्रों में अनुसंधान हुए हैं। क्षुधा तथा भोजन की आदतो पर हुए अध्ययनो से वज़न तथा स्थूलता को नियन्त्रित करने से सबधित समस्याओं को समझने मे सहायता मिलती है। स्थूलता इस विश्व में लाखो की समस्या है। अभिप्रेरण अध्ययन इस समस्या का समाधान प्रदान करने का प्रयास कर रहे हैं। निद्रा तथा इससे संबंधित दुर्विषयो पर हुए अध्ययन इस सूचना की ओर इंगित करते हैं कि जब कोई व्यक्ति नींद से वचित किया जाता है तो मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ जैसे प्रत्यक्षीकरण, अधिगम तथा स्मृति किस प्रकार प्रभावित होती हैं।

पक्षियों तथा पशुओ पर किए गए अध्ययनो से मूलप्रवृत्ति से सबधित व्यवहार के रोचक ढंग जैसे घोंसला बनाना, मातृत्व देखभाल, मैथुन और क्षेत्रीयता आदि देखने में आए हैं। पूरे विश्व मे उपरोक्त क्षेत्रों में विस्तृत अनुसधान किए जा रहे हैं।

संवेग

संवेग का आंग्ल पर्यायवाची शब्द इमोशन, लैटिन पद 'इमोवेयर' से निकला है जिसका तात्पर्य है हिलाना, उत्तेजित करना, गति करना। *अतः सवेग को प्राणी की उत्तेजित अवस्था कहा जा सकता है जो व्यवहार को शुरू करती तथा दिशा देती है* । सवेग और अभिप्रेरण मे घनिष्ठ सबध है।आपने यह पढ़ा ही है कि मूल प्रवृत्ति के साथ सवेग जुड़े होते हैं। यह निम्न उदाहरण द्वारा देखा जा सकता है कि सवेग अभिप्रेरण से कैसे जुड़ा होता है। उदाहरणार्थ आपकी वार्षिक परीक्षा की तिथि घोषित कर दी गई है तथा आप इसके लिए तैयारी कर रहे हैं। एक ओर आप अभिप्रेरित हैं तथा परीक्षा देने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे हैं किन्तु साथ ही आप यह पाते हैं कि आप तनावग्रस्त तथा भयभीत हैं। तनाव तथा भय की यह अवस्थाएँ किसी भी प्रकार आपकी परीक्षा की तैयारी से सबधित नही हैं किन्तु वे आपके व्यवहार को प्रभावित करती है। सक्रियण अथवा भावप्रबोधन की ये दशाएँ जो अभिप्रेरित व्यवहार के साथ होती हैं, सवेग कहलाती हैं। भय, क्रोध, आनन्द, दुख असहायता तथा विरुचि कुछ सामान्य संवेगात्मक स्थितियाँ है।

संवेगों की सामान्य विशेषताएँ

सवेगो की कुछ सामान्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. सवेग प्राणी मे शरीर की भावप्रबोधित दशा के सक्रियण के साथ होते हैं।
2. जब कोई व्यक्ति सवेगात्मक अवस्था मे होता है तो बहुत मात्रा मे ऊर्जा मुक्त होती है। यह बहुत से सवेगो के बारे मे सत्य है। किन्तु कुछ संवेग ऐसे भी हैं जैसे दुःख जिसमे ऊर्जा तथा क्रिया का स्तर कम हो जाता है।
3. सामान्यतः सवेगो के साथ दैहिक परिवर्तन जुडे हुए होते हैं जैसे रक्तचाप, नाड़ी की गति, हृदय की धडकन और श्वास प्रक्रिया आदि।
4. जब व्यक्ति सवेग की अवस्था मे होता है तो उसमे शारीरिक परिवर्तन, मुख मुद्राएँ अथवा हाव-भाव परिवर्तन भी होते हैं।
5. मनोवैज्ञानिक क्रियाएँ जैसे प्रत्यक्षीकरण, अधिगम तथा स्मृति भी प्रभावित होती हैं।
6. सवेगात्मक अनुभव या तो समायोजन की क्रियाओ मे सहायता करते हैं या उनमे बाधा डालते हैं। सवेग के कम तीव्र रूप ऊर्जा मुक्त कर सकते है जिसे रचनात्मक और समायोजनात्मक व्यवहार में प्रयुक्त कर सकते हैं। दूसरी ओर अधिक तीव्र संवेगात्मक अनुभव समायोजन की प्रक्रिया मे बाधा या हस्तक्षेप कर सकते हैं।
7. सवेगात्मक अनुभव एक व्यक्ति से दूसरे में तथा एक परिस्थिति से दूसरी मे भिन्न होते हैं।
8. सवेग तथा उनकी अभिव्यक्ति बहुत सीमा तक अधिगम तथा अनुभव से परिमार्जित होती है।
9. सवेग एक लम्बे समय तक कार्य करते रहते है।

संवेगात्मक दशाओं के दैहिक सह-संबद्ध

संवेग की विशेषताओं का वर्णन करते समय कहा गया था कि संवेगात्मक अवस्थाओं में शरीर के अन्दर कुछ शारीरिक परिवर्तन होते है। ये परिवर्तन केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र तथा अन्तःस्रावी तत्र की क्रियाओं के कारण उत्पन्न होते हैं। उनमे से कुछ का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

(1) सवेग के महत्वपूर्ण लक्षणो मे से एक हृदय धड़कन में परिवर्तन होना है।
(2) बढ़ी हुई हृदय धड़कन के कारण रक्तचाप बढ़ जाता है। क्रोध मे चेहरे का लाल हो जाना तथा लज्जा के समय चेहरे पर लालिमा आना रक्त चाप और रक्तसंचार के परिवर्तनों के कारण होता है।
(3) श्वासगति का बढ़ जाना। कभी-कभी साँस लेने की गहराई भी विभिन्न संवेगों के साथ बदलती है।
(4) उदर तथा आँतों की गतियो मे कमी हो जाती है तथा पाचक रसों तथा लार निकलना कम हो जाता है। इससे सामान्यतः मुँह में सूखेपन का अनुभव होता है। पेट मे हल्का सा दर्द होता है तथा सवेग के समय भूख मे कमी हो जाती है।
(5) संवेगात्मक अवस्थाओं में त्वचा के विद्युतीय गुणों में अति सूक्ष्म किन्तु पता लगाने योग्य परिवर्तन होते हैं। ये एक यंत्र जिसे 'गैल्वेनोमीटर' कहते हैं, उसकी सहायता से अभिलिखित किए जा सकते हैं। आंकड़ो को गैल्वेनिक त्वक् अनुक्रिया कहते हैं। गैल्वेनिक त्वक् अनुक्रिया संवेगात्मक अवस्थाओं में हुए परिवर्तनो का सवेदनशील सूचक है।

दूसरे परिवर्तन पुतलियों का फैलना व सिकुड़ना और पसीने का बढ़ना हैं। संवेगात्मक अवस्थाओं में परिवर्तन एवं अभिव्यक्तियो के क्षेत्रों मे अनेक प्रकार से जाँच की जाती है। ये परिवर्तन असत्य सूचित्र परीक्षण का आधार बनते हैं।

संवेग में शारीरिक परिवर्तन

उपरोक्त प्रच्छन्न परिवर्तनो के साथ शरीर के बहुत से भागों मे निरीक्षण योग्य बाह्य परिवर्तन होते हैं जैसे मुख- मुद्राएँ, हाथो की गतियाँ तथा स्वर मे परिवर्तन इत्यादि जो इस बात को इंगित करते हैं कि व्यक्ति सवेग की अवस्था से गुजर रहा है। कुछ परिवर्तन निम्नलिखित हैं।



चित्र 3.6 विभिन्न सवेग

(अ) मुख मुद्राएँ

आपने देखा होगा कि जब आप क्रोधित होते हैं तो सामान्यतः आपके जबड़े सख्त, नथुने फूले हुए, आँखें फैली हुई आदि होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि आँख, होठ, नाक तथा माथे की विभिन्न मास पेशियाँ गति प्रदर्शित करती हैं। अधिकांशतः विभिन्न संवेगों में विशिष्ट मुख मुद्राएँ होती हैं। किन्तु विभिन्न संवेगो मे से गुजरते समय अभिव्यक्तियो की समानता के कारण संवेगो को पहचानना कठिन हो जाता है।

(ब) हाव-भाव तथा मांसपेशीय समायोजन

हावभाव में हाथो, पैरो यहाँ तक कि समस्त शरीर की गतियाँ सम्मिलित होती हैं। जब आप कुछ वर्णन करते समय बहुत अधिक उत्तेजित हो जाते हैं तो आप हाथ तथा कंधे आदि हिलाने लगते हैं। कभी-कभी शरीर के सपूर्ण मासपेशीय तंत्र में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए जब आपका किसी डरावने उद्दीपन से सामना होता है तो आप यह जानकर स्वय आश्चर्यचकित हो जाते हैं कि आप इतनी तेज गति से कैसे भाग सके तथा उस उद्दीपन से बच गए। आप यह भी देखते हैं कि ऐसी अवस्था में भय के कारण कुछ लोग बिल्कुल स्थिर, स्तब्ध, और ठण्डे हो जाते हैं तब संपूर्ण शरीर अभिव्यक्ति मे सम्मिलित होता है।

(स) स्वर

जब कोई व्यक्ति संवेग का अनुभव कर रहा होता है तो प्रायः उसका स्वर प्रभावित हो जाता है। जब हम भयभीत होते हैं तो हमारा स्वर कोमल तथा धीमा हो जाता है तथा जब क्रोधित होते हैं तो यह सामान्यतः ऊँचा तथा तीव्र स्वरमान का हो जाता है। शारीरिक परिवर्तन महत्वपूर्ण माप होते हैं क्योंकि वे व्यवहार की सामान्य व असामान्य अवस्थाओ को इंगित करते हैं।

संवेगों की विचारधाराएँ

निम्न भाग मे संवेगों की कुछ महत्वपूर्ण विचारधाराओ का वर्णन किया गया है। कुछ मनोवैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि मनोवैज्ञानिक तथा चेतन अनुभवों का अनुगमन दैहिक तथा शारीरिक परिवर्तन करते हैं। दूसरों के इससे भिन्न विचार हैं। चार भिन्न विचारधाराएँ नीचे दी गई हैं।

(i) जेम्स-लांगे

विलियम जेम्स के संवेग संबधी विचार उस समय के प्रचलित विचार कि शारीरिक परिवर्तन मनोवैज्ञानिक अनुभवो का अनुगमन करते हैं, के विपरीत थे। जेम्स का ऐसा विश्वास था कि हम इसलिए नहीं रोते क्योंकि हम दुःखी हैं या इसलिए नहीं भागते क्योंकि हम भयभीत हैं। अपितु हम दुःखी हैं क्योंकि हम रोते हैं तथा भयभीत हैं क्योकि हम भागते हैं। जेम्स ने यह दावा किया कि सवेग शारीरिक प्रतिक्रियाओं पर आधारित है। आइये हम जेम्स की विचारधारा से एक उदाहरण पर विचार करें। मान लीजिए आपने कक्षा मे कोई शैतानी की और आपको कक्षा से बाहर खड़ा किया गया। एकाएक आप देखते हैं कि प्रधानाचार्य आपकी ओर आ रहे हैं। पहले आप शारीरिक परिवर्तनों का अनुभव करेंगे जैसे कंपन, हृदय की धड़कन बढ़ना, पेट में गड़बड़, मुख मुद्राओ में परिवर्तन आदि । ये सभी परिवर्तन एक साथ आपके 'भय' के संवेग का आधार बनते हैं।

कार्ल लांगे ने संवेगो के बारे मे जेम्स के समान विचार व्यक्त किया। ये दोनों सम्मिलित विचार 'जेम्स-लांगे सिद्धांत' के नाम से जाने गये। संवेग का क्रम चित्र 3.7 मे दिखाया गया है।

घटना

↓

शारीरिक परिवर्तन

↓

संवेग का अनुभव

चित्र 3.7 जेम्स-लांगे की संवेग की विचारधारा

(ii) **कैनन-बार्ड**

डब्ल्यू कैनन और एल एल बार्ड के मतानुसार चेतक तथा अधश्चेतक क्षेत्रो मे विशिष्ट मस्तिष्क केन्द्र होते हैं जो सवेगात्मक अनुभवो के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस मत के अनुसार जब व्यक्ति किसी उद्‌दीपन के प्रति अनावृत होता है जैसा कि पहले दिये गए उदाहरण मे विद्यार्थी प्रधानाचार्य महोदय को अपनी ओर आते देखता है, इससे तंत्रिका उत्तेजना चेतक मे जाती है। वहाँ से कुछ उत्तेजनाएँ वल्कुट में पहुँचती हैं जहाँ उद्‌दीपन का प्रत्यक्षीकरण होता है तथा संवेग का अनुभव होता है जबकि दूसरी उत्तेजनाएँ मांसपेशियो तथा आँतरांग में जाती हैं, जहाँ शारीरिक परिवर्तन होते हैं। कैनन तथा बार्ड इस बात पर बल देते है कि संवेगात्मक अनुभव और शारीरिक परिवर्तन दोनो चेतक तथा अधश्चेतक की तंत्रिका क्रिया के परिणामस्वरूप एक ही समय पर घटित होते हैं जैसा कि चित्र 3.8 मे दिखाया गया है।

घटना

↓

चेतक का सक्रियण

↙ ↘

शारीरिक परिवर्तन संवेग का अनुभव

चित्र 3.8 कैनन-बार्ड की सवेग की विचारधारा

(iii) **शैक्टर-सिंगर की विचारधारा**

एस शैक्टर और जे ई सिंगर के अनुसार सवेग दो सघटनों के कारण होते है।

(अ) शारीरिक भावप्रबोधन जो बडे अस्पष्ट तथा विसारित होते है।

(ब) ज्ञानात्मक प्रक्रिया जिसके द्वारा व्यक्ति अपने शारीरिक भावप्रबोधन को अकित करता है।

यह दोनो सघटक एक उदाहरण द्वारा समझे जा सकते हैं। मान लीजिए आप अर्धरात्रि मे एक व्यक्ति द्वारा जगा दिए जाते हैं जो एक तार लेकर आता है। आपकी पहली प्रतिक्रिया किसी बुरे समाचार के भय की होगी किन्तु आपको यह जानकर राहत मिलेगी कि तार आपके लिए नही हैं। यह तार लाने वाले की गलती थी। यह विचारधारा इस बात पर बल देती है कि सवेग जिसका आप अनुभव करते हैं, इस बात पर निर्भर करता है कि आप बाह्य उद्‌दीपन का किस प्रकार मूल्याकन करते हैं तथा अपने आपको अथवा अपने अनुभव को भयप्रद, चाहने योग्य अथवा भयानक इत्यादि अकित करते हैं। प्रेम, भय तथा ऊब आदि सवेगो की व्याख्या करने के लिए इन दोनो सघटको पर बहुत से अनुसधान किये गये हैं। इस विचारधारा के अनुसार सवेग का क्रम चित्र 3.9 मे दिया गया है।

घटना

↓

शारीरिक भावप्रबोधन

↓

उद्‌दीपन का मूल्यांकन

↓

भावप्रबोधन की स्थिति का अंकितन

↓

सवेग का अनुभव

चित्र 3.9 शैक्टर-सिगर की सवेग की विचारधारा

(iv) **विभेदक-संवेग विचारधारा**

सी ई इज़ार्ड प्रमुख विभेदक सिद्धान्तवादियों मे से एक हैं। उनके विचार डार्विन तथा जेम्स के अध्ययनो से विकसित हुए। विभेदक संवेग सिद्धान्तवादियों ने इस बात पर बल दिया कि प्रत्येक सवेग की विकासमान सार्थकता है तथा अधिगम कारक इन सवेगो की अभिव्यक्ति तथा अनुभव को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए भारतीय तथा अमरीकावासी क्रोध के संवेग की अभिव्यक्ति भिन्न तरीकों से करना सीखते हैं। डार्विन की भाँति इज़ार्ड का भी ऐसा विश्वास था कि मुख मुद्राएँ मस्तिष्क को पुनर्निवेशन देती हैं, जिससे संवेग का अनुभव तीव्र, प्रावरोधित तथा परिमार्जित होता है। उन्होने तीन सघटको पर बल दियाः (i) मस्तिष्क तथा कायिक तंत्रिका तत्र की तत्रिका क्रिया, (ii) मुख मुद्राएँ तथा (iii) सवेगो का अनुभव । इन्हें नीचे चित्रित क़िया गया है।

घटना

↓

मस्तिष्क तथा कायिक तंत्रिका तत्र की क्रिया

↓

मुख मुद्राएँ

↓

संवेग का अनुभव

चित्र 3.10 विभेदक संवेग विचारधारा

इज़ार्ड और उनके साथियो ने एक अध्ययन किया जिसमे विभिन्न संस्कृतियो के व्यक्तियो की मुखमुद्राओं द्वारा प्रदर्शित सवेगो को पहचानना था । उन्होने यह पाया कि इस सास्कृतिक विविधता में अधिगम की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ये विविधताएँ क्रोध, उत्पात, हिंसा इत्यादि से सम्बन्धित विभिन्न सास्कृतिक मूल्यो के परिणामस्वरूप हैं। इज़ार्ड ने आगे यह बताया है कि संवेग न केवल व्यवहार को अपितु प्रत्यक्षीकरण, चिन्तन, स्मृति, कल्पना तथा व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करते हैं। यह हमारे दिन-प्रतिदिन के व्यवहार से स्पष्ट होता है। उदाहरण के लिए जब हम उदास होते हैं तो हममे सामान्यतः सभी वस्तुओ के प्रति निराशावादी दृष्टिकोण रखने की प्रकृति होती है। उसी प्रकार जब हम क्रोधित होते हैं तो प्रत्येक वस्तु हमे चिढ़ानेवाली और अप्रियता पैदा करनेवाली लगती है। सगीत, अच्छा भोजन, एवं मित्र जो प्रिय लगते थे, एकाएक अत्यधिक अप्रिय हो जाते हैं। व्यक्ति जैसा सवेगो के बारे मे विचार रखता है उसमे उसके अन्तर्वैयक्तिक सबंधों, परस्पर सामाजिक क्रियाओ, और यहाँ तक कि मानसिक व्याधियो के उपचार करने के व्यावहारिक पक्ष भी निहित होते हैं।

अभी तक हमने सवेगो की प्रक्रिया की व्याख्या करनेवाली कुछ लोकप्रिय विचारधाराओ का अवलोकन किया है। निम्नलिखित भाग में तीन महत्वपूर्ण सवेग—भय, क्रोध तथा प्रेम—का वर्णन किया गया है। इन संवेगों का यहाँ उल्लेख इसलिए किया गया है क्योकि इन्हें आधारभूत तथा मूलभूत सवेग माना जाता है। इन तीनो सवेगो का अध्ययन न केवल मानव प्रयोज्यो बल्कि पशुओं जैसे बंन्दरो, कुत्तों, बिल्लियो तथा चूहो पर भी हुआ।

(i) **भय**

भय प्राणी की अपनी तीव्र प्रतिक्रिया है जिसमे व्यक्ति परक अप्रिय भावनाएँ, घबराहट तथा पलायन अथवा छिपने की इच्छा होती है। यह विद्यमान या काल्पनिक विशिष्ट खतरे के प्रति एक प्रतिक्रिया है।

हम अपनी क्रियाओं में भय के कारण बचाव लेते हैं। गिरने के भय के कारण हम सीढ़ियाँ सावधानीपूर्वक चढ़ते है। दुर्घटना के भय से हम सड़क सावधानीपूर्वक पार करते हैं। इन उदाहरणों से इतना स्पष्ट होता है कि भय एक शक्तिशाली अनुभव है

जो किसी सीमा तक मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों की सुरक्षा और उनकी उत्तरजीविता में सहायक होता है। वाटसन, शर्मन तथा ब्रिजेस कुछ प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिकों ने बच्चों में इस संवेग का अध्ययन किया और यह बताया कि भय किस प्रकार विकसित होते हैं।

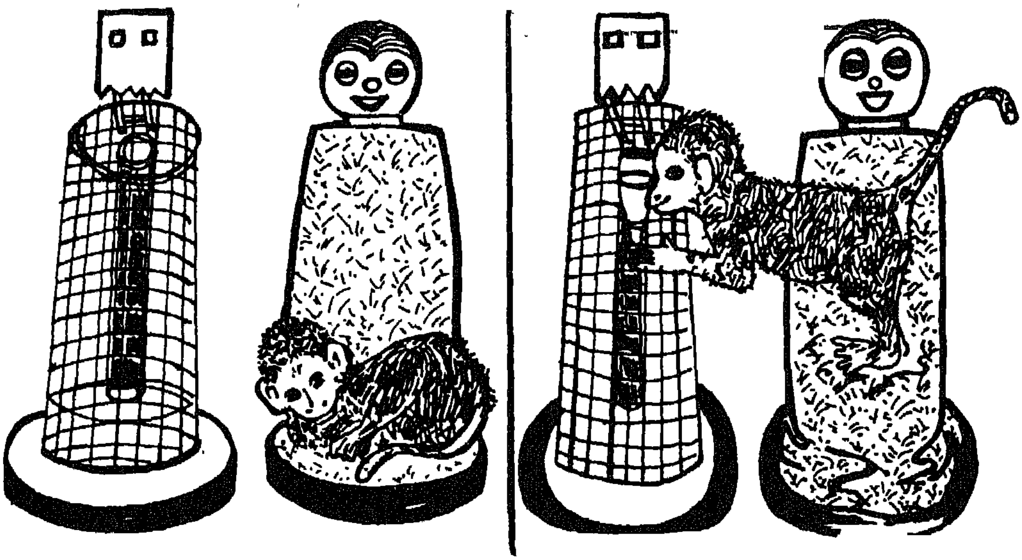
मनोविज्ञान दो बहुत मिलते-जुलते संवेगों—भय तथा दुश्चिंता में विभेद करता है। ध्यान में रखना चाहिए कि हम कुछ विशेष स्थितियों से डरना सीख जाते हैं जिनसे हमें पीड़ा होती है। बच्चा जिसकी उँगली जल गई हो वह आग के नज़दीक जाने से डरेगा। व्यक्ति जिसे कुत्ते ने काट लिया हो वह सामान्यतः कुत्तों के पास जाने में हिचकिचायेगा तथा डरेगा। इस प्रकार का भय स्वाभाविक तथा वास्तविक है। मनोवैज्ञानिक ऐसे संवेग को 'भय' की संज्ञा देते हैं। किन्तु यदि कोई व्यक्ति कुत्ते का चित्र देखते ही काँपना शुरू कर दे अथवा पसीने-पसीने हो जाए तो इसे अस्वाभाविक तथा कृत्रिम कहेंगे। ऐसा अनुभव जिसमें उद्दीपन के प्रति बिना किसी विशेष कारण के त्रास और आशंका हो, *दुश्चिता* कहलाता है। भय तथा दुश्चिंता कुछ विशेष शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक लक्षणों के सम्बन्ध में समान हैं। किन्तु इन दोनों में मुख्य अन्तर यह है कि भय में पर्याप्त उद्दीपन विद्यमान होता है जबकि दुश्चिंता मे यह नहीं होता।

हम कुछ ऐसे व्यक्तियों से भी मिलते हैं जो प्रत्येक घटना जो उनके साथ घट रही है, हर व्यक्ति जिससे वह मिलते हैं, अथवा हर उद्दीपन जिसका वह सामना करते हैं, उन सबके प्रति वे निरन्तर भय जैसी प्रतिक्रिया प्रदर्शित करते हैं। इन्हें मुक्त प्रवाही दुश्चिंता से पीड़ित व्यक्ति कहा जाता है। ऐसे व्यक्तियों के कुछ उदाहरण मिल जाएँगे जो मकड़ियों से, सीढ़ियाँ चढ़ने में, बन्द या खुली जगहों में, अकेले में, या भीड़ इत्यादि में आतंकप्रद प्रतिक्रिया करते हैं। उन उद्दीपनों के प्रति ऐसी भय की प्रतिक्रियाएँ जिन्हें हममें से अधिकांश लोग भय के लिए अपर्याप्त, अनपकारी, तथा बहुत कम धमकी भरी समझते है, *दुर्भीति* कहलाती है। मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि ऐसे लोगों ने किसी प्रकार से अपने भय को ऐसे उद्दीपनो पर केन्द्रित करना सीख लिया है जिसे स्वाभाविक मानना चाहिए। ऐसे कृत्रिम, मुक्त प्रवाही तथा दूसरे प्रकार की दुश्चिता तथा दुर्भीति पर हुए अध्ययन असामान्य मनोविज्ञान तथा नैदानिक मनोविज्ञान से सम्बन्धित विषय हैं।

मनोवैज्ञानिक इंगित करते हैं कि प्राणी में किसी निश्चित मात्रा में दुश्चिता होना स्वास्थ्यप्रद होता है। बहुत सा व्यवहार जिसका उत्तरजीविता मूल्य होता है, भय तथा दुश्चिंता से अभिप्रेरित होता है। इसके द्वारा दैहिक और मनोवैज्ञानिक उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।

(ii) क्रोध और आक्रमण

सिगमंड फ्रॉयड ने क्रोध की व्याख्या अपनी मुमूर्षा या विनाश की मूल प्रवृत्ति के प्रत्यय के सम्बन्ध मे की है। विलियम मैकडूगल ने क्रोध की व्याख्या *युयुत्सा की मूल प्रवृत्ति* के रूप में की। विशेष रूप से पशुओ तथा पक्षियों के आक्रामक व्यवहार पर के लोरेंज द्वारा किये गए अध्ययनो के परिणामस्वरूप मानव तथा निम्न प्राणियों के आक्रामक व्यवहार को समझने में काफी योगदान मिला। इन विचारों से प्रमाणित हुआ कि क्रोध तथा आक्रमण जन्मजात प्रवृत्तियाँ हैं। मनोवैज्ञानिकों ने बाद में इस संवेग की दूसरे प्रकार से व्याख्या की। के ओ डोलार्ड और एन मिलर के अनुसार क्रोध का संवेग कुण्ठा के कारण होता है। किन्तु हमें 'क्रोध' तथा 'आक्रमण'—इन शब्दो को भली भाँति समझ लेना चाहिए। क्रोध तथा आक्रमण पदों का वर्णन उनके आपसी संबंध के कारण एक साथ ही किया जाता है। उनको प्रायः कारण और परिणाम के रूप में पाया जाता है। यह ध्यान रखने योग्य बात है कि क्रोध संवेग है तथा आक्रमण क्रोध के लिए अनुक्रिया अथवा प्रतिक्रिया है। क्रोध तथा आक्रमण मानव तथा पक्षियों दोनों के व्यवहार में



चित्र 3.11 बन्दर कृत्रिम माँ के प्रति प्यार प्रदर्शित करता हुआ

समानान्तर सघटक हो सकते हैं। आक्रमण को सामान्यतः क्रोध की प्रतिक्रिया के रूप में देखा जाता है। किन्तु याद रखना चाहिए कि आक्रमण सदैव क्रोध का परिणाम नही होता क्योकि यह भय के परिणामस्वरूप भी हो सकता है।

क्रोध से घनिष्ठ सबध रखने वाला एक प्रत्यय विस्थापन है। हम कई बार देखते हैं कि क्रोध वास्तविक कुण्ठा उत्पन्न करने वाली वस्तु के स्थान पर किसी कम सबद्ध वस्तु पर उतरता है। उदाहरण के लिए एक शिक्षक जिसे अनुचित कारण पर प्रधानाचार्य ने डाँटा हो, मेज को पैर की ठोकर मार सकता है, दरवाजे को धम से बन्द कर सकता है, अथवा यहाँ तक कि विद्यार्थियों को डाँट सकता है। ऐसी प्रतिक्रिया जो क्रोध के वास्तविक उद्दीपन की अपेक्षा किसी अन्य कम सबद्ध उद्दीपन पर उतरती अथवा निर्देशित करती है, *विस्थापन* कहलाती है। विस्थापन से सम्बन्धित व्यवहार इसलिए देखने को मिलते हैं क्योकि कुण्ठा को उत्तेजित करने वाले वास्तविक उद्दीपन के प्रति क्रोध की अभिव्यक्ति करना कठिन होता है। यह अनेक कारकों के कारण हो सकता है जैसे डर, अयोग्यता, आघात आदि। पहले उदाहरण मे हो सकता है शिक्षक ने भय के कारण प्रधानाचार्य के प्रति क्रोध का प्रावरोध कर लिया हो तथा चुपचाप बाहर चला गया हो। दूसरी विचारधारा के अनुसार क्रोध तथा आक्रमण की प्रतिक्रियाएँ सीखी जाती हैं। अनुकरण जो एक प्रकार का अधिगम है, इस प्रकार के व्यवहार मे मुख्य भूमिका निभाता है। प्रायः ऐसा देखने मे आता है कि जो वस्तुएँ हमे क्रोधित करती हैं उनके प्रति हम जिस प्रकार क्रोध की अभिव्यक्ति करते हैं उसे हमने अपने माता-पिता तथा दूसरे महत्वपूर्ण व्यक्तियो से सीखा है। प्रयोगों से ऐसे प्रमाण मिले हैं कि बच्चे दूरदर्शन पर हिंसा तथा आक्रमण के कार्यक्रम देखने के पश्चात् आक्रामक अनुक्रियाएँ करना शुरू कर देते हैं।

इस प्रकार क्रोध तथा आक्रमण अभिप्रेरक के रूप मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। किन्तु यह याद रखना चाहिए कि क्रोध का उचित समय पर, उचित व्यक्ति के प्रति, उचित मात्रा में प्रदर्शन करने

से व्यवहार पर स्वास्थ्यप्रद, रचनात्मक और सकारात्मक प्रभाव होता है।

(III) प्रेम

संवेग के रूप में प्रेम व स्नेह निःसन्देह प्रिय और आनन्द देने वाले अनुभवों से सम्बन्धित हैं। यह आनन्द प्रायः शरीर के कामोद्दीपक अंगों अथवा स्थानो की उत्तेजना से सम्बन्धित है। इनमें से कुछ अंग, ओठ, छाती तथा यौनांग होते हैं। जे बी वाटसन का यह विचार था कि प्रेम एक ऐसा संवेग है जो नवजात शिशुओं मे विद्यमान रहता है। एच एफ हार्लो द्वारा बन्दरो पर किये गए अनेक अध्ययनो द्वारा प्रेम तथा स्नेहपूर्ण व्यवहार से सम्बन्धित अनेक अन्तर्निहित कारक स्पष्ट हुए हैं। हार्लो तथा उनके सहयोगियो ने बन्दरों के बच्चों का प्रेम रुई तथा कपड़े की बनी माँ के प्रति प्रदर्शित किया। ऐसी माँ को कृत्रिम अथवा प्रतिनियुक्त माँ कहा गया।

कपड़ों से बनी माँ जिसका उन्होने प्रयोग किया, लकड़ी की बेलनाकार आकृति थी जिसे टेरीकॉट के कपड़े से ढका गया था तथा तारो से बनी माँ लोहे के बेलनाकार सी बनी थी। दोनों माताओ को एल्यूमिनियम आधार पर 45 अंश के कोण पर जोड़ा गया तथा उन दोनों के चेहरे भिन्न थे। बोतल को पकड़ने वाले शरीर के ऊपरी मध्य भाग में दूध पीने के लिए लगाए गए थे। इस प्रकार दोनों माताओ के पास आधारभूत आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त दूध पिलाने को था किन्तु कपड़े से ढकी माँ के पास आरामदायक स्पर्श का एक अतिरिक्त चर था। दोनों माताओं ने पर्याप्त दूध प्रदान किया। दोनों समूहों में यह अन्तर था कि तारों वाली माँ के दूध पर पाले गए बच्चों के मलत्याग कुछ पतले थे।

इस खोज से प्रेम, स्नेह तथा आराम से सम्बन्धित बहुत सी प्रतिक्रियाएँ स्पष्ट हुई। उनमे से दो का वर्णन नीचे किया गया है।

1. बन्दरों के बच्चों ने जिन्हें तारों से बनी प्रतिनियुक्त माँ द्वारा दूध पिलाया गया था, अधिकाशतः अपना समय कपडो से बनी माँ के साथ बिताया। ऐसा इसलिए हुआ कि कपड़े से बनी माँ को बन्दरो के बच्चो ने अधिक आरामदायक आकृति पाया। हार्लो ने यह इंगित किया कि शरीर के सम्पर्क से प्राप्त सुख बच्चों में स्नेहात्मक विकास के लिए अधिक महत्वपूर्ण कार्य करता है।
2. यह भी पाया गया कि सम्पर्क के सुख ने बन्दरो के बच्चो में सुरक्षा की भावना प्रदान की तथा उनके भय को कम किया। इससे बन्दरों के बच्चों को अपरिचित वस्तुओ को खोजने में सहायता मिली और उन्हें उन्होने कम धमकी भरा पाया।

हार्लो का अध्ययन बाल-मनोविज्ञान तथा सामाजिक मनोविज्ञान मे एक महत्वपूर्ण योगदान है। बाल मनोवैज्ञानिकों ने मानव बच्चे के पालन-पोषण की विधियो के अध्ययन मे बहुत रुचि दिखाई है। इसमे भोजन करने के ढंग, स्तनपान अथवा बोतल से दूध पिलाना, शरीर सम्पर्क की सावधानीपूर्वक परीक्षा और मापन सम्मिलित हैं। हार्लो के अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि अनाथाश्रम में पलने वाले बच्चों के अन्दर डर की भावना इसलिए होती है क्योंकि इन बच्चो को माँ आकृति या माँ जैसी आकृति के साथ उतना पुचकारना, खेलने का समय तथा पकड़ने को नहीं मिलता जितना सामान्य बच्चों को मिलता है। परिणामस्वरूप सम्भवतः उन्हें अपरिचित परिस्थितियों से अधिक भय लगता है।

किशोर तथा वयस्क प्रेम मे सामान्यतः यौन अभिप्रेरण का कुछ तत्व सम्मिलित रहता है। व्यक्ति इस अवस्था मे अधिकाशतः कामुक उत्तेजना करते हैं जिसे प्रायः यौन क्रीड़ा कहा जाता है, जिसमे यौन क्रिया से पूर्व का घनिष्ठ शारीरिक सम्पर्क सम्मिलित होता है। मानवो का वयस्क प्रेम इतना जटिल होता है कि उस पर विचार करना इस भाग में कठिन है।

मनोविज्ञान उपरोक्त सवेगो के साथ-साथ अन्य सवेगो से सम्बन्धित बहुत से प्रयोगात्मक प्रमाण प्रस्तुत

करता है। संवेगात्मक विकासो मे अधिगम तथा परिपक्वता के व्यावहारिक पक्षो के कारण इसका विस्तृत अध्ययन किया जाता है। अधिगम और परिपक्वता की भूमिका से सबधित अनुसधानों से सवेगो के सकारात्मक पक्षो को अतर्निवेशन तथा प्रोत्साहित करने एवं नकारात्मक पक्षो को निरुत्साहित करने की विधियाँ ज्ञात होती हैं।

अधिगम तथा परिपक्वन की संवेगात्मक व्यवहार में भूमिका

हमारा निरीक्षण हमे बताता है कि शिशु तथा वयस्क की सवेगात्मक प्रतिक्रिया में सार्थक अन्तर होता है। पहले मनोवैज्ञानिक ऐसा विश्वास करते थे कि भय, क्रोध तथा प्रेम जन्म से ही विद्यमान होते हैं किन्तु वाटसन ने नवजात शिशुओं को विभिन्न प्रकार के अनुभव दिए। उन्होंने प्रदर्शित किया कि किस प्रकार सभी शिशु तीव्र, तीखी ध्वनि के प्रति अथवा सहारे की कमी होने पर कैसी प्रतिक्रिया करते है। दूसरे शब्दों में कैसे उनमें भय विकसित होता है अथवा उनकी गति मे बाधा डाली जाए तो कैसे वे क्रुद्ध हो जाते हैं। उन्होने यह भी प्रमाण प्रस्तुत किए कि प्रेम का सवेग खिलाने-पिलाने तथा प्रेम स्पर्श करने से होता है। वाटसन के प्रयोग इसलिए महत्वपूर्ण थे क्योकि उन्होंने पुराने प्रचलित विचारो का खडन कर दिया कि मनुष्य अधकार के लिए भय तथा माँ के लिए प्रेम के सवेग के साथ जन्म लेते हैं।

जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है वह नये संवेगों का अनुभव करता है, नये उद्दीपनो के प्रति सवेगो की अभिव्यक्ति के नये तरीके आदि सीखता है। बच्चे के सवेगात्मक जीवन मे अधिकांश परिवर्तन जो सीखने की प्रक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होते है, वे सवेगो के विकास के साथ सबधित होते है। सवेगात्मक विकास का पहलू स्वस्थ मानसिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

किन्तु अनुसधानो से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि बहुत से सवेग तथा उनकी अभिव्यक्तियाँ सीखी जाती हैं, वे परिपक्वता की प्रक्रिया पर भी निर्भर करती हैं। ब्रिजेस ने संवेगों के विकास के लिए एक योजना का सुझाव दिया है। उनके अनुसार नवजात शिशुओं में सभी सवेगात्मक उद्दीपनों के लिए एक सी अनुक्रियाएँ होती हैं। जैसे-जैसे वे परिपक्व एवं विकसित होते हैं, सवेगात्मक अनुक्रियाओं मे विभेदीकरण प्रारम्भ हो जाता है। ब्रिजेस के अनुसार जन्म के समय शिशु मे सामान्य उत्तेजना होती है। यह सामान्य उत्तेजना दो या तीन महीने के आसपास दुःख और हर्ष में विभेदीकृत होने लगती है। छः महीनो का होने पर दुःख, क्रोध, विरुचि और भय में विकसित हो जाता है। जैसे-जैसे बच्चा उम्र में बढ़ता है वैसे ही सवेगो का विभेदीकरण अधिक स्पष्ट हो जाता है।

सवेगात्मक विभेदीकरण की ऐसी योजना पशुओं मे भी मिलती है। ऐसे व्यक्तियो पर जिन्हें सवेगात्मक अनुक्रियाएँ सीखने का अवसर नही मिला जैसे जन्मान्ध, या जन्म से ही बहरे व्यक्तियों (जिन्होने मुस्कराना या हँसना नही देखा) उन्होने भी वैसी ही अभिव्यक्ति तथा अनुक्रियाएँ प्रदर्शित की जैसा सामान्य बच्चे प्रसन्न होने पर दिखाते हैं। इससे यह प्रकट होता है कि अधिगम और परिपक्वता का व्यक्ति के सवेगात्मक जीवन मे अधिक महत्व है।

इस प्रकार हमने देखा कि सवेग हमारे व्यवहार को बहुत प्रभावित करते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक यह विश्वास करते हैं कि सवेग मनुष्य का महत्वपूर्ण अभिप्रेरणात्मक तत्र है। सवेग अपने आप मे स्वतन्त्र रूप से व्यवहार उत्पन्न करने के कारण नहीं बन सकते। फिर भी जब व्यवहार का विश्लेषण किया जाता है तो अभिप्रेरण तथा सवेग दोनो मे घनिष्ठ सम्बन्ध देखने को मिलता है। अभिप्रेरक जब सवेग के साथ मिलता है तो तीव्र हो जाता है और कुछ समय के साथ-साथ सवेग स्वय ही अभिप्रेरक बन जाता है।

साराश

अभिप्रेरण एक प्रकार की आतरिक शक्ति है जो अपने लक्ष्यो की प्राप्ति के लिए कार्य को प्रारंभ करती, विनियमित करती तथा बनाये रखती है। अभिप्रेरणात्मक चक्र की तीन अवस्थाएँ होती है पहली अभिप्रेरक, उसके पश्चात् नैमित्तिक व्यवहार आता है जिसका उद्देश्य लक्ष्य की प्राप्ति होता है और परिणामस्वरूप प्राणी राहत अनुभव करता है। अभिप्रेरित व्यवहार की मुख्य विशेषताएँ शक्ति, केन्द्र, दृढता तथा विचलनशीलता है।

पिछले वर्षो मे मनोवैज्ञानिको ने मूल-प्रवृत्तियो को व्यवहार का मुख्य अभिप्रेरक मानने पर बल दिया है। इच्छा अथवा कमी की सामान्य दशा आवश्यकता है जो किसी क्रिया को पूर्ति की ओर अग्रसर करती है। कुछ मुख्य दैहिक और मनोसामाजिक आवश्यकताएँ क्षुधा, प्यास, ऑक्सीजन, निद्रा, सबधन, उपलब्धि, सुरक्षा, आत्म सम्मान, सबद्धता और पद हैं। अन्तर्नोद किसी व्यक्ति अथवा पशु को कार्य करने के लिए बाध्य करता है। प्रोत्साहन बाह्य उद्दीपन है जो किसी व्यक्ति को लक्ष्य अथवा अतिम परिणाम की ओर अथवा उससे दूर ले जाता है।

मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरित व्यवहार की एक क्रम के रूप मे व्याख्या करते है जिसमे आवश्यकता, अन्तर्नोद, प्रोत्साहन, लक्ष्य सम्मिलित हैं। व्यक्ति बहुधा अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में सघर्षपूर्ण अभिप्रेरको का अनुभव करते हैं। उपागम-उपागम, परिहार-परिहार तथा उपागम-परिहार अन्तर्द्वन्द्व के तीन प्रकार हैं। कुण्ठा लक्ष्य की प्राप्ति में बाधा के कारण उत्पन्न होती है। भाव-प्रबोधन उत्तेजना की सामान्य अन्तर्नोद दशा है जो निष्पादन को प्रभावित करती है। हम अभिप्रेरण का स्तर उपभोगी व्यवहार, वचन, निष्पादन, सीखना और व्यक्तित्व परीक्षणो से माप सकते हैं।

सवेग किसी भी प्रकार से उत्तेजित होने की दशा को कहते हैं जो व्यवहार शुरू करती और उसे दिशा देती है। सवेगो में कुछ दैहिक और शारीरिक परिवर्तन देखे गए हैं। जबकि जेम्स-लांगे की विचारधारा शारीरिक सवेग के आधार पर बल देती है, कैनन-बार्ड का ऐसा विश्वास है कि शारीरिक परिवर्तन तथा सवेग का अनुभव एक साथ होते हैं। शैक्टर-सिंगर ने इस बात पर ब॰ दिया कि सवेग का अनुभव इस बात पर निर्भर करता है कि कोई व्यक्ति उद्दीपन का मूल्याकन किस प्रकार करता है। विभेदक सवेग विचारधारा मे विश्वास रखने वाले ऐसा कहते हैं कि प्रत्येक सवेग का विकासात्मक महत्व है तथा अधिगम सवेगात्मक अभिव्यक्ति और अनुभव को प्रभावित करता है।

पशुओं तथा मनुष्यो मे कुछ महत्वपूर्ण सवेग भय, क्रोध और प्रेम हैं। अधिगम और परिपक्वता सवेगो के विकास और उनकी अभिव्यक्ति मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रश्न

1. अभिप्रेरण की व्याख्या कीजिए और इसका क्रम बताइए।
2. अन्तर्द्वन्द्व के तीनो प्रकारो का एक-एक उदाहरण दीजिए।
3. अभिप्रेरण के स्तर का माप किस प्रकार किया जा सकता है?
4. सवेगात्मक अवस्थाओ मे कौन-कौन से दैहिक और शारीरिक परिवर्तन होते है?
5. सवेगो की विभिन्न विचारधाराओ की तुलना कीजिए।

नीचे दिये प्रश्नो में सही विकल्प पर यह निशान (√) लगाइए :

6. अभिप्रेरक का अर्थ है
   (अ) यादृच्छिक क्रिया
   (ब) लक्ष्य प्रेरित व्यवहार
   (स) सवेगात्मक अनुक्रिया
   (द) व्यवहार का सार

7. इनके मतानुसार मूल प्रवृत्तियाँ संवेगो से सम्बन्धित होती है
   (अ) जेम्स-लांगे
   (ब) फ्रौयड
   (स) मैक्डूगल
   (द) लारेंज
8. प्राथमिक अन्तर्नोद वे हैं जो इनसे सम्बन्धित हैं
   (अ) मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ
   (ब) सामाजिक आवश्यकताएँ
   (स) प्रोत्साहन
   (द) दैहिक आवश्यकताएँ
9. सवेग मे दैहिक भावप्रबोधन और ज्ञानात्मक अंकितक के कारको पर इन्होने बल दिया है
   (अ) इजार्ड
   (ब) शैक्टर-सिगर
   (स) वाटसन
   (द) जेम्स
10. जब वास्तविक कुण्ठा वस्तु की बजाए कम सबद्ध वस्तु की ओर क्रोध निकाला जाता है तो इसे ये कहते हैं
   (अ) उपागम-परिहार
   (ब) चिन्ता
   (स) भावप्रबोधन स्तर
   (द) विस्थापन

एकक 4

संवेदी अवधानात्मक तथा प्रत्यक्षात्मक प्रक्रियाएँ

इस एकक को पढ़ने के पश्चात् विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- संवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण में भेद करें;
- विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों की संरचना तथा कार्यवाही की व्याख्या करें,
- प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया को समझे;
- अवधान की प्रकृति तथा विशेषताओ का वर्णन करें;
- अवधान को प्रभावित करनेवाले कारकों की व्याख्या करें;
- अवधान की विस्तृति तथा विकर्षण के बारे में बताएँ;
- प्रत्यक्षीकरण के सिद्धान्तों का वर्णन करें;
- सुगठित रूप, आकृति तथा रंग की प्रत्यक्षात्मक स्थिरता की व्याख्या करें;
- प्रत्यक्षीकरण में भ्रमों का वर्णन करें;
- प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करनेवाले कारकों को बताएँ।

प्रत्येक प्राणी अपने पर्यावरण मे उपस्थित उद्दीपनो के सागर से घिरा रहता है। उद्दीपनो के प्रति उसकी प्रतिक्रिया ही उसका व्यवहार बनाती है। यह व्यवहार आन्तरिक तथा बाह्य उद्दीपनो से उत्पन्न होता है। सामान्यतः उद्दीपन ज्ञानेन्द्रियो को उद्दीप्त अथवा उत्तेजित करके प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करते है। फलतः संग्राहक तंत्रिका तन्तु तथा मस्तिष्क की कोशिकाओ का सक्रियण होता है। प्रत्येक व्यक्ति जो कुछ भी करता है वह उसके ज्ञानेन्द्रियो के सग्राहको से प्राप्त सदेशों मे निहित सूचनाओ पर निर्भर करता है।

संवेदी प्रक्रियाएँ

वे सरणियाँ जिनके द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने आस-पास के विश्व के बारे मे जानता है वे उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ है। व्यक्ति की मुख्य ज्ञानेन्द्रियाँ आँख, कान, नाक, जीभ तथा त्वचा हैं। सवेदना तब होती है जब व्यक्ति के बाह्य अथवा आन्तरिक वातावरण से आँखो कानों, नाक, जीभ, अथवा त्वचा इनमे से कोई भी ज्ञानेन्द्रिय उद्दीपन ग्रहण करता है। प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय बाह्य अथवा आन्तरिक ऊर्जा के विशिष्ट तथा विभिन्न आकार से उत्तेजित होती है। आँख प्रकाश की ऊर्जा

से उत्तेजित होती है। *ध्वनि ऊर्जा कान को उत्तेजित* करती है। ऊष्मीय ऊर्जा त्वचा की गर्म तथा ठडी सवेदनाओ को उत्तेजित करती है जबकि दबाव त्वचा की स्पर्श तथा पीड़ा की सवेदनाओ को उत्तेजित करता है। रासायनिक कर्मक नाक मे नथुनों को तथा जिह्वा मे स्वाद की कलिकाओ को उत्तेजित करते हैं।

अवसीमा

प्रत्येक सग्राहक को उत्तेजित होने के लिए ऊर्जा के न्यूनतम स्तर की आवश्यकता होती है । ज्ञानेन्द्रियो की संग्राहक कोशिकाएँ उद्दीपन द्वारा उत्पन्न भौतिक ऊर्जा को उत्तेजना मे रूपान्तरित कर देती हैं जो तंत्रिका तत्र द्वारा मस्तिष्क को ले जायी जाती हैं। उद्दीपन की भौतिक ऊर्जा को उत्तेजनाओ मे रूपातरित करना, जिसे तंत्रिका तत्र मस्तिष्क मे प्रेषित करता है, उस प्रक्रिया को पारेक्षण कहते हैं। सग्राहको मे पारेक्षण होता है जो उद्दीपन द्वारा पैदा की हुई भौतिक ऊर्जा को ग्रहण करते हैं तथा इसे विद्युत ऊर्जा मे बदल देते हैं। यह तन्त्रिका उत्तेजना बन जाती है जो मस्तिष्क की ओर गति करती है। किसी व्यक्ति के सग्राहको को उत्तेजित करने तथा अनुक्रिया उत्पन्न करने के लिए भौतिक ऊर्जा का न्यूनतम स्तर पूर्ण अवसीमा कहलाता है। जब ऊर्जा इस स्तर से नीचे हो तो उद्दीपनो का पता नही चलता। प्रत्येक सवेदन की सीमा भिन्न होती है जो एक स्थिति से दूसरी स्थिति मे भिन्न हो जाती है।

संवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण में अन्तर

सवेदना सवेदी संग्राहको तथा केन्द्रीय तन्त्रिका तत्र की सयोजित क्रिया है जो भौतिक ऊर्जा का ग्रहण, प्रक्रम तथा विश्लेषण करती है । संवेदना ज्ञानेन्द्रियो पर उद्दीपन के टकराने तथा उसके पश्चात् के केन्द्रीय तन्त्रिका तंत्र को इसके सप्रेषण के परिणामस्वरूप होती है। सवेदना प्राथमिक रूप से एक शारीरिक प्रक्रिया है जिसमें ज्ञानेन्द्रियाँ, सग्राहक, तंत्रिकावाही प्रेषक तन्त्रिकाएँ, तथा अन्त मे केन्द्रीय तन्त्रिका तंत्र सम्मिलित है। *प्रत्यक्षीकरण ज्ञानेन्द्रियो द्वारा प्राप्त सूचनाओ को सगठित तथा व्याख्या करने की प्रक्रिया है।* प्रत्यक्षीकरण एक मनोवैज्ञानिक कार्य है जो प्राणी को इस योग्य बनाता है कि वह पर्यावरण के अनुरूप सूचना को ग्रहण तथा प्रक्रम कर सके। प्राणी-पर्यावरण की परस्पर क्रिया मुख्यत सवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रियाओ पर निर्भर करती है। सवेदना ज्ञानेन्द्रियो की प्राथमिक अनुक्रिया है जबकि प्रत्यक्षीकरण उद्दीपन की अर्थपूर्ण व्याख्या है। सवेदना सवेदी सवेदनाओ से युक्त एक साधारण दृग्विषय है। वुण्ट के अनुसार सवेदना एक तत्व है तथा प्रत्यक्षीकरण सवेदनाओ तथा अनुभवों का सघटक है।

शरीर मे बहुत से आन्तरिक परिवर्तन जैसे पीड़ा व दर्द, बेचैनी की अनुभूति होना, गतिबोधेन्द्रिय या प्रघाण प्रक्रियाएँ सवेदना कही जा सकती है जबकि पहाड़, नगर, झील, अथवा पर्यावरण मे कोई वस्तु देखना सही मायने मे प्रत्यक्षीकरण कहा जाता है। चूँकि अनुभव मे सवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रियाएँ अलग नही की जा सकती इसलिए हमे कभी भी रंग, आकृति अथवा ध्वनि की केवल सवेदना नहीं होती।

ज्ञानेन्द्रियो तथा मानव सवेदी दृग्विषयो से जुड़े हुए उनके कार्य नीचे सारणी 4.1 मे दिये हैं।

सारणी 4.1

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, उनकी प्रक्रियाएँ तथा कार्य

ज्ञानेन्द्रियाँ	*प्रक्रिया*	*कार्य*
आँखे	दृश्य	दृष्टि (देखना)
कान	श्रव्य	श्रवण (सुनना)
जिह्वा	रससवेदी	स्वाद
नाक	घ्राण	सूँघना
त्वचा	त्वचीय	पीड़ा, दबाव, ठडे, तथा गर्म की अनुभूति

दिखने वाली पाँच ज्ञानेन्द्रियो के अतिरिक्त मनुष्यो तथा अन्य दूसरी उपजातियो मे गतिबोधेन्द्रिय तथा प्रघाण सवेदना होती है। *गतिबोधेन्द्रिय वह सवेदी तत्र*

है जो *हमारे शरीर के अगों की स्थिति और गति के बारे में प्राणी को अवगत रखता है* । इसी प्रकार *प्रघाण सवेदना शरीर का सतुलन बनाये रखने के लिए उत्तरदायी है* । इन दोनों सवेदनाओं के लिए आँख, कान की भाँति कोई स्पष्ट दिखायी देने वाली इन्द्रियाँ नहीं होतीं परन्तु वह जीवित प्राणियो के तंत्रिका शारीरिक तत्र में ही बने हुए होते हैं। ये दोनों संवेदनाएँ विभिन्न क्रियाओ जैसे बैठना, चलना, व्यायाम तथा कलाबाजी इत्यादि में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

दृष्टि, श्रवण, स्वाद, घ्राण, त्वचीय, गतिबोधेन्द्रिय तथा प्रघाण की संवेदनाओं की व्याख्या निम्नलिखित है।

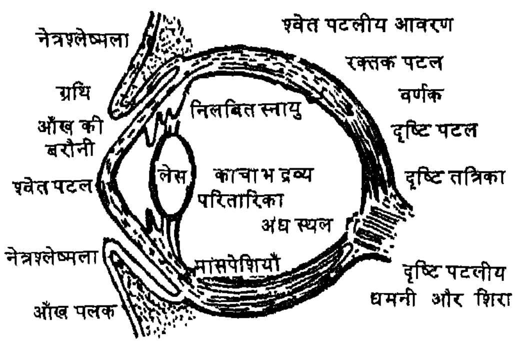
(i) *दृष्टि*

यद्यपि सभी सवेदनाएँ व्यक्ति के आसपास के जगत के बारे मे सूचना प्राप्त करने मे योगदान करती हैं परन्तु शायद उस तक सबसे अधिक सूचनाएँ दृष्टि की इन्द्रिय द्वारा पहुँचाती हैं। दृष्टि के लिए ज्ञानेन्द्रिय आँख या चक्षु है। प्रकाश आँख के लिए उद्दीपन है। व्यक्ति कोई भी ऐसा पदार्थ देख सकता है जो प्रकाश विकीर्ण करता है जैसे सूर्य अथवा प्रकाश बल्ब। जो पदार्थ प्रकाश विकीर्ण नही करते वे प्रतिबिम्बित प्रकाश द्वारा देखे जाते हैं जैसे रात में चन्द्रमा अथवा अन्य कोई ग्रह इसलिए देखा जा सकता है क्योंकि उसकी सतह सूर्य का प्रकाश प्रतिबिम्बित करती है। पर्यावरण मे बहुत से पदार्थ देखे जाते हैं क्योंकि वे स्रोत से उत्पन्न होते प्रकाश को आँखों मे प्रतिबिम्बित करते हैं।

आँखों के द्वारा व्यक्ति प्रकाश के दृष्टियोग्य स्पैक्ट्रम की संवेदना लेता है। दिखने वाला सफेद प्रकाश जैसा कि सूर्य द्वारा विकीर्ण किया जाता है बहुत सी तंरगों की लम्बाइयों का बना होता है। यह प्रत्येक तंरग की लम्बाई एक स्पष्ट रंग अथवा रंगत के रूप मे देखी जाती है। प्रकाश का पूरा दृष्टियोग्य स्पैक्ट्रम एक छोर से दूसरे छोर तक लाल से नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी तथा बैंगनी होता है। अवरक्त तथा पराबैगनी तरंगें दृष्टियोग्य सीमा से बाहर होती हैं तथा मानव की आँख द्वारा नहीं देखी जा सकतीं।

आँख गेंद आकार की एक संरचना है जिसमें दिखने वाले बाहर के भाग हैं तथा बाहर से न दिखने वाला आंतरिक प्रकोष्ठ है। आँख की मुख्य आकृति चित्र सख्या 4.1 मे दिखायी गई है। सबसे बाहर वाला ढक्कन *श्वेतपटल* है जो आँख का आकार बनाये रखता है। बीचवाली सतह को *रक्तक पटल* कहते हैं। आँख में प्रकाश की जो मात्रा प्रवेश करती है वह एक खुले हुए भाग जिसे *पुतली* कहते है, के द्वारा विनियमित की जाती है।

पुलली का आकार *परितारिका* द्वारा नियंत्रित होता है। जब प्रकाश अत्यन्त तीव्र होता है तो पुतली सिकुड़ जाती है तथा आँख में प्रवेश करने वाले प्रकाश को कम कर देती है। जब प्रकाश अत्यन्त मन्द होता है तो पुतली फैल जाती है तथा आँख मे प्रवेश पाने वाले प्रकाश की मात्रा को बढ़ा देती है।



चित्र 4.1 मानव आँख की संरचना

प्रकाश आँख में *श्वेतपटल* द्वारा प्रवेश करता है जो पारदर्शी होता है तथा *पुतली* से होकर लेन्स की ओर जाता है। लेन्स आने वाली प्रकाश किरणों को दृष्टिपटल पर केन्द्रित करता है जिसमें संग्राहक कोशिकाएँ तथा तंत्रिकान्त होते हैं जो प्रकाश उद्दीपन

को विद्युत उत्तेजनाओ तथा फिर तंत्रिका उत्तेजनाओं में रूपान्तरित करने के लिए आवश्यक होते हैं। श्वेतपटल तथा लेन्स के बीच का स्थान जलीय द्रव्य तथा लेन्स तथा दृष्टिपटल के बीच का आन्तरिक प्रकोष्ठ *काचाभ द्रव्य* से भरा होता है।

दृष्टिपटल की सतह पर गर्तिका होती है जो आँख का सबसे अधिक संवेदनशील क्षेत्र है। शंकु गर्तिका मे खचाखच भरे हुए होते हैं जो विभिन्न तरंग लम्बाई के लिए सवेदनशील होते हैं तथा रंगो को देखने में प्रयुक्त होते हैं। शकु उच्च प्रदीपन में क्रियान्वित होते हैं तथा दिन के प्रकाश में व्यक्ति को अनुभव होने वाली विस्तृत दृष्टि के लिए उत्तरदायी होते हैं। दृष्टिपटल पर शलाकाएँ भी होती हैं। शलाकाएँ प्रथमतः कम प्रकाश में प्रयुक्त होती हैं। वे रंगो के लिए संवेदनशील नही होती तथा प्रकाश ऊर्जा को केवल सफेद, काले तथा भूरे में रूपान्तरित करती है। शलाकाएँ तथा शंकु के साथ-साथ दृष्टिपटल में अन्धबिन्दु भी होता है। यह एक असंवेदनशील क्षेत्र है जहाँ दृष्टिपटल में कोशिकाओं से तन्त्रिका ततु इकट्ठे होकर दृष्टि तंत्रिका का पुलिदा बनाते है।

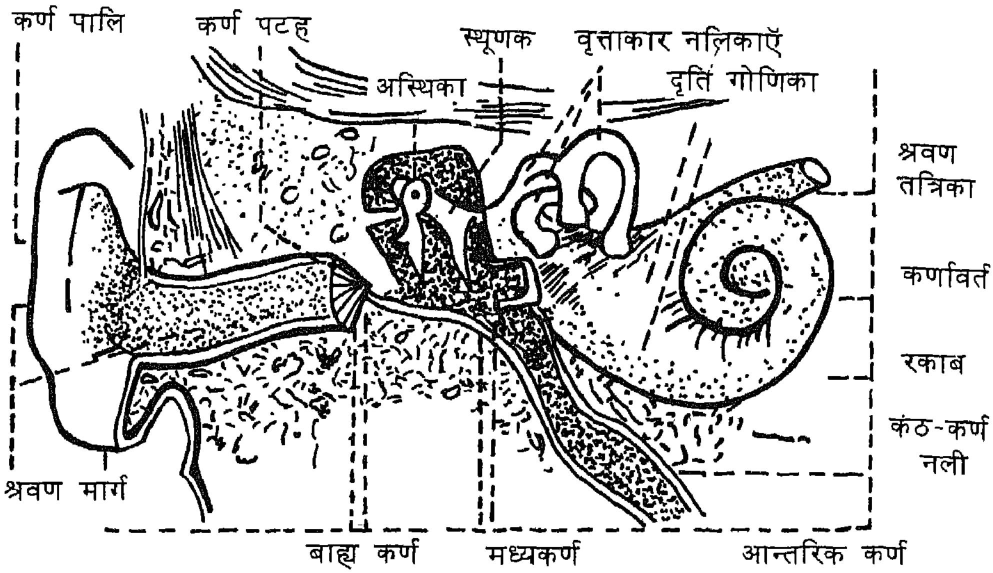
शलाकाएँ तथा शकु विभिन्न मानों से प्रकाश व अन्धकार मे अनुकूलन करते हैं। अँधेरे पर्यावरण से प्रकाश में आने पर शलाकाएँ एक से दो 'मिनट के अन्दर अनुकूलित हो जाती हैं तथा कुशलतापूर्वक कार्य करने लगती हैं। जब कोई व्यक्ति तेज प्रकाश वाले वातावरण से अँधेरे मे जाता है तो अनुकूलन करने में और कुशलतापूर्वक कार्य करने में अधिक समय लगता है। उदाहरणार्थ जब कोई व्यक्ति अँधेरे छविगृह में प्रवेश करता है तो वहाँ दूसरों को नही देख सकता। कुछ समय बाद शलाकाएँ अन्धकार मे अनुकूलन कर लेती हैं तथा परिणामस्वरूप वह कमरे में दूसरों को स्पष्ट रूप से देख पाता है। जब चलचित्र देखने के बाद वह कमरे से बाहर आता है तो प्रारम्भ में वह सूर्य के प्रकाश में चकाचौंध हो जाता है। थोड़ी ही देर मे शकु तथा शलाकाएँ तेज प्रकाश में अनुकूलन कर लेती हैं।

मनुष्य की आँख पर्यावरण में पदार्थों की बहुत सी जानकारी ले सकती है तथा उसमें विस्तृत रूप से विभेद कर सकती है। दृष्टि क्षेत्र में विस्तृत तथा सूक्ष्म विभेदों को विभेदित करने की योग्यता को *दृष्टि तीक्ष्णता* कहते हैं। इसी के कारण व्यक्ति बिल्कुल छोटी वस्तु को साफ-साफ तथा स्पष्ट रूप से देख सकता है। इससे व्यक्ति आकार के अनुसार छोटी वस्तुओं को क्रम में रख सकता है तथा उनके सुगठित रूप अथवा आकृति के अनुसार अलग कर सकता है।

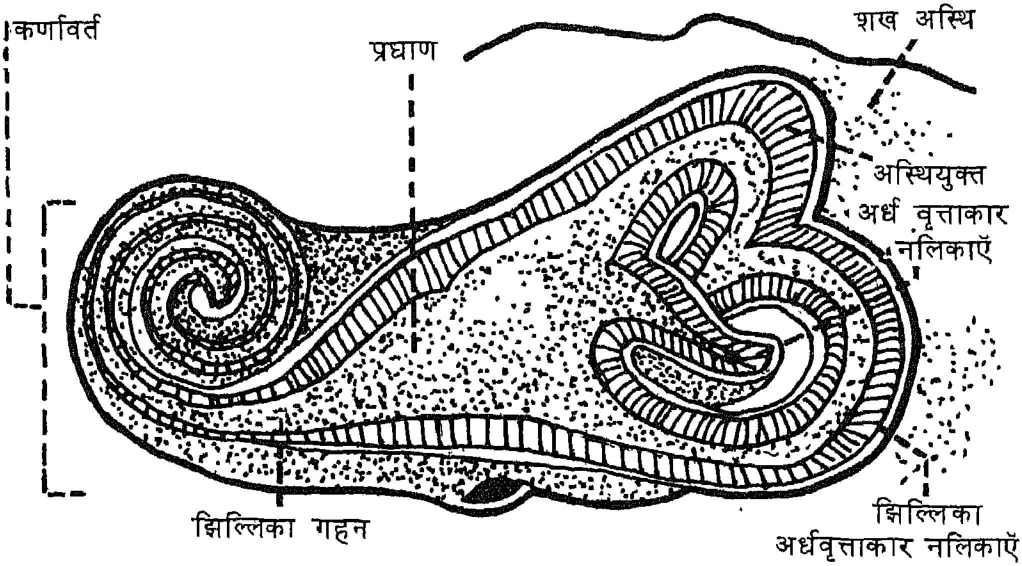
कोई भी व्यक्ति प्रकाश, रंग तथा रूप के प्रति तभी अवगत होता है जब मस्तिष्क के दृष्टि केन्द्र उत्तेजित होते हैं। आँखों द्वारा प्रवेश करने वाली प्रकाश किरणे लेन्स से होकर दृष्टिपटल पर केन्द्रित होती है जहाँ उनसे शलाकाएँ तथा शंकु उत्तेजित होते हैं। जब प्रकाश शलाकाओ तथा शंकुओं पर पड़ता है जो कि विशिष्ट सग्राहक कोशिकाएँ हैं तो इसके परिणामस्वरूप उनके प्रकाश संवेदी पदार्थों में रासायनिक परिवर्तन का क्रम होता है। ये परिवर्तन विशेष प्रकार की विद्युत उत्तेजनाएँ उत्पन्न करते हैं तथा तंत्रिका कोशिकाओं को उत्तेजित करते हैं। ये तंत्रिका उत्तेजनाएँ मस्तिष्क की ओर जाती हैं तथा वहाँ दृष्टि केन्द्रो को उत्तेजित करती हैं जिससे मस्तिष्क चमक, रंग तथा आकृति सवेदनाओं के लिए सजग हो जाता है।

(ii) *श्रवण*

सुनने के लिए ज्ञानेन्द्रिय कर्ण या कान हैं। मनुष्य का कान तीन भागो में विभक्त किया जा सकता है —बाह्य कर्ण, मध्यकर्ण तथा आन्तरिक कर्ण। कान का दिखाई देने वाला भाग बाह्य कर्ण अथवा *कर्णपालि* है। बाह्य कर्ण मे बाह्य श्रवण नलिका है जो ध्वनि तरंगो को कर्णपालि से कर्णपटल अथवा *कर्णपटही झिल्ली* तक प्रवाहित करती है। यह झिल्ली बाह्य कर्ण से मध्यकर्ण को अलग करती है। मध्यकर्ण में तीन छोटी अस्थि सरचनाएँ होती हैं जिन्हें *अस्थिका* कहते हैं तथा वे *मुदगर, स्थूणक* और *रकाब* हैं। इनके



चित्र 4.2 मानव कान की संरचना



चित्र 4.3 श्रवण यन्त्र

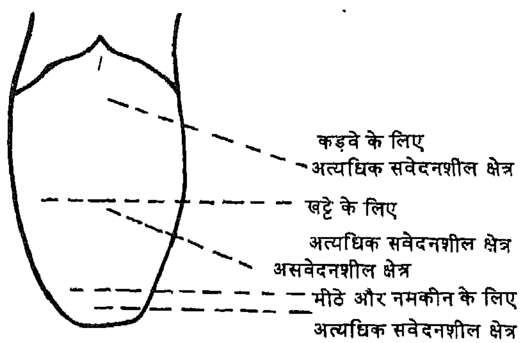
आकारो के कारण इन्हें साधारणतया *हथौडा*, *निहाई* तथा *पादाधार* कहा जाता है । मुद्गर कर्णपटल से सीधे जुड़ा होता है। स्थूणक एक ओर मुद्गर से तथा दूसरी ओर रकाब से जुड़ा होता है। रकाब अंडाकार गवाक्ष से थोड़ा ढीला सा जुड़ा होता है जो आन्तरिक कर्ण की झिल्ली है। जब कर्णपटल कपन करता है मुद्गर, स्थूणक तथा रकाब कंपन करते हैं तथा ध्वनि तरंगो को अंडाकार गवाक्ष को प्रेषित करते हैं।

आन्तरिक कर्ण मे *कर्णावर्त* होता है जो ध्वनि तरंगो को आगे श्रवण ग्राहको को प्रेषित करता है। कर्णावर्त द्रव्य से भरा होता है तथा इसमे *आधार झिल्ली* तथा *कॉर्टी* अग होते है। कॉर्टी अग पर लोम कोशिकाएँ होती हैं जो ध्वनि तरगो के कारण होने वाले स्पदन के प्रति अति उच्च सवेदनशील होती हैं। कर्णावर्त द्रव्य द्वारा स्पदित होकर जब आधार झिल्ली विस्थापित होती है तो कर्णावर्त में श्रवण ग्राहक सक्रिय हो जाते हैं। आधार झिल्ली लोम कोशिकाओ द्वारा ध्वनि की भिन्न आवृत्तियो को प्रेषित करती हैं। जब ध्वनि तरंगों द्वारा लोम कोशिकाएँ हिलती हैं वे तन्त्रिका कोशिकाओ को उत्तेजित करती हैं तथा तन्त्रिकावाही उत्तेजनाएँ उत्पन्न करती हैं जो श्रवण तन्त्रिका मे मस्तिष्क की ओर जाती हैं।

ध्वनि का प्रत्यक्षीकरण अथवा श्रवण की संवेदना एक प्रक्रिया है जो भौतिक ध्वनि स्पदनो के स्थानान्तरण से उत्पन्न होती हैं। ध्वनि तरंगे जो हवा द्वारा चलती हैं, कर्णपालि द्वारा इकट्ठी की जाती है और बाह्य श्रवण नलिका की ओर प्रवाहित की जाती हैं। फिर भौतिक ध्वनि स्पदन कर्णपटल को स्थानान्तरित होता है और उसके बाद मुद्गर, स्थूणक तथा रकाब को। यहाँ से स्पंदन अडाकार गवाक्ष द्वारा कर्णावर्त द्रव्य मे प्रवेश करते है। कर्णावर्त द्रव्य स्पंदनो को आधार झिल्ली तथा कार्टी अग को स्थानान्तरित करता है। तब लोम कोशिकाओ द्वारा स्पदन को ग्रहण किया जाता है जिनकी गति तन्त्रिका कोशिका को उत्तेजित करती है तथा तन्त्रिका उत्तेजना को उत्पन्न करती है। श्रवण-तन्त्रिकाओ द्वारा ये तन्त्रिका उत्तेजनाएँ मस्तिष्क को जाती हैं जिससे ध्वनि प्रत्यक्षीकरण करने मे सहायता मिलती है।

(iii) *स्वादेन्द्रिय*

कुछ सवेदी प्रक्रियाएँ ऐसी हैं जिनमें रासायनिक पदार्थों से उत्तेजना दी जाती है। स्वाद की संवेदना उनमे से एक है। स्वाद की सवेदना मुँह मे रखे पदार्थ के घोल से उत्तेजित होती है। स्वाद की ज्ञानेन्द्रिय जिह्वा है। जिह्वा पर बहुत-सी *स्वाद कलिकाएँ* हैं जो जिह्वा के कुछ विशेष क्षेत्रो पर अवस्थित है।



चित्र 4.4 मानव जिह्वा पर स्वाद के सवेदी क्षेत्र

स्वाद के लिए रासायनिक उद्दीपन इन्ही स्वाद कलिकाओं से ग्रहण किया जाता है। प्रत्येक स्वाद कलिका बहुत सी प्रलम्बित स्वाद कोशिकाओ की बनी होती है जो स्वाद उद्दीपनो के लिए सवेदनशील होती है। रासायनिक उद्दीपन जो तन्त्रिका उत्तेजनाओं मे परिवर्तित हो जाता है, स्वाद कोशिकाओं द्वारा स्वाद कोषाणुओं मे ले जाया जाता है। स्वाद कोषाणु इन उत्तेजनाओ को संवेदी तन्त्रिका ततुओ द्वारा मस्तिष्क को प्रसारित करते है। इस तरह स्वाद का प्रत्यक्षीकरण होता है।

स्वाद के चार विभिन्न गुण हैं—खट्टा, नमकीन, मीठा तथा कड़वा। जिह्वा की नोक मीठे तथा नमकीन

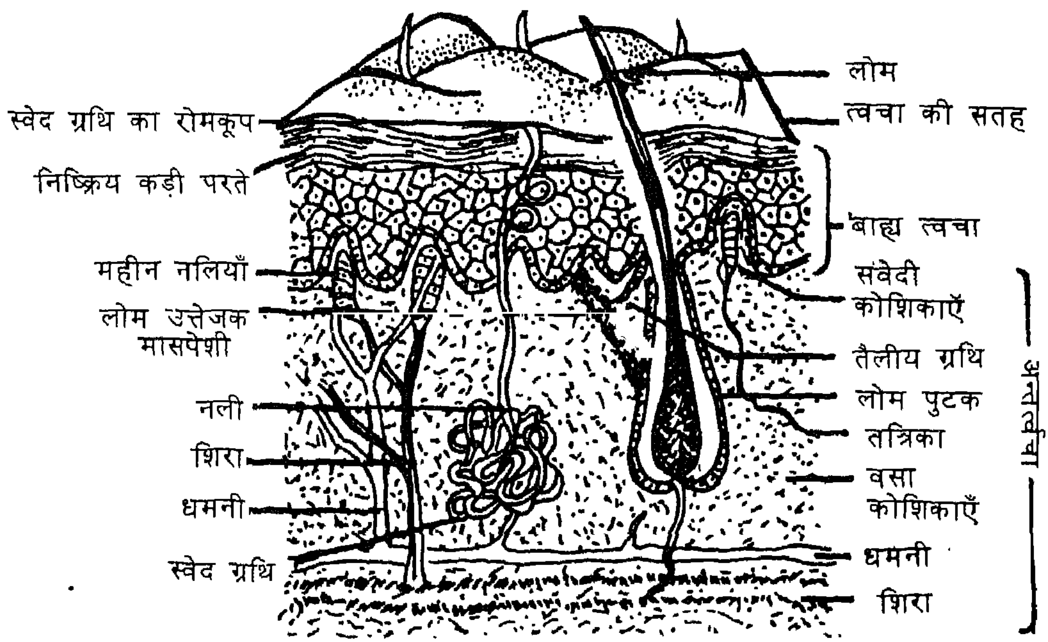
स्वादो के लिए सवेदनशील है। जिह्वा का पार्श्व खट्टे के लिए सवेदनशील है और पिछला भाग कड़वे स्वाद के लिए। जिह्वा का मध्य भाग इन सबके लिए असवेदनशील है।

(iv) *घ्राणेन्द्रिय*

एक और सवेदी प्रक्रिया जिसमे रासायनिक पदार्थों से उत्तेजना दी जाती है घ्राण सवेदना या सूँघना है। नाक में प्रविष्ट होने वाली गैसे सूँघने की सवेदना के लिए उद्दीपन हैं। नासा विवर के प्रत्येक पार्श्व की ऊपरी दीवारो के अग्राश मे घ्राण उपकला होती है जो घ्राण का अग है। केवल वही गैसे जो *घ्राण उपकला* को प्रभावित करती है, सूँघी जाती हैं। यदि गैस मे गन्ध है तो उपकला की कोशिकाओं मे विशेष परिवर्तन होते हैं जिनसे तत्रिका उत्तेजनाएँ होती हैं जो मस्तिष्क की ओर जाती हैं इससे घ्राण की सवेदना होती है। किन्तु यह ध्यान देने योग्य है कि प्रक्रमण अथवा रासायनिक उद्दीपनो के परीक्षण जिससे घ्राण उत्तेजना होती है, के विषय मे बहुत कम ज्ञात है। घ्राण के आधारभूत गुणो के विषय में भी मतभेद हैं।

(v) *त्वचीय सवेदनाएँ*

दृष्टि, श्रवण तथा स्वाद व सूँघने की रासायनिक सवेदनाएँ वे सवेदी सरणियाँ हैं जो अधिकतर वह सूचनाएँ व्यक्ति को लाकर देती हैं जिनकी इस सदैव बदलते पर्यावरण मे समायोजन के लिए उसे आवश्यकता होती है। एक और सरणी जो मानव शरीर के अन्दर तथा बाहर होने वाली घटनाओ के बारे मे महत्वपूर्ण सदेश देती हैं, त्वचा अथवा त्वचीय सवेदनाएँ हैं। चार त्वचीय सवेदनाएँ है — दबाव



चित्र 4.5 त्वचा का अनुप्रस्थ-काट आरेखण

अथवा स्पर्श, पीड़ा, गर्म तथा ठंडा। दबाव उद्दीपन के लिए वे सब पदार्थ अथवा शक्तियाँ हैं जो त्वचा पर किसी रूप में दबाव अथवा विकृति तथा झुकाव देती हैं। ये उद्दीपन ठोस, द्रव्य अथवा गैस जैसे तेज़ हवा के रूप में हो सकते हैं। वे पदार्थ अथवा शक्तियाँ जो त्वचा को घायल कर सकती हैं जैसे सुई चुभना, घाव या ज़ोरदार घूँसा पीड़ा के लिए उद्दीपन होते हैं। गर्म के लिए उद्दीपन वे पदार्थ हैं जो त्वचा से अधिक गर्म हैं। त्वचा से ठंडे पदार्थ ठंड की संवेदना के लिए उद्दीपन की तरह कार्य करते हैं।

त्वचीय संवेदना के लिए ज्ञानेन्द्रिय साधारण तंत्रिकान्त हैं या कभी-कभी अधिक विशिष्ट संरचनाएँ होती हैं। त्वचा के लोम क्षेत्र में दो प्रकार के तंत्रिकान्त होते हैं—अमज्ज तंत्रिकान्त तथा पिटकवत् तंत्रिकान्त अथवा पुटक। अमज्ज तंत्रिकान्त त्वचा की सतह के नीचे की ढीली संरचनाएँ हैं। पुटक प्रत्येक लोम (बाल) के आधार पर उलझे हुए होते हैं। पुटक दबाव अथवा स्पर्श के लिए मुख्य संग्राहक हैं। बालों की गति इन तंत्रिकाओं को उत्तेजित करती है जिससे उत्तेजनाएँ उत्पन्न होती हैं जो फिर सुषम्ना तथा मस्तिष्क में भेजी जाती हैं। अमज्ज तंत्रिकान्त पीड़ा, गर्म तथा ठंडे की संवेदनाओं के लिए उत्तरदायी हैं। शरीर के बिना बाल वाले भाग जैसे हाथ की हथेली तथा पैर के तलवे में अमज्ज तंत्रिकान्त होती हैं जो स्पर्श की अनुक्रिया करती हैं। बिना बाल के क्षेत्रों मे दबाव संवेदी संग्राहक होते हैं जिन्हें *माइजनर कणिका* कहा जाता है और जो शरीर के बिना बाल वाले भागों जैसे हाथ की हथेली तथा पैरों के तलवे, ओंठ तथा आँख की पलक में दबाव संवेदना का पता लगाने के लिए उत्तरदायी होते हैं। जब अमज्ज तंत्रिकान्त तथा विशिष्ट संरचनाएँ उत्तेजित होती हैं तब तंत्रिका उत्तेजनाएँ उत्पन्न होती हैं तथा मस्तिष्क की ओर सुषम्ना नाड़ी द्वारा चलती हैं जिनके परिणामस्वरूप त्वचीय संवेदना होती है। अमज्ज तंत्रिकान्त के उत्तेजित होने के सही-सही तरीके के बारे मे अधिक जानकारी नहीं है फिर भी यह माना जाता है कि प्रत्येक उद्दीपन संग्राहकों में उत्तेजना का एक अलग ढंग बनाता है तथा ये ढंग बाद में मस्तिष्क को प्रेषित किए जाते हैं जो उत्तेजनाओं की व्याख्या करता है।

(vi) गति *तथा प्रघाण संवेदनाएँ*

गति क्रियाएँ सम्पूर्ण शरीर की मांसपेशियों, कंडरा तथा संधियों में संग्राहकों के सक्रियण से आती हैं। ये संग्राहक मांसपेशियो अथवा संधियो की गतियों के प्रति अनुक्रिया करते हैं तथा शारीरिक भागों की स्थिति के बारे में सूचना देते हैं। प्रायः गति बोधेन्द्रिय की क्रिया प्रणाली के बारे में हम चेतन नहीं होते। उदाहरण के लिए जब कोई मांसपेशी फैलती अथवा सिकुड़ती है या जब कोई अंग हिलता है तो उसके अनुरूपी संग्राहक तंत्रिका उत्तेजनाएँ केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को प्रेषित कर देते हैं। यद्यपि व्यक्ति कभी भी इसके बारे में सजग नहीं होता फिर भी गति बोधेन्द्रिय चलने में, चढ़ाई मे तथा हर प्रकार की कौशलपूर्वक गतियों में मांसपेशियों को समन्वित करने के लिए स्वतः चालित तंत्र प्रदान करता है।

प्रघाण संवेदना व्यक्ति को अपनी स्थिति बताने के योग्य बनाती है। यह संतुलन तथा गतियों में भी महत्वपूर्ण है। इस संवेदना के अंग आन्तरिक कर्ण के प्रघाण क्षेत्र में अवस्थित हैं। आन्तरिक कर्ण में कर्णावर्त के पास तीन नलिकाएँ अवस्थित हैं जिन्हें *अर्धवृत्ताकार नलिकाएँ* कहते हैं। इन नलिकाओं के चारो ओर एक द्रव्य भरा है जो जब भी उस पर दबाव पड़ता है, हिलता है। प्रत्येक नलिका के आधार पर एक उभरी हुई संरचना है जिसे *तुंबिका* कहते हैं और जिसमें कुछ लोम कोशिकाएँ होती हैं। तुंबिका अर्धवृत्ताकार नलिका के द्रव्य के दबाव से उत्तेजित हो जाती है। तुंबिका पर जब द्रव्य दबाव डालता है तो उनकी छोटी लोम कोशिकाएँ तंत्रिका उत्तेजना से अनुक्रिया करती हैं। जब ये उत्तेजनाएँ केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में पहुँचती हैं तो वे संतुलन बनाये रखने में भाग लेती हैं। अर्धवृत्ताकार नलिकाओं के साथ-साथ संतुलन बनाये रखने के लिए दो अन्य विवर कर्णावर्त की अस्थि के

पास *गोणिका* तथा *दृति* हैं। इन विवरों की दीवारों पर संग्राहक कोशिकाएँ अवस्थित हैं। ये सग्राहक सिर के झुकाव अथवा स्थिति मे अनुक्रिया करते हैं। अर्धवृत्ताकार नलिकाएँ तथा गोणिका एव दृति मिलकर संतुलन की संवेदना में योगदान करते हैं। इन अंगों से आने वाली उत्तेजनाएँ मस्तिष्क में पहुँचने के पश्चात् व्यक्ति को, जब वह असतुलित हो तो अपने को ठीक करने तथा संतुलन बनाये रखने में सहायता करती है।

प्रत्यक्षीकरण

पर्यावरण की विभिन्न भौतिक ऊर्जाएँ व्यक्ति के संवेदी सग्राहको पर क्रिया करती हैं। जब ये संग्राहक सक्रिय हो जाते हैं तो तन्त्रिका उत्तेजनाएँ मस्तिष्क की ओर जाती हैं। इन उत्तेजनाओ पर मस्तिष्क द्वारा कार्यवाही तथा व्याख्या की जाती है ताकि पर्यावरण मे वस्तुओ तथा घटनाओं का प्रत्यक्षीकरण हो सके।

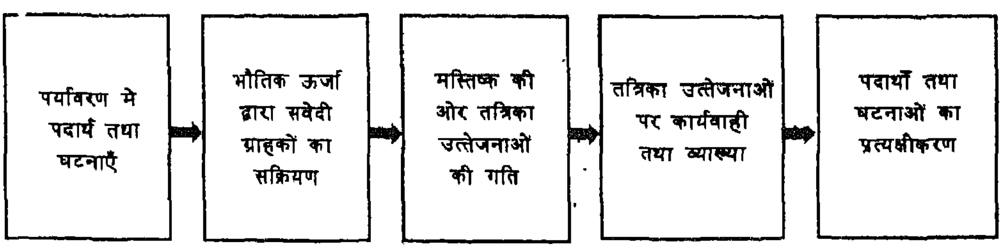
जैसे पहले व्याख्या की जा चुकी है *प्रत्यक्षीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप मे पारिभाषित किया जा सकता है जिससे संवेदी आगत अथवा सूचना सगठित की जाती है तथा सार्थक अनुभव मे व्याख्या की जाती है।* जब ज्ञानेन्द्रियाँ कोई विशेष उत्तेजना ग्रहण करती हैं तो उन्हें सार्थक बनाने के लिए कार्यवाही की जाती है। व्यक्ति अपने तात्कालिक वातावरण से प्राप्त संवेदी सूचना पर कार्यवाही अथवा व्याख्या करता रहता है जैसा कि चित्र 4.6 में दिखाया गया है। वह किसी आवाज़ को संगीतमय, किसी वस्तु को मेज़ अथवा कुर्सी तथा किसी व्यक्ति को स्त्री अथवा पुरुष की व्याख्या दे सकता है।

एक उत्तेजना के विभिन्न लोगों के लिए विभिन्न अर्थ होते हैं

किसी उत्तेजना अथवा उत्तेजना के आकार जैसे शोर अथवा किसी पदार्थ का स्पर्श या चित्र को केवल ग्रहण करना अथवा ध्यान देना ही उत्तेजना के सार्थक आकार के प्रत्यक्षीकरण मे सहायता नहीं करता। अवधान प्रत्यक्षीकरण की प्रत्याभूति नहीं देता। अवधान अपने मे सगठन अथवा प्रत्यक्षात्मक अनुभव का अर्थ निर्धारित नहीं करता है। एक ही घटना की ओर ध्यान देने वाले विभिन्न लोग उसे विभिन्न तरीके से प्रत्यक्षीकृत करते हैं। यह हर एक के लिए सार्थक हो सकती है पर हर व्यक्ति के पूर्व अनुभव के आधार पर इसका भिन्न अर्थ हो सकता है।

अर्थ की व्याख्या बहुत से कारकों पर निर्भर करती है

प्रत्यक्षात्मक अनुभव का अर्थ निर्धारित करने के लिए व्यक्ति के पूर्व अनुभवों को ध्यान में रखकर संवेदनाओं की व्याख्या करना आवश्यक है। ज्ञानेन्द्रियों की भौतिक अनुक्रिया को पहले ग्रहण की हुई तथा संचित की हुई तंत्रिका उत्तेजनाओं के साथ संगत आकारों में पहले रूपान्तरित करते हैं जिससे आने वाली



चित्र 4.6 प्रत्यक्षीकरण की ओर अग्रसर करने वाली घटनाओ का क्रम

उत्तेजनाएँ पूर्व अनुभवों के अनुरूप हो सकें। यह व्यक्ति को किसी उद्दीपन को उसके अपने आकार रूप में देखने में सहायता करता है भले ही उद्दीपन की प्रकृति एक दूसरे से भिन्न क्यों न हो। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति 'गुलाब' के प्रत्यय को बहुत से तरीकों से अनुभव कर सकता है। वह इसको बोले हुए शब्दों, लिखे हुए शब्दो, स्पर्श, घ्राण इत्यादि द्वारा अनुभव कर सकता है। यहाँ तक कि बोले हुए शब्दो में उसने बहुत प्रकार के उच्चारण, आवाजें, स्वरमान तथा तीव्रताएँ सुनी होगी किन्तु वे सभी समान कूट में रूपान्तरित होती हुई समान अर्थ देती हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि मानव तंत्रिका तंत्र अपने उद्दीपनों तथा भौतिक प्रतिकृति का प्रत्यक्षीकरण करने के लिए पर्याप्त रूपान्तरण करता है। सवेदना, अवधान तथा प्रत्यक्षीकरण आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं तथा मानव सूचना पर कार्यवाही का अभिन्न अंग बनते हैं।

उद्दीपन की व्याख्या विभिन्न कारकों द्वारा प्रभावित होती है

व्यक्ति द्वारा जो तत्काल अनुभव किया जाता है उसे प्रत्यक्षीकरण कहते हैं। यह वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति वस्तुओं को उनकी ठीक ठीक पहचान तथा आकार मे जानता है। प्रत्यक्षीकरण वह तरीका है जिससे व्यक्ति ग्रहण किये हुए उद्दीपनो पर सार्थक आकार में कार्यवाही करता है। व्यक्ति जो प्रत्यक्षीकरण करता है वह न केवल उत्तेजनात्मक परिस्थितियो से बल्कि उसके पूर्व अनुभव, वर्तमान मानसिक दशा, आवश्यकताओं तथा इच्छाओ द्वारा प्रभावित होता है। एक ही उद्दीपन का प्रत्यक्षीकरण प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न हो सकता है। एक व्यक्ति भी एक ही उद्दीपन आकार का विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार से प्रत्यक्षीकरण कर सकता है।

अवधान

बहुत से तथा विविध प्रकार के उद्दीपन मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियो पर एक साथ टकराते है किन्तु कोई भी उन सबका एक ही समय में प्रत्यक्षीकरण नही करता। वह उनमें से कुछ ही का प्रत्यक्षीकरण करता है क्योंकि वह अपनी अभिज्ञता केवल उन्हीं पर केन्द्रित करता है। *पर्यावरण मे कुछ की उपेक्षा करके अन्य विशेष वस्तुओं, घटनाओ अथवा उद्दीपनो पर अभिज्ञता की एकाग्रता ही अवधान कहा जाता है ।*

कोई भी व्यक्ति सभवतः अपने आसपास होने वाले सभी उद्दीपनो के लिए प्रतिक्रिया नहीं कर पाता इसलिए प्रत्यक्षीकरण चयनित प्रक्रिया है जो किसी दिये हुए क्षण मे कुछ की उपेक्षा करके एक उद्दीपन अथवा उद्दीपनों के आकार पर अवधान देने की ओर अग्रसर करती है। अवधान प्रत्यक्षीकरण मे एक आधार भूत तत्व है।

अवधान की विशेषताएँ

अवधान की तीन महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

(अ) *अवधान चयनित होता है*

अवधान चयनित दृग्विषय है। व्यक्ति उद्दीपन की ओर तब अवधान देते हैं जब वे प्रस्तुत उद्दीपनो में कुछ को अपनी अभिज्ञता के केन्द्र मे लाते हैं जबकि शेष को अपनी अभिज्ञता के बाहर अथवा सीमान्त मे छोड़ देते हैं। जब ज्ञानेन्द्रियो की क्रियाएँ किन्हीं विशेष उद्दीपनों पर केन्द्रित अथवा एकाग्रित होती हैं, व्यक्ति को उस उद्दीपन पर अवधानयुक्त समझा जाता है। उद्दीपन प्रकाश की द्युति, शोर अथवा किसी पुष्प की सुगन्ध इत्यादि हो सकता है।

(ब) *अभिज्ञता का केन्द्र तथा सीमान्त होता है*

किसी एक क्षण में अभिज्ञता का क्षेत्र विशेष उद्दीपन पर केन्द्रित होता है जिसे अवधान का केन्द्र या अवधान का केन्द्रित बिन्दु कहा जाता है। वस्तुएँ अथवा घटनाएँ जिन पर अभिज्ञता एकत्रित होती है, वे अवधान के केन्द्र पर होती हैं। जब तक व्यक्ति उनकी ओर अवधान देता है वे पृष्ठभूमि से अलग

स्पष्ट दिखाई देती हैं। वस्तुएँ अथवा घटनाएँ जो केन्द्र से दूर हैं और जिनके बारे में व्यक्ति अस्पष्ट रूप से अभिज्ञ है, वे अनुभव अथवा अभिज्ञता की सीमान्त में कही जाती हैं। वे वस्तुएँ अथवा घटनाएँ जो व्यक्ति की सीमान्त से बाहर हैं, व्यक्ति के अवधान के क्षेत्र से बाहर होती हैं जिनके बारे मे वे स्पष्ट रूप से अभिज्ञ नही होते। उदाहरण के लिए जब कोई व्यक्ति कमरे में बैठा एक पुस्तक पढ़ने मे व्यस्त है तो पुस्तक उसके अभिज्ञता के केन्द्र अथवा अवधान के केन्द्र मे है। कमरे मे सभी वस्तुएँ जैसे मेज़, कुर्सी जिस पर वह बैठा है तथा दरवाजा, खिड़कियाँ सभी अभिज्ञता की सीमान्त में है।

दूसरे शब्दो में जब व्यक्ति किसी वस्तु अथवा घटना की ओर अवधान देता है तो उसकी ज्ञानेन्द्रियो से आने वाली सूचनाओं के साथ विभिन्न तरीको से व्यवहार तथा कार्यवाही की जाती है। इनमे से कुछ उसकी अभिज्ञता के केन्द्र में रहती हैं तथा कुछ छानकर बाहर कर दी जाती हैं। व्यक्ति छानकर बाहर किये जाने वाले उद्दीपनो के बारे मे कठिनता से ही अभिज्ञ होता है। उदाहरण के लिए जब कोई व्यक्ति फुटबाल अथवा हॉकी का खेल देख रहा होता है तो वही खिलाड़ी हमेशा उसके अवधान का केन्द्र होता है जो गेंद को लिए होता है। व्यक्ति अपना अवधान गेंद पर तथा गेंद के साथ खेलते हुए खिलाडी पर केन्द्रित करता है। उसी वक्त व्यक्ति पर बहुत से उद्दीपनों का प्रहार हो सकता है जो उसके आसपास है। उसके पास बैठा हुआ व्यक्ति धूम्रपान कर रहा हो सकता है और धूम्रपान का धुआँ उस पर पहुँच रहा हो सकता है। उसके पीछे बैठा दूसरा आदमी चिल्ला रहा हो सकता है। दूसरे लोग खिलाडी के अच्छे प्रदर्शन के लिए तालियाँ बजा रहे हो सकते हैं इत्यादि। किन्तु जब तक खेल चल रहा होता है और व्यक्ति खेल में गहरी अभिरुचि रखते हैं तो वह अपनी अभिज्ञता के सीमान्त के इन बहुत से उद्दीपनो के प्रति अभिज्ञ नही हो सकते किन्तु जब खेल समाप्त होता है या समय समाप्ति की घोषणा कर दी जाती है, वे अपने आसपास इन उद्दीपनों को प्रत्यक्षीकृत कर सकते हैं।

(स) *अवधान निरन्तर बदलता रहता है*

अवधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता है कि लम्बे समय तक एक ही वस्तु पर अवधान स्थिर रखना सम्भव नही होता। अवधान एक घटना से दूसरी पर तथा एक पदार्थ से दूसरे पर शीघ्रता से बदलता रहता है। परिणामस्वरूप जब खेल चल रहा होता है तो अधिकतर समय दर्शकों का अवधान गेंद पर तथा उस खिलाड़ी पर केन्द्रित होता है जो गेंद से खेल रहा होता है। कभी-कभी व्यक्ति अपने आसपास होने वाली कुछ विशेष दूसरी घटनाओ के प्रति भी अभिज्ञ हो जाता है। मैदान मे दूसरे खिलाड़ियो की गतियों पर, अपने पीछे बैठे लोगो के चिल्लाने पर अथवा अपने पड़ोसी के धूम्रपान द्वारा छोडे गए धुएँ के विषय में भी अभिज्ञ हो सकते हैं। बाद मे दोबारा वे उसी खिलाड़ी पर केन्द्रित कर लेते हैं जो गेंद से खेल रहा है। इससे यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति का अवधान निरन्तर बदलता रहता है। कभी भी यह एक पदार्थ अथवा घटना पर कुछ सैकंड से अधिक नही रहता। जो प्रारम्भ मे किसी के केन्द्र पर है वह कुछ समय बाद सीमान्त मे चला जाता है। अधिक समय बीतने के पश्चात् यह अभिज्ञता से बिल्कुल बाहर जा सकता है।

जब किसी व्यक्ति के अवधान में एक क्रिया प्रबल होती है तो उसकी प्रबलता निरन्तर अधिक समय तक नही बनी रहती। दूसरी क्रियाएँ या वस्तुएँ अभिज्ञता के केन्द्र में आ जाती है और फिर धीरे-धीरे मन्द पड़ती जाती हैं और उनका स्थान अन्य प्रबल क्रियाएँ ले लेती हैं। उदाहरणार्थ कोई विद्यार्थी जब एक अच्छा वक्तव्य सुन रहा होता है तो प्रारम्भ मे उसमे उसका अवधान लगा रहता है किन्तु धीरे-धीरे जब भाषण आगे बढ़ता है और संभवत. जरा नीरस होने लगता है तो उसका अवधान कुछ समय के लिए दूसरे उद्दीपन जो वास्तव मे उसके अनुभव अथवा

अभिज्ञता की सीमान्त में थे, पर चला जाता है। सम्भवतः उसका अवधान दो लोगों के वार्तालाप अथवा कमरे से बाहर चल रहे विद्यार्थियों की पदचाप से उत्पन्न शोर पर जा सकता है। अवधान सामान्यतः पर्यावरण के गुणों के साथ-साथ अभिप्रेरकों एवं निरीक्षणकर्ता की अन्य भौतिक तथा मानसिक दशाओं द्वारा शासित तथा पोषित होता है।

अवधान को प्रभावित करने वाले कारक

पर्यावरण को बनाने वाले उद्दीपन एक निश्चित क्षण मे निरन्तर तथा साग्रही होते हैं। इन उद्दीपनों मे से बहुत कम एक-एक करके ज्ञानेन्द्रियो तक पहुँचते हैं। इनमें से अधिकतर व्यक्ति के अवधान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं अथवा उन उद्दीपनों के साथ जुड़कर आते हैं जिन्हें व्यक्ति प्रतिरूपों मे प्रत्यक्षीकृत करता है। किसी पदार्थ या घटना पर अवधान लगने को कुछ कारक निर्धारित करते हैं। उद्दीपन की विशेषताएँ, आन्तरिक आवश्यकताएँ, अपेक्षाएँ तथा पूर्व अनुभव सामान्यतः व्यक्ति का किसी पदार्थ अथवा घटना पर अवधान लगने को प्रभावित करते हैं। हम इन कारकों को दो भागों में वर्गीकृत कर सकते हैः (i) बाह्य कारक तथा (ii) आन्तरिक कारक।

(i) *अवधान को प्रभावित करने वाले बाह्य कारक*

कुछ महत्वपूर्ण बाह्य कारक जो किसी दिये हुए क्षण में अवधान को प्रभावित करने में योगदान करते हैं उनकी व्याख्या निम्न हैं :

(क) *प्रकृति* : उद्दीपन की प्रकृति से तात्पर्य है कि क्या उद्दीपन दृश्य, श्रव्य या कोई अन्य है। क्या इसमें शब्द सम्मिलित है या चित्र, पुरुष है या स्त्री, पशु है या वस्तु, अथवा निर्जीव पदार्थ है। श्रव्य उद्दीपन के मामले मे यह ऐसी वस्तुएँ जैसे कोई वर्णन, गाना अथवा वाद्य सगीत हो सकता है। सामान्यतः चित्र शब्दो से अधिक आसानी से अवधान आकृष्ट कर लेते हैं। मनुष्यो के चित्र निर्जीव चित्रो की अपेक्षा अधिक अवधान आकृष्ट करते हैं। एक लय वाला श्रव्य पद्यांश जैसे बालगीत उसके गद्यांश रूप में वर्णन की अपेक्षा अधिक आसानी से अवधान आकृष्ट कर लेगा।

(ख) *नवीनता* : उद्दीपन की नवीनता ऐसा कारक है जो अवधान प्राप्त करने में सहायता करता है। एक असामान्य अथवा अनियमित घटना अवधान लेने में अधिक समर्थ होती है। पदार्थ, ध्वनियाँ, गन्धें तथा स्वाद जिनके व्यक्ति आदी हो चुके होते हैं, बिना ध्यान दिये चली जा सकती हैं। परन्तु व्यक्ति किसी भी अजीब उद्दीपन का तुरन्त निरीक्षण करने लगते हैं। उदाहरणार्थ पाठ्यपुस्तक में किसी पृष्ठ पर तिरछे अथवा रंगीन अक्षर उस पृष्ठ पर दूसरे अक्षरों की अपेक्षा आसानी से अवधान प्राप्त कर लेते हैं।

(ग) *तीव्रता* · तीव्र प्रकाशमय संकेत अथवा ध्वनि विस्तारक यंत्रों से कोई आवाज़ मन्द प्रकाशित सकेत अथवा रिकार्ड प्लेयर की धीमी आवाज की अपेक्षा अधिक आसानी से अवधान को आकृष्ट कर लेती है। इससे अवधान प्राप्ति पर उद्दीपन की तीव्रता, मात्रा अथवा शक्ति का प्रभाव स्पष्ट है। किसी भी पृष्ठ पर हल्के छपे अक्षरो की अपेक्षा बड़े अक्षर अपनी सापेक्षिक तीव्रता के कारण स्पष्ट दिखते हैं। इसी प्रकार तेज गन्ध, भारी दबाव तथा तीव्र स्वाद तथा पीडा विशेषतया जब वे अचानक पहले वाली उत्तेजना से भिन्न होते हैं तो आसानी से अवधान पा लेते हैं।

(घ) *वैषम्य* : जो चीजे अपने आसपास से अलग होती हैं वे अवधान आकृष्ट कर लेती हैं। दूसरे शब्दों में जो वस्तुएँ पर्यावरण में दूसरों के विरुद्ध होती हैं वे दूसरो की अपेक्षा आसानी से अवधान प्राप्त कर लेती हैं। उदाहरणार्थ जब कोई विद्यार्थी यह **वाक्य** पढ़ता है वह मोटे लिखे शब्द की ओर ध्यान दिये बिना नहीं रह सकता। हो सकता है जैसे ही वह इस पृष्ठ पर आया होगा उसका ध्यान इस पर चला गया होगा। इस मामले में न केवल उद्दीपन की तीव्रता बल्कि उसका वैषम्य भी अवधान प्राप्ति को आसान बनाता है।

(ङ) *आकार* : संदर्भ के अनुसार उद्दीपन का भौतिक आयाम अथवा आकार भी अवधान को प्रभावित करता है। सामान्यतः यदि दो उद्दीपन व्यक्ति के अवधान के लिए स्पर्धा कर रहे हैं तो उनमें से बड़े पर उसका अवधान पहले जाएगा। पर यहाँ भी वैषम्य काम करता है। यदि इस पृष्ठ पर सभी अक्षर मोटे होते हैं तो दूसरे शब्दों की अपेक्षा उनके अवधान प्राप्त करने का मूल्य अधिक नही होता। मोटे शब्दो के समूह मे छोटे अक्षर वाले शब्द का अवधान प्राप्त करने का मूल्य अधिक होता है। दूसरे शब्दो मे यह संदर्भ पर निर्भर करता है कि कब बड़े और कब छोटे शब्द अथवा अक्षर निरीक्षक का अवधान प्राप्त कर सकेगे। सामान्यत विज्ञापनो मे बड़ा विज्ञापन छोटे विज्ञापन की अपेक्षा अधिक अवधान प्राप्त करेगा। विशेषकर जब वह विज्ञापन छोटे विज्ञापनो के साथ है। किन्तु एक समाचार पत्र अथवा पत्रिका के पृष्ठ के मध्य में खाली पृष्ठ पर एक बहुत ही छोटे विज्ञापन का अवधान प्राप्त करने का मूल्य अधिक होगा।

(च) *रंग* : कुछ रंग दूसरो की अपेक्षा अधिक अवधान पाते हैं पर यहाँ भी वैषम्य एक महत्वपूर्ण पहलू है। कुछ रंग दूसरों की अपेक्षा अधिक आकर्षक होते हैं। व्यक्ति भूरी पृष्ठभूमि की अपेक्षा रंगीन पृष्ठभूमि मे अधिक रुचि रखते हैं तथा काले एवं सफेद की अपेक्षा लाल और सफेद रूपरेखा को अधिक वरीयता देते हैं। विज्ञापन बनाने वाले विज्ञापनो में छपने वाले शब्दो को तैयार करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखते हैं। किन्तु यहाँ भी वैषम्य एक महत्वपूर्ण पहलू है। यदि इस पृष्ठ पर कोई रंगीन शब्द होता तो आपका ध्यान वह अनुच्छेद जिसमे वह रंगीन शब्द आया है पढने से पहले उस शब्द पर चला जाता। शब्द का रंग इस मामले में कोई अर्थ नहीं रखता। वास्तव मे रंगीन विज्ञापनों की ओर रंगों के कारण अथवा रंगो के प्रयुक्त संयोगो के कारण इतना ध्यान नही जाता जितना कि रंगीन के साथ प्रदर्शित श्वेत श्याम विज्ञापनो से अलग दिखने के कारण जाता है।

(छ) *गतिशीलता* . दूसरे गुण समान होने पर गतिशील पदार्थ प्रायः स्थिर पदार्थ की अपेक्षा अधिक अवधान पाता है। सामान्यतः मनुष्य गति के लिए संवेदनशील होती हैं। बहुत बडे विज्ञापन के लिए प्रयुक्त जलता बुझता नियॉन सकेत अवधान पाने मे गति उद्दीपन के महत्व को स्पष्ट करता है। गतिशील नियॉन सकेत की ओर अच्छी तरह प्रकाशमान किन्तु स्थिर विज्ञापनों की अपेक्षा अधिक शीघ्र अवधान जाता है।

(ज) *बारम्बारता* : बारम्बारता अथवा उद्दीपन का निरन्तर प्रस्तुतीकरण व्यक्ति के अवधान को आकृष्ट करने में एक और महत्वपूर्ण कारक है। जब किसी विशेष उद्दीपन की बहुत बार पुनरावृत्ति होती है तो व्यक्ति का ध्यान अन्त मे इस ओर चला ही जाता है चाहे प्रारंम्भ मे यह अवधान प्राप्त करने मे असफल रहा हो। उदाहरण के लिए किसी पत्रिका में यदि कोई विज्ञापन एक से अधिक बार प्रकाशित हुआ हो उसकी देखे जाने की सम्भावना उस विज्ञापन से अधिक होती है जो केवल एक ही बार छपा है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति भीड़ मे है और उसका नाम बार-बार पुकारा जाता है तो उसका अवधान अन्ततः उसकी ओर चला ही जाएगा किन्तु निरन्तर किसी उद्दीपन की पुनरावृत्ति बहुत समय तक हो तो उसका प्रभाव मन्द हो सकता है। व्यक्ति किसी स्थिति के इतना आदी हो जाते हैं कि वे उसकी ओर ध्यान ही नहीं देते। उद्दीपन के शीघ्रतापूर्वक तथा निरन्तर प्रस्तुतीकरण की अपेक्षा वितरित प्रस्तुतीकरण की ओर ध्यान जाने की अधिक अच्छी सम्भावना होती है।

(ii) *अवधान को प्रभावित करनेवाले आन्तरिक कारक*

अवधान को प्रभावित करनेवाले पर्यावरण के बाह्य कारकों के साथ-साथ व्यक्ति के अन्दर भी कुछ कारक होते हैं जो उसके अवधान को आकृष्ट करनेवाले उद्दीपनो का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण होते हैं। नीचे अवधान को प्रभावित करनेवाले ऐसे कुछ कारक दिये हैं।

(क) *अभिप्रेरण* : अवधान को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक अभिप्रेरण है। मनुष्य की

आवश्यकताओं से संबंधित भौतिक अथवा सामाजिक वचनों का अवधान की दिशा अथवा तीव्रता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यदि कोई व्यक्ति क्षुधा से अभिप्रेरित है तो उसका ध्यान खाने की स्वादिष्ट वस्तु की सुगन्ध पर जाने की सम्भावना है। कोई व्यक्ति जो अपने व्यवसाय मे ऊँचे पद पर जाना चाहता है उसका ध्यान ऊँची नौकरी के विज्ञापनों पर जाएगा। माँ जो अपने बच्चे के लिए चिन्तित है उसे अपने बच्चे का रोना दूसरों की अपेक्षा सुनने की सम्भावना अधिक है। यदि किसी विद्यार्थी की परीक्षा जल्दी ही होने वाली है तो उसका अवधान अध्यापिका के वक्तव्य पर केन्द्रित होने की अधिक सम्भावना है क्योकि उसे वह आवश्यक सूचना मिल सकती है जो उसकी परीक्षा में पास होने की तात्कालिक आवश्यकता को सन्तुष्ट करने मे सहायता करती हो। दूसरा विद्यार्थी जो उस विषय में असफल हो चुका है उस उद्दीपन से बचने के लिए वक्तव्य का परिहार करेगा जो उसे असफलता की याद दिलाता है। यह तथ्य है कि समान परिस्थितियो मे लोगों के किसी विशेष उद्दीपन की ओर उनके अवधान की मात्रा में भिन्नता का कारण उस समय में अंशतः उनकी अभिप्रेरणात्मक अवस्था होती है।

लेकिन कुछ मूलभूत अभिप्रेरक हैं जो अधिकतर लोगो में भिन्न-भिन्न मात्रा मे होते हैं जैसे स्वस्थ रहने का, प्रसिद्ध होने का, सुन्दर दिखने का, पद प्राप्ति की इच्छा, इत्यादि। जब उद्दीपन के प्रतिरूप इन अन्तर्नोदों से संबंधित होते हैं तो हममें से अधिकतर इन उद्दीपनो के लिए ध्यान देते हैं। इसीलिए अधिकतर विज्ञापनों मे उत्पादनों की प्रशसा करने वाले शब्द तथा उनके द्वारा मनुष्य की कुछ विशेष इच्छाओ की सतुष्टि करने के वायदे होते हैं।

(ख) *अभिरुचियाँ, अभिवृत्तियाँ तथा पूर्वाग्रह* : अभिरुचि अवधान को प्रभावित करने वाला एक और कारक है। वे घटनाएँ अथवा पदार्थ जिनमे व्यक्ति की अभिरुचि विकसित हो चुकी है उन वस्तुओं अथवा घटनाओ की अपेक्षा अधिक अवधान आकृष्ट करेगे जिनमे प्रारम्भ मे कोई अभिरुचि नही थी। व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ तथा पूर्वाग्रह भी किसी सीमा तक घटनाओ तथा विचारो की ओर ध्यान देने की प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं।

(ग) *थकान* : शारीरिक तथा मानसिक थकान का अवधान पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। जैसे-जैसे मनुष्य को शारीरिक थकान होने लगती है उसकी सतर्कता में कमी होने लगती है। कोई बालक/बालिका यदि ठीक से नही सोया/सोई या कड़े शारीरिक अथवा मानसिक कार्य के कारण बेहद थका/थकी है तो उन बच्चो की अपेक्षा जो ठीक से सोये हैं या जिन्हें थकान नही है, वह कक्षा मे कम अवधान देगा/देगी।

(घ) *पूर्व-विन्यास* : एक और महत्वपूर्ण कारक जो व्यक्ति का उद्दीपन की ओर अवधान आकृष्ट करता है, वह व्यक्ति का पूर्व विन्यास है। 'पूर्व विन्यास' का तात्पर्य किसी एक प्रकार के उद्दीपन के लिए एक विशेष प्रकार से क्रिया करने की पूर्ववृत्ति या व्यक्ति की तैयारी होती है जो दूसरे प्रकार के उद्दीपनों के लिए नहीं होती। व्यक्ति किसी एक उद्दीपन के प्रति अपनी अनुक्रियाओ मे अपनी आदत अथवा क्षणिक अभिरुचियों के कारण भिन्न होते हैं जो उन्हें विशेष प्रकार के उद्दीपनो के लिए तैयार करती हैं। उदाहरणार्थ यदि वनस्पति वैज्ञानिक तथा प्राणीशास्त्री किसी क्षेत्र भ्रमण पर जाते हैं तो उनका विन्यास भिन्न वस्तुओं के लिए होने के कारण वे भिन्न वस्तुएँ ही देखते हैं। कोई व्यक्ति यदि किसी की बेचैनी से प्रतीक्षा कर रहा है, वह घर में किसी भी शोर को दरवाजे पर दस्तक के रूप मे ही समझेगा। वाहन चालक यदि यातायात संकेत पर लाल बत्ती की अपेक्षा कर रहा है तो वह यातायात प्रकाश के प्रति शीघ्र अनुक्रिया करेगा। पूर्व विन्यास अथवा अपेक्षा व्यक्ति के अवधान को निर्धारित करती हैं। उसका अवधान उन्हीं वस्तुओ अथवा घटनाओं की ओर जाता है जिन्हें ग्रहण करने के लिए वह उत्सुक होता है।

अवधान की विस्तृति

अवधान चयनित होता है किन्तु थोड़ी देर के लिए होता है। हम अपनी कक्षा में अध्यापक के वक्तव्य की ओर अवधान देते हुए यह पाते हैं कि हमारा अवधान एक स्थिति से दूसरी पर विचलित होता रहता है। कभी-कभी अवधान की दिशा हमारे नियन्त्रण से बाहर होती है तथा हमें ऊँचे शोर, तेज प्रकाश, तीव्र गन्ध इत्यादि की ओर ध्यान देने के लिए बाध्य होना पड़ता है। किन्तु ये उद्दीपन हमारा अवधान अधिक समय तक पकड़ नहीं पाते। हम किसी क्षण कितनी वस्तुओं पर ध्यान दे पाएँगे यह इस बात पर निर्भर करता है कि निरीक्षण के लिए कितना समय दिया गया है तथा अलग-अलग कितनी वस्तुएँ प्रस्तुत की गई हैं। अवधान की विस्तृति का तात्पर्य उन वस्तुओं, अक्षरों अथवा अंकों की मात्रा से है जिन पर बिना पलक झपकाए अथवा बिना गिनती किये सैकंड के किसी भाग में कोई व्यक्ति ध्यान दे सकता है। *अतः अवधान की विस्तृति सूचना की वह मात्रा है जो कोई भी निरीक्षणकर्ता किसी जटिल उद्दीपन से एक ही क्षणिक अनावरण में ग्रहण कर लेता है।* आश्चर्य की बात है कि इस प्रकार जिस संख्या का हम अवधान कर पाते हैं वह बहुत सीमित होती है। यह संख्या एक उपकरण के इस्तेमाल से जिसे 'टैचिस्टोस्कोप' कहते हैं, निर्धारित की जा सकती है। इनमें भी व्यक्तिगत भेद होते हैं किन्तु साधारणतया चार से सात तक की संख्या अथवा अक्षरों का एक समय में अवधान किया जा सकता है।

यह देखा गया है कि किसी स्कूटर अथवा कार का नम्बर केवल 4 अंकों 9999 तक ही का होता है। यह इसलिए होता है क्योंकि जब कोई कार तेजी से जा रही होती है तो यातायात पुलिस का व्यक्ति अक्षरों के साथ चार अंकों की संख्या ही लिख पाता है। मानव मस्तिष्क में प्रत्यक्षात्मक क्षेत्र को विभिन्न इकाइयों में संगठित करने की क्षमता होती है। अंक एक समूह बनाते हैं तथा अक्षर दूसरा समूह। व्यक्ति चार पाँच इकाइयों के दो या तीन समूहों का अवधान कर सकते हैं।

हैमिल्टन ने कंचों का प्रयोग करके अवधान की विस्तृति पर प्रयोग किये किन्तु बाद में टैचिस्टोस्कोप का उपयोग करके क्रमबद्ध खोज की गई। टैचिस्टोस्कोप के रंध्र पर एक सैकंड का चौथा अथवा दसवें भाग के मान पर संख्याओं अथवा अक्षरों को पत्रक पर दिखाया गया। अनावरण का समय इतना कम होता है ताकि प्रयोज्य पलक न झपका सके तथा एक ही झलक में ग्रहण कर सके। वस्तुओं की संख्या एक से दस या अधिक हो सकती है। वे साधारण बिन्दु, अक्षर, अंक, शब्द अथवा ज्यामितीय आकार हो सकते हैं। प्रयोज्य को उन वस्तुओं की संख्या, उनका नाम अथवा वर्णन करना पड़ता है।

केवल उन्हीं अनुक्रियाओं को स्वीकार करते हुए जो पूर्णतया सही होती हैं, हम पाते हैं कि प्रयोज्य की सफलता प्रत्येक समय पर भिन्न होती है। किसी एक क्षण वे छः वस्तुओं को ठीक बता सकते हैं और दूसरे क्षण वे केवल दो ही बता सकते हैं। अवधान की विस्तृति की गणना टैचिस्टोस्कोप द्वारा प्रस्तुत क्रमिक विषय सामग्री पर दी गई प्रतिक्रियाओं के खंड मूल्य की संख्या को आधार मूल्य में जोड़कर की जाती है। आधार मूल्य अक्षरों अथवा अंकों का वह क्रम है जिन पर सही अवधान दिया जाता है तथा उससे पूर्व कोई गलती नहीं होती। अवधान की विस्तृति उद्दीपन के आकार, अनावरण की अवधि, क्षेत्र में दृश्यता, सामग्री की सार्थकता, प्रयोज्य की मानसिक दशा तथा प्रयोज्य एवं टैचिस्टोस्कोप के बीच की दूरी पर निर्भर करती है। औसतन एक बच्चे के अवधान की विस्तृति 4-5 के बीच तथा वयस्क की 6-7 के बीच होती है। मिलर ने बहुत से प्रयोगों के आधार पर यह बताया है कि अवधान की विस्तृति 7± 2 की सीमाओं के बीच विचलन करती है जिसे साधारण भाषा में मैजिक संख्या के नाम से जाना जाता है।

अवधान में एक भिन्न कारक और उत्पन्न होता है जब अक्षर सार्थक शब्द बनाते हैं। यदि यह कोई

परिचित शब्द होता है तो दस या अधिक अक्षरों का शब्द भी अवधान की एक क्रिया में ग्रहण किया जा सकता है। यह इसलिए संभव हो जाता है कि प्रत्यक्षात्मक क्षेत्र कुछ भागों को जो कि वास्तव में देखे नहीं गये हैं, उनकी भी शीघ्रता से पूर्ति कर देता है। यह उल्लेख रुचिकर है कि जब अक्षरों को शब्दों अथवा वाक्यों में संगठित कर दिया जाता है तो इन कम समय वाले अनावरणों में प्रत्यक्षीकृत अक्षरों की संख्या बढ़ जाती है। इसका तात्पर्य है कि हम शब्दों को सार्थक इकाइयों के रूप में प्रत्यक्षीकृत करते हैं न कि एकत्रित संकेतों के संग्रह के रूप में। दृश्य अवधान की विस्तृति श्रव्य विस्तृति से थोड़ी अधिक होती है क्योंकि दृश्य विस्तृति में उद्दीपन को एक साथ प्रस्तुत किया जाता है जिसके समूह आसानी से बन सकते हैं।

साधारण प्रयोगों में प्रयोज्य को कुछ अधिक समय उदाहरणार्थ पाँच सैकंड तक वस्तुओं को देखने के लिए दिया जाता है। फिर भी अवधान की विस्तृति 6 से 10 वस्तुओं से अधिक नहीं होती। आप स्वयं किसी भरी हुई दुकान की खिड़की से एक झलक देखने की कोशिश करिये फिर अपनी पीठ फेरकर खड़े हो जाएँ और याद करें कि आप कितनी अलग चीजें गिना सकते हैं।

अवधान की विस्तृति तब महत्वपूर्ण होती है जब हम संख्या पट्टिका, दूरभाष संख्या तथा अंकों अथवा अक्षरों की कोई संख्या जिसे एक ही झलक में ग्रहण किया जाना होता है, पढ़ने की कोशिश करते हैं। सौभाग्य से हमें ऐसी सामग्री को देखने का एक झलक से अधिक समय मिल जाता है। लम्बी सी संख्या तथा दूरभाष संख्या को रेखिका द्वारा अथवा अंकों या शब्दों द्वारा विभक्त कर दिया जाता है। अपने अवधान की विस्तृति को बढ़ाने के लिए सामग्री को समूहबद्ध कर लेना महत्वपूर्ण सहायक होता है।

अवधान का विकर्षण

जब कभी हम किसी वस्तु की ओर ध्यान दे रहे होते हैं तब हमारा अवधान कुछ दूसरे विशेष उद्दीपनों द्वारा आकृष्ट कर लिया जाता है परिणामस्वरूप वास्तविक मूल क्रिया को क्षति पहुँचती है। *विकर्षक वे अत्यावश्यक उद्दीपन हैं जिनको व्यक्ति अनदेखा नहीं कर सकता* । वे इसलिए घटित होते हैं क्योंकि हमारे अवधान की विस्तृति सीमित है और बहुत से उद्दीपनों में हमारा अवधान प्राप्त करने के लिए प्रतिस्पर्धा होती है। विकर्षक को एक ऐसे कारक के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है जो सामान्यतः हमारा ध्यान भंग कर देता है। साधारण भाषा में बाधक तत्व उस कार्य में हस्तक्षेप करता है जो व्यक्ति उस क्षण करना चाहता है। इस प्रकार प्रायः यह साधारणतया बाह्य कारक होता है जो हस्तक्षेप करता है तथा हमारे अवधान को विकर्षित करता है।

अवधान का विकर्षण अवधान को प्रभावित करने वाले पूर्वोक्त कारकों द्वारा निर्धारित होता है। जब दो उद्दीपनों के बीच संघर्ष होता है तो बहुत से कारक उस उद्दीपन का निर्धारण करते हैं जिस पर अवधान दिया जाएगा। सड़क के किनारे ट्राँजिस्टर पर बजता हुआ लोकप्रिय गाना विद्यार्थियों को कक्षा अध्यापक की ओर अवधान देने से विकर्षित करेगा। उनका ध्यान उस संगीत पर खिंच जाएगा । दूसरे शब्दों में जब दो उद्दीपनों के बीच संघर्ष होता है, तो एक किसी विशेष श्रेष्ठता के कारण सफल हो जाता है जैसे उसमें धुन है, अनापेक्षित है और संभवतः वक्तव्य से अधिक रुचिकर है।

मनोवैज्ञानिकों ने विकर्षण का स्वरूप तथा प्रभावों का अध्ययन किया है। कुछ विशेष बौद्धिक तथा दूसरे प्रकार के कार्यों पर विकर्षण के प्रभाव को निर्धारित करने के लिए प्रयोग किए गए हैं। विद्यार्थियों के एक समूह को एक कविता अथवा अंकगणितीय कार्य करने को कहा जाता है। जब वे कार्य कर रहे होते हैं तो घंटियों, सीटियों, भोंपू, ठोकना, पीटना इत्यादि द्वारा विभिन्न प्रकार के विकर्षित करनेवाले शोर उत्पन्न किए जाते हैं। प्रयोज्य जो कि मानसिक कार्य

कर रहे होते हैं, प्रायः व्यवधान तथा चिड़चिड़ेपन की शिकायत करते हैं।

एक अन्य प्रयोग में एक सी तुलनात्मक प्रारम्भिक योग्यता वाले विद्यार्थियों के दो समूहों पर मानसिक परीक्षण किया गया जिसमें से एक को शान्त कमरे में और दूसरे को ऐसे कमरे मे जिसमें बहुत से दृश्य तथा श्रव्य विकर्षक उद्दीपनों की भरमार थी, बैठाया गया । स्पष्टतः उस समूह को जिसके कमरे में विकर्षक थे, कम अंक प्राप्त हुए। यह आवश्यक नहीं कि सारे बाह्य उद्दीपन विकर्षक ही हों। पिछले विश्व युद्ध में जब विभिन्न कारखानों में उत्पादन उच्च स्तर पर रखने की आवश्यकता थी तो कारखानों में कार्य के साथ संगीत बजाया गया। शुरू-शुरू में यह कहकर इसका कुछ विरोध हुआ कि यह श्रमिको का अवधान विकर्षित करेगा किन्तु शीघ्र ही यह पाया गया कि किन्हीं विशेष प्रकार के संगीत के साथ उत्पादन में वास्तविक वृद्धि हुई । यहाँ दो कारकों पर ध्यान देना आवश्यक है। पहला यह है कि संगीत को उस लय पर बजाया गया जो श्रमिकों की गतियों के साथ संगत करती थी अतः इसके द्वारा श्रमिकों को अपने कार्य की तेज़ी बनाये रखने में सहायता मिली। दूसरा, पृष्ठभूमि में किसी विशेष प्रकार के सुखद संगीत से श्रमिको को आनंद प्रदान हो सकता था। इसके द्वारा श्रमिक सुखद तथा प्रसन्न चित्त रहते हैं तथा थकावट को कम करने में सहायता मिलती है।

यह सत्य है कि विकर्षक यदि अल्पकालिक हो अथवा कम तीव्रता वाला हो, उससे अवधान में सुधार आता है किन्तु जब विकर्षक उद्दीपन तीव्र हो, बारम्बार तथा मूल क्रिया में बाधक हो तो मूल क्रिया में अवधान लगाना संभव नहीं हो पाता। विकर्षित स्रोत को कुछ विशेष संकल्पित साधनों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। एक तरीका है कि इसकी उपेक्षा की जाए। दूसरा तरीका है कि मूल कार्य में अविच्छिन्न अवधान तथा शक्ति लगाई जाए। किन्तु किसी व्यक्ति के कार्य करते समय बहुत देर तक विकर्षित उद्दीपन का होना गम्भीर स्थिति है। जब किसी को लगातार विकर्षण का सामना करते हुए कार्य करना पड़ता है तो बहुत अधिक शक्ति का ह्रास होता है, अन्ततः थकावट हो जाती है। यह प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। ऐसे व्यवसायों में, जिनमें मशीनों पर कार्य करना होता है अथवा कारखानों में कार्य, अथवा गाड़ी चलाते समय बाह्य उद्दीपन अथवा आन्तरिक दशाओं द्वारा विकर्षण होने से दुर्घटना हो सकती है तथा सामान्य रूप से ये खतरे का स्रोत हो सकते हैं। विकर्षण के विरुद्ध कार्य करने के प्रयत्न में अपने कार्य को ठीक से करने मे हमें अधिक मात्रा में अतिरिक्त ऊर्जा का प्रयोग करना पड़ता है। यद्यपि अभिप्रेरणात्मक कारकों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। जब व्यक्ति किस विशेष कार्य को करने के लिए अत्यधिक अभिप्रेरित है तो विकर्षकों का अधिक प्रभाव नहीं होता। किन्तु विकर्षक वहाँ एक गम्भीर समस्या हो सकती है जहाँ कर्मचारियों से एक विशेष उत्पादन की अपेक्षा की जाती है।

कार्य कुशलता तथा उत्पादन बढ़ाने के लिए कार्य करने की दशाएँ तय करने के प्रयत्नों पर बहुत से अध्ययन किए गए हैं। प्रायः देखा गया है कि विकर्षक श्रमिकों को दिए जाने पर तथा उसके बाद भी कार्य कुशलता में हस्तक्षेप करते हैं किन्तु विकर्षित उद्दीपन के बहुत देर तक अनावरण के पश्चात् लोग उनके अभ्यस्त हो जाते हैं। इसे विकर्षण के लिए समायोजन कहते हैं। विकर्षण के दौरान निरन्तर कार्य करने में पाया गया है कि शक्ति का व्यय कम हो जाता है। जब विकर्षकों को अचानक ही हटा लिया जाता है तो श्रमिकों का उत्पादन कुछ देर के लिए कम हो जाता है जब तक कि वे दोबारा शान्त वातावरण के अभ्यस्त नहीं हो जाते। विकर्षको की प्रभावकता के बारे मे कुछ और तथ्य भी ध्यान देने योग्य हैं। प्रायः ध्वनि उद्दीपन प्रकाश अथवा स्पर्शीय उद्दीपनो की अपेक्षा अधिक विकर्षक हैं। जिस उद्दीपन की ओर व्यक्ति ध्यान देने का प्रयत्न कर रहा है उसी ज्ञानेन्द्रिय से आता हुआ कोई विकर्षक अधिक प्रभावशाली होता है जैसे कुछ सुनते समय ध्वनियाँ, देखते हुए प्रकाश

आदि अधिक विकर्षित करते हैं। रुक-रुककर आने वाले या रुक जाने वाले उद्दीपन निरन्तर अथवा अपरिवर्तनीय उद्दीपनों की अपेक्षा तीव्र विकर्षक होते हैं।

व्यक्ति का मानसिक विन्यास अथवा अभिवृत्ति भी अवधान के विकर्षण को प्रभावित करते हैं। किसी कार्य के लिए सकारात्मक अभिवृत्ति विकर्षक के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति की अपेक्षा साधारणतया बेहतर होती है। यदि हम किसी विकर्षक को दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं तो इसका तात्पर्य है कि हम उसकी ओर ध्यान दे रहे हैं। किसी विशेष आयु समूह के लिए अच्छा लगने वाला विकर्षक दूसरे उद्दीपन की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होता है। उदाहरणार्थ औसतन बच्चे के लिए मनोरंजक कहानियाँ संगीत की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी विकर्षक होती हैं।

विकर्षण बाह्य उद्दीपन पर हमेशा निर्भर नहीं करता। यह बहुत से आन्तरिक कारकों जैसे दुश्चिन्ता अथवा पूर्वनिवेश के कारण भी हो सकता है। इस प्रकार के सभी कारक किसी व्यक्ति का अपने कार्य से अवधान विकर्षित करते हैं। औद्योगिक मनोवैज्ञानिक का महत्वपूर्ण कार्य विकर्षणों को पहचानना तथा उन्हें हटाना अथवा कम से कम उनमें न्यूनता करना है ताकि उत्पादन बढ़ सके।

आकार का प्रत्यक्षीकरण

व्यक्ति जो भी सवेदी सूचना अपने परिवेश से प्राप्त करता है वह सदैव सार्थक संरचना तथा आकारों मे होती है। सवेदी आगत हमारी अभिज्ञता मे उद्दीपन के प्रतिरूपों में आती है न कि यादृच्छिक संग्रह के रूप मे। इससे व्यक्ति को सुगठित रूप, आकार तथा आकृति देखने में सहायता मिलती है। जो देखा जाता है वह केवल सफेद, काला, भूरा या द्युति अथवा ध्वनि का अन्तर नहीं होता किन्तु वस्तुएँ जैसे मेज़, भवन, वृक्ष इत्यादि होते हैं जिनकी विभिन्न वर्णांध अथवा वर्ण विशेषताएँ होती हैं। व्यक्ति इस प्रकार की ध्वनियाँ जैसे किसी वाहन का भोपू , पदचाप, अथवा बोले हुए शब्द सुनते हैं। जब व्यक्ति कुर्सी की ओर देखते हैं तो प्रायः कई प्रतिरूप जैसे आकार, रंग तथा सुगठित रूप प्रत्यक्षीकृत करते हैं और उनके प्रति अनुक्रिया करते हैं। व्यक्ति किसी बड़ी घन संरचना को घर के रूप में देख सकते हैं। कोई व्यक्ति अपनी टाँगों पर पड़े हुए दबाव की संवेदना को कीड़े के रेंगने जैसा प्रत्यक्षीकृत कर सकता है। दूर से आती हुई हू-हू की ध्वनि, पास आती हुई पुलिस की गाड़ी अथवा रोगी वाहन की आवाज प्रत्यक्षीकृत की जा सकती है। प्रत्यक्षीकरण में व्यक्ति अपने संवेदी अनुभवों को मूर्त तथा सार्थक बनाने के लिए संगठित तथा वस्तुनिष्ठ बनाते हैं।

आकृति का प्रत्यक्षीकरण जो वस्तुओं के प्रत्यक्षीकरण मे सहायता करता है, व्यक्ति के पूर्वानुभवों पर आधारित होता है। किसी व्यक्ति की योग्यता किसी वस्तु को पहचानने, नाम देने अथवा सही-सही गुण तथा कार्य देने की योग्यता, अधिगम का परिणाम होते है। परन्तु अधिगम के अतिरिक्त सभी मनुष्यों में आने वाले उद्दीपनो को संगठित करने तथा संगठित आकृतियों में वस्तुओ को प्रत्यक्षीकृत करने की आधारभूत प्रवृत्ति होती है। किसी व्यक्ति की योग्यता के वे कारक जो उसे उद्दीपन को संगठित करने तथा वस्तुओ को सगठित आकार में प्रत्यक्षीकृत करने योग्य बनाते हैं, उन्हें संगठित करनेवाली प्रवृत्तियाँ कहा जाता है। ये संगठित करनेवाली प्रवृत्तियाँ बदलते हुए परिवेश में प्रत्यक्षात्मक स्थिरता प्राप्त करने में सहायता करती हैं।

प्रत्यक्षीकरण के सिद्धान्त

एम वर्दाइमर, डब्ल्यू कोहलर तथा के कोफका जैसे मनोवैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षीकरण के सगठन में प्रयुक्त सिद्धान्तों की समग्राकृति (*गेस्टॉल्ट*) नाम से व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। समग्राकृति का तात्पर्य 'संपूर्ण' अथवा समग्र आकृति से है। समग्राकृति मनोवैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षीकरण के विभिन्न पहलुओं का सम्पूर्णता के रूप में अध्ययन किया। ऐसे कुछ सिद्धांत

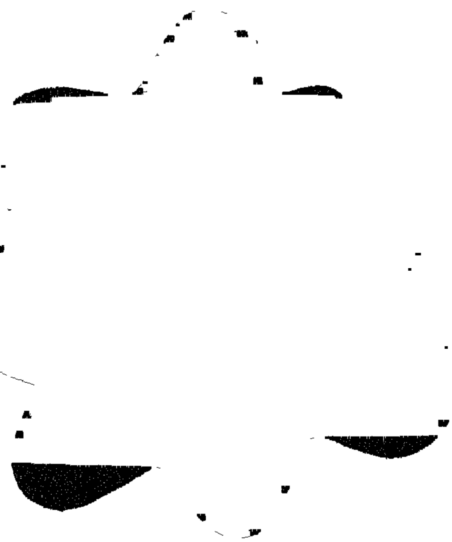
हैं जिनके अनुसार व्यक्ति उद्दीपनों को वस्तुओं के रूप में संगठित करता है। प्रत्यक्षीकरण के संगठन में मुख्य सिद्धांत हैं : (अ) आकृति एवं भूमि संबंध, (ब) परिरेखा, तथा (स) समूहन।

(अ) आकृति एवं भूमि संबंध

आकृति के प्रत्यक्षीकरण में बहुत महत्वपूर्ण प्रक्रिया आकृति एवं भूमि के अलगाव की है। आकृति एवं भूमि के संबंध की पहचान प्रत्यक्षीकरण के सभी प्रकारों का आधार है। जब कोई व्यक्ति किन्हीं उद्दीपनों के ढाँचे को देखता है तो वह कुछ विशेष गुण संकलित कर लेता है जो आकृति बन जाता है। वह पृष्ठभूमि जिसमें चित्र दिखता है उसे भूमि कहते हैं। वृक्ष एक आकृति है जो आकाश की भूमि में देखा जाता है। किसी दीवार पर लटकते हुए चित्र अथवा इस पृष्ठ पर छपे हुए शब्द के मामलों में चित्र तथा शब्द आकृति होते हैं जबकि दीवार तथा यह पृष्ठ भूमि है। इन सब मामलों में आकृति अपने निश्चित सुगठित रूप के कारण अलग ही दिखती है। चूँकि आकृति अलग दिखती है यह व्यक्ति के दृष्टि क्षेत्र के एकदम सामने होती है जबकि भूमि दृष्टि क्षेत्र में थोड़ा दूरी पर लगती है। आकृति तथा भूमि प्रत्यक्षीकरण के बनाने में बहुत से कारक योगदान करते हैं। इनमें से मुख्य हैं उद्दीपन का रंग, आकार, सुगठित रूप तथा तीव्रता।

चित्र 4.7 आकृति-भूमि संबंध को प्रदर्शित करता है। हम काले रंग को आकृति के रूप में देखते हैं। यह कोई विशेष आकृति नहीं है जिसके साथ व्यक्ति का कोई अनुभव हो किन्तु पृष्ठभूमि से अलग दिखने के कारण व्यक्ति इसे एक संरचना की भाँति ही प्रत्यक्षीकृत करने की प्रवृत्ति रखते हैं। आकृति का किसी भी प्रकार का आकार दिखता है। इसमें वस्तु होने का गुण दिखता है जबकि भूमि में बिल्कुल ही आकार रहित दिखने की प्रवृत्ति होती है।

कुछ इस प्रकार के उदाहरण भी होते हैं जहाँ आकृति तथा भूमि इस प्रकार के बने होते हैं कि वे



चित्र 4.7 आकृति-भूमि प्रत्यक्षीकरण

दोनों ही वस्तुओं के रूप में देखे जा सकते हैं। इन उदाहरणों में आकृति तथा भूमि का वैषम्य बराबर विभाजित होता है। चित्र 4.8 में दुतरफा आकृति-भूमि संबंध दिखाया गया है।



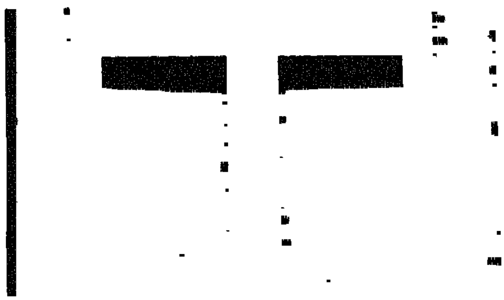
चित्र 4.8 दुतरफा आकृति तथा भूमि संबंध

यह चित्र या तो फूलदान के रूप में देखा जा सकता है या दो चेहरों का पार्श्व दृश्य है जो एक दूसरे की ओर देख रहे हैं। जब व्यक्ति फूलदान देखते हैं तो वे सफेद क्षेत्र को आकृति और काले क्षेत्र को

भूमि के रूप में देखते हैं। जब वे चेहरे देखते हैं तो वे काले क्षेत्र को आकृति तथा सफेद क्षेत्र को भूमि के रूप मे देखते हैं। कोई भी साधारणतया फूलदान अथवा चेहरे एक साथ प्रत्यक्षीकृत नहीं कर सकता है। उन दोनों में से एक समय में एक ही देखा जा सकता है। चित्र 4.9 में भी ऐसा ही दिखाया गया है। व्यक्ति को पहले निरर्थक रूप दिखाई देते हैं। इस चित्र में व्यक्ति पहले काले क्षेत्र को आकृति तथा सफेद क्षेत्र को भूमि के रूप में देखते हैं। यदि व्यक्ति ध्यान से सफेद क्षेत्र को देखें तो अंग्रेजी का 'T' अक्षर दिखाई देता है। तब सफेद क्षेत्र आकृति दिखती है तथा काला क्षेत्र भूमि। दुतरफा आकृति-भूमि संबंध इस तर्क को बल देता है कि प्रत्यक्षीकरण जितना प्रत्यक्षकर्ता पर निर्भर करता है उतना ही उद्दीपन की विशेषताओं पर भी। उसी उद्दीपन आगत को विभिन्न तरीकों से विभिन्न आकृतियाँ बनाने में संगठित किया जा सकता है।

दृष्टि के अतिरिक्त अन्य संवेदी अनुभवों में भी आकृति-भूमि संबंध होता है। कई अन्य ध्वनियों की पृष्ठभूमि में संगीत को अलग से सुना और समझा जा सकता है। जब कोई व्यक्ति कोई वाद्यवृन्द सुनता है तो शहनाई द्वारा बजाई गई धुन बाकी धुनों से अलग सुनाई देती है। इस प्रकार शहनाई द्वारा उत्पन्न ध्वनि आकृति है तथा अन्य ध्वनियाँ भूमि हैं। अपने पास बैठा व्यक्ति क्या कह रहा है यह कोई भी आदमी आसानी से सुन लेता है। साथ ही साथ कमरे में बैठे हुए लोगों के वार्तालाप के बारे में भी वह अवगत होता है। इस उदाहरण में पास बैठे व्यक्ति की बातचीत आकृति है तथा दूसरों का वार्तालाप भूमि है।

आकृति-भूमि संबंध में प्रत्यक्षीकृत करने की प्रवृत्ति सभी संवेदी अनुभवों जैसे दबाव, घ्राण तथा स्वाद के प्रत्यक्षीकरण के बारे में भी सही है। जब व्यक्ति एक स्वाद को दूसरे से भिन्न करके चखना चाहते हैं, तो वे क्रम से उद्दीपनों में आकृति तथा भूमि का चेतन रूप से चयन करते हैं।



चित्र 4.9 दुतरफा आकृति तथा भूमि संबंध

(ख) प्रत्यक्षीकरण में परिरेखाएँ

व्यक्ति उद्दीपनों को परिरेखाओं द्वारा सार्थक आकारों में संगठित करते हैं जो आकृति को भूमि से अलग करते हैं। *परिरेखा आकृति तथा उसकी भूमि के बीच की सीमा रेखा है* । उदाहरण के लिए एक कागज को देखें जो एक सिरे से सफेद रंग का है और धीरे-धीरे बदलते-बदलते दूसरे सिरे पर काले या नीले रंग का हो जाता है तो उसकी परिरेखाओं को प्रत्यक्षीकृत करना कठिन है। कागज एक सा ही लगता है और उस स्थान की पहचान करना संभव नहीं है कि कहाँ कागज का हल्का रंग समाप्त होता है और गहरा होना शुरू हो जाता है। व्यक्ति केवल अनुमान ही लगा सकते हैं या अपना निर्णय मोटे तौर पर दे सकते हैं। किन्तु यदि द्युति में बदलाव धीरे-धीरे होने की अपेक्षा एकदम तथा बिलकुल अलग है और बीच के बहुत से रंग नहीं हैं तो कागज को दो विभिन्न भागों, सफेद तथा काला में बँटा हुआ दिखने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

परिरेखाएँ वस्तुओं की सीमा रेखा को निर्दिष्ट करके आकारों को सुगठित रूप देती हैं किन्तु परिरेखाएँ अपने आप में सुगठित रूप नहीं हैं। विभिन्न सुगठित रूपों वाली वस्तुएँ एक जैसी परिरेखाओं से बन सकती हैं। चित्र 4.10 में दुतरफा चेहरों में परिरेखा तथा सुगठित रूप का भेद दिखाया गया है। इस चित्र में



चित्र 4.10 परिरेखाओं द्वारा प्रत्यक्षीकरण का संगठन

एक परिरेखा मनुष्य के दो विभिन्न चेहरो का रेखाचित्र बनाती है। यद्यपि वे एक ही परिरेखा से बने हैं फिर भी उनके एक से सुगठित रूप नहीं है।

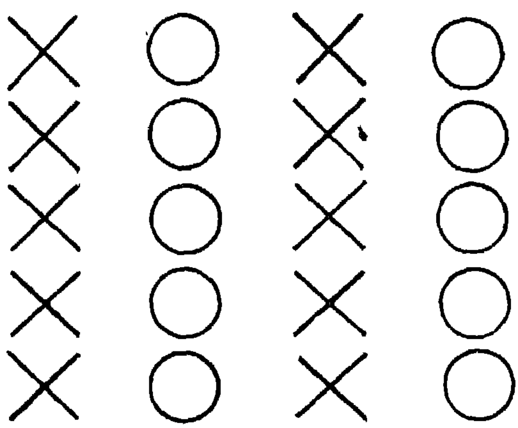
पहले दिखाया गया चित्र 4.8 भी परिरेखा की प्राथमिक विशेषताओं को दर्शाता है। इस चित्र में दो विभिन्न वस्तुएँ एक ही परिरेखा से बनती हैं। इस मामले में किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण इस बात पर निर्भर करता है कि कौन सी परिरेखा पहले प्रत्यक्षीकृत की जाएगी।

कभी-कभी व्यक्ति के लिए परिरेखाओं को स्पष्ट रूप से प्रत्यक्षीकृत करना कठिन हो जाता है। जब ऐसा होता है तो आकृति तथा भूमि के बीच स्पष्ट रूप से विभेद न कर पाने से पृष्ठभूमि से वस्तुओ में अन्तर कर पाना कठिन हो जाता है। इससे देखनेवाले को आकार को सगठित करके एक दूसरे से अन्तर कर पाना कठिन हो जाता है। युद्ध में रत सैनिको का प्रायः छद्मावरण किया जाता है। उनके वस्त्र प्रायः इस प्रकार के होते हैं जो उन जंगलों के पेड़ों, झाड़ियो के साथ आसानी से मेल खाते हैं जिनमे से उन्हें गुजरना होता है। छद्मावरण का एक और उदाहरण प्रकृति मे पशुओं तथा पक्षियों का सुरक्षात्मक रंग है। उनका रंग उनके रहन-सहन की पृष्ठभूमि में मिल करके उन्हें दूसरों द्वारा बिना देखे बचकर जाने देता है। उदाहरणार्थ कोई गिलहरी पेड़ के तने पर बैठी हो या टिड्डा किसी धान के खेत में धान के पत्तो पर बैठा हुआ अपनी पृष्ठभूमि से अलग दिखाई नहीं देता। बहुत प्रकार के कीटों, पक्षियों तथा पशुओं के रंग वही होते हैं जो उनके आमतौर के रहने के पर्यावरण के रंगों के साथ मेल खाते हैं।

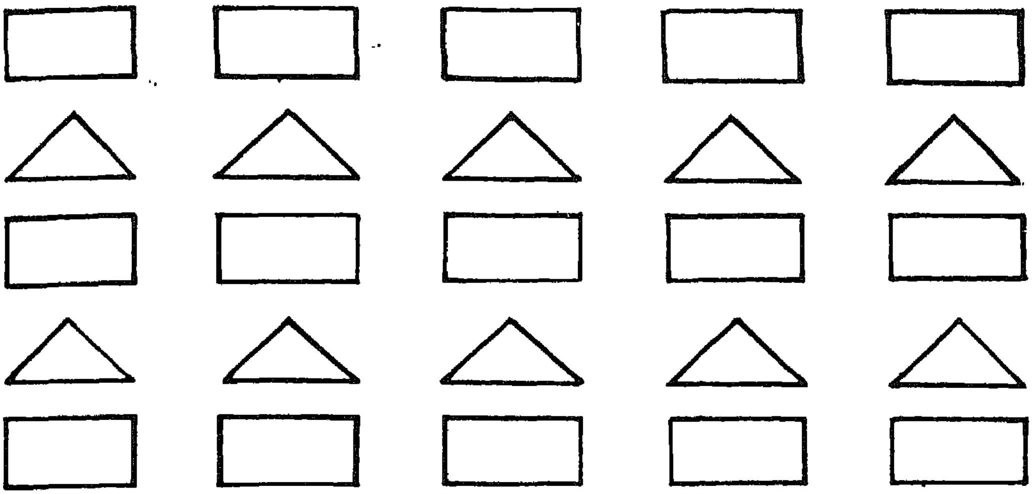
(स) प्रत्यक्षीकरण में समूहन

प्रत्यक्षात्मक समूहन के कुछ मुख्य सिद्धांत हैः (i) साम्यता अथवा सादृश्यता (ii) सान्निध्य अथवा निकटता (iii) सममिती (iv) निरन्तरता तथा (v) पूर्ति।

(i) *साम्यता अथवा सादृश्यता : एक समान उद्दीपनों को एक समूह में देखने की प्रवृत्ति होती है* । साम्यता का सिद्धांत तब प्रयुक्त होता है जब एक से सुगठित रूप, आकार अथवा रंगो की वस्तुएँ एक साथ समूह में आ जाती हैं। एक सी दिखने वाली वस्तुओं को एक साथ समूहगत करने की प्रवृत्ति होती है। जब चित्र एकसमान तत्वो के बने होते हैं, वे एक ही आकार के ढाँचे में समूहगत हो जाते हैं। चित्र 4.11 में



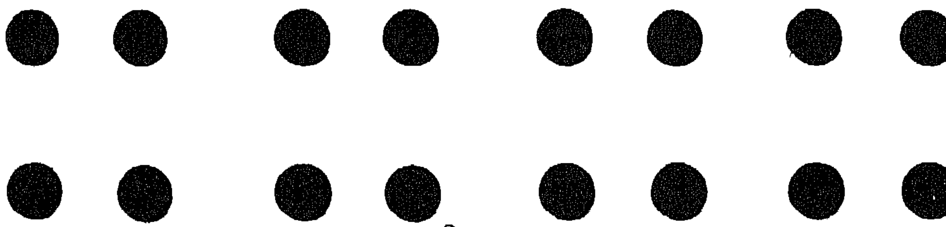
चित्र 4.11 समान उद्दीपनो के समूहन के सगठन का सिद्धान्त



चित्र 4.12 समान उद्दीपनो के समूहन के सगठन का सिद्धान्त



चित्र 4.13



चित्र 4.14

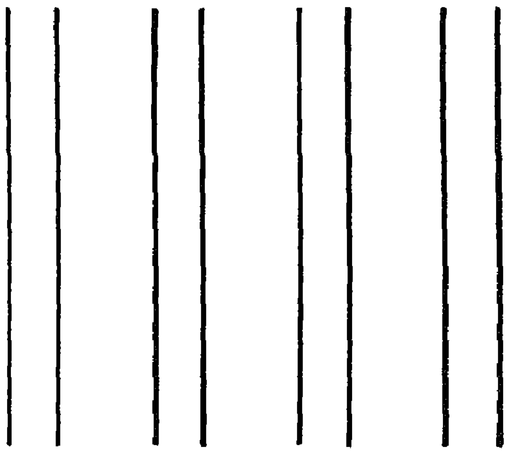
चित्र 4.13 तथा 4.14 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे उद्दीपनो के सान्निध्य का सगठनात्मक सिद्धान्त

व्यक्ति की X के दो स्तम्भ तथा O के दो स्तम्भ देखने की ज्यादा सम्भावना है अपेक्षाकृत XOXO की दो कतारो को देखने की जबकि व्यक्ति सामान्यत पुस्तक पढते समय अक्षरो को समस्तर पर ही पढ़ते है। चित्र 4.12 मे व्यक्ति की पाँच स्तम्भो की अपेक्षा कतारें देखने की ज्यादा सभावना है यद्यपि कतारो तथा स्तम्भो का फासला बराबर ही है।

(ii) *सान्निध्य अथवा निकटता . सान्निध्य अथवा निकटता का सिद्धान्त वहाँ व्यवहृत होता है जहाँ एकसमान वस्तुएँ एक साथ दृष्टिगत होती हैं* । इसे सिद्धान्त के अनुसार जो वस्तुएँ स्थान अथवा समय मे एक साथ होती है वे एक साथ सबधित अथवा सगठित समूह बनाती हुई प्रत्यक्षीकृत होती है। अत. पक्तियाँ अथवा बिन्दु जो एक दूसरे के बिल्कुल समीप है समूह मे देखे जा सकते है। चित्र 4.13 के आकार मे अधिकतर सम्भावना इस बात की है कि यह पाँच, चार, तीन, तथा दो वृत्तो के चार समूहो मे वर्णित किया जाएगा न कि चौदह वृत्तो के रूप मे।

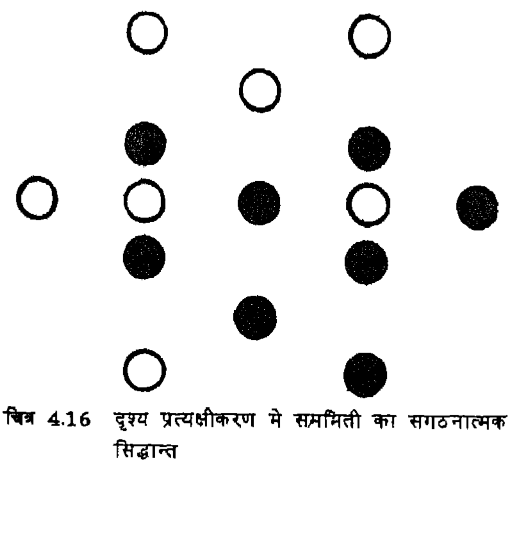
चित्र 4.14 मे बिन्दु वर्गाकार आकार के चार समूह दिखाई देते है। इसी प्रकार चित्र 4.15 मे आठ अकेली रेखाओ की अपेक्षा लम्बमान रेखाओ के चार

जोड़े दिखते हैं। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति मेज पर दो बार निरन्तर शीघ्रता से थपकी देकर थोड़ी देर बाद फिर पहले की भाँति दो बार शीघ्रता से थपकी देता है और दूसरे व्यक्ति से पूछता है कि उसने कितनी बार थपकी की ध्वनि सुनी तो वह व्यक्ति कहेगा कि उसने दो जोड़ी थपकी सुनी न कि चार थपकी सुनी। तार संचार में प्रयुक्त मोर्सकूट बिन्दु तथा रेखिका के घनिष्ठ सान्निध्य पर निर्भर करता है।



चित्र 4.15 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे उद्दीपनों के सान्निध्य का सगठनात्मक सिद्धान्त

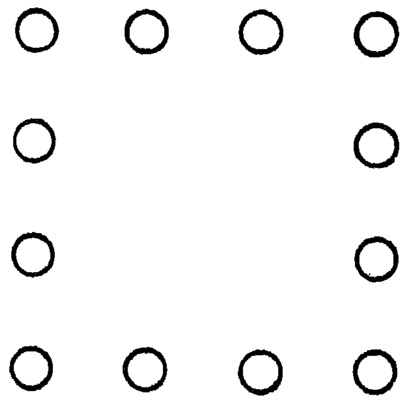
(iii) *सममिती* : यद्यपि अधिकतर मामलो मे साम्यता के आकार पर समूहन होता है परन्तु कुछ मामले



चित्र 4.16 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे सममिती का सगठनात्मक सिद्धान्त

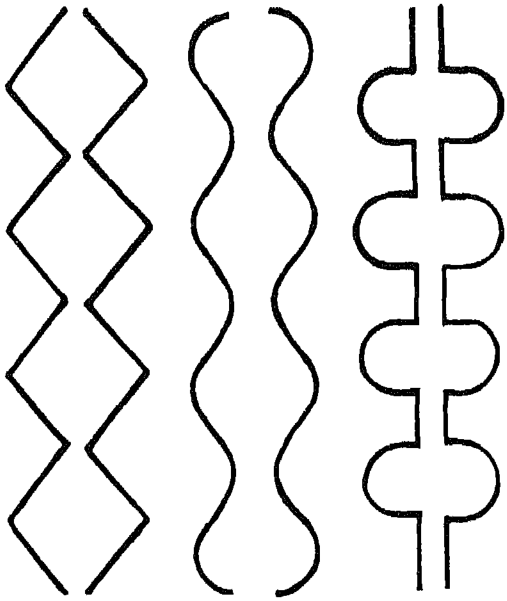
ऐसे भी है जहाँ ऐसा नही होता। चित्र 4.16 इसका एक उदाहरण है। यह एक छः कोणों वाला सितारा देखा जाएगा न कि एक चित्र बिन्दुओं से बना हुआ और दूसरा छल्लो से।

इस मामले में साम्यता सममिती के सिद्धान्त के सामने घुटने टेक देती है। *सममिती के सिद्धांत का यह तात्पर्य है कि व्यक्ति मे उद्दीपन इस प्रकार सगठित करने की प्रवृत्ति होती है जिससे सतुलित अथवा सममित्यात्मक चित्र बने जिसमे सभी भाग सम्मिलित हो।* उपरोक्त उदाहरण मे बिन्दु अथवा छल्ले अपने आप मे कोई सममित्यात्मक आकार नही बनते। सतुलित चित्र का आकार सभी बिन्दुओ तथा छल्लों के छः कोणो वाले सितारे के आकार मे बनाकर ही प्राप्त किया जा सकता है। परिरेखाओ का विन्यास जितना सममित्यात्मक होगा उतनी ही संभावना है कि इन परिरेखाओ द्वारा बँधा हुआ क्षेत्र एक चित्र के रूप मे देखा जाए। चित्र 4.17 एक वर्ग के रूप मे ही देखा जाएगा न कि 12 वृत्तो के रूप में।

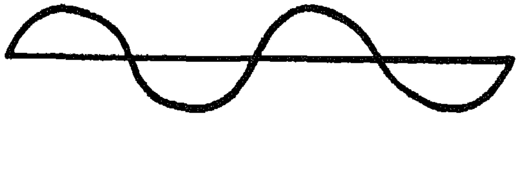


चित्र 4.17 दृश्य प्रत्यक्षीकरण में सममिती का सगठनात्मक सिद्धान्त

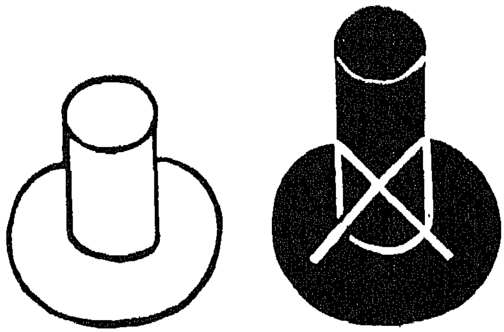
(iv) *निरन्तरता : वे उद्दीपन जो परिरेखा मे कम से कम बाधक होते है उनमे भी समूहबद्ध देखे जाने की प्रवृत्ति होती है ।* खडो वाले उद्दीपनों को एक परिचित आकार मे देखने की प्रवृत्ति को निरन्तरता कहा जाता है। चित्र 4.18 तथा 4.19 मे निरन्तरता



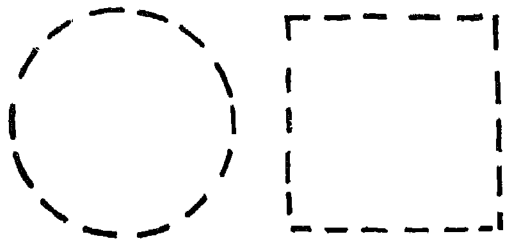
चित्र 4.18 दृश्य प्रत्यक्षीकरण निरन्तरता का सगठनात्मक सिद्धान्त



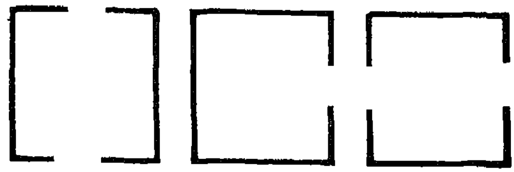
चित्र 4.19 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे निरन्तरता का सगठनात्मक सिद्धान्त



चित्र 4.20 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे निरन्तरता का सगठनात्मक सिद्धान्त



चित्र 4.21 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे पूर्ति का सगठनात्मक सिद्धान्त



चित्र 4.22 प्रत्यक्षीकरण मे पूर्ति का सयठनात्मक सिद्धान्त

का सिद्धान्त दिखता है। चित्र 4.19 में एक सहज **वक्र रेखा सीधी रेखा को** तिरछा काटती हुई देखी **जाएगी क्योंकि वक्र** रेखा तथा सीधी रेखा में निरन्तरता है।

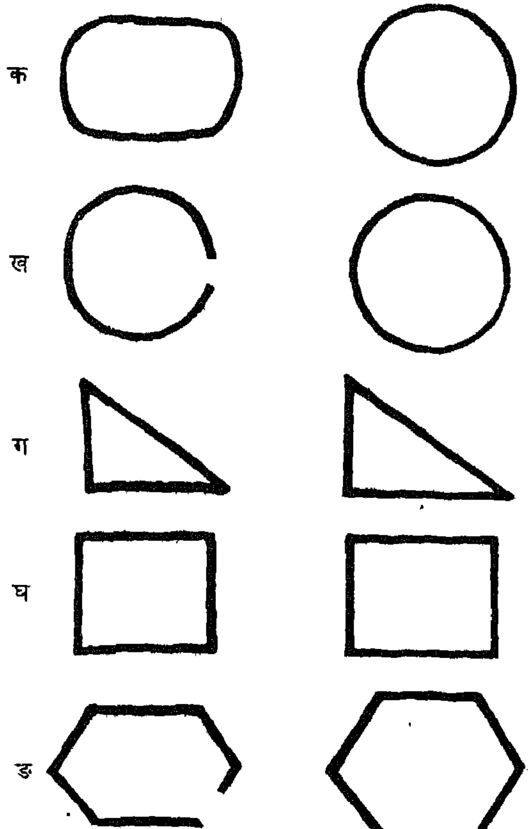
इसी प्रकार 4.20 चित्र में एक गिलास को किसी तश्तरी या ढक्कन में रखा हुआ दिखने की अधिक संभावना है अपेक्षाकृत चार टुकड़ों के, क्योंकि आकारो को हमें निरन्तर आकृति के आधार पर प्रत्यक्षीकरण करने की आदत होती है। उसी प्रकार 6, 2, 9, 17 की संख्या अलग-अलग अंको में देखी जाएगी जबकि 1, 3, 5, 7 का क्रम एक समूह के रूप में देखा जाएगा क्योंकि उनमें निरन्तरता है।

(v) *पूर्ति* : बन्द अथवा आंशिक रूप से बन्द चित्र आसानी से प्रत्यक्षीकृत किये जाते हैं अपेक्षाकृत खुले चित्रों के, सिवाय इसके कि जब खुले चित्रों का कोई अर्थ होता है जैसे अक्षरमाला के इन अक्षरों ग, ट, ड, ढ इत्यादि का। ये अक्षर खुले हैं किन्तु उनकी पहचान अक्षरों के रूप में है। *पूर्ति के सिद्धान्त का तात्पर्य उन प्रत्यक्षात्मक प्रक्रियाओं से है जो उद्दीपन के रिक्त स्थानों को पूर्ण कर प्रत्यक्षित पर्यावरण को संगठित करती हैं*। पूर्ति पदार्थ को पूर्णता मे देखने की वह योग्यता है जब उद्दीपन अपने में पूर्ण वस्तु नहीं बनाते। उदाहरणार्थ चित्र 4.21 में हम रिक्त स्थानों के साथ वृत्त तथा वर्ग देखते हैं। चित्र 4.22 में रिक्त स्थानों के साथ वर्ग देखते हैं न कि अलग-अलग बिना जोड़ के रेखाएँ।

श्रव्य प्रत्यक्षीकरण के मामले मे यदि कोई गाना थोड़ी-थोड़ी बाधा के साथ खण्डों में गाया जाए तो हम उसे उचित लय वाला पूर्ण गाना ही प्रत्यक्षीकृत करते हैं न कि एक गाने के विभिन्न भाग। किन्तु यदि बाधाएँ बहुत लम्बी तथा अधिक हैं तो निरन्तरता के अभाव में एक समरूप आकार नहीं देखा जा सकता।

प्रैग्नान्ज का नियम

आकृति के प्रत्यक्षीकरण के एक सामान्य सिद्धान्त को समग्राकृति मनोवैज्ञानिकों ने प्रैग्नान्ज का नियम बताया है। इस नियम के अनुसार *कोई भी व्यक्ति किसी भी उद्दीपन को अच्छी आकृति के रूप में प्रत्यक्षीकृत करता है* । अच्छी आकृति स्थिर तथा सामान्य आकृति होती है जो प्रायः सममित, सतुलित तथा संपूर्ण होती है। बुरी आकृति वह होती है जो असंतुलित, अपूर्ण तथा असममित होती है। प्रैग्नान्ज के नियम के अनुसार बुरी आकृतियों को भी उनके अनुरूप मिलती जुलती अच्छी आकृतियो के समान प्रत्यक्षीकरण करने की प्रवृत्ति होती है। प्रैग्नान्ज के नियम का उस प्रवृत्ति से भी संबंध है जब उद्दीपन अपूर्ण होता है तो रिक्त स्थानो को प्रत्यक्षी-करण से पूर्ण किया जाता है। चित्र 4.23 मे कुछ



चित्र 4.23 (क, ख, ग, घ, ङ) बुरी और अच्छी आकृतियाँ

तथाकथित बुरी आकृतियाँ तथा उनके अनुरूप अच्छी आकृतियाँ दिखाई गई हैं। उदाहरणार्थ चित्र 4.23 क में दीर्घवृत एक वृत्त की भाँति अधिक देखा जा सकता है। ख में अपूर्ण वृत्त एक पूर्ण वृत्त की भाँति देखने की प्रवृत्ति होती है। ग में एक त्रिभुज जो सममित्यात्मक नहीं है उसे एक सामान्य समकोण त्रिभुज प्रत्यक्षीकृत करने की प्रवृत्ति होती है। इसी प्रकार चित्र घ में एक वर्ग जो सममित्यात्मक नहीं है उसे सममित्यात्मक प्रत्यक्षीकृत करने की प्रवृत्ति होती है। चित्र ङ मे जो आकार अपूर्ण षड्भुज कहा जा सकता है उसे पूर्ण षड्भुज देखने की प्रवृत्ति होती है। इन सभी उदाहरणों में अच्छी आकृति देखने की प्रवृत्ति होती है।

प्रत्यक्षात्मक स्थिरता

बदलती हुई पर्यावरण दशाओं के बावजूद व्यक्ति की अपने इर्द-गिर्द के पर्यावरण की अभिज्ञता स्थिर तथा अपरिवर्तनीय रहती है। प्रत्यक्षीकरण की स्थिरता व्यक्ति को अपने वातावरण से अनुकूलन करने में सहायता करती है। उद्दीपन की विभिन्न प्रकार की दशाओं मे वस्तुओं की आकार, सुगठित रूप, द्युति तथा रंग स्थिर रहने की प्रवृत्ति होती है। कोई भी वस्तु जिसे प्रत्यक्षात्मक रूप में स्थाई तथा स्थिर बनाया गया है, वह इस पर पड़ने वाले प्रकाश, निरीक्षणकर्ता की देखने की स्थिति, एवं दूरी के बावजूद उसी प्रकार प्रत्यक्षीकृत की जाती है। *व्यक्तियों द्वारा अनुभव की जाने वाली पर्यावरण की इस प्रकार की स्थिरता को ही प्रत्यक्षात्मक स्थिरता कहा जाता है* ।

किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण वह संयोग है जो व्यक्ति वास्तव में देखता है तथा जो वह उसके बारे में जानता है। जब कोई व्यक्ति किसी विशेष आकार तथा रंग की वस्तु देखता है तो उसकी प्रवृत्ति उसकी उस प्रकार व्याख्या करने की होती है जिसे वह उस वस्तु के स्थिर तथा वास्तविक रूप में जानता है। दृश्य प्रत्यक्षीकरण में प्रत्यक्षात्मक स्थिरता वह परिदृश्य है जो उस तरीके को स्पष्ट करती है जिससे व्यक्ति दृष्टिपटल पर पड़ी छवि के बावजूद उस वस्तु को देखते हैं। दृश्य संसार में प्रत्यक्षीकृत आकृतियाँ, आकार, रंग तथा द्युति प्रत्यक्षात्मक स्थिरता प्रदर्शित करते हैं। *किसी भी वस्तु को दूरी अथवा स्थिति के बावजूद स्थिर देखने की प्रवृत्ति आकार स्थिरता कहलाती है। किसी जानी पहचानी वस्तु को किसी भी कोण से देखने के बावजूद भी मानक सुगठित रूप में देखने की प्रवृत्ति सुगठित रूप स्थिरता कहलाती है। प्रकाश एव छाया अथवा विभिन्न रंगों तथा दीप्तियों में देखने के बावजूद किसी भी वस्तु को उसके सामान्य रंग में देखने की प्रवृत्ति रंग स्थिरता अथवा द्युति स्थिरता कही जाती है। गतिशील व्यक्ति द्वारा* वस्तुओं की वस्तु स्थिति बनाये रखने की प्रवृत्ति को *स्थिति स्थिरता कहते हैं* । प्रत्यक्षात्मक स्थिरता आँखों के साथ-साथ दूसरी ज्ञानेन्द्रियों में भी व्यवहृत होती है।

आकार स्थिरता

जैसे-जैसे किसी वस्तु को किसी व्यक्ति से दूर किया जाता है वे दूरी को ठीक करके उस वस्तु को अधिकतर सामान्य आकार में देखते हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण दृष्टिपटल पर उसकी छवि का केवल प्रतिबिम्ब नहीं होता। दृष्टिपटल पर किसी वस्तु की छवि का आकार आँख से उस वस्तु की दूरी पर निर्भर करता है। जितनी दूर कोई वस्तु होती है दृष्टिपटल पर उसकी छवि उतनी ही छोटी पड़ती है। उसी प्रकार ही आकार की छवि उत्पन्न करने के लिए छोटी वस्तु को पास तथा बड़ी वस्तु को दूरी पर रखा जा सकता है। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति से 40 मीटर की दूरी पर खड़ा होता है तो उसकी छवि उस व्यक्ति की छवि से आधी होगी जो व्यक्ति 20 मीटर की दूरी पर खड़ा है। किन्तु व्यक्ति किसी विशेष आकार का ही प्रत्यक्षीकृत होता है चाहे वह निरीक्षणकर्ता से 20 मीटर की दूरी पर खड़ा हो या 40 मीटर की। खेल के मैदान में विपरीत दिशा में खड़े फुटबाल

के खिलाड़ी या गोलकीपर उन खिलाड़ियों की अपेक्षा जो मैदान में देखनेवालों के नजदीक हैं, उनसे छोटे नहीं दिखते यद्यपि निरीक्षणकर्ता की आँख के दृष्टिपटल पर उनकी छवि अपेक्षाकृत बहुत छोटी होती है।

इससे यह प्रतीत होता है कि केवल दृष्टिपटल की छवि से आकार स्थिरता की उत्पत्ति का अन्दाज नहीं होता क्योंकि दृष्टिपटल पर छवि का आकार दूरी के अनुसार भिन्न होता है। आकार स्थिरता में दो कारक महत्वपूर्ण हैं। वस्तुओं के वास्तविक आकार के लिए व्यक्ति अपने अनुभवों पर निर्भर कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का किसी वस्तु के बारे में अधिगम आकार स्थिरता में योगदान करता है। किसी व्यक्ति को यदि मनुष्य के रूप में देखा जाता है तो उसका आकार स्थिर रहेगा बावजूद इसके कि वह व्यक्ति निरीक्षणकर्ता से कितनी दूरी पर है। आकार स्थिरता से संबंधित एक और कारक दूरी है। यदि कोई वस्तु व्यक्ति की जानी पहचानी नहीं है और वह व्यक्ति उसके आकार के बारे में जानता नहीं है तो वह आकार स्थिरता को अपने से वस्तु की दूरी से ही बनाये रख सकता है। आकार स्थिरता किस प्रकार ठीक से कार्य करती है वह दूरी के संकेतों तथा वस्तु से परिचय पर निर्भर करता है। प्रत्यक्षकर्ता वास्तव मे दो प्रकार की दूरियों के सन्दर्भ में कार्य करते हैं—प्रकट दूरी तथा वास्तविक दूरी। किसी भी वस्तु के आकार को निश्चित करने के लिए प्रत्यक्षकर्ता प्रकट दूरी का उपयोग करते हैं।

सुगठित रूप स्थिरता

सुगठित रूप स्थिरता वहाँ व्यवहार में आती है जहाँ कोई वस्तु दृष्टिपटल पर छवि में स्पष्ट परिवर्तनों के बावजूद अपना सुगठित रूप बनाये रखती है। एक ढक्कन गोल ही दिखाई देता है यद्यपि दृष्टिपटल पर इसकी छवि विभिन्न स्थितियों अथवा कोणों से देखे जाने पर दीर्घवृत्ताकार दिखाई देती है। इसी प्रकार कोई दरवाज़ा आयताकार ही दिखाई देता है चाहे इसे भिन्न स्थितियों से देखा जाए। किसी व्यक्ति के सामने यदि कोई दरवाज़ा खोला जाए तो दरवाज़े के आयताकार आकार में क्रमिक रूप से विकृति होती है। यह ऐसा समलंबाभ बन जाता है जिसके व्यक्ति की तरफ के किनारे, कब्ज़ेदार किनारों की अपेक्षा अधिक चौड़े दिखते हैं। धीरे-धीरे यदि दरवाज़ा बन्द किया जाता है समलंबाभ पतला होता जाता है और हम एक उतनी सीधी रेखा देखते हैं जितनी कि दरवाज़े की मोटाई है।

व्यक्ति कब्ज़ों पर झूलते हुए स्थिर सुगठित रूप के अपरिवर्तनीय दरवाज़े में होते हुए परिवर्तनों को ध्यान से देख सकता है तथा अन्तर कर सकता है। यह तथ्य कि दृष्टिपटल पर छवि में परिवर्तनों के बावजूद भी दरवाज़ा अपना सुगठित रूप नहीं बदलता, यही सुगठित रूप स्थिरता का उदाहरण है।

रंग का प्रत्यक्षीकरण

पर्यावरण में बहुत से पदार्थ एक दूसरे से अपने रंगों के कारण पहचाने तथा विभेदित किये जाते हैं। रंगों का अनुभव प्रकाश की तरंगों की लम्बाई तथा प्रदीप्ति की तीव्रता से निर्धारित किया जाता है। रंग का अनुभव रंग के तीन पहलुओं के रूप में किया जाता है : (अ) रंगत (ब) संतृप्ति तथा (स) द्युति।

(अ) *रंगत*

रंगत रंग की तरंगो की लम्बाई को इंगित करती है। रंगत में भिन्नताएँ प्रकाश में तरंगों की लम्बाई की भिन्नताओं के साथ संगत करती हैं। रंग का अनुभव जैसे लाली, किसी वस्तु की संवेदना की प्रक्रिया से उत्पन्न संवेदन आंकड़ों की व्याख्या से होता है जो किसी विशेष तरंग की लम्बाई का प्रकाश देता है या प्रतिबिम्बित करता है।

(ब) *संतृप्ति*

संतृप्ति का तात्पर्य शुद्ध रंग के प्रस्तुत अनुपात अथवा रंगत की मात्रा से है जो प्रस्तुत सफेद अथवा भूरे में होता है। दूसरे शब्दों में संतृप्ति *शुद्ध रंग की मात्रा*

होती है। पूर्णतः संतृप्त रंग वह होता है जिसमें रंगत की अधिकतम मात्रा हो। उदाहरण के लिए गुलाबी रंग लाल की अपेक्षा कम संतृप्त होता है। किसी भी रंग की संतृप्ति उसमें सफेद के मिश्रण से कम की जा सकती है। उदाहरण के लिए लाल रंग के प्रलेप (पेंट) की संतृप्ति उसमें सफेद प्रलेप मिलाकर कम की जा सकती है। जितना ज्यादा सफेद प्रलेप लाल प्रलेप में मिलाया जाता है वह उतना ही कम संतृप्त होता जाता है। किन्तु लाल रंग वही रहता है क्योंकि सफेद प्रलेप मिलाने से पहले और बाद में लाल रंग द्वारा प्रतिबिम्बित की हुई प्रकाश की तरंगों की लम्बाई उतनी ही रहती है। यह ध्यान देने योग्य है कि सफेद और काले की कोई रंगत नही होती अतः वे रंगहीन होते हैं।

(स) *द्युति*

द्युति का तात्पर्य किसी उद्दीपन के सापेक्ष हल्केपन अथवा गाढ़ेपन से है। यह इंगित करता है कि रग कितना हल्का अथवा गाढ़ा है। *प्रदीप्ति की तीव्रता से द्युति निर्धारित की जाती है* । द्युति की मात्रा काले से सफेद तक के बीच के भूरे के बहुत से आभा भेदों से होकर जाती है। सफेद अथवा भूरे का अनुभव तब होता है जब सभी तरंगो की लम्बाइयों का मिश्रित प्रकाश आँख के दृष्टिपटल पर पड़ता है। सफेद से काले तक जाने वाले भूरे को वर्णांध क्रम कहते हैं जिसका तात्पर्य यह है कि इनकी कोई रंगत नही होती। किसी भी रंग के प्रलेप को उसमें भूरे अथवा काले प्रलेप को मिलाकर कम द्युतिमान बनाया जा सकता है।

अतः यह स्पष्ट है कि रंग की गुणवत्ता तरंगों की लम्बाई तथा द्युति की तीव्रता पर निर्भर करती है। समान दशाओं में किसी भी सामान्य दृष्टि अथवा नजर वाले हर व्यक्ति को कोई रंग बिल्कुल एक सी रंगत, संतृप्ति तथा द्युति वाला प्रत्यक्षीकृत होगा।

रंग के प्रत्यक्षीकरण मे संदर्भ का महत्व

रंग के प्रत्यक्षीकरण में संदर्भ महत्वपूर्ण कारकों में से एक है क्योंकि रंग प्रायः अपने आसपास के रंगों के साथ प्रत्यक्षीकृत किये जाते हैं। रंग का प्रत्यक्षीकरण व्यक्ति की उद्दीपन दशा के प्रति पूर्ण अनुक्रिया पर निर्भर करता है। जिस संदर्भ में उसे देखा जाता है उसके अनुसार रंग का प्रत्यक्षीकरण बदल सकता है। उदाहरण के लिए सफेद कागज़ पर भूरा धब्बा अधिक गाढ़ा प्रतीत हो सकता है अपेक्षाकृत इसके कि यदि वही भूरा धब्बा काले कागज़ पर हो। लाल रंग हरे रंग के संदर्भ मे, जो उसका पूरक रंग है, चमकदार प्रत्यक्षीकृत होता है। इसी प्रकार नीला रंग पीले के सदर्भ मे चमकदार प्रतीत होता है।

द्युति तथा रंग स्थिरता

किसी व्यक्ति की वस्तुओं पर पड़नेवाली अथवा उनसे प्रतिबिम्बित होने वाली प्रकाश की तरंगों के लिए भिन्न रूप से अनुक्रिया करने की क्षमता से रंगो का एक स्थिर तथा सुसगत ससार बनता है। प्रदीप्ति के परिवर्तनों का किसी व्यक्ति के वस्तुओ की वास्तविक द्युति के प्रत्यक्षीकरण पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। दृश्य वस्तुएँ सफेदी, भूरेपन अथवा गाढ़ेपन की मात्रा मे स्थिर प्रतीत होती हैं। यह परिदृश्य द्युति स्थिरता के कारण होता है। द्युति स्थिरता किसी वस्तु पर पड़नेवाले प्रकाश की मात्रा से स्वतत्र होती है। उदाहरणार्थ वे वस्तुएँ अथवा सतहें जो तेज़ प्रकाश मे सफेद दिखाई देती हैं, धुँधली प्रदीप्ति में भी सफेद ही प्रत्यक्षीकृत होती हैं। सफेद कमीज़ चमकदार सूर्य की धूप में अथवा शाम के पीले प्रकाश मे उसी प्रकार के सफेद की आभा प्रत्यक्षीकृत होती है। कोयले का टुकड़ा तेज़ प्रकाश अथवा धुँधले प्रकाश में एक सा ही काला प्रतीत होता है। बर्फ रात मे भी सफेद ही दिखाई देती है। डूबते हुए सूर्य की किरणों मे बैठा हुआ खरगोश सफेद ही दिखेगा नारंगी नही। किन्तु वस्तुओं को देखने में, द्युति अथवा रंग की स्थिरता उत्पन्न करने में संदर्भ की भूमिका अवश्य होती है। डूबते सूर्य की किरणों में बैठा हुआ खरगोश साधारण की अपेक्षा कम सफेद दिखेगा। किसी पदार्थ की द्युति

का प्रत्यक्षीकरण उसकी और पृष्ठभूमि के प्रकाश के अनुपात पर निर्भर करता है। प्रकाश की मात्रा को बढ़ाने अथवा घटाने से वस्तु तथा उसकी पृष्ठभूमि चमकदार अथवा धुँधली हो जाती है।

प्रत्यक्षीकृत वस्तुओ की सापेक्ष स्थिरता मनुष्यों के लिए काफी लाभप्रद होती है। व्यक्ति यदि अपने पर्यावरण का हर पहलू सिर्फ वस्तुओं की दृष्टिपटल छवि के रूप मे ही देखकर अनुक्रिया करने लग जाए तो बिल्कुल गड़बड़ ही हो जाए क्योकि वस्तुएँ लगातार अपने सुगठित रूप या आकार अथवा द्युति के अनुरूप दृष्टिपटल छवि के अनुसार परिवर्तित प्रतीत होगी।

प्रत्यक्षीकरण में भ्रम

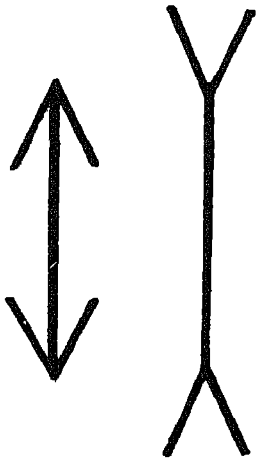
किन्हीं अवसरो पर वस्तुएँ अपने वास्तविक सुगठित रूप अथवा आकार से भिन्न प्रत्यक्षीकृत होती हैं। इस प्रकार के गलत प्रत्यक्षीकरण भ्रम कहे जाते हैं और प्रतिदिन की घटनाओ में सामान्य हैं। *भ्रम वास्तविकता का गलत प्रत्यक्षीकरण होते हैं* । हमारे भौतिक विश्व के अधिकतर आधारभूत गुण जैसे दूरी, गति, सुगठित रूप, आकार तथा दिशा से संबंधित भ्रम होते हैं। उदाहरणार्थ ज़मीन पर पड़ी हुई टेढ़ी मेढ़ी रस्सी धुँधले प्रकाश मे ग़लती से साँप समझी जा सकती है। पानी में डूबी एक सीधी पेंसिल पानी के अन्दर टेढ़ी प्रतीत होती है। ये भ्रम हैं क्योकि ये वस्तु की वास्तविक विशेषताओं के अनुरूप नहीं होते।

दूरी अथवा लम्बाई के प्रत्यक्षीकरण मे भ्रम विभिन्न प्रकारो से होते हैं। चित्र 4.24 में दिखाई गई दूरी के भ्रम का सामान्य उदाहरण मुलर-लायर का भ्रम है। यहाँ रेखा अ, ब से लम्बी दिखाई देती है यद्यपि वे एक ही लम्बाई की हैं। चित्र 4.25 मे रेखाएँ विभिन्न लम्बाइयों की दिखाई देती हैं यद्यपि वे वास्तव में एक ही जैसी लम्बाई की हैं। चित्र 4.26 में दूरी के भ्रम का एक और उदाहरण दिखाया गया है। इन उदाहरणों में लम्बमान रेखाएँ समस्तर रेखाओं से अधिक लम्बी प्रतीत होती हैं यद्यपि वे बराबर लम्बाई की हैं। चित्रः 4.27 भी दिशा प्रत्यक्षीकरण में भ्रम का एक और उदाहरण है। दोनों समस्तर रेखाएँ एक ही लम्बाई की हैं किन्तु ऊपरी रेखा नीचे वाली रेखा से लम्बी प्रत्यक्षीकृत होती है।

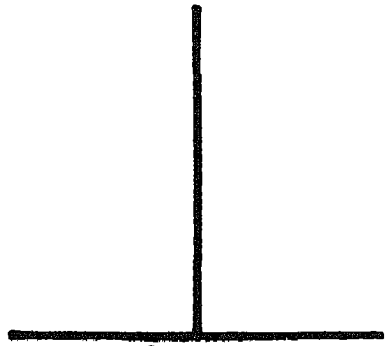
हमे दिशा के भ्रम का भी अनुभव होता है। उदाहरणार्थ चित्र 4.28 मे यह प्रतीत होता है कि विकर्ण रेखाएँ यदि दो समानान्तर सीधी रेखाओ से बीच से सीधी आगे बढ़ाई जाएँ तो वे नहीं मिलेंगी। चित्र 4.29 में दो समानान्तर सीधी रेखाएँ टेढ़ी अथवा वक्र प्रतीत होती हैं।

गति के प्रत्यक्षीकरण में भ्रम

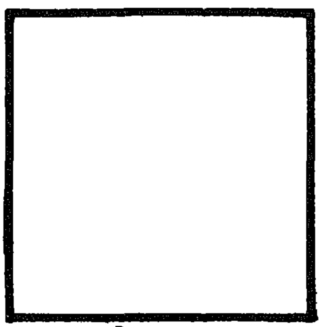
गति के प्रत्यक्षीकरण में भी भ्रम का अनुभव होता है। ऐसा भ्रम तब होता है जब कोई व्यक्ति चलचित्र देखता है। हर बार जब वह देखता है उसे लोगों, भवनो, पशुओ तथा वस्तुओं के गतिशील तीन आयामी दृश्य दिखाई देते हैं। पर्दे पर वस्तुओं की गति वास्तविक प्रतीत होती है यद्यपि पर्दे पर वस्तुओं की गति नहीं होती। यह भ्रम दो आयामों वाले स्थिर चित्रों को सही गति पर शीघ्रता से अनुक्रम में प्रक्षेपण करने से उत्पन्न किया जाता है। इस प्रकार के भ्रम को *फाई-दृग्विषय* कहते हैं । यह फाई-दृग्विषय नियॉन प्रकाशों के विज्ञापन संकेतों के मामले में भी देखा जा सकता है। जो प्रकाश सामान्यतः एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हुए नजर आते हैं वे वास्तव मे दो अलग स्थानो पर अलग प्रकाश हैं। उनको बारी बारी से तेज़ी से एक दूसरे के बाद क्षणदीप्त किया जाता है जिससे व्यक्ति को भ्रमित प्रत्यक्षीकरण दिखाई दे सकते हैं। किन्तु यदि प्रकाशो की क्षणदीप्ति का अन्तराल बहुत लम्बा हो तो व्यक्ति बिना किसी स्पष्ट गति के स्वतन्त्र प्रकाश देखेगे। परन्तु यदि एक क्षणदीप्ति दूसरे का सही अन्तराल पर अनुसरण करे जो सामान्यतः प्रकाश की दूरी पर, उनके आकार तथा उनकी द्युति पर निर्भर करता है, व्यक्ति यही सोचेंगे कि प्रकाश एक स्थान से दूसरे स्थान पर गति कर रहा है।



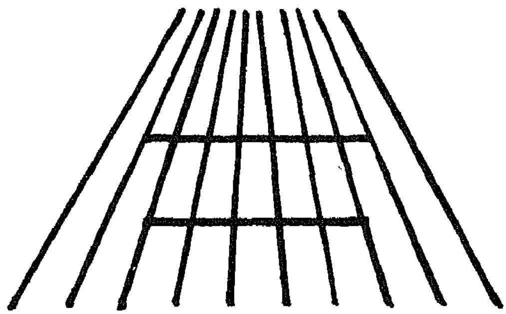
चित्र 4.24



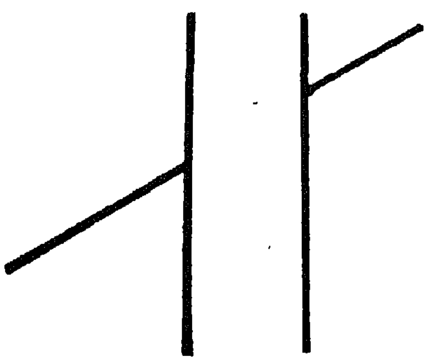
चित्र 4.25



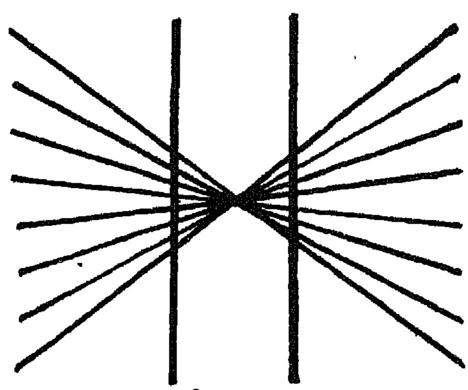
चित्र 4.26



चित्र 4.27



चित्र 4.28



चित्र 4.29

चित्र 4.24—4.29 दृश्य प्रत्यक्षीकरण मे कुछ सामान्य भ्रम

प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करनेवाले कारक

प्रत्यक्षीकरण किसी व्यक्ति के व्यवहार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रियाएँ जैविक बनावट के साथ-साथ व्यक्ति के पूर्वानुभवों द्वारा निर्धारित होती हैं। व्यक्ति के बाह्य विश्व के प्रत्यक्षीकरण को बहुत से कारक प्रभावित करते हैं। प्रत्यक्षीकरण उद्दीपन पर, व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियो पर, उसके अवधान पर, उद्दीपनो द्वारा उत्पन्न प्रत्यक्षीकृत संगठन पर एवं वह सदर्भ जिसमें उद्दीपन होते हैं, उन सब पर निर्भर करता है। इन कारको की व्याख्या पहले की जा चुकी है। इन कारकों के अतिरिक्त भी प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करनेवाले कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं: (i) उद्दीपनों के साथ पूर्वानुभव, (ii) अधिगम, (iii) अभिप्रेरण व सवेग, (iv) सवेदी वचन, तथा (v) परिपक्वन।

(i) *उद्दीपनो के साथ पूर्वानुभव*

अधिगम का प्रत्यक्षीकरण पर प्रभाव सुनिश्चित करने के लिए किए गए अध्ययनों द्वारा यह स्पष्ट हुआ है कि अधिगम तथा पूर्वानुभव व्यक्ति के अपने ससार के प्रत्यक्षीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। जो भी कुछ वे सीखते हैं अशतः नये प्रत्यक्षीकरण का अधिगम होता है। किसी व्यक्ति का पूर्व अधिगम तथा अनुभव उसके वर्तमान प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। कोई भी वस्तु पूर्व अनुभवों के आधार पर भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न अर्थ रखती है। उदाहरण के लिए एक बन्दूक उस व्यक्ति द्वारा भिन्न तरीके से प्रत्यक्षीकृत की जा सकती है जिसका बेटा हिंसा के दौरान गोलीबारी की घटना से मारा गया हो। किंतु शिकार का शौकीन व्यक्ति बदूक को दूसरी तरह से प्रत्यक्षीकृत करेगा। शिकारी के लिए बन्दूक वह वस्तु है जो उत्तेजना, रोमाच व सुख जगाती है।

(ii) *अधिगम*

पूर्वानुभव तथा अधिगम का प्रभाव केवल संवेगात्मक अनुभवों तक ही सीमित नहीं है। प्रत्यक्षीकरण के दूसरे पहलू भी अधिगम पर निर्भर करते हैं। अध्ययनो द्वारा ज्ञात हुआ है कि बच्चे वयस्को की भाँति उसी मात्रा मे आकार स्थिरता प्रदर्शित नहीं करते। वयस्क वस्तुओं तथा उनके वास्तविक आकार को 200 अथवा 300 मीटर दूरी से भी देख सकते हैं। किन्तु बच्चे इसी दूरी पर वस्तुओं को अपने वास्तविक आकार से छोटा देखते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि आकार स्थिरता, अधिगम के परिणामस्वरूप विकसित होती है। यही प्रत्यक्षीकरण के दूसरे पहलुओ के लिए भी सत्य है।

प्रत्यक्षीकरण पर अधिगम के प्रभावों पर किए गए प्रयोग उन शीशो अथवा चश्मो की सहायता से किए गए है जिनके द्वारा दृष्टिपटल पर पहुँचने वाली छवि को उल्टा करके दृश्य विकृति का सृजन किया जाता है। ऐसे प्रयोगो मे प्रयोज्य को एक विभिन्न संसार मे रहना होता है जहाँ उसके पूर्व अधिगमित दृश्य सकेत भिन्न अथवा एकदम उल्टे होते हैं। नई दशाएँ अनिभिर्विन्यास पैदा करती हैं। प्रयोज्य की आँख और शरीर का समन्वय बुरी तरह विघटित हो जाता है किन्तु वह शीघ्र ही समायोजन करता पाया जाता है और नये पर्यावरण मे कुशलतापूर्वक कार्य करना शुरू कर देता है जिसके लिए उसे पुराने अधिगम को भूलना या अनाधिगमित करके नये अनुभव सीखने पड़ते हैं। किसी व्यक्ति के श्रवण संकेतो के मामले में किन्ही अजीब प्रत्यक्षीकरण वाली दशाओं मे व्यक्ति के समायोजन का परीक्षण भी सभव है। श्रव्य संकेतो को एक यत्र जिसे *मिथ्याभाष* कहते हैं, का उपयोग करके उल्टा किया जा सकता है जिसे विशेषतया इसी उद्देश्य से बनाया गया है। जब प्रयोज्य इस मिथ्याभाष को पहचानता है तो सिर के बाईं ओर का ध्वनि संकेत दाहिने कान में पहुँचता है और सिर के दाहिने ओर का ध्वनि संकेत बाएँ कान में पहुँचता है। इस मामले में व्यक्ति जब दाहिनी ओर से आवाज सुनता है तो उसे बाईं ओर देखना पड़ता है। यह देखा गया है कि कुछ ही दिनो मे व्यक्ति ऐसा समायोजन कर लेता है। इन प्रयोगो से यह इंगित होता है कि लोगों में संकेत सीखने की अत्यधिक योग्यताएँ होती हैं एव

अधिगम व्यक्ति के अपने विश्व के प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। इससे यह भी पता चलता है कि प्रत्यक्षीकरण का अनुभव संवेदन गति समन्वय द्वारा भी निर्धारित होता है।

(iii) *अभिप्रेरण व संवेग*

किसी व्यक्ति के अभिप्रेरण व संवेग भी बहुत सीमा तक प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करते हैं। जब व्यक्ति अभिप्रेरित होते हैं अथवा संवेगात्मक रूप से किसी कार्य में रत होते हैं उनमें वही प्रत्यक्षीकृत करने की प्रवृत्ति होती है जो वे देखना और सुनना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में कोई व्यक्ति संसार को वैसा ही देखना चाहता है जो उसकी आवश्यकताओ से सहमत हो तथा दिए गए क्षण में उसके संवेगों के अनुरूप हो। उदाहरण के लिए भूखा आदमी हर जगह भोजन तथा भोजन से संबंधित वस्तुओं का ही प्रत्यक्षीकरण करता है। एक पूर्वाग्रहित व्यक्ति अपने पूर्वाग्रहित मन का समर्थन करेगा और उसी प्रकार के अन्य व्यक्तियो का प्रत्यक्षीकरण करेगा। कोई व्यक्ति जो किसी विशेष राजनीतिक दल के अत्यधिक पक्ष मे है तो वह उस दल की नीतियों को दूसरे दलों के विचारो की अपेक्षा अच्छा समझेगा। जैसी कि पहले व्याख्या की जा चुकी है कि व्यक्ति के किसी विशेष उद्दीपन की ओर अवधान को अभिप्रेरण भी प्रभावित करते हैं। उद्दीपन किसी व्यक्ति के अन्तर्नोदों, अभिरुचियों तथा मूल्यों के संदर्भ में प्रत्यक्षीकृत होते है। किसी पद को प्राप्त करने का अभिप्रेरण भी व्यक्ति के किसी घटना अथवा वस्तु के प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। व्यक्ति स्थिति के उन्हीं पहलुओं को प्रत्यक्षीकृत करने को प्रवृत्त होते हैं जिनसे उन्हें सामाजिक सहमति मिले तथा उन पहलुओं का परिहार करते हैं जिन पर सामाजिक रूप से असहमति होती है।

(iv) *संवेदी वंचन*

असाधारण संवेदी दशाओं विशेषतया सवेदी वचन के प्रत्यक्षीकरण पर प्रभाव को निश्चित करने के लिए बहुत से अध्ययन किए गए हैं। परिणामों से यह निष्कर्ष निकला है कि उद्दीपनो से लम्बे समय तक वियुक्त हुए लोग असाधारण प्रत्यक्षीकरण की क्रियाएँ करते हैं। यह क्रिया प्रायः सपूर्ण प्रत्यक्षात्मक दोष का आकार ले लेती है जो सुगठित रूप, आकार अथवा रंग से सबंधित प्रत्यक्षीकरण की क्रिया में विकृति की ओर ले जाती है। उदाहरणार्थ यदि किसी व्यक्ति को बहुत समय तक भारहीनता के पर्यावरण मे रहना पड़े तो उसे उस पर्यावरण मे समायोजन करना कठिन हो जाएगा जिसमे गुरुत्वाकर्षण है। उसे इस परिवर्तित पर्यावरण में समायोजन करने में कुछ दिन लग जाएँगे। इससे यह ज्ञात होता है कि सवेदी वचन बहुत सीमा तक प्रत्यक्षीकरण को विकृत कर सकता है। फलतः व्यक्ति के अन्दर अनुकूलन-प्रत्यक्षात्मक विभेदीकरण की योग्यता आ जाती है। इस प्रकार के वचन विभ्राति भी उत्पन्न करते हैं जिसका तात्पर्य है उन उद्दीपनों का प्रत्यक्षीकरण जो वास्तव में पर्यावरण में उपस्थित नहीं हैं।

(v) *परिपक्वन*

परिपक्वन भी प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। ज्ञानेन्द्रियो का परिपक्वन प्रत्यक्षीकरण मे एक महत्वपूर्ण कारक है। जानवरों पर किए गए प्रयोगो से ज्ञात हुआ है कि प्रत्यक्षात्मक क्षमता को उचित ढंग से कार्य करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। यद्यपि मनुष्य किन्ही विशेष प्रतिभाओं के साथ पैदा होते हैं किन्तु उनके विकास के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है।

इस बात के प्रमाण हैं कि शिशु जन्म के पाँच दिन के भीतर ही आकारो को प्रत्यक्षीकृत कर सकते हैं तथा उनकी पसन्द मानव मुख से मिलते-जुलते आकारों के लिए होती है। कुछ मनोवैज्ञानिको का विचार है कि इससे इस बात को बल मिलता है कि कुछ आकारो का प्रत्यक्षीकरण जन्मजात होता है जबकि अन्य मनोवैज्ञानिको का कहना है कि ज्ञानेन्द्रियो की परिपक्वता के कारण जन्म के बाद के इन पाँच दिनो मे अधिगम हो गया। जन्म से अंधे

लोगों पर, जिन्होंने जीवन मे बाद में शल्य चिकित्सा द्वारा सामान्य दृष्टि पाई, कुछ रोचक अध्ययन किए गए है। अँधेरी दुनिया में बहुत वर्षों तक रहने के बाद ये लोग दृश्य पर्यावरण का अर्थ नहीं ले पाए। वे आकारों तथा सुगठित रूप में भेद नहीं कर पाए अथवा गहराई या आकृति को प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पाए। उनको अपने सभी श्रव्य तथा स्पर्शीय साहचर्यों को अपने नए दृश्य संदर्भों के अनुकूल बनाने के लिए दोबारा सीखना पड़ा। इससे यह ज्ञात होता है कि प्रत्यक्षीकरण का विकास परिपक्वन के साथ साथ पूर्व संवेदी अनुभवों पर निर्भर करता है।

सारांश

जीव का विश्व के साथ संपर्क, आँख, कान, नाक, जिह्वा तथा त्वचा की ज्ञानेन्द्रियों की सहायता से होता है। दूसरी महत्वपूर्ण संवेदनाएँ गतिबोध तथा प्रघ्राण है। किसी अनुक्रिया को उत्पन्न करने के लिए ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करने के लिए भौतिक ऊर्जा का कम से कम स्तर इसकी अवसीमा कहलाता है। संवेदना एक शारीरिक प्रक्रिया है जिसमें संवेदी संग्राहक तथा केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र आते हैं। प्रत्यक्षीकरण एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे संवेदी आगत को संगठित किया जाता है तथा सार्थक अनुभव के रूप में व्याख्या की जाती है। आँखें दृष्टि का महत्वपूर्ण ज्ञानेन्द्रिय है तथा प्रकाश उनके लिए उद्दीपन है। कान श्रवण के लिए ज्ञानेन्द्रिय है तथा ध्वनि तरंगें उद्दीपन है जो उन्हें उत्तेजित करती हैं। जिह्वा स्वाद संवेदनाओं जैसे खट्टा, नमकीन, मीठा तथा कड़वे के लिए ज्ञानेन्द्रिय है। नाक घ्राण के लिए ज्ञानेन्द्रिय है तथा उसमे प्रवेश वाली गैसें सूँघने की संवेदना के लिए उद्दीपन है। दबाव अथवा स्पर्श, पीड़ा, गर्म तथा ठंडा ये चार त्वचीय संवेदनाएँ है। गतिबोध संवेदना सम्पूर्ण शरीर की मांसपेशियों, स्नायुओं तथा जोड़ों के संग्राहकों के सक्रियण से आती है। इससे शरीर के अंगों की स्थिति तथा गति के बारे में सूचना प्राप्त होती है। प्रघ्राणेन्द्रिय व्यक्ति को शरीर की स्थिति के बारे में जानने योग्य बनाती है। इस संवेदना के अंग अंदरूनी कान के प्रघ्राण क्षेत्र में अवस्थित होते हैं।

अवधान चयनित प्रत्यक्षीकरण है। अभिज्ञता का एक केन्द्र तथा सीमान्त होता है तथा अवधान निरन्तर बदलता रहता है। प्रकृति, नवीनता, तीव्रता, वैषम्य, आकार, रंग, गतिशीलता तथा बारम्बारता ये अवधान को प्रभावित करने वाले बाह्य कारक हैं जबकि अभिप्रेरण, अभिरुचियाँ, अभिवृत्तियाँ, पूर्वाग्रह, थकावट तथा पूर्वविन्यास प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले आन्तरिक कारक हैं। एक सैकंड के भाग में व्यक्ति जितनी वस्तुएँ, अक्षर तथा अंक देख सकता है उसे व्यक्ति के अवधान की विस्तृति कहते हैं। अवधान का विकर्षण बाह्य उद्दीपनों अथवा आन्तरिक कारकों पर निर्भर करता है।

आकृति एवं भूमि संबंध, परिरेखाएँ तथा समूहन प्रत्यक्षीकरण के महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं। प्रत्यक्षीकरण में समूहन में साम्यता अथवा सादृश्य, सान्निध्य अथवा निकटता, सममिती, निरन्तरता तथा पूर्ति ये कुछ मुख्य सिद्धान्त हैं। प्रत्यक्षीकरण का एक सामान्य नियम जिसे समग्राकृति मनोवैज्ञानिकों ने प्रैगनान्ज का नियम कहा है यह व्याख्या करता है कि क्यों हममें किसी भी उद्दीपन को अच्छी आकृति में देखने की प्रवृत्ति होती है। वस्तुएँ और व्यक्ति, आकार, सुगठित रूप और रंग की प्रत्यक्षात्मक स्थिरता के कारण द्युति और आकार में स्थिर रहते है। वस्तुओं और गति के गलत प्रत्यक्षीकरण को भ्रम कहते हैं। उद्दीपनों के साथ पूर्वानुभव, अधिगम, अभिप्रेरण तथा संवेग, संवेदी वंचन तथा परिपक्वन प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक है।

प्रश्न

1. प्रत्यक्षीकरण की परिभाषा बताइए। यह सवेदना से किस प्रकार भिन्न है।
2. रेखाचित्र की सहायता से दृष्टि तथा श्रवण की ज्ञानेन्द्रियो की व्याख्या कीजिए।
3. गतिबोधेन्द्रिय तथा प्रघाणेन्द्रिय किस प्रकार व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण हैं ?
4. अवधान क्या है ? इसकी विशेषताएँ बताइए।
5. अवधान को प्रभावित करने वाले बाह्य तथा आन्तरिक कारकों की व्याख्या कीजिए।
6. प्रत्यक्षीकरण के सिद्धान्तो का वर्णन कीजिए।
7. भ्रम का क्या तात्पर्य है ? विभिन्न प्रकार के भ्रमों के उदाहरण दीजिए।
8. प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले कारके बताइए।
9. निम्न पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए
   - (क) स्वाद तथा घ्राण की ज्ञानेन्द्रियाँ
   - (ख) आकार तथा आकृति की प्रत्यक्षात्मक स्थिरता
   - (ग) अवधान की विस्तृति
   - (घ) अवधान का विकर्षण
   - (ङ) प्रत्यक्षीकरण मे समूहन का सिद्धान्त
   - (च) रंग का प्रत्यक्षीकरण
   - (छ) प्रैग्नान्ज का नियम

सही विकल्प पर यह निशान (√) लगाइए

10. दृष्टिपटल का असंवेदनशील क्षेत्र यह कहलाता है

(अ)	अध बिन्दु	(ब)	गर्तिका
(स)	श्वेतपटल	(द)	शलाका

11. बाह्य कान को यह भी कहते हैं

(अ)	कर्णावर्त	(ब)	निहाई
(स)	मुद्गर	(द)	कर्णपालि

12. घ्राण इसकी संवेदना होती है

(अ)	स्वाद	(ब)	सूँघना
(स)	स्पर्श	(द)	श्रवण

13. जिह्वा का यह भाग स्वाद के लिए असंवेदनशील होता है

(अ) मध्य भाग (ब) पृष्ठ भाग

(स) पक्ष (द) नोक

14. गति की संवेदना को यह कहते है

(अ) घ्राणेन्द्रिय (ब) गतिबोधेन्द्रिय

(स) रससंवेदी (द) त्वचीय

15. सुगठित रूप स्थिरता इसके परिणामस्वरूप विकसित होती है

(अ) अधिगम (ब) अभिप्रेरण

(स) परिपक्वन (द) चिन्तन

16. आकृति के प्रत्यक्षीकरण का एक सामान्य सिद्धान्त जिसे प्रैग्नान्ज का नियम कहा गया है उसका नाम इन मनोवैज्ञानिकों ने दिया है

(अ) व्यवहारवादी (ब) कार्यवाही मनोवैज्ञानिक

(स) समग्राकृति (द) मनोविश्लेषणवादी

एकक 5

अधिगम

इस एकक के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- अधिगम प्रक्रिया को समझें;
- गत्यात्मक व शाब्दिक कौशल, प्रत्ययो और समस्या-समाधान तथा अभिवृत्तियो के अधिगम का वर्णन कर सकें;
- अधिगम वक्र को रेखांकित एवं उसकी व्याख्या कर सकें;
- प्रयास-त्रुटि, क्लासिकी, नैमित्तिक व ज्ञानात्मक अधिगम की व्याख्या कर सकें;
- क्लासिकी और नैमित्तिक अनुबंधन में प्रयुक्त महत्वपूर्ण प्रत्ययों का वर्णन कर सकें;
- अधिगम स्थानान्तरण के दृग्विषय को समझें;
- अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकें।

अधिगम (सीखना) मानव व्यवहार की अन्तर्निहित मूलभूत प्रक्रियाओं में से एक है। अधिगम मानव व्यवहार के सभी पहलुओं को प्रभावित करता है। अधिगम व्यक्ति की आदतो के साथ-साथ रीति रिवाज़ों को भी प्रभावित करता है। प्रतीकों तथा भाषा का इस्तेमाल और अर्थ सीखा जाता है। गत्यात्मक कौशल जैसे साइकिल चलाना, मशीन पर कार्य करना या टंकण भी सीखा जाता है। अभिवृत्तियाँ तथा संवेगात्मक अनुक्रियाएँ भी सीखी जाती हैं। मनुष्य की किसी ऐसी क्रिया के बारे मे सोचा भी नही जा सकता जो अधिगम द्वारा प्रभावित नही होती।

अधिगम एक सतत प्रक्रिया है

व्यक्ति अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग सीखने में लगा देते है। उनकी सरलतम से जटिलतम सभी क्रियाओं मे अधिगम सन्निहित है। अधिगम घर, विद्यालय और महाविद्यालय मे होता है। अधिगम घर, विद्यालय और महाविद्यालय से बाहर भी व्यक्ति के दूसरे लोगो, वस्तुओ तथा घटनाओ के साथ संपर्क से भी होता है।

अधिगम क्रमिक प्रक्रिया है

किसी क्रिया को सही ढंग से सीखने मे समय लगता है। अधिगम वह क्रिया है जो समय की कुछ अवधि तक चलती है। साइकिल चलाना सीखते समय व्यक्ति को प्रारम्भ मे कठिन लगता है तथा वे गिर सकते हैं। परन्तु बाद मे सतत प्रयासो से वे साइकिल चलाना सीख जाते हैं। जैसे-जैसे वे अपने अभ्यास को ज़ारी

रखते हैं वे पहले की अपेक्षा अधिक आसानी से साइकिल चला सकते हैं। अधिगम का यह ढंग सामान्यतः व्यक्ति की सभी क्रियाओं मे प्रयुक्त होता है। एक विशिष्ट स्तर की योग्यता पाने के लिए समय लगता है। कुछ लोग किसी कार्य को आसानी से सीख सकते हैं तथा अन्य अधिक समय ले सकते हैं।

अभ्यास अथवा अनुभव से निष्पादन में सुधार होता है

जैसे-जैसे व्यक्ति सीखते हैं उनका व्यवहार अधिक कुशल और सुस्पष्ट हो जाता है। अधिगम प्रायः निष्पादन में कौशल का सुधरा हुआ रूप या सुस्पष्टता होती है या उस गति में बढ़ोत्तरी होती है जिससे वह कार्य किया जाता है। उदाहरणार्थ एक व्यक्ति जो टंकण सीख रहा है वह न केवल बिना गलतियो के पत्र टंकित करना सीख लेता है बल्कि कम समय मे उतनी ही शब्द संख्या भी टंकित करना सीख जाता है। इससे निष्पादन में सुस्पष्टता की वृद्धि के साथ उस गति में भी वृद्धि दिखाई देती है जिस गति से कार्य किया जा रहा है। किसी कार्य में अधिगम की प्रारम्भिक अवस्थाओं में जैसे साइकिल चलाने, तैरने, टंकण करने आदि में कुछ निरर्थक क्रियाएँ जैसे बेढंगी, लयहीन तथा असमन्वित गतियाँ होती हैं। अधिकाधिक अभ्यास के साथ-साथ अनावश्यक गतियाँ सामान्यतः कम हो जाती हैं जिनके परिणामस्वरूप निष्पादन में सुस्पष्टता, कार्य करने की गति में तेज़ी एवं उस कार्य का कार्यान्वयन आसान हो जाता है। यही मानसिक क्रियाएँ जैसे गणना के प्रश्नों के लिए भी सत्य हैं। शनैः शनैः क्रमिक रूप से व्यक्ति बहुत कठिन कार्यों के विन्यास को सम्पन्न करने की योग्यता विकसित कर लेते हैं जो वे पहले नही कर सकते थे।

व्यवहार में होने वाले सभी परिवर्तन उन क्रियाओं तक ही सीमित नही हैं जिनका आसानी से निरीक्षण किया जा सके। व्यवहार में परिवर्तनों का संबंध, व्यक्ति क्या और कैसे जानता, अनुभव, विश्वास एवं मान्यता देता है, से भी है। इस तरह के अधिगम प्रकारों के उदाहरणों में पसंदगियों, पूर्वाग्रहों तथा अभिवृत्तियों का विकास सम्मिलित है। अधिगम के दूसरे प्रकारों जिनका आसानी से निरीक्षण नहीं किया जा सकता, उनमें ऐसी प्रक्रियाएँ जैसे प्रभावशाली निरीक्षण, अधिग्रहण, धारण तथा ज्ञान एवं विभिन्न कौशलों का उपयोग, समस्या समाधान, संवेगात्मक अभिव्यक्ति एवं नियंत्रण के सही ढंग अर्जित करना, अभिरुचियों तथा चिन्तन के तरीके विकसित करना शामिल है। ये सब व्यक्ति के व्यवहार मे परिवर्तन करते हैं।

अधिगम के पहलू

उपरोक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि *अधिगम वह प्रक्रिया है जिससे अभ्यास अथवा अनुभवो के परिणामस्वरूप व्यवहार में सापेक्षिक रूप से स्थायी परिवर्तन या सुधार आता है* । अधिगम की यह परिभाषा अधिगम प्रक्रिया के निम्नलिखित मुख्य पहलुओं को अत्यधिक महत्त्व देती है।

(i) *व्यवहार मे परिवर्तन या सुधार*

अधिगम वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यवहार में विशेष परिवर्तन या सुधार आता है। जैसा आप जानते हैं 'व्यवहार' का तात्पर्य कुछ कार्यों से है जो मासपेशियों, ग्रन्थियों, मानसिक या इन सबके सयोगों से होता है। यदि बच्चे जल जाने के बाद जलती हुई लकड़ी को छूने से बचते हैं तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अधिगम हो गया है। यदि बच्चे किसी भाषा को अत्यन्त आसानी से बोल लेते हैं तो यह कहा जा सकता है कि उन्होंने उक्त भाषा के अपने विस्तृत शब्द भंडार को प्रयुक्त करना सीख लिया है। यदि बच्चे साइकिल चलाना सीख गये हैं तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उन्होंने दक्षता से साइकिल चलाना सीख लिया है। इन सभी दृष्टान्तों में व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन या सुधार दिखाई पड़ता है।

व्यवहार में परिवर्तन, जो अधिगम की विशिष्टता है, वह अच्छे या बुरे, वांछनीय या अवांछनीय, अनुकूलित या असमायोजित हो सकते हैं। यदि जीवन

मूल्यों तथा वांछनीयता के दृष्टिकोण से देखा जाए तो व्यवहार में होने वाले सभी परिवर्तन अनिवार्यतः दक्षता अथवा सुधार की ओर ही नहीं ले जाते। किसी बच्चे ने अपनी पुस्तकों तथा कमरे को साफ सुथरा रखना अथवा गन्दा रखना सीखा है। किसी ने छोटे बच्चो को डराना, धमकाना सीखा है अथवा परीक्षाओं से बचना सीखा है जिसमे उसकी योग्यता का परीक्षण होता है। परन्तु इस अधिगम के परिणामस्वरूप विद्यालय के साथ उसके समायोजन मे सुधार नहीं होता। व्यक्ति समाज में बनाये गए स्वीकृत कानूनी, नैतिक संहिता का अतिक्रमण करके अपराधी बनना सीख सकते हैं लेकिन यह व्यवहार सामाजिक मानको एवं जीवन मूल्यो में सुधार नहीं माने जा सकते हैं। बुरी आदते, अनैतिक आचरण, ग़लत अभिवृत्ति एव पूर्वाग्रह भी सीखे जा सकते हैं, ऐसे व्यवहार असमायोजित एवं सामाजिक रूप से हानिप्रद हैं। व्यक्ति आसानी से वह व्यवहार बना या दृढ़ कर सकते हैं, जो उनके लिए हानिप्रद हों जैसा कि हम अत्यधिक सिगरेट पीना एवं शराब आदि के सेवन मे देखते हैं।

(ii) *परिवर्तन अथवा परिष्करण सापेक्षतः स्थाई होते हैं*

अधिगम के परिणामस्वरूप सामान्यत. व्यवहार मे सापेक्षतः स्थाई परिवर्तन अथवा परिष्करण होता है। एक बार साइकिल सीखने के बाद आप जानते हैं कि इसे कैसे चलाना है। व्यक्ति की कुछ अस्थाई दशाओं के कारण व्यवहार में परिवर्तन अथवा परिष्करण को अधिगम नहीं माना जाता। व्यक्ति मे कुछ परिवर्तनो के लिए बीमारी, शारीरिक चोट तथा थकान की अस्थायी अवस्थाओ को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। आदतों से भी व्यवहार मे परिवर्तन उत्पन्न किया जा सकता है किन्तु ये सामान्य व्यवहार नही माने जाते। साधारणतया दवाएँ अस्थाई तौर पर व्यवहार मे परिवर्तन या अवरोध उत्पन्न करती हैं। व्यवहार में ये परिवर्तन शरीर मे जैव-रासायनिक परिवर्तनों के कारण होते हैं, अधिगम के परिणामस्वरूप नहीं होते।

(iii) *परिवर्तन अथवा परिष्करण अभ्यास अथवा अनुभव के कारण हैं*

अधिगम की प्रक्रिया का तीसरा महत्वपूर्ण पहलू जो अधिगम की उपरोक्त परिभाषा मे अन्तर्निहित है वह है कि व्यवहार में परिवर्तन अभ्यास अथवा अनुभव द्वारा होते हैं। इससे व्यवहार में परिवर्तनो के वे प्रकार सीमित हो जाते हैं जिन्हें अधिगम का प्रतिनिधि माना जा सकता है। मानव व्यवहार में सभी परिवर्तन अधिगम के कारण नही होते। इनमे से कुछ परिवर्तनो का श्रेय शरीर के विकास और परिपक्वन की प्राकृतिक प्रक्रिया हो जाता है। यह परिवर्तन व्यक्ति के आन्तरिक कारको द्वारा नियन्त्रित होते हैं और वातावरण से सापेक्षत: स्वतन्त्र होते है। व्यवहार मे होने वाले इन परिवर्तनो की विशेषताओ एव उनके विकास का निर्धारण मुख्यतः व्यक्ति की जैविकीय वशागति द्वारा होता है। ऐसे व्यवहार बिना सीखे हुए कहे जाते हैं। किन्तु व्यवहार में कोई भी अनुक्रिया अथवा परिष्करण जो मुख्यतः बाह्य उद्दीपन तथा व्यक्ति की क्रियाओ पर निर्भर है उसे अर्जित या अधिगमित कहा जाता है। दूसरे शब्दो में अधिगम उन परिवर्तनों को कहते हैं जो विशिष्ट उद्दीपनो के परिणामस्वरूप होते हैं। व्यवहार मे होने वाले परिवर्तन जो वशानुगत सरचनाओ तथा पूर्ववृत्तियो के परिपक्वन से सबद्ध होते हैं वे अधिगम नही कहे जाते। यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि अधिगम और परिपक्वन के बीच के अन्तर को समझा जाए। इसकी इसी एकक मे बाद मे विवेचना की गई है।

अधिगम की प्रक्रिया

अधिगम की प्रक्रिया तीन मुख्य तत्वों से बनी है— सीखने वाला, उद्दीपन और अनुक्रिया। सीखनेवाला वह है जो कुछ सीखता है। उद्दीपन सीखने वाले के अन्दर या बाहर का कोई कारक है जो किसी प्रकार

की क्रिया को प्रारम्भ करता है। *उद्दीपन कोई घटना, स्थिति, दशा, चिन्ह अथवा कोई सकेत हो सकता है जिससे अनुक्रिया होती है। अनुक्रिया किसी व्यक्ति द्वारा की गई क्रिया है जैसे कुछ कहना या करना, जिसमे सामान्यतः उसकी मासपेशियो अथवा ग्रन्थियो की क्रिया सम्मिलित होती है*। यह व्यवहार की एक इकाई है जिसे इसके विशिष्ट उद्दीपन के साथ सबध से पहचाना जाता है। यह एक सामान्य पद है जो विभिन्न व्यवहारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रयुक्त होता है। उदाहरण के लिए बारिश उद्दीपन है। बारिश से अपने को बचाने के लिए छाता खोलना अनुक्रिया है। पर्यावरणीय तापमान का गिर जाना उद्दीपन है तथा गर्म कपड़े पहनना अनुक्रिया है। किसी उद्दीपन के लिए अनुक्रियाएँ शाब्दिक, मासपेशीय, आसन सबंधी अथवा ग्रन्थि सबधी हो सकती है। अनुक्रियाओ मे किसी वस्तु का उत्पादन हो सकता है जो अक्षर, शब्द अथवा वाक्य से लेकर किसी समस्या का समाधान तक हो सकता है। जब अनुक्रियाओं का आसानी से निरीक्षण हो सकता है तो उन्हें प्रत्यक्ष अनुक्रियाएँ कहते हैं। प्रच्छन्न अनुक्रियाएँ उन्हें कहते है जो आसानी से निरीक्षित नहीं की जाती। सगीत सुनना, चिन्तन और मन मे पढ़ना प्रच्छन्न अनुक्रियाओ के उदाहरण हैं।

सीखनेवाले को जब पहली बार उद्दीपन दिया जाता है तो संभव है कि सीखनेवाला सही अनुक्रिया न कर पाए परन्तु जब सीखनेवाले को बारम्बार उद्दीपन दिया जाता है वह अनुक्रिया करना प्रारंभ कर देता/ देती है। उदाहरणार्थ जब पहली बार छोटे बच्चे को आइसक्रीम का चित्र दिखलाया जाता है और इसका नाम पूछा जाता है तो सभव है कि बालक की ओर से कोई अनुक्रिया न हो। अगली बार चित्र प्रस्तुत करते हुए उसे यह बताइए कि *यह* आइसक्रीम का चित्र है। जब आप आइसक्रीम का चित्र दुबारा दिखाएँगे तो बच्चा चित्र को देखते ही आइसक्रीम कहकर अनुक्रिया कर सकता है। अनुक्रिया से सीखनेवाले के निष्पादन के साथ-साथ व्यवहार मे भी परिवर्तन इंगित होता है। जब निष्पादन तथा व्यवहार मे इस प्रकार के परिवर्तन दिखाई देते हैं तो इसका तात्पर्य है कि अधिगम हुआ है।

व्यक्ति प्रायः अपने वातावरण के साथ क्रिया करते हैं और बदले मे अपनी क्रियाओं के परिणामों द्वारा प्रभावित होते हैं। जब भी कोई क्रिया अथवा घटना सुखद अथवा दुखद अनुभवो की ओर अग्रसर करती है, वह क्रिया तथा उसके परिणाम व्यक्ति के मस्तिष्क से सबधित हो जाते या जुड जाते है। यदि किसी विषय के सीखने अथवा कार्य को करने से सुखद अनुभव होता है तो व्यक्ति की उस विषय अथवा कार्य के साथ सुख की भावना जोड़ने की प्रवृत्ति होती है तथा वे उसके लिए पसन्द विकसित कर लेते हैं। जब किसी विषय अथवा कार्य के सीखने द्वारा दुखद अनुभव होता है तो व्यक्ति की उसके साथ दुख की भावना जोडने की प्रवृत्ति होती है तथा वे उसके लिए अरुचि विकसित कर लेते हैं।

यह साधारण ज्ञान है कि अधिगम मे साहचर्य और सबध सम्मिलित होते हैं। साहचर्य सामान्यतः सान्निध्य, वैषम्य और समानता से सुसाध्य होता है। *सान्निध्य का तात्पर्य उद्दीपन एव अनुक्रिया का एक साथ घटित होना है*। जब भी दो उद्दीपन, घटनाएँ अथवा वस्तुएँ समय और स्थान पर एक साथ घटित होते हैं उनके बीच साहचर्य स्थापित हो जाता है। किसी क्रिकेट खिलाड़ी को देखकर आपको उस टैस्ट मैच की याद आ सकती है जो आपने बहुत पहले देखा था। उसी प्रकार से किसी मनोरंजक वनविहार का नाम आपको पिछले साल आपने जिस वनविहार मे आनन्द उठाया था, उसकी याद दिला सकता है। यह साहचर्य स्थान तथा समय के सान्निध्य के कारण होता है। *जो अनुभव आपस मे समान है उनका आसानी से आपस मे साहचर्य हो जाता है*। एक लम्बे अपरिचित व्यक्ति को देकर आपको अपने उस मित्र की याद आ जाती है जो लम्बा है। व्यक्ति समानता के कारण किसी अपरिचित को अपना कोई मित्र समझ सकते हैं। *वैषम्य तब होता है जब दो उद्दीपन एक*

दूसरे से *अत्यन्त भिन्न* है। वे अनुभव जो एक दूसरे के विरोधी हैं अथवा एक दूसरे से भिन्न हैं उनमें साहचर्य होने की प्रवृत्ति होती है। लड़का-लड़की, रात-दिन या गर्मी तथा सर्दी का साहचर्य वैषम्य के कारण है। यह भी पाया गया है कि बहुत सी अधिगम दशाओं में विशिष्ट प्रकार के साहचर्य सम्मिलित नही होते जैसे तर्क, अन्तर्दृष्टि आदि मानसिक प्रक्रियाओं में। इस प्रकार का अधिगम ज्ञानात्मक अधिगम कहा जाता है जो साहचर्य या अनुबधन द्वारा सीखने से भिन्न है।

अधिगम और परिपक्वन

कौशल अर्जन के लिए एक निश्चित स्तर का परिपक्वन अपेक्षित है

मानव व्यवहार सामान्यत· वृद्धि एव विकास के परिणामस्वरूप होता है। उदाहरणार्थ नवजात शिशु की पहली मुसकुराहट अधिगम का प्रतिनिधित्व नहीं करती। जब बच्चे पेशीय तथा तन्त्रिकावाही विकास में परिपक्व हो जाते हैं, तभी मुसकुराते हैं। बाद मे जैसे जैसे वे बड़े होते हैं वे किसी विशेष व्यक्ति को देखकर अथवा जब वे सुखमय तथा प्रसन्न होते है, तभी मुसकुराते है। इस प्रकार सुखमय तथा प्रसन्न होने पर मुसकुराने की क्रियाएँ अधिगम कहलाती है। मनुष्यो मे चलने, दौड़ने एव बातचीत करने की योग्यता बहुत सीमा तक परिपक्वन के कारण ही विकसित होती है। इन कौशलो के अधिग्रहण के लिए निश्चित स्तर की परिपक्वता पूर्वापेक्षित है। इन कौशलो के सही विकास के लिए अभ्यास एव अनुभव आवश्यक है। बच्चों के बोलने एव चलने का ढंग उनके अधिगम पर आधारित है। यद्यपि वे तब तक नही चल सकते जब तक उनके पैर उनका भार वहन करने में सक्षम नहीं हो जाते और तब तक बात नही कर सकते जब तक पेशीय एव तंत्रिकावाही विकास नही हो जाता। बिना सीखे हुए व्यवहारों के अन्य उदाहरण पक्षियों का उड़ना एव मेढक के नवजात शिशुओ का पानी मे तैरना है जो मात्र परिपक्वता के कारण होता है।

अधिगम एव परिपक्वन के परिणामस्वरूप व्यवहार मे परिष्करण होता है

अधिगम एव परिपक्वन दोनों ही के परिणामस्वरूप व्यवहार मे परिष्करण आता है। अधिगम एव परिपक्वन की परस्पर क्रिया के परिणामस्वरूप व्यवहार मे परिवर्तन आते हैं। कभी-कभी यह विभेद करना कठिन हो जाता है कि इन दोनो मे से किसके कारण व्यवहार मे परिष्करण हुआ है। अनेकों अन-अधिगमित व्यवहार जो परिपक्वन के कारण विकसित होते हैं, अधिगमित व्यवहार के साथ परस्पर क्रिया करते हैं। परिपक्वन को ऐसा विकास माना जाता है जो तत्रिका पेशीय तत्र की वृद्धि के साथ सबधित है जबकि अधिगम का सबध उत्तेजनात्मक स्थितियो के साथ है।

अधिगमजन्य व्यवहार परिपक्वताजन्य व्यवहार से भिन्न होता है

अधिगम की परिभाषा के अनुसार सीखना अभ्यास अथवा अनुभव के परिणामस्वरूप होता है। इससे अधिगमित व्यवहार उन परिवर्तनो से भिन्न हो जाता है जिनका श्रेय परिपक्वन, बीमारियो, उद्दीपन, स्थितियो मे परिवर्तन इत्यादि को जाता है। 'अभ्यास' शब्द से तात्पर्य औपचारिक प्रशिक्षण से है और 'अनुभव' मे सभी प्रकार के अनुभव आ जाते हैं जैसे जलती हुई लकड़ी से जल जाना आदि। किसी व्यक्ति मे किन्ही विशेष कौशलो तथा योग्यताओ को अर्जित करने की योग्यता इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हे सीखने के लिए उसको कितने अवसर मिले और अभ्यास की वह मात्रा जिसमे उसने स्वय को व्यस्त किया। व्यक्ति जो भी सीखते है वह उनके वातावरण एव अनुभवो की प्रकृति पर बहुत सीमा तक निर्भर करता है। क्या व्यक्ति भौतिकी अथवा भूगोल मे रुचि रखते हैं, क्या वे विद्यालय को पसन्द करते हैं या उन्हे वह नीरस स्थान लगता है, क्या वे अपनी सामाजिक अभिवृत्तियो मे उदारवादी हैं या रूढ़िवादी, क्या वे पढाई अच्छी तरह करते हे अथवा उससे दूर

भागते हैं, क्या वे ईमानदार हैं अथवा बेईमान, इन सबका निर्धारण बहुत सीमा तक व्यक्तियो के अनुभवों की प्रकृति द्वारा होता है।

प्रतिवर्त क्रिया और मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार अधिगमित व्यवहार से भिन्न है

दूसरे प्रकार के व्यवहार जो अधिगमित व्यवहार का प्रतिनिधित्व नही करते, वे मूलप्रवृत्यात्मक तथा प्रतिवर्त क्रियाओ से उत्पन्न होते हैं। मूलप्रवृत्तियाँ व्यवहार के वे आकार हैं जो परिपक्वन एव विकास की विभिन्न अवस्थाओं मे प्रकट होते हैं। व्यक्तियो का भोजन करने का व्यवहार एव पक्षियो का घोंसला बनाने का व्यवहार इस प्रकार के व्यवहार के उदाहरण हैं। परन्तु इस प्रकार के व्यवहारों मे अनेको सघटक शामिल हैं जिनमे अधिगम सार्थक भूमिका निभाता है। अनअधिगमित व्यवहार का एक और उदाहरण विभिन्न स्थितियो मे हमारा प्रतिवर्त व्यवहार है। प्रतिवर्त व्यवहार ज्ञानेन्द्रिय की उत्तेजना के प्रति मासपेशी अथवा ग्रन्थि की अप्रत्यक्ष तथा तत्क्षण अनुक्रिया है। प्रतिवर्त व्यवहार का एक उदाहरण किसी व्यक्ति की आँखो के सामने किसी वस्तु की गति होने पर आँखो का तुरन्त झपकना होता है। ये जन्मजात प्रवृत्तियो के उदाहरण है जो अभ्यास द्वारा अर्जित नही हैं। किन्तु मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार को अधिगम द्वारा परिष्कृत किया जा सकता है।

अधिगम तथा निष्पादन

निष्पादन अधिगम पर निर्भर है

व्यक्ति द्वारा की हुई कोई भी क्रिया निष्पादन है। कोई भी सामान्यतः यह अनुमान लगा सकता है कि व्यक्ति ने कुछ सीख लिया है क्योंकि वे ऐसा कुछ कर सकते है जिसे वे अधिगम क्रिया से पहले नही कर सकते थे। उदाहरण के लिए जब बच्चो ने साइकिल चलाना, भाषा बोलना, पढना, लिखना या खेल-खेलना इत्यादि सीख लिया है तो वे अब कुछ कर सकते हैं जो वे पहले नही कर सकते थे। अधिकतर अधिगमित व्यवहार व्यक्ति के निष्पादन द्वारा जाना जाता है।

किन्तु यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि निष्पादन कार्य अधिगम पर निर्भर है, यह दूसरे विशेष कारको जैसे व्यक्ति के अभिप्रेरण एव उद्दीपन की दशाओं आदि पर भी निर्भर करता है। जब दूसरे कारकों पर नियत्रण कर लिया जाए तो निष्पादन में परिवर्तन अधिगम प्रक्रियाओ के परिणामस्वरूप हो सकते हैं। अधिगम का परिणाम व्यवहार मे परिवर्तन अथवा परिष्करण है अतः अधिगम के परिणामस्वरूप व्यक्ति नए अथवा भिन्न तरीके से क्रिया करना प्रारम्भ कर देते है। जो उनके व्यवहार मे परिवर्तन को दिखाता है।

अभ्यास से निष्पादन मे सुधार होता है

अभ्यास को व्यवहार मे इस अर्थ मे सुधार लाने वाला अथवा कुशलता बढ़ाने वाला माना जाता है कि जो कुछ भी व्यक्ति सीखने का प्रयत्न करते हैं उसमे वे अधिक निपुण हो जाते है। उदाहरणार्थ साइकिल चलाना सीखना, कार चलाना, लोगो को पहचानना सीखना तथा उनके नाम से पुकारना, किसी गीत या नाटक की पक्तियो को याद करना और दूसरों के साथ सबध रखना आदि अभ्यास के उदाहरण हैं जिनके परिणामस्वरूप निष्पादन मे सुधार आता है जो आसानी से देखा जा सकता है।

कौशलों का अधिगम

व्यक्ति सदैव वही कुछ सीखना चाहते है जो उन्हें किसी कार्य को अधिक आसानी व कुशलता से करने मे सहायक होगा। यह कार्य बोलना, कार चलाना, टंकण, वाद्य यन्त्र बजाना, कविता पाठ करना, खेल-खेलना अथवा विज्ञान जैसे विषयो मे कुछ प्रविधियाँ एव प्रक्रियाओ को करना हो सकता है। जब व्यक्ति इनमे से किसी एक कार्य के निष्पादन में अत्यन्त उच्च स्तर की निपुणता प्राप्त कर लेते हैं तो यह कहा जाता है कि उन्होने इस निष्पादन मे आवश्यक कौशल प्राप्त कर लिया है।

कौशल

कौशल को निष्पादन की परिशुद्धि की दिशा में व्यावहारात्मक झुकाव के रूप मे पारिभाषित किया जा सकता है। कौशल को हम किन्ही निश्चित गत्यात्मक कार्यों मे अत्यन्त आसानी से देख सकते है जहाँ पर परिशुद्धि को गलतियों की कमी के रूप मे देखा जा सकता है। कौशल का तात्पर्य किसी कार्य को करने का नया तरीका ढूँढ़ना भी होता है। कौशल के विकास मे अधिगम सम्मिलित होता है। कौशल का अधिगम कई विभिन्न सघटको एव अवस्थाओ से मिलकर बना है।

कौशल अधिगम की तीन अवस्थाएँ

कौशल अधिगम तीन अवस्थाओ में होता है। पहली अवस्था *ज्ञानात्मक* है जिसमें व्यक्ति सीखता है कि कार्य में क्या अपेक्षित है और कार्य के कुछ विशिष्ट संघटक क्या हैं? दूसरी अवस्था *साहचर्य* कहलाती है जिसमें कौशल परिशुद्धता तथा सूक्ष्मता के साथ सही किया जाता है। तीसरी अवस्था *यन्त्रवत् अवस्था* कही जाती है जिसमें व्यक्ति को कार्य करते समय उस कार्य के विभिन्न पहलुओ के बारे मे सोचने की भी आवश्यकता नही होती। कौशल यन्त्रवत् होकर आसानी से किया जाता है।

व्यक्ति दूसरो के साथ परस्पर क्रिया गत्यात्मक कौशलों, वाक्-कौशलों, प्रत्ययो और अभिवृत्तियो के अधिगम द्वारा करता है। इनकी व्याख्या आगे की गई है।

गत्यात्मक कौशलों का अधिगम

उद्दीपन की अनावृत्ति के साथ व्यक्ति विभिन्न स्थितियों मे अनेको चीजे सीखता है। पूर्व बाल्यावस्था में परिपक्वन द्वारा प्रोत्साहित बच्चे अनेको कौशल सीखते हैं। वे ठीक से चलना, चम्मच से खाना, पेन्सिल पकड़ना, लिखना, कपड़े पहनना आदि सीख जाते हैं। इस तरह के अधिगम जिनमे मुख्यतः मासपेशियो का इस्तेमाल सम्मिलित होता है वे गत्यात्मक अधिगम कहलाते हैं। बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते हैं वे अनेकों प्रकार के गत्यात्मक अधिगम अर्जित करते हैं। वे बटन बन्द करना, टाई बाँधना, काटना और तैरना सीखते हैं। वे बहुत से ऐसे कौशल भी सीखते हैं जो विभिन्न खेलों को खेलने में प्रयुक्त होते हैं जैसे गेंद को पकड़ना, फेंकना, ढकेलना और ठोकर मारना आदि। साइकिल चलाना और कुछ वाद्य यन्त्रों का बजाना सीखना गत्यात्मक अधिगम के कुछ अन्य उदाहरण हैं।

जब व्यक्ति किसी कौशल, गति या शाब्दिक कौशल जैसे टंकण करना, नृत्य करना, पढना, बोलना या जनता के सम्मुख गाना आदि अर्जित करना चाहते हैं तो क्या होता है। सभी कौशलो के अधिगम मे कुछ सामान्य गुण प्रतीत होते है जबकि ऐसे कौशलो में विषय वस्तु तथा अधिग्रहण की विधि एक दूसरे से भिन्न होती है। किसी कौशल के अधिगम के मुख्य लक्षण, टंकण के अधिगम के दौरान जो परिवर्तन होते हैं, उनसे स्पष्ट किए जा सकते हैं।

अगर व्यक्ति नौसिखिए हैं तो उन्हें विभिन्न कुँजियो की स्थिति, उँगलियाँ रखने की स्थिति और कुँजियो को दबाने की विधि सीखनी पड़ती है। उन्हें अन्तर छड़, कैरीएज वापसी तथा दूसरे अन्य नियत्रणो का इस्तेमाल करना पड़ता है। प्रारम्भ मे व्यक्ति अनेकों त्रुटियाँ करते हैं और कार्य भी धीमी गति से करते हैं। उनका निष्पादन अनियमित होगा किन्तु शनैः शनैः उसमे सुधार आता है। यद्यपि इस दौरान सुधार एकसमान नही होता। बहुत समय पश्चात् एव लगातार तथा सगत प्रयास के परिणामस्वरूप वे उस बिन्दु पर पहुँचते हैं जिसके बाद और अभ्यास के परिणास्वरूप निष्पादन मे आगे कोई सुधार नही होता। जैसे वे कौशल प्राप्त कर लेते हैं, त्रुटियो मे कमी या परिशुद्धता मे सुधार तथा मान और गति मे बढोत्तरी आती है। लगातार अभ्यास से निष्पादन मे आसानी तथा नियमितता आती है। जैसे जैसे व्यक्ति क्रिया को ठीक से करने का कौशल अर्जित करते हैं उसके परिणामस्वरूप निष्पादन मे अधिक एकरूपता का बढ़ना तथा प्रयत्नो मे कमी होती है। इस प्रकार

के परिवर्तन सभी प्रकार के कौशलों के अधिगम के साथ चलते हैं।

कौशल अधिगम की उपरोक्त तीन अवस्थाएँ कार चलाने की अधिगम प्रक्रिया के उदाहरण द्वारा भी समझी जा सकती हैं। प्रथम अवस्था में व्यक्ति जो कार चलाना सीखना चाहते है, उनको प्रारम्भ में कार के विभिन्न भागों एवं नियंत्रणों से परिचित होने के लिए कुछ समय लगाना होगा। दूसरी अवस्था में वे कार चलाने के कौशल में कुशल हो जाते हैं। इस अवस्था में वे गियर बदलना इत्यादि सीख लेते है। अन्त में तीसरी अवस्था आती है जब कार चलाना यान्त्रिक हो जाता है और बिना यह सोचे कि चालक किन जटिल क्रियाओं को कर रहे हैं, लम्बी दूरी तक कार चलाने योग्य हो जाते हैं।

शाब्दिक कौशलों का अधिगम

बच्चे अपने विकास के साथ-साथ शाब्दिक कौशलों को अर्जित करना शुरू कर देते है। प्रारम्भ मे बच्चों की कुछ शब्दों एवं भाव भंगिमाओं के अर्थ की समझ सीमित होती है। सबसे सरल शाब्दिक अधिगम किसी वस्तु का नाम बताना है। शाब्दिक अधिगम सदैव शब्दों के प्रति अथवा शब्दों के द्वारा अनुक्रिया करना सीखना है। बच्चे जैसे जैसे बड़े होते जाते हैं, वे सुधरे हुए शाब्दिक कौशलों जैसे शब्दों का उच्चारण, अनेक शब्दों को जोड़कर वाक्य बनाना और विचारों को व्यक्त करने के लिए वाक्यों को लिखना आदि का विकास कर लेते है। परिणामस्वरूप उन्हें जीवन में विभिन्न स्थितियों में व्यवहार करने के लिए नये शब्द संचय की आवश्यकता अपेक्षित होती है।

शाब्दिक कौशल सामान्यतः स्मृति द्वारा अर्जित होते हैं। हम विषयवस्तु को इस अभिप्राय से दोहराते हैं कि बाद में उसे पुनःस्मरण अथवा प्रत्यभिज्ञान कर सकें। बोलना एक अत्यन्त जटिल कौशल है जिसमें गत्यात्मक के साथ-साथ सांकेतिक एवं शाब्दिक कौशल सम्मिलित होते हैं। आंशिक रूप से यह प्रतिवर्त स्वरोच्चारण के आधार पर होता है जो शैशवावस्था में प्रकट होता है तथा अनुकरण एवं आदर्श प्रतिरूपण से भी अर्जित होता है। यह प्रयास त्रुटि अधिगम से भी अर्जित होता है। परिपक्वन गत्यात्मक एवं शाब्दिक दोनों कौशलों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है क्योंकि उनका विकास तब तक नहीं हो सकता जब तक पर्याप्त रूप में मांसपेशियों का विकास न हो तथा श्रवण एवं शाब्दिक यंत्र एक निश्चित स्तर तक विकसित न हो जाएँ।

प्रत्यय अधिगम और समस्या समाधान

जैसे ही व्यक्ति जटिल गत्यात्मक एवं शाब्दिक कौशल और नया शब्दसंचय अर्जित कर लेते हैं, वे एक या अनेक उद्दीपन जो किसी प्रकार भिन्न हैं, उनमें विभेद करना सीखते हैं। वे दो स्थितियो, व्यक्तियों और वस्तुओं में अन्तर करना सीखते हैं। आरम्भ में वे अपने माता-पिता का अन्य संबंधियो से विभेद करना शुरू करते हैं। बाद मे अपने संबंधियों और बाहर वालों में, चाय और दूध में, कुत्ते और बिल्ली में, कुर्सी और बेंच इत्यादि में भेद करना सीख लेते हैं। इन सभी उदाहरणों में व्यक्ति अलग उद्दीपनों के प्रति एक दूसरे से अलग अनुक्रिया करना सीख लेते हैं जो किन्हीं तरीकों से एक दूसरे से भिन्न होते हैं।

बाद में व्यक्ति उद्दीपनों के प्रति उनकी विशेषताओ के गुणों जैसे रंग, सुगठित रूप, स्थिति, संख्या इत्यादि के आधार पर अनुक्रिया करना प्रारम्भ कर देते हैं। वस्तुओं के समूह में सामान्य गुण ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं तथा उन सामान्य गुणों को कोई शाब्दिक अंकितक करते हैं। बच्चे लकड़ी के घनाकार टुकड़े को लकड़ी के गृह का नाम दे सकते हैं। बाद में घन के प्रत्यय एवं गुण सीख सकते है तथा यह खोज कर सकते हैं कि घन केवल लकड़ी से नही बल्कि अन्य पदार्थों जैसे काँच या धातु से भी बन सकते है। वे यह भी सीखते हैं कि अनेक घन अनेक रंगों के हो सकते हैं और घन किसी भी आकार का हो सकता है। प्रत्यय सीखने का एक अन्य उदाहरण अंको का वर्गीकरण कुछ कसौटियों के आधार पर करना

सीखना है। उदाहरणार्थ जब बच्चो को संख्याओं का क्रम दे दिया जाए तो वे उनका चयन कर सकें जो विषम और सम की श्रेणी मे आते हैं। बहुत से शब्द जो वस्तु के प्रतीक के रूप मे प्रयुक्त होते हैं जैसे घर, कार, विद्यालय, पशु, गुड़िया आदि ये सभी प्रत्यय के उदाहरण हैं।

जैसे ही बच्चे उद्दीपनो के सम्पर्क मे आते हैं और सूचना अर्जित करते हैं वे समस्याओं के समाधान की योग्यता विकसित करते है। *समस्या वह स्थिति है जिसमे व्यक्ति दी हुई दशा से लक्ष्य दशा तक पहुँचना चाहते हैं।* समस्या के समाधान के लिए व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि समस्या क्या है तथा किस प्रकार का समाधान आवश्यक है? अकगणित की समस्याओ का समाधान करना, वर्ग पहेली पर कार्य करना एव तार्किक समस्याओं का समाधान करना ये सब विशिष्ट समस्याओं के समाधान के उदाहरण हैं। रेडियो की मरम्मत करना सीखना अथवा मशीन के विभिन्न भागों को यथा स्थान लगा देना अथवा भवन का रेखाचित्र बनाना समस्या समाधान के कुछ अन्य उदाहरण हैं। आरम्भ में व्यक्ति केवल सरल समस्याओ का समाधान ही कर सकते है किन्तु धीरे-धीरे वे अत्यन्त जटिल समस्याओं का समाधान करना सीख जाते हैं। जब समस्या का समाधान प्राप्त हो जाता है तो व्यक्ति कुछ अधिक सीखते हैं और अपने ज्ञान का उपयोग नये निष्पादन मे करने योग्य बन जाते हैं। इससे व्यक्ति की चिन्तन योग्यता का विकास होता है। समस्या-समाधान अधिगम का सबसे उत्कृष्ट प्रकार है और इसीलिए समस्या-समाधान की योग्यता बहुत सीमा तक जीवन की नई स्थितियो के साथ समायोजन की योग्यता में वृद्धि करती है। जैसे-जैसे व्यक्ति अपने पर्यावरण से अधिकाधिक सूचना अर्जित करते हैं और जटिल समस्याओ के समाधान की योग्यता अर्जित करते है वे यह भी सीखते है कि कैसे सीखा जाए? इससे अधिगम सुसाध्य बनता है। आपको समस्या-समाधान के बारे मे और अधिक जानकारी चिन्तन और तर्कणा के विषय मे पढ़ते समय प्राप्त होगी।

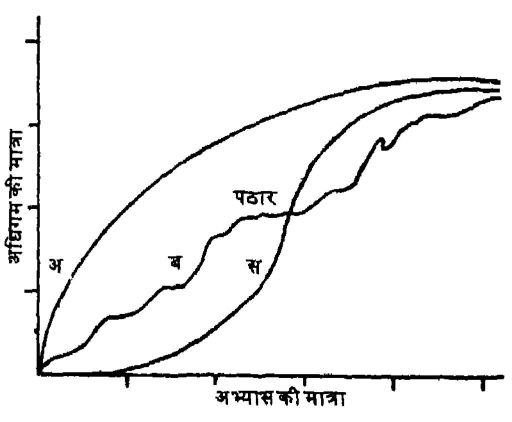
यह उल्लेखनीय है कि अधिगम के उपरोक्त रूप परस्पर सबधित हैं। इनमे से प्रत्येक स्वतन्त्र रूप से घटित नही होता। अनेक स्थितियो में अधिगम के दो या अधिक रूप सम्मिलित होते हैं। उदाहरणार्थ पत्र के टंकण मे गत्यात्मक एव शाब्दिक अधिगम सम्मिलित हैं। भौतिकी की समस्या के समाधान मे शाब्दिक कौशल का अधिग्रहण, प्रत्यय अधिगम और समस्या-समाधान सम्मिलित हैं। उच्च स्तरीय अधिगम में अनेको कौशलो और दक्षता एवं सामर्थ्य का संयोग सम्मिलित होता है।

अभिवृत्तियों का अधिगम

व्यक्ति के पर्यावरण में वर्तमान अनेकों प्रकार के उद्दीपनो से जब व्यक्तियों का सामना होता है और साथ ही अधिक लोगों, वस्तुओ एवं घटनाओं की अनावृत्ति होती है, तो उनमे नई आदतो का अधिग्रहण होता है और वस्तुओं, घटनाओ, लोगो, अभिवृत्तियो और आदर्शों के प्रति प्रत्यक्षीकरण में परिष्करण होता है। व्यक्तियो का अधिकतर अधिगम उनकी अभिवृत्तियो मे परिवर्तन होना होता है। *अभिवृत्ति व्यवहार का वह सीखा हुआ ढंग है जो व्यक्ति को किसी वस्तु, व्यक्ति, स्थिति या विचार के प्रति सगत तरीके से क्रिया करने के लिए पूर्व प्रवृत करती है।* अभिवृत्ति के निर्माण के कारण व्यक्ति विभिन्न वस्तुओ, लोगो, स्थितियो एव विचारो के प्रति सकारात्मक अथवा नकारात्मक अनुक्रियाएँ प्रदर्शित करते हैं। जैसे बच्चे विद्यालय मे कोई विषय सीखते हैं वे विषय के प्रति, विषय पढानेवाले अध्यापक अथवा यहाँ तक कि विद्यालय के प्रति विशेष अभिवृत्ति विकसित कर लेते हैं। कोई विद्यार्थी कट्टरवादी अथवा सहिष्णु , दूसरा सहयोगी, तीसरा असहयोगी और चौथा अपने आवटित कार्य के प्रति अनुत्तरदायित्वपूर्ण होने की प्रवृत्ति रख सकता है। ये सभी पूर्व अनुभवो के आधार पर सीखे गए हैं।

अधिगम वक्र

जैसे कि पहले स्पष्ट किया गया है मुख्य परिवर्तनो में से एक जो कौशल के अधिगम के साथ विशेष रूप से होता है, वह अधिगम की मात्रा में सुधार है। किन्तु कौशल की मात्रा की सीमा होती है जिसे अर्जित किया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति के अभ्यास के दौरान सीखने की मात्रा सभी समयो में एक जैसी नहीं होती। अधिगम मात्रा जो सामान्यतः निष्पादन द्वारा मापी जाती है, उसे रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है जैसा कि चित्र 5.1 मे दिखाया गया है। समस्तर अक्ष अभ्यास की मात्रा अथवा इकाई प्रदर्शित करती है। लम्ब अक्ष अधिगम की उस मात्रा को जो निष्पादन के किसी मापन द्वारा जैसे सही अनुक्रियाओं का प्रतिशत, लक्ष्य को प्राप्त करने में लगे समय की मात्रा अथवा बिन्दुओ, अकों के रूप मे माप इत्यादि को दर्शाती है।



चित्र 5.1 अधिगम वक्र

वक्र "अ" दिखाता है कि अधिगम की मात्रा मे बहुत तेजी से सुधार आने के बाद अधिगम का मान धीरे-धीरे कम होता है। वक्र "स" से स्पष्ट है कि प्रारम्भ में बहुत कम या कुछ भी सुधार नही है फिर तेजी से सुधार का समय आता है उसके बाद बहुत कम या बिल्कुल सुधार नही होता। वक्र "ब" मे जोकि सरलीकृत नहीं है अधिगम वक्रो की अनियमित प्रवृत्ति को दर्शाता है। यह इंगित करता है कि किस प्रकार अधिगम के दौरान समय-समय पर निष्पादन भिन्न होता है। इस वक्र में "पठार" भी प्रदर्शित है जो वह समय होता है जिसमें बहुत कम या अधिगम के मान में न मापने योग्य सुधार होता है, यद्यपि इस समय में अधिगम की क्रिया तो चल ही रही होती है।

अधिगम की मात्रा अथवा कौशलों को अर्जित करने में अभ्यास के दौरान सुधार की मात्रा प्रत्येक व्यक्ति मे भिन्न-भिन्न होती है। अधिगम की मात्रा भी एक व्यक्ति के लिए कार्य को सीखने में अलग-अलग समय में भिन्न होती है। उदाहरणार्थ टंकण सीखने में एक शिक्षार्थी प्रारम्भ में तीव्र सुधार प्रदर्शित कर सकता है जबकि अन्य शिक्षार्थी को अपने निष्पादन में अच्छे सुधार के लिए अधिक समय तक अभ्यास की आवश्यकता होती है। कभी-कभी व्यक्ति टंकण कार्य निष्पादन के विशेष स्तर तक पहुँचकर कई दिनों तक उसी स्तर पर बने रहते हैं और फिर उसके बाद सुधार प्रदर्शित करते हैं। अधिगम की इसी प्रकार की विशेषताएँ कई अन्य कौशलों जैसे किसी खेल को खेलना, सीखना या वाद्य यन्त्र बजाना, सीखना, पढ़ना या लिखना आदि के निष्पादन वक्रों मे देखने को मिलती हैं।

अधिगम के प्रकार

अधिगम कई तरीको से होता है। इसमें उद्दीपनों एवं अनुक्रियाओं के बीच किसी प्रकार के साहचर्य अथवा संयोजन बनते हैं। व्यक्ति किसी वस्तु को देखकर उसे नाम से पुकारते हैं। गाय की आकृति देखकर "गाय" शब्द का इस्तेमाल करके अनुक्रिया करते हैं, किसी मनचाही वस्तु पकाने की सुगन्ध से मुँह मे पानी आने जैसा अनुभव करते हैं, आयताकार के क्षेत्रफल का सूत्र पूछे जाने पर 'लम्बाई × चौड़ाई' बताकर उत्तर देते हैं इत्यादि। इन सब उदाहरणो मे कुछ विशेष उद्दीपन विशिष्ट अनुक्रियाओं के साथ

जुड़े हैं जो कुछ निश्चित सही दशाओं में उद्दीपनों द्वारा उत्पन्न होते हैं। दूसरे शब्दों में उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच सबंध स्थापित हो जाता है जो पहले नहीं था। अधिगम के महत्वपूर्ण चार प्रकारों (i) प्रयास एवं त्रुटि द्वारा सीखना, (ii) क्लासिकी अनुबंधन, (iii) नैमित्तिक अनुबंधन, और (iv) ज्ञानात्मक अधिगम की व्याख्या निम्नलिखित है।

(i) प्रयास एवं त्रुटि अधिगम

मनुष्य प्रायः समस्या-समाधान या किसी जटिल कार्य के सीखने जैसे तैरना या साइकिल चलाने में प्रयास एवं त्रुटि का इस्तेमाल करते हैं। तैरना सीखने वाले प्रारम्भ में अधिक शक्ति पानी को अपनी बाहों द्वारा हटाने तथा थपथपाने में ही लगा देते हैं। परन्तु धीरे-धीरे उन्हें यह पता चल जाता है कि शरीर की इन क्रियाओं में से कुछ उन्हें पानी पर तैरते रखने अथवा उसमें गति करने के लिए दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रभावी हैं। परिणामस्वरूप वे प्रभावी गतियों को दोहराते हैं तथा शेष को छोड़ देते हैं।

उसी प्रकार साइकिल चलाना सीखते समय व्यक्ति प्रारम्भ में गिर सकते हैं। ऐसा हाथो और पैरों की क्रियाओं के समन्वय अथवा शरीर के संतुलन को बनाये रखने की असफलता के कारण होता है। प्रारम्भ मे वे ठीक से हत्था (हैंडल) नही पकड़ पाते अथवा पायदान नहीं चला पाते। किन्तु बार-बार अभ्यास (प्रयास) करने से उन्हें अपनी त्रुटियों की अनुभूति होती है तथा उनको दूर कर देते हैं जो साइकिल चलाने में सहायक नहीं होतीं। वे केवल उन्हीं क्रियाओं तथा गतियों को दोहराते हैं जो उन्हें ठीक से तथा आसानी से साइकिल चलाने में सहायता करती हैं। इस प्रकार के अधिगम में व्यक्ति समस्या-समाधान के बहुत से तरीके आजमाते हैं। इनमें बहुत से तरीके ग़लत हो सकते हैं जिनसे त्रुटियाँ हो सकती हैं। अन्ततः व्यक्ति क्रियाओं के सही विन्यास को उत्पन्न कर ही लेते हैं अथवा सही हल समझ मे आ ही जाता है जिससे सफलता मिलती है। अनेको क्रियाएँ जिनमे मांसपेशियों के विभिन्न अंगों एवं प्रत्यक्षीकरणो का समन्वय अपेक्षित होता है, इसी प्रकार से सीखे जाते हैं।

पशुओं मे प्रयास एवं त्रुटि सिद्धान्त : प्रयास एवं त्रुटि अधिगम का अत्यन्त आसान और सबसे कम जटिल रूप अधिकतर पशुओं के उदाहरणों में देखा जा सकता है। प्रयास एवं त्रुटि अधिगम का सरल प्रयोग ई इल थार्नडाइक द्वारा बिल्ली को कठघरे मे बन्द करके किया गया। कठघरे में बिल्ली भूखी थी तथा कठघरे के बाहर एक मछली रखी गई जो कि कठघरे की छड़ों से दिखाई पड़ती थी। कठघरे को कुछ इस तरह से बनाया गया था कि बिल्ली द्वारा एक उत्तोलक (लीवर) को दबाने से कठघरे का दरवाजा खुल जाता था और वह बाहर आ सकती थी। बिल्ली को यह ढूँढ़ना था कि उत्तोलक को कैसे दबाया जाए और दरवाजे को खोलकर मछली कैसे पाई जाए। बिल्ली के व्यवहार को, जैसे ही वह कठघरे के बाहर रखा खाना पाने के लिए कठघरे से बाहर निकलने का प्रयत्न कर रही थी, सावधानीपूर्वक निरीक्षण करने से यह पाया गया कि बिल्ली को अपना समाधान ढूँढ़ने में काफी समय लगा। पहले तो भूखी होने के कारण बिल्ली अधीर हो गई और बिना जाने कि कठघरा कैसे खोला जाए, कठघरे के अन्दर वह यादृच्छिक गतियाँ करने लगी। प्रारंभ में उसने कठघरे की दीवारों से संघर्ष किया, भोजन की ओर बाहर अपने पजे निकाले, कठघरे की छड़ो को मुँह से काटा और बाहर निकलने के प्रयत्न में उन्हें खींचा और ढकेला। इस अवस्था में बिल्ली का व्यवहार अन्वेषणात्मक प्रकृति का था और उसे अपने लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग स्पष्ट नही था। अन्ततः इन यादृच्छिक क्रियाओं के दौरान बिल्कुल अनजाने मे बिल्ली का पैर उत्तोलक पर पड़ गया, वह दब गया और कठघरे का द्वार खुल गया। अतः सही समाधान अनजाने मे प्राप्त हो गया और बिल्ली को कठघरे के बाहर रखा भोजन प्राप्त हो गया। बाद में किये जानेवाले प्रयासों मे जब पहले की भाँति बिल्ली को कठघरे के अन्दर और खाने को

बाहर रखा गया तो धीरे-धीरे बिल्ली के सीखने में सुधार हुआ और उसने यादृच्छिक क्रियाओ का परिहार किया। जैसे-जैसे प्रयास ज़ारी रहे बिल्ली ने अनावश्यक क्रियाओ को शनैः शनैः छोडना प्रारम्भ कर दिया और अन्त मे जैसे ही बिल्ली को कठघरे के अन्दर रखा जाता, उसने उत्तोलक दबाना सीख लिया। दूसरे शब्दों मे जैसे-जैसे प्रयास बढते गए कठघरे में पहुँचने एव बाहर आने के बीच का समय धीरे-धीरे कम होता गया। उसने त्रुटियॉ भी कम की। बहुत से प्रयासों के बाद बिल्ली को जैसे ही कठघरे मे रखा जाता उसने उत्तोलक दबाना सीख लिया और अनावश्यक प्रयासो जैसे संघर्ष, इत्यादि को त्याग दिया। कम समय और कम त्रुटियो के साथ कठघरे से बिल्ली के बाहर आने की क्रमिक योग्यता अधिगम के परिणामस्वरूप घटित हुई।

पूर्ववर्णित प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेको प्रयासो के बाद ही बिल्ली ने उत्तोलक दबाना और अनावश्यक क्रियाओ के बिना कठघरे का दरवाज़ा खोलना सीखा। यह तत्वतः प्रयास एव त्रुटि अधिगम का उदाहरण है। अधिगम की प्रक्रिया के दौरान त्रुटिपूर्ण गतियाँ घट जाती है और सही गतियाँ मज़बूत हो जाती है।

मानवो मे प्रयास एवं त्रुटि . ई एल थार्नडाइक के अनुसार सही अनुक्रियाओ का अधिगम उनके परिणाम स्वरूप मिलनेवाले पुरस्कारो अथवा कष्टप्रद परिणामो द्वारा होता है। जब व्यक्ति को कोई नया कार्य करना होता है तो उनकी पहली प्रवृत्ति होती है कि वे उन क्रियाओ का इस्तेमाल करें जिन पर उनको पहले प्रवीणता प्राप्त है। वे विभिन्न तरीके अपनाते हैं जब तक अन्ततः उनको सही समाधान नही सूझ जाता। परिणामतः सीखनेवाले व्यक्ति अनुरूपी उद्दीपन के प्रति सही अनुक्रिया को पहचान जाते है।

मानव जीवन मे प्रयास एव त्रुटि अधिगम के बहुत से उदाहरण हैं। शायद ही कभी व्यक्ति गणित की नई समस्या के समाधान हेतु सही हल पर पहुँचने से पूर्व बिना विभिन्न उपागमों द्वारा प्रयत्न किए आगे बढ़ते है। गणित की जटिल समस्या का बिना ग़लती के समाधान हेतु लम्बे समय तक तमाम प्रयास करने पडते हैं। प्रयास एव त्रुटि अधिगम टंकण का इस्तेमाल एव कार चलाना सीखने मे भी होता है। ये जटिल कार्य हैं और व्यक्ति एक या दो प्रयासो मे उन्हें नही सीख सकते।

मनुष्यो द्वारा प्रयास एवं त्रुटि का इस्तेमाल सामाजिक अधिगम स्थितियो मे भी किया जाता है। बच्चे जब नए विद्यालय मे प्रवेश पाते है तो वे अपने मित्र बनाने मे अभिरुचि रखते हैं। परन्तु उन्हे यह मालूम नही होता कि कैसे और क्या किया जाए। वे एक के बाद दूसरी प्रविधियो का इस्तेमाल करते है जब तक वे अपने विद्यालय के मित्रो के बीच स्वीकृति एव लोकप्रियता नही प्राप्त कर लेते। इसके पश्चात् वे उसी प्रकार से व्यवहार करना ज़ारी रखते हैं *जिससे उन्हे सफलता मिलती रहे और निष्प्रभावी* क्रियाओ का त्याग कर देते है।

(ii) क्लासिकी अनुबंधन

क्लासिकी अनुबधन साहचर्य अधिगम का एक रूप है · उद्दीपन एवं अनुक्रिया अथवा क्रिया एव उनके परिणामों के बीच साहचर्य के कारण अनेको क्रियाओ का अधिगम होता है। क्लासिकी अनुबंधन एक प्रकार का साहचर्य अधिगम है जिसमे उद्दीपन एव अनुक्रिया के बीच सबंध स्थापित हो जाता है। क्लासिकी अनुबधन का एक उदाहरण उस बच्चे का व्यवहार है जो एक बार जलने के बाद जलती हुई लकड़ी का परिहार करता है।

जलने से पूर्व बच्चे ने सोचा होगा कि जलता हुआ लकड़ी का टुकड़ा खेलने के लिए अच्छी वस्तु है और उनकी लपटो का रंग पसद आया होगा। किन्तु बच्चे को नया अनुभव तब हुआ होगा जब वह आग से जल गया होगा। इससे बच्चे को दुखद अनुभव हुआ। बच्चे शीघ्र ही जलती हुई लकडी के स्पर्श को दर्द से सबद्ध कर लेते है। परिणामस्वरूप वे जलती हुई लकडी को छूने की क्रिया को दोहराने का परिहार

करना सीख जाते हैं। दूसरे शब्दों में वे जलती हुई लकड़ी के विरुद्ध अनुबंधित हो जाते हैं तथा बाद में इसका परिहार करते हैं। वह अनुभव जिसके द्वारा बच्चों ने यह सीखा कि जलती हुई लकड़ी गर्म होती है, यह जला देती है, और यह कष्टदायक होता है, इससे नया विचार बनता है तथा बाद में जलती हुई लकड़ी को पकड़ने के नए तरीकों की ओर अग्रसर करता है।

क्लासिकी अनुबंधन में विभिन्न अनुभव सम्मिलित हैं: क्लासिकी अनुबंधन के बारे में यह कहा जा सकता है कि उसमें विभिन्न अनुभव सम्मिलित हैं। कीचड़ वाली सड़क पर गिरने के कारण बच्चे भविष्य में ऐसे पथ पर चलने का पूर्णतया परिहार करते हैं। किसी दुखद अनुभव के आधार पर जैसे सड़े फल को खाकर उलटी आ जाने का साहचर्य होने पर बच्चे उस फल को जीवन भर नापसन्द करेंगे क्योंकि उससे उन्हें अपने पुराने अनुभव याद आ जाएँगे। अनुबंधन मे सुखद अनुभव भी होते हैं। हम प्राय. किसी विशेष गाने को इसलिए नहीं पसन्द करते हैं कि वह अच्छा है, बल्कि इसलिए क्योंकि उसके साथ सुखद अनुभवों का साहचर्य है। अनुबंधन का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह प्रायः एक ही अनुभव के आधार पर घटित होता है। एक तीव्र तथा स्पष्ट स्थिति जैसे जलना, गिरना अथवा उलटी करना प्रायः व्यक्ति के उस तरीके में परिवर्तन ले आती है जिस तरीके से वह वस्तु, व्यक्ति एवं स्थिति के साथ व्यवहार करता था। इन सब उदाहरणो में व्यवहार उत्पन्न करने के लिए एक स्थिति दूसरी स्थिति द्वारा स्थानापन्न हो जाती है। साहचर्य से व्यक्ति के जीवन की विभिन्न उद्दीपन स्थितियो के प्रति अनुक्रियाएँ बदल जाती हैं।

क्लासिकी अनुबंधन में एक उद्दीपन के स्थान पर दूसरे का स्थानापन्न एवं साहचर्य होता है : क्लासिकी अनुबंधन व्यवहार के यांत्रिकीकरण के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है जो दी हुई अनुक्रिया के साथ उद्दीपनो के बार-बार दोहराने से हो जाता है जिन्होंने पहले केवल अनुक्रिया का साथ दिया था और बाद मे उस व्यवहार का कारण बन जाते हैं। दूसरे शब्दों में क्लासिकी अनुबंधन मे एक उद्दीपन दूसरे का स्थानापन्न करता है ताकि उन दोनो में साहचर्य पैदा हो जाए। इस मामले मे एक उद्दीपन जो स्वाभाविक अनुक्रिया जगाता है वह ऐसे उद्दीपन के साथ प्रस्तुत किया जाता है जो स्वाभाविक रूप से वह अनुक्रिया पैदा नहीं करता। दोनो उद्दीपनो के बीच साहचर्य बन जाता है। इससे व्यक्ति दूसरे उद्दीपन के लिए वैसी ही अनुक्रिया करना सीख जाते हैं जैसा कि पहले उद्दीपन के लिए करते हैं। इस प्रक्रिया का सर्वप्रथम रूसी शरीर शास्त्री इवान पैवलॉव द्वारा प्रयोग के दौरान निरीक्षण किया गया जिसमे एक कुत्ते ने घण्टी की आवाज के साथ लार टपकाना सीख लिया।

पैवलॉव का प्रयोग

कुत्ते के पाचन तंत्र पर कुछ खोज करने के दौरान पैवलॉव ने निर्णय किया कि कुत्तो के पूर्वाभासी व्यवहार के बारे मे विस्तृत खोज की जाए। उन्होंने इस बात की खोज का प्रयत्न किया कि ऐसा क्यो होता है और यह किन दशाओ पर निर्भर करता है। इस प्रयोग मे कुत्ते को साज पहनाकर मेज पर मज़बूती से खड़ा कर दिया गया ताकि वह अपने सिर अथवा टाँगों को मुश्किल से ही इधर-इधर हिला सकता था। ऐसा यह निश्चित करने के लिए किया गया जिससे आकस्मिक परिवर्तन का प्रभाव प्रयोग पर न पड सके। शल्य क्रिया द्वारा उसके मुँह की एक स्राव नलिका में टोटी लगाकर लार को काँच की नली मे बूँद-बूँद गिराकर सही मापन के लिए इकट्ठा करना संभव हो गया। पैवलॉव ने लार-स्राव की अनुक्रिया को निरीक्षण करने का सोच-समझकर निर्णय लिया क्योकि यह पशु के खाने के व्यवहार का वह पहलू था जिसको मात्रात्मक रूप देना आसान था।

जब कुत्ता उस प्रायोगिक दशा का आदी हो गया तो एक घण्टी बजाई गई। थोड़े समय के बाद जब घण्टी बज ही रही थी कुत्ते को थोडा भोजन दिया

गया। घण्टी और खाने के क्रम को बार-बार शीघ्रता से उत्तरोत्तर दोहराया गया। पैवलॉव ने पाया कि धीरे-धीरे लार के स्राव की उत्पत्ति घण्टी बजने के साथ-साथ बढ़ने लगी, स्पष्टतः पूर्वाभास के कारण कि भोजन प्रस्तुत किया जाएगा। अब कुत्ता घण्टी की आवाज़ की अनुक्रिया मे लार का स्राव शुरू करने लगा जबकि प्रयोग के प्रारंभ मे कुत्ते ने ऐसा नही किया था।

इस स्थिति मे ऐसा हुआ कि घण्टी जो जैविकीय रूप से अनुपयुक्त उद्दीपन था उसने वही अनुक्रिया उत्पन्न की जब घण्टी भोजन के साथ प्रस्तुत की गई जोकि जैविकीय रूप से उपयुक्त उद्दीपन था। दूसरे शब्दो में दो उद्दीपन घण्टी और भोजन को एक साथ बार-बार दोहराने के बाद केवल घण्टी ही उपयुक्त लार स्राव के लिए उपयुक्त उद्दीपन बन गई। कुत्ते ने दो उद्दीपनो का साहचर्य कुछ इतने साथ-साथ कर लिया कि उनमें से एक अन्ततः दूसरे के लिए स्थानापन्न की जा सकी और कुत्ते ने घण्टी के प्रति इस तरह की अनुक्रिया की जैसा कि वह मूलतः भोजन के लिए करता था। अतः लार स्राव जो मूल अनुक्रिया थी वह नये उद्दीपन के साथ अनुबंधित हो गई। किसी भी अनुक्रिया को तभी अनुबधित माना जाता है जब मूल उद्दीपन के अतिरिक्त दूसरा उद्दीपन उसे उत्पन्न करना प्रारम्भ कर दे।

अनुबंधन की बाह्य दशाएँ

पैवलॉव ने यह निरीक्षण किया कि अनुबंधन के लिए दो बाह्य दशाओं को होना आवश्यक है। इन दशाओं में प्रथम सान्निध्य और दूसरी अभ्यास है।

(अ) *सान्निध्य* : दो उद्दीपनों घण्टी और भोजन को एक साथ प्रस्तुत करने से सान्निध्य प्राप्त हुआ। पैवलॉव ने भोजन की प्रस्तुति को अन-अनुबंधित उद्दीपन (अ-अ-उ) और इससे उत्पन्न लार स्राव को अन-अनुबधित अनुक्रिया (अ-अ-अ) माना। घण्टी की आवाज़ जो मूलतः 'तटस्थ' उद्दीपन थी, को अनुबंधित उद्दीपन (अ-उ) कहा गया। अनुबंधित-उद्दीपन (घण्टी) को अन-अनुबंधित उद्दीपन (भोजन) के साथ युग्मित करने से पहले जो तटस्थ उद्दीपन था वह एक अनुक्रिया (लार-स्राव) उत्पन्न करता है जो अनुबधित अनुक्रिया (अ-अ) कहलाई। इसका तात्पर्य यह है कि जब कुत्ते ने घण्टी के लिए अनुक्रिया (लार-स्राव) की तो इसी अनुक्रिया को अनुबधित अनुक्रिया कहते हैं।

(ब) *अभ्यास* : अनुबंधन के लिए दूसरी आवश्यक दशा अभ्यास है। अ-अ-उ (भोजन) और अ-उ (घण्टी) को अनेक बार दोहराना होता है। जब घण्टी और भोजन को साथ साथ कई बार प्रस्तुत करते हैं तो अ-उ के प्रति अनुक्रिया जैसे घण्टी बजने पर लार-स्राव की अनुक्रिया मजबूत होती है। अ-अ के लिए अभ्यास की मात्रा इस बात पर निर्भर है कि अ-अ-उ के प्रति अनुक्रिया कितनी तीव्र है। अनुबंधन की प्रक्रिया को सारणी 5.1 मे प्रदर्शित किया गया है।

सारणी 5.1

क्लासिकी अनुबंधन में अधिगम क्रम

सामान्य परिस्थिति के दौरान		
अनुबधित उद्दीपन (अ-उ)	→	कोई अनुक्रिया नही
अन-अनुबधित उद्दीपन (अ-अ-उ)	→	अन-अनुबंधित अनुक्रिया (अ-अ-अ)
अनुबधन के दौरान		
अनुबधित उद्दीपन (अ-उ)		
अन-अनुबधित उद्दीपन (अ-अ-उ)	→	अन-अनुबधित अनुक्रिया (अ-अ-अ)
अनुबधन के पश्चात्		
अनुबधित उद्दीपन (अ-उ)	→	अनुबधित अनुक्रिया (अ-अ)

क्लासिकी अनुबंधन के प्रकार

पैवलॉव ने दो प्रकार की क्लासिकी अनुबंधन वर्णित की है।

(अ) *क्लासिकी पुरस्कार अनुबधन* : उपरोक्त प्रयोग क्लासिकी पुरस्कार अनुबंधन के उदाहरण से जाना जाता है क्योकि इसमें भोजन जो पुनर्बलित करनेवाली घटना है वह भूखे कुत्ते के लिए पुरस्कार है

(ब) *क्लासिकी विमुखी अनुबंधन* . इस प्रकार के अनुबंधन मे अनुबधित उद्दीपन को किसी विमुखी उद्दीपन के साथ युग्मित किया जाता है। उदाहरण के लिए अगर कुत्ते को धातु की पटल पर बैठाया जाए और घण्टी की आवाज (अ-उ) को बिजली के आघात (अ-अ-उ) के साथ युग्मित किया जाए तो ऐसी अवस्था मे कुत्ते द्वारा ऐसी उस आवाज के प्रति इस प्रकार की अनुबधित अनुक्रिया विकसित करने की सम्भावना है कि वह विद्युत आघात से बचने के लिए धातु पटल से सम्पर्क का परिहार करने के लिए उछल पड़ेगा।

क्लासिकी अनुबंधन का महत्व

अधिगम का सबसे आसान रूप क्लासिकी अनुबधन है। यह सापेक्षतः उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच साहचर्य के निर्माण एव दृढ़ता की यात्रिक प्रक्रिया पर निर्भर करता है। क्लासिकी अनुबधन अधिकतर पशुओ के अधिगम मे आसानी से देखा जा सकता है विशेषतया जब किसी पशु को किसी विशेष क्रिया के निष्पादन का प्रशिक्षण दिया जाता है। व्यक्ति सकेतों, चेतावनी और पूर्वसूचना आदि के प्रति क्लासिकी अनुबधन द्वारा ही अनुक्रिया करना सीख लेते हैं। क्लासिकी अनुबधन व्यक्ति के दैनिक जीवन मे होने वाले आकस्मिक अधिगम के लिए उत्तरदायी है। अभिवृत्तियो का विकास इसका एक उदाहरण है। प्रयोगो द्वारा स्पष्ट हुआ है कि लोगों मे कुछ विशेष भय क्लासिकी अनुबधन का ही परिणाम है। कोई व्यक्ति बाल्यावस्था मे घटित भयानक व दुखद अनुभव के कारण पानी व खून से भय को विकसित कर सकता है। डूबने का अन-अनुबधित भय शायद तब विकसित हुआ होगा जब जीवन मे बाल्यावस्था मे कोई व्यक्ति पानी के सरोवर मे गिर गया होगा, वही अब पानी का अनुबंधित भय बन गया। इसी प्रकार अनेको सवेगात्मक अनुक्रियाएँ जो शुरू मे अन-अनुबंधित उद्दीपन के प्रति की जाती है वे प्रायः अनुबधित उद्दीपन के प्रति भी हो जाती हैं।

(iii) नैमित्तिक अनुबंधन या क्रियाप्रसूतक अनुबंधन

क्लासिकी अनुबंधन वह प्रक्रिया है जिसमे उद्दीपन व्यक्ति पर क्रिया करते हैं और वह यन्त्रवत अनुक्रिया करता है। क्लासिकी अनुबंधन मे अनुक्रिया पूर्व तटस्थ उद्दीपन द्वारा उत्पन्न हो जाती है। यह एक निष्क्रिय प्रक्रिया है। क्लासिकी अनुबधन के विपरीत दूसरी प्रकार का अनुबधन जिसे नैमित्तिक अनुबधन कहा जाता है उसमे अनुक्रियाएँ व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित होती हैं। यह सक्रिय प्रक्रिया है जिसमे सीखनेवाला उद्दीपन के प्रति अनुक्रिया उस तरीके के अनुसार करता है जिससे उसकी अनुक्रियाएँ उद्दीपन को प्रभावित करती हैं।

अनुक्रिया पुरस्कार प्राप्ति व दण्ड से बचाव में निमित्त होती है

नैमित्तिक अनुबधन मे जीव वही अनुक्रिया करना सीखता है जो लक्ष्य का साधन है। अनुक्रिया पुरस्कार पाना अथवा सकारात्मक पुनर्बलन हो सकता है जैसे भोजन पाने के लिए उत्तोलक दबाना। अनुक्रिया किसी कष्टप्रद अनुभव से परिहार अथवा बचाव करने का साधन भी बन सकती है या नकारात्मक पुनर्बलन जैसे विद्युत के झटको से बचने के लिए धातु पटल से हट जाना।

नैमित्तिक अनुबधन में पुनर्बलित घटना अनुक्रिया पर अवलम्बित होती है जबकि क्लासिकी अनुबंधन मे ऐसा नही होता। नैमित्तिक अनुबधन मे पुनर्बलित करने वाली घटना अनुक्रिया का अनुसरण करती है। उदाहरण के लिए छोटा बच्चा किसी डिब्बे को देखता है जिसमें कुछ रखा है और खेल-खेल में वह अचानक

उसे खोल देता है और उसमें उसे चॉकलेट मिलती है जिसे वह खा लेता है। यहाँ पर अनुक्रिया (डिब्बा खोलना) पुनर्बलन देने वाली घटना (चॉकलेट खाना) से पहले होती है। इस उदाहरण में पुरस्कार अथवा प्रोत्साहन अनुक्रिया पर अवलम्बित है।

अधिगमित अनुक्रिया विशिष्ट उद्दीपन द्वारा उत्पन्न नहीं होती

नैमित्तिक अनुबंधन का अन्य लक्षण यह है कि सीखी जाने वाली अनुक्रिया किसी विशिष्ट उद्दीपन द्वारा उत्पन्न नहीं होती। यह अनुक्रिया विभिन्न अनुक्रियाओ में से एक संयोगवश होती है। नैमित्तिक अनुबंधन में जिन्हें पुनर्बलन द्वारा मजबूती मिलती है वे प्राणी द्वारा की गई प्राकृतिक अनुक्रियाएँ होती हैं लेकिन क्लासिकी अनुबंधन में अनुक्रिया विशिष्ट उद्दीपन द्वारा उत्पन्न होती है जो अ-अ-उ होता है। इस प्रकार उद्दीपन की प्रकृति बहुत सीमा तक सीखनेवाले की अनुक्रियाओं को निर्धारित करती है।

यह उल्लेखनीय है कि दोनो प्रकार के अनुबंधन एक साथ घटित हो सकते हैं और यहाँ तक कि एक दूसरे पर निर्भर हो सकते हैं। उदाहरणार्थ पैवलॉव द्वारा कुत्ते पर किए गए प्रयोग में लार-स्राव अनुक्रिया को क्लासिकी अनुबंधन में कुत्ता उस स्थान को भी पहचान सकता है जहाँ भोजन रखा जाएगा तथा यह अनुक्रिया भोजन खाकर पुनर्बलित की जा सकती है। बच्चे द्वारा डिब्बे के ढक्कन को खोलकर चॉकलेट प्राप्त करने के उदाहरण में अनुक्रिया को समान दिखनेवाले डिब्बे के साथ तथा डिब्बे के ढक्कन खोलने के उद्दीपनों के साथ क्लासिकी द्वारा अनुबंधित किया जा सकता है।

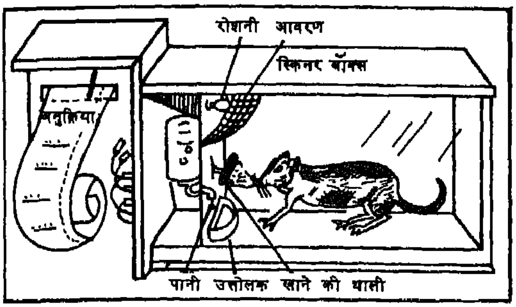
कुछ मनोवैज्ञानिक 'नैमित्तिक अनुबंधन' के स्थान पर 'क्रियाप्रसूत अनुबंधन' का इस्तेमाल इसलिए अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि वे इस तथ्य की ओर अधिक बल देते हैं कि सीखनेवाले की अनुक्रियाएँ पर्यावरण पर क्रियान्वित करके पुनर्बलन देने वाले परिणाम उत्पन्न करती हैं। वे अनुक्रियाएँ जो संयोगवश घटित हो जाती हैं किन्तु वे ज्ञात उद्दीपनों द्वारा कम से कम प्रशिक्षण के प्रारम्भ में उत्पन्न नहीं होतीं उन्हें क्रियाप्रसूतक कहा जाता है 'क्रियाप्रसूत' शब्द बी एफ स्किनर द्वारा अनुक्रियाकारी व्यवहार से विभेदित करने के लिए प्रस्तावित किया गया। अनुक्रियाकारी व्यवहार किसी विशिष्ट उद्दीपन जैसे प्रकाश के प्रति पुतलियों का संकुचन के प्रति अ-अ-अ है। अनुक्रियाकारी व्यवहार अनिवार्यतः अ-अ-उ के प्रति अ-अ-अ है। मानव का अधिकांश व्यवहार प्रकृति में क्रियाप्रसूत है। क्रियाप्रसूत को प्राणी द्वारा उत्पन्न किया हुआ कहा जाता है। प्राणी अपने संग्रह में विभिन्न मानों या विभिन्न संभावनाओं के साथ विभिन्न अनुक्रियाएँ उत्पन्न करते हैं। इस विभिन्न अनुक्रिया प्रवृत्तियों की सापेक्षिक तीव्रता इन अनुक्रियाओं के उत्सर्जन का अनुसरण करनेवाले पुनर्बलनों के प्रकार तथा आकार पर निर्भर करती है। अतः क्रियाप्रसूतक का अनुबंधन वही है जिसे नैमित्तिक अनुबंधन कहते हैं।

नैमित्तिक अनुबंधन के प्रकार

नैमित्तिक अनुबंधन के दो प्रकार हैं : (अ) नैमित्तिक पुरस्कार अनुबंधन, और (ब) नैमित्तिक विमुखी अनुबंधन।

(अ) *नैमित्तिक पुरस्कार अनुबंधन* : इस प्रकार के अनुबंधन में अनुक्रिया पुरस्कृत उद्दीपन के अनुसरण द्वारा मजबूत की जाती है। नैमित्तिक पुरस्कार अनुबंधन की प्रक्रिया को सामान्यतः स्किनर बॉक्स द्वारा स्पष्ट किया जाता है जिसका नाम इसके आविष्कारक स्किनर के नाम पर है जिन्होंने क्रियाप्रसूत अनुबंधन की बहुत सी प्रविधियाँ विकसित कीं। स्किनर बॉक्स में एक यन्त्र जैसे छड़ अथवा उत्तोलक होता है जिसे भोजन अथवा कोई अन्य पुरस्कार प्राप्ति हेतु पशु को चलाना पड़ता है। बॉक्स का भीतरी भाग समतल होता है केवल बाहर निकला हुआ उत्तोलक, छड़ और उसके नीचे भोजन होता है। उसमें एक

छोटा प्रकाश लैम्प लगा होता है जिसे प्रयोगकर्ता इच्छानुसार जला सकते हैं।



चित्र 5.2 स्किनर बॉक्स

जब बॉक्स मे भूखा चूहा रखा जाता है तो, प्रारंभिक निष्क्रियता काल के पश्चात् वह बेचैनी से इधर-उधर गति तथा बॉक्स मे खोज करना प्रारम्भ कर देता है अन्ततः चूहा छड़ को दबा देता है। भोजन की एक गोली तश्तरी मे गिरती है जिसे चूहा खा लेता है। इस उदाहरण में पुनर्बलन छड़ के दबाने पर अवलम्बित है। भोजन की उस गोली को खाने के बाद चूहा फिर से बॉक्स में कुछ खोजने में जुटा रहता है। कुछ देर पश्चात् वह दुबारा छड़ को दबा देता है और दुबारा उसे भोजन की गोली मिल जाती है। भोजन छड़ दबाने की क्रिया को पुनर्बलित करता है। और कुछ प्रयासों के बाद चूहा अधिक गति से उत्तोलक को दबाना शुरू कर देता है जिससे क्रियाप्रसूत व्यवहार मजबूत हो जाता है। उपरोक्त प्रयोग में चूहे द्वारा उस स्थिति मे उसी अनुक्रिया को करने की अधिक सम्भावना है जिससे उसे पहले पुरस्कार मिला था। यह उदाहरण सकारात्मक पुनर्बलन का है। भोजन सकारात्मक पुनर्बलन है जो निरन्तर छड़ को दबाने की अनुक्रिया को मजबूत करता है।

(ब) *नैमित्तिक विमुखी अनुबधन* : नकारात्मक पुनर्बलन का प्रयोग करके भी व्यवहार का अनुबंधन करना या उसे मजबूत करना संभव है। नकारात्मक पुनर्बलन के उदाहरण में सीखने वाले की अनुक्रिया किसी विमुखी उद्दीपन जैसे कष्ट, आघात अथवा दण्ड की समाप्ति अथवा परिहार के लिए प्रयत्न हो सकता है। अगर अनुक्रिया किसी विमुखी उद्दीपन के प्रत्याहार से पुनर्बलित होती है तो नैमित्तिक विमुखी अनुबंधन होता है जैसे स्किनर बॉक्स के तल की जाली से आघात ऐसे उद्दीपन का कार्य कर सकता है जिससे जानवर बचने की अनुक्रिया करना सीख लेता है। जब आघात दिया जाता है चूहा विभिन्न प्रकार से अनुक्रिया कर सकता है जैसे उछलना, दौड़ना, दुबकना इत्यादि। आघात तब तक जारी रहता है जब तक जानवर बॉक्स की दीवार पर लगी छड़ को नहीं दबाता जिसके परिणामस्वरूप आघात समाप्त हो जाता है। इस दशा मे आघात की समाप्ति प्रोत्साहन है। आघात को जब दोबारा शुरू किया जाता है चूहा दोबारा छड़ को दबाता है और आघात से बच जाता है। आघात से बचाव छड़ को दबाने का व्यवहार पुनर्बलित करता है तथा जैसे-जैसे प्रयास बढ़ते जाते हैं, चूहा आघात प्रारम्भ होते ही छड़ को दबाना सीख लेता है।

नैमित्तिक अनुबधन का महत्व

नैमित्तिक अनुबंधन मानव अधिगम में मुख्य भूमिका अदा करता है। व्यक्ति के विश्वास, रीतियाँ और अभिवृत्तियाँ नैमित्तिक अनुबंधन द्वारा सीखी जाती हैं। नैमित्तिक अनुबंधन को कभी-कभी व्यवहार को वाछनीय रूप देने के लिए सोच-समझकर प्रयुक्त किया जाता है। नैमित्तिक अनुबधन जिसमे सकारात्मक पुनर्बलन होते हैं बच्चो की व्यवहार सबधी व्याधियो के उपचार में महत्वपूर्ण है। कुछ सामान्य व्याधियाँ जिनका इस प्रकार उपचार किया जाता है वे हैं बदमिज़ाजी, शर्मीलापन, अत्यधिक आक्रामकता एवं अँगूठा चूसना। सामाजिक पुनर्बलन जैसे स्वीकृति अथवा अवधान सामाजिक मान्यता प्राप्त अनुक्रियाओ

सारणी 5.2

क्लासिकी और नैमित्तिक अनुबंधन में भेद

क्लासिकी	*नैमित्तिक*
(i) अनैच्छिक व्यवहार या प्रतिवर्त	(i) ऐच्छिक व्यवहार
(ii) उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया के बीच साहचर्य के निर्माण एवं मजबूती की प्रक्रिया यांत्रिक।	(ii) उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया के बीच साहचर्य के निर्माण एवं मजबूती की प्रक्रिया अयांत्रिक एवं ऐच्छिक।
(iii) उद्दीपन व्यक्ति पर कार्य करते हैं और व्यक्ति यंत्रवत अनुक्रिया करता है।	(iii) व्यक्ति द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अनुक्रिया का नियंत्रण।
(iv) निष्क्रिय प्रक्रिया	(iv) सक्रिय प्रक्रिया
(v) पुरस्कार अथवा पुनर्बलन अनुक्रिया से पूर्व आता है क्योंकि इसका उद्दीपन से साहचर्य होता है।	(v) पुनर्बलन अनुक्रिया का अनुसरण करता है क्योंकि यह अनुक्रिया के घटित होने पर अवलम्बित होता है।
(vi) अ-उ और अ-अ-उ साहचर्य उद्दीपनों के सान्निध्य पर निर्भर करता है।	(vi) अनुक्रिया को पुनर्बलित करने वाला उद्दीपन साहचर्य अनुक्रियात्मक परिणामों पर निर्भर करता है।
(vii) पशु अधिगम में आसानी से देखा जा सकता है।	(vii) मानव अधिगम में आसानी से देखा जा सकता है।

को मजबूत करती हैं। नकारात्मक सामाजिक पुनर्बलन जैसे बहिष्करण और एकान्तता के व्यवहार को परिष्कृत करने एवं अस्वीकृत अनुक्रियाओं का परिहार करने में प्रयुक्त होता है। क्लासिकी अनुबंधन और नैमित्तिक अनुबंधन के बीच भेद को सारणी 5.2 में सार रूप में प्रस्तुत किया गया है।

क्लासिकी और नैमित्तिक अनुबंधन में प्रयुक्त महत्वपूर्ण प्रत्यय

(क) *पुनर्बलन*

अ-अ-उ पुनर्बलन के रूप में कार्य करता है जब वह अ-उ तथा अ-अ के बीच के साहचर्य को मजबूत करता तथा पोषित करता है। *पुनर्बलन एक उद्दीपन है जो व्यवहार के घटित होने को मजबूत करता है अथवा पोषित करता है।* क्लासिकी अनुबंधन में अ-अ-उ सीखी जाने वाली अनुक्रिया उत्पन्न करता है तथा पुनर्बलन के रूप में भी कार्य करता है।

नैमित्तिक अनुबंधन में पुनर्बलन वह उद्दीपन अथवा उद्दीपन स्थिति है जो अपनी पूर्ववर्ती अनुक्रिया को मज़बूत करती है। नैमित्तिक अनुबंधन में पुनर्बलनों के कुछ उदाहरण हैं भूखे कुत्ते के लिए भोजन, बच्चे के लिए प्रशंसा, दण्ड अथवा कष्टदायक स्थिति से बचने का अवसर। यदि बच्चे किसी समस्या का समाधान सही रूप में कर लेते हैं और तुरन्त उन्हें अपने अध्यापक से प्रशंसा प्राप्त हो जाती है तो वे पहली

समस्या से मिलती जुलती समस्या का सही समाधान ढूँढ़ने के लिए उसी तरीके को दोहराएँगे। प्रशसा पुनर्बलन का कार्य करती है और अनुक्रिया के भविष्य में घटित होने की अधिक संभावना होती है।

(ख) *उद्दीपन सामान्यीकरण*

यह बात पायी गई है कि अगर अ-अ एक बार सीख ली जाती है तो जो अ-उ वास्तविक अ-उ से मिलती जुलती होती है उससे भी अ-अ होगी। ऐसा उद्दीपन सामान्यीकरण के कारण घटित होता है। पैवलॉव के प्रयोग द्वारा यह स्पष्ट हुआ कि कुत्ता जो घण्टी की आवाज पर लार-स्राव करने के लिए अनुबंधित किया गया तो वह गुंजक (बज़र) की आवाज अथवा गतिमापी (मीट्रोनोम) की आवाज पर भी लार-स्राव करेगा। कुत्ते ने उन उद्दीपनो के प्रति अ-अ को सामान्यीकृत कर लिया जो एकसमान थे लेकिन वही नहीं थे जिन पर उसे प्रारंभ मे अनुबंधित किया गया था।

ऐसी ही प्रक्रिया नैमित्तिक अनुबधन में भी पायी जाती है। मूल उद्दीपन से मिलते-जुलते अथवा समरूप उद्दीपनों द्वारा वही अनुक्रियाएँ हुईं जो मूल उद्दीपन प्रस्तुत करने पर हुई थी। उदाहरणार्थ जिस कबूतर ने भोजन का पुरस्कार पाने के लिए प्रकाशमान उद्दीपन को चोच मारना सीख लिया वह तब भी अनुक्रिया करेगा जब प्रकाश के रंगो का विचलन होगा। परन्तु यह अनुक्रिया वास्तविक उद्दीपन स्थिति की अपेक्षा कम मान पर होगी। अगर प्राणी मिलते-जुलते उद्दीपनो के लिए वही अनुक्रिया करता है तो यह कहा जाता है कि उद्दीपन सामान्यीकरण हुआ है किन्तु अनुक्रिया का मान मूल अनुबधन स्थिति एव नयी स्थिति के बीच समानता की मात्रा पर निर्भर करता है।

(ग) *विभेदीकरण*

जब किसी विशेष उद्दीपन के प्रति की गई सही अनुक्रिया को पुनर्बलित किया जाता है और अन्य सब उद्दीपनो के प्रति अनुक्रिया को प्रोत्साहित नही किया जाता तो विभेदीकृत अधिगम होता है। जब व्यक्ति दो या अधिक उद्दीपनो के लिए विभिन्न अनुक्रियाएँ करते हैं जो किसी प्रकार से एक जैसी होती हैं तो इसे विभेदीकरण व्यवहार का प्रदर्शन समझा जाता है। विभेदीकरण प्राप्ति की विधि है कि किसी एक उद्दीपन जिसे सकारात्मक उद्दीपन कहा जाता है, के प्रति अनुक्रियाओ को पुनर्बलित करना और अन्य उद्दीपन जिसे नकारात्मक उद्दीपन कहा जाता है, उसके प्रति की गई अनुक्रियाओं को पुनर्बलित करने से रोकना। विभेदीकृत अधिगम विभिन्न उद्दीपनो के प्रति की गई अनुक्रियाओ के विभेदित पुनर्बलन के फलस्वरूप होता है। दैनिक जीवन मे अनेकों उदाहरण ऐसे हैं जो व्यवहार के विभेदीकृत नियत्रण को इंगित करते हैं। उदाहरणार्थ हरी बत्ती होने पर ही सड़क पार करना, लाल बत्ती होने पर नही, घर एव विद्यालय मे भिन्न-भिन्न प्रकार से व्यवहार करना आदि विभेदीकृत व्यवहार को प्रदर्शित करते हैं।

(घ) *विलोपन*

पैवलॉव के प्रयोग मे हर बार जब घण्टी बजी कुत्ते को भोजन दिया गया। अ-अ (लार) प्राप्त करने के पश्चात् यदि अ-उ (घण्टी) को बार-बार बिना *अ-अ-उ (भोजन) के अनेक प्रयास* दिये जाते हैं तो धीरे-धीरे अनुबधित क्रिया कमजोर हो जाती है और विलुप्त हो जाती है। क्लासिकी अनुबधित अनुक्रिया के विलोपन का पुनर्बलन की अनुपस्थिति मे बार-बार होने वाली अ-अ की तीव्रता मे ह्रास से पारिभाषित किया जा सकता है। विलोपन अधिगम की वह प्रक्रिया है जो कि अनुबधन मे अर्जित अनुक्रिया को अवरुद्ध करती है।

इसी प्रकार की प्रक्रिया नैमित्तिक अनुबधन में भी घटित होती है यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि पुनर्बलन प्रत्येक अनुक्रिया का अनुसरण करे। नैमित्तिक अनुबंधन मे जब पुनर्बलन को सतत रूप से रोक दिया जाता है तो अनुक्रिया का मान गिर जाता है। स्किनर बॉक्स

के चूहे पर किए गए प्रयोग में यदि पुनर्बलन के रूप मे भोजन की गोली नहीं दी जाती तो छड़ दबाने की क्रिया अंततः विलुप्त हो जाएगी। इस स्थिति मे अनुक्रिया और अधिक पुनर्बलन नहीं देती तथा पुनर्बलन अनुक्रिया पर और अधिक अवलम्बित नही होता। किसी अनुक्रिया के विलोपन मे जो समय लगता है वह अभिप्रेरण, अन्य दशाएँ तथा पुनर्बलन की विधि के अनुसार विचलन करता है। जितना अधिक अनुबंधन मजबूत होगा उतना ही अनुक्रिया के विलोपन में कठिनाई होगी। जब सीखनेवाले की अनुक्रिया का ढंग पूरी तरह से अनुबधन से पूर्व के मूल स्तर पर वापिस पहुँच जाता है, तो अनुबधित व्यवहार का पूर्णरूपेण विलोपन माना जाता है।

(ङ) *स्वतः पुनर्प्राप्ति*

यह बात उल्लेखनीय है कि अनुबंधन की प्रणाली के दौरान जो भी सीखा जाता है उसे विलोपन प्रक्रिया हटाती नही है। यह मूल अ-अ को वास्तव मे हटाये बिना उस पर नया अधिगम अध्यारोपित करना होता है। यह तथ्य कि पहले वाले अनुबंधन की अपेक्षा दोबारा अनुबधन आसान होता है, इस तर्क का समर्थन करता है। इस दृग्विषय को पुनर्प्राप्ति की सज्ञा दी जाती है। अनेको प्रयोगो से यह स्पष्ट हुआ है कि जब समय अन्तराल के बाद विलोपन होने के बाद पशु को पुनः प्रायोगिक पर्यावरण मे लाया जाता है और उसे अ-उ दिया जाता है तो अ-अ स्वतः पुनः परिलक्षित होती है। अ-अ के इस तरह से स्वतः परिलक्षित हो जाने की प्रक्रिया ही 'स्वतः पुनर्प्राप्ति' कही जाती है। अनुक्रिया का परिमाण विलोपन से पूर्व की अनुक्रिया की तुलना में निर्बल अथवा कम तीव्र हो सकता है। पुनर्प्राप्ति का किसी भी रूप मे अस्तित्व यह इंगित करता है कि अनुबधित अनुक्रिया विलोपन के दौरान समाप्त नही हुई थी। पैवलॉव का दावा था कि ऐसा स्मृति चिन्हो क निर्माण के कारण हो सकता है जिससे पुनर्प्राप्ति सभव हुई।

(iv) **ज्ञानात्मक अधिगम**

सूचना सग्रह और प्रक्रम पर बल

अधिगम के जिन प्रकारो की अभी तक व्याख्या की जा चुकी है उनमे व्यवहार के सगठन और अधिगम की व्याख्या उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच साहचर्य के रूप मे की गयी है। किन्तु मानवीय अधिगम की अनेक स्थितियाँ ऐसी भी हैं जिनमे उद्दीपन एव अनुक्रिया के बीच साहचर्य के विशिष्ट प्रकार नही होते। अधिगम जिसमे उच्चतर मानसिक प्रक्रियाएँ सन्निहित होती हैं उसमे उद्दीपन-अनुक्रिया साहचर्य के स्पष्ट निर्माण अथवा पुनर्बलनो के परिचालन के बिना सूचना सग्रह और प्रक्रम पर बल दिया जाता है। इस प्रकार के अधिगम को सामान्यतः ज्ञानात्मक कहा जाता है।

प्रत्यक्षीकरण मे परिवर्तन

समस्या-समाधान एव तर्कणा जैसी उच्च मानसिक क्रियाओ मे न केवल उद्दीपन-अनुक्रिया साहचर्य का निर्माण सन्निहित होता है बल्कि सूचना के बहुत बड़े सचय का अधिग्रहण भी होता है। ऐसे उदाहरणो मे अधिगम को प्रत्यक्षीकरण मे परिवर्तन और दी गई स्थिति को व्यक्ति किस तरह से देखता है, के रूप मे समझा जाता है। नई सूचना सग्रह होती है और पुरानी सूचनाओं के अर्थ और साहचर्य पुराने अनुभवो के परिणामस्वरूप बदल जाते हैं। इसमे मानसिक प्रक्रियाओ पर बल दिया जाता है जहाँ उद्दीपन एक दूसरे से भिन्न प्रत्यक्षीकृत किए जाते हैं, ज्ञानात्मक अधिगम मे दिए गए दृग्विषय के अर्थ अथवा सार्थकता को बुद्धिमतापूर्वक ग्रहण करना होता है।

ज्ञानात्मक मानचित्रो का निर्माण

जैसे-जैसे अधिगम स्थिति जटिल होती जाती है वैसे-वैसे अनुक्रियाएँ यात्रिक रूप से उत्पन्न होने की अपेक्षा अंतर्निहित मानसिक प्रक्रियाओ अथवा ज्ञानात्मक मानचित्रों से प्रभावित होती हैं। व्यक्ति अपने निजी अनुभवो के सबंध मे समस्या के समाधान

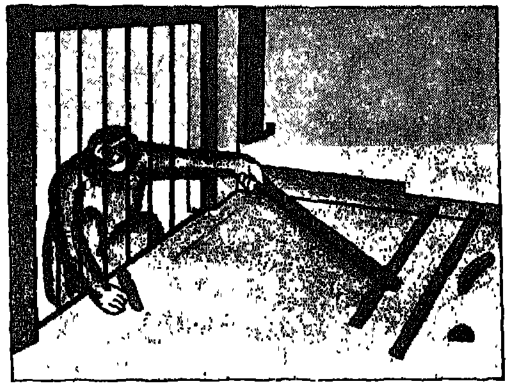
हेतु मानसिक चित्र अथवा ज्ञानात्मक मानचित्र बनाते हैं। भूल-भुलैया में चूहे का व्यवहार जिसमें भोजन प्राप्ति हेतु एक निश्चित क्रम में गत्यात्मक अनुक्रिया सम्मिलित थी, की उद्दीपन अनुक्रिया साहचर्य के रूप में व्याख्या की जा सकती है। इसमें गतियाँ अधिगमित व्यवहार मानी जा सकती हैं। परंतु ज्ञानात्मक अधिगम के संदर्भ में चूहा यह सीखता है कि भोजन कहाँ है और वहाँ कैसे पहुँचे, न कि उसमें सन्निहित गत्यात्मक अनुक्रियाओं का विशिष्ट क्रम।

ज्ञानात्मक अधिगम के प्रकार

ज्ञानात्मक अधिगम दो प्रकार का होता हैः (अ) अनुकरण, और (ब) अंतर्दृष्टि अधिगम।

(अ) *अनुकरण* : एक प्रकार का ज्ञानात्मक अधिगम दूसरे व्यक्ति का अनुकरण करना है। सामाजिक समूह का भाग बनने के लिए व्यक्ति प्रायः अपने आस-पास के लोगों का अनुकरण करते हैं। वे दूसरे को देखते हैं, सुनते हैं, कुछ करते हैं और फिर उसके व्यवहार की नकल करने का प्रयास करते हैं। मानव अपनी अनेकों विशेषताएँ इसी प्रकार अर्जित करता है।

(ब) *अंतर्दृष्टि अधिगम* : ज्ञानात्मक अधिगम का दूसरा प्रकार अंतर्दृष्टि अधिगम है। अंतर्दृष्टि को सीखनेवाले, लक्ष्य तथा मध्यवर्ती बाधाओं के बीच संबंध को एकाएक प्रत्यक्षीकरण के रूप में पारिभाषित किया गया है। अंतर्दृष्टि तब होती है जब सीखनेवाला एकाएक संबंधों और कार्य में सन्निहित सार्थक साहचर्यों को देख लेता है और समस्या को तुरन्त हल कर लेता है। यद्यपि अंतर्दृष्टि एकाएक होती है यह साधारणतया लक्ष्य की ओर अधिक अथवा कम क्रमिक विकास, वृद्धि अथवा अवगमन होता है। सामान्यतः अंतर्दृष्टि एकाएक विकसित होती है। व्यक्ति पूर्व अनुभवों के परिणामस्वरूप समस्या के बारे में पहले से कुछ परिचय प्राप्त कर चुके होते हैं। अतर्दृष्टि अधिगम पर अनेक प्रयोग किए गए हैं। इनमें से सबसे आसान प्रयोग में वनमानुष को छड़ी द्वारा भोजन तक पहुँचना होता है जब वह उसे हाथ से प्राप्त नहीं कर सकता है और कमरे में छड़ी के अलावा अन्य कुछ भी उपलब्ध नहीं है।



चित्र 5.3 अंतर्दृष्टि अधिगम

अधिगम का स्थानान्तरण

अधिगम का स्थानान्तरण सीखे हुए ज्ञान, कौशलों, आदतों, अभिवृत्तियों अथवा अनुक्रियाओं को एक अधिगम स्थिति से जिसमें वे शुरू में अर्जित किए गए थे, दूसरी अधिगम स्थिति में व्यवहृत करने अथवा ले जाने की प्रक्रिया है। इसका तात्पर्य है कि एक कार्य का अनुभव अथवा निष्पादन बाद के कार्यों के निष्पादन को प्रभावित करता है। इससे संकेत मिलता है कि व्यक्ति जो कार्य एक स्थिति में सीखता है वह दूसरी स्थितियों को प्रभावित करता है। अधिगम स्थानान्तरण मानव जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण है। व्यक्ति की वस्तुओं को पहचानने की योग्यता, संबंधों का प्रत्यक्षीकरण और दैनिक जीवन में सामना किए गए अनुभवों को प्रत्यक्षात्मक रूप देने की योग्यता अधिगम स्थानान्तरण द्वारा सुसाध्य हो जाती है। सभी क्रियाओं को सीखना असंभव होता यदि अधिगम स्थानान्तरण की प्रक्रिया व्यक्ति को एक अधिगम स्थिति से दूसरों में सफलतापूर्वक उन्नति करने योग्य न बनाती।

इससे एक स्थिति दूसरी के लिए सोपान का पत्थर बनकर व्यक्ति को जो कुछ वह जानता है, उस पर नव निर्माण करने में मदद करती है। स्थानान्तरण का प्रभाव न केवल व्यक्ति के बौद्धिक एवं जटिल गत्यात्मक कौशलों में पाया जाता है बल्कि संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं और अभिवृत्तियों पर भी पड़ता है।

अधिगम स्थानान्तरण के प्रकार

प्रशिक्षण का स्थानान्तरण अधिगम को तीन प्रकार से प्रभावित करता है : (अ) सकारात्मक, (ब) नकारात्मक, और (स) शून्य।

(अ) *सकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण :* जब एक सीखी गई क्रिया दूसरी सीखी जाने वाली क्रिया को सीखने में सहायता पहुँचाती है तो इसे सकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण कहते हैं। इसमें एक कार्य का निष्पादन दूसरे कार्य के निष्पादन में सहायता करता है अथवा उसे सुसाध्य बनाता है। व्यक्ति ने एक पाठ्यक्रम, विषय, अथवा कार्य में जो सीखा है वह दूसरे पाठ्यक्रम अथवा कार्य के अधिगम को सुसाध्य बनाता है। सकारात्मक स्थानान्तरण में ज्ञान या कौशल का पूर्वविशिष्ट भावी अधिगम में लाभप्रद होता है।

सकारात्मक स्थानान्तरण विभिन्न स्थितियों में घटित होता है। उदाहरणार्थ 'मकान' शब्द का उच्चारण सीखते समय बच्चे स्वरविज्ञान के कुछ नियम व्यवहृत करना सीखते हैं और 'कमान' का सही उच्चारण बिना 'कमान' शब्द सिखाये हुए आसानी से सही-सही करते हैं। इसी तरह से साइकिल चलाने का कौशल मोटर साइकिल चलाना सीखने को सुसाध्य बनाता है। जोड़ एवं घटाव के नियमों को सीखने पर अपने पैसों को गिनने एवं बाजार में खरीदारी करने पर शेष रही रकम का मिलान करने मे आसानी रहती है। कार चलाना सीखने से ट्रक या बस चलाने में आसानी होती है। यदि किसी ने हिन्दी बोलना सीख लिया है तो उसे उर्दू बोलने में आसानी होती है। इन सबमें पहले के अधिगम अनुभव बाद के अधिगम को सुसाध्य बनाते हैं।

एक क्रिया से दूसरी क्रिया में स्थानान्तरण पहले एवं बाद में सीखी जाने वाली क्रिया के उद्दीपन एवं अनुक्रिया के तत्वों पर निर्भर करता है। सकारात्मक स्थानान्तरण दो कार्यों अथवा अधिगम स्थितियों से अपेक्षित अनुक्रियाओं की समानता होने पर घटित होता है। जब दो कार्यों मे उद्दीपन के प्रति एक ही या एक जैसी अनुक्रिया अपेक्षित होती है चाहे दो स्थितियों में उद्दीपन भिन्न हो, सकारात्मक स्थानान्तरण होता है। किन्तु सकारात्मक स्थानान्तरण तब पाया जाता है जब पहले के अधिगम तथा नए अधिगम की स्थितियों में उद्दीपनों एवं अनुक्रिया के तत्व एकसमान हों। इस तरह की स्थिति उन निश्चित अधिगम स्थितियों में होती है जहाँ बारम्बारता घटित होती है। उदाहरणार्थ $5 \times 8 = 40$ का उद्दीपन अनुक्रिया सबंध का अधिगम भविष्य में अन्य समान कार्य जैसे $8 \times 5 = 40$ को बहुत सुसाध्य बनाता है। इस उदाहरण में अनुक्रिया सबंध के तत्वों के बीच समानता है।

(ब) *नकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण :* ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमें पहले वाला अधिगम बाद में सीखी जाने वाली क्रिया में हस्तक्षेप करता है। इस तरह के उदाहरणों में एक विषय अथवा कार्य के ज्ञान का पूर्वविशिष्ट आगे आने वाले अधिगम में हस्तक्षेप अथवा बाधा पहुँचाता है। जब पहले सीखी क्रिया बाद में सीखी जाने वाली क्रिया के लिए बाधा उत्पन्न करती है अथवा बाद के अधिगम मे हस्तक्षेप पहुँचाती है तो नकारात्मक स्थानान्तरण होता है। नकारात्मक स्थानान्तरण के फलस्वरूप किसी कार्य का निष्पादन बाद मे आने वाले कार्य के निष्पादन में अवरोध या विघटन कर सकता है। उदाहरणार्थ बच्चे द्वारा 'कन्या' का बहुवचन 'कन्याएँ' के अधिगम का अनुभव 'गुड़िया' के बहुवचन के उच्चारण मे बाधा उपस्थित करेगा। यदि वे अपना 'कन्या' के बहुवचन 'कन्याएँ' का ज्ञान 'गुड़िया' के बहुवचन में लगाकर 'गुड़ियाँ' के स्थान पर 'गुड़ियाएँ' बना दें तो ग़लत हो जाएगा। इसी प्रकार

बच्चे जिन्होंने 'लता', 'बाला' और 'सभा' के बहुवचन 'लताएँ'; 'बालाएँ' और 'सभाएँ' सीखे हैं यदि अपना यह ज्ञान 'लड़का', 'मुर्गा' और 'घोड़ा' आदि के बहुवचन बनाने में व्यवहृत करते हैं तो बच्चे 'लड़के' के स्थान पर 'लड़काएँ' शब्द का उच्चारण करेंगे।

नकारात्मक स्थानान्तरण प्रायः तब होता है जब पहले सीखे गए कार्य तथा नए कार्य के उद्दीपन वही अथवा तुलनात्मक होते हैं लेकिन अनुक्रियाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। नकारात्मक अधिगम तब होता है जब समान उद्दीपन विभिन्न अनुक्रियाओं की अपेक्षा करते हैं। इस प्रकार की स्थिति के अनेक उदाहरण हिन्दी शब्दों में मिल जाते हैं। ऐसे कुछ उदाहरण छोटी कक्षाओं में हिन्दी भाषा सीखते समय आपके सामने आए होंगे जैसे पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाते समय, कुछ उदाहरण जैसे 'लड़का', 'देव', 'पुत्र', 'दादा' के स्त्रीलिंग का अधिगम 'बाबू', 'ठाकुर', 'लेखक', 'शिष्य' इत्यादि के स्त्रीलिंग में अवरोध उत्पन्न करता है। इसी प्रकार पूर्व अधिगम और उद्दीपन तथा अनुक्रिया के बीच पूर्व साहचर्य नए उद्दीपन के अधिगम मे हस्तक्षेप करते हैं।

(स) *अधिगम का शून्य स्थानान्तरण* : कुछ उदाहरण ऐसे भी पाए जाते हैं जहाँ पहले से सीखे गए कार्य का बाद में सीखे जाने वाले कार्य की योग्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जब पहले सीखी क्रिया बाद में सीखी जाने वाली क्रिया पर कोई प्रभाव न डाले तो इसे 'शून्य स्थानान्तरण' कहा जाता है। इस तरह के उदाहरणों मे नई स्थिति को पूर्व अधिगम से न तो सहायता ही मिलती है न ही अवरोध पैदा होता है। शून्य स्थानान्तरण का उदाहरण तब देखने को मिलता है, जब व्यक्ति तथ्य या सिद्धांत सीखते हैं जो आगे आने वाले अनुभवो मे व्यवहृत नहीं हो सकते। इतिहास अथवा भाषा सीखने से अपनी सस्कृति को समझने मे सहायता हो सकती है, पर गणित के सीखने पर इसका प्रभाव नगण्य है। इसी तरह से फुटबॉल खेलने में अपने कौशलो में सुधार लाने का निबन्ध लिखने के कौशल के सुधार मे किसी भी तरह का प्रभाव नहीं होगा। टंकण अधिगम चित्रकारी अधिगम को प्रभावित नही करेगा शायद सिवाय इसके कि टंकण अधिगम के प्रयत्न मे जो समय व्यतीत हुआ वह चित्रकारी बनाने पर लगाया जा सकता था। शून्य स्थानान्तरण तब भी हो सकता है जब किसी कार्य के अधिगम के सकारात्मक एवं नकारात्मक स्थानान्तरण का प्रभाव दूसरे कार्य के अधिगम पर समान रूप से पड़ रहा हो जिससे एक दूसरे का प्रभाव निरस्त हो जाता है। जब पूर्व एव नवीन अधिगम स्थितियो के उद्दीपन एवं अनुक्रियाएँ असमान अथवा पूर्णतया भिन्न होती है तो बहुत कम या शून्य स्थानान्तरण होता है। उदाहरणार्थ अंकों के जोड़ के अधिगम का शायद शब्दों के अक्षर ज्ञान पर कोई प्रभाव नही होता। इस बात का अधिगम कि 10+15 = 25 होता है 'कमल' शब्द के अक्षर ज्ञान को न तो सुसाध्य बनाता है न अवरोध करता है।

अनेको स्थितियो में एक कार्य के अधिगम से दूसरे कार्य के अधिगम में स्थानान्तरण सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो होता है। किस एक क्रिया से दूसरे पर अन्ततः सकारात्मक या नकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण हुआ है, यह दोनो के कुल प्रभाव पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए बैडमिंटन के खेल में अनेकों कौशल ऐसे हैं जो बॉल बैडमिंटन के समान होते हैं। बैडमिंटन खेलने के ये कौशल व्यक्ति को बॉल बैडमिंटन खेलने में सहायता कर सकते हैं। लेकिन अनेक ऐसे कौशल एवं अभ्यास हैं जो कि बॉल बैडमिंटन खेलना सीखने मे बाधा या अवरोध उत्पन्न करेंगे। किस मात्रा तक व्यक्ति बॉल बैडमिंटन के खेलने में उन्नति करेगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि दोनो खेलो मे कुल कितना सकारात्मक व नकारात्मक स्थानान्तरण के पक्षो का प्रभाव पड़ा। उसी प्रकार गाड़ी को बाएँ तरफ से चलाने का अनुभव दाहिनी ओर से गाड़ी चलाने के कौशल को प्रभावित कर सकता है, यद्यपि चलाने के बहुत से पहलुओ मे अनेको समानताएँ होती है। उसी प्रकार एक व्यक्ति

जिसे भारत में कार चलाने का अनुभव है, जहाँ पर गड़ियाँ सड़क के बाईं ओर चलती हैं उसे अमरीका में कार चलाने में कठिनाई होगी जहाँ गड़ियाँ सड़क के दाहिनी ओर चलती हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि सड़क पर बाईं ओर गाड़ी चलाने की आदत स्थापित हो चुकी है। इन सब स्थितियों में पूर्व अधिगमित क्रिया अथवा अनुक्रिया करने के ढंग बाद में सीखे जाने वाले कार्यों के कौशलों को किसी न किसी ढंग से प्रभावित करते हैं।

अधिगम को प्रभावित करने वाले घटक

अनेक कारक ऐसे हैं जो कौशल के अधिग्रहण तथा दक्षता पूर्ण सीखने में योगदान करते हैं। कुछ महत्वपूर्ण कारक जिनकी विवेचना नीचे दी गयी है वे हैं : (क) पुनर्निवेशन, (ख) अभ्यास का वितरण, (ग) पूर्ण एवं आंशिक अधिगम, (घ) अर्थपूर्णता, (ङ) अभिरुचि एवं अभिवृत्ति, तथा (च) अभिप्रेरण

(क) *पुनर्निवेशन*

एक महत्वपूर्ण कारक जिससे किसी विशेष कसौटी तक कौशल के अधिग्रहण में सुसाध्यता होती है परिणाम का ज्ञान अथवा पुनर्निवेशन है। जब सीखने वाले को उसके निष्पादन के परिणाम का ज्ञान हो तो अधिगम की कुशलता बढ़ जाती है। गत्यात्मक और शाब्दिक अधिगम में प्रत्येक प्रयास के निष्पादन का ज्ञान सीखनेवालों को यह जानने में सहायता करता है कि उनसे कहाँ गलती हुई और वे अपना व्यवहार वैसे ही समायोजित कर लेते हैं। इससे उन्हें यह भी सहायता मिलती है कि वे अगले प्रयास में अपने कार्य की दिशा-गलतियाँ कम करने की तथा कौशल में सुस्पष्टता बढ़ाने की ओर प्रयत्न करें।

परिणामों की जानकारी की आवृत्ति यदि अधिक हो जैसे संभवतः हर पग पर हो तो व्यक्ति को क्रिया के सीखने में सहायता मिलती है। परिणाम की जानकारी विशेषतया जब वह अनुकूल होती है अधिगम को पुनर्बलित करती है। यह सीखनेवाले को उस क्षमता के स्तर के बारे में जो उसने उस कार्य में प्राप्त किया है, सूचना देता है। इससे आगे सीखने के अभिप्रेरण में सुधार होता है।

(ख) *अभ्यास का वितरण*

दूसरा कारक जो अधिगम कुशलता को निर्धारित करता है वह तरीका है जिससे अभ्यास के समय को वितरित किया जाता है। अभ्यास सत्र की लम्बाई और विश्राम समय का वितरण बहुत सीमा तक अधिगम की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। यह पाया गया है कि गत्यात्मक कौशलों के बहुत से प्रकारों में अभ्यास तब अधिक प्रभावी होता है जब उसमें संक्षिप्त तथा विवेकपूर्ण वितरित विश्राम समय हो। यह निरन्तर या इकट्ठे अभ्यास की अपेक्षा तीव्र अधिगम की ओर अग्रसर करता है। किन्तु अभ्यास का समय लम्बी अवधि का होना चाहिए। बैडमिंटन के खेल में निरन्तर तीन घंटे के खेल की अपेक्षा तीन एक एक घंटे के सत्र जिनमें कुछ अन्तराल दिया गया हो, से कौशलों का अधिग्रहण सुधर सकता है। इसी प्रकार शाब्दिक अधिगम भी वितरित अभ्यास से लाभान्वित होता है। किन्तु अभ्यास काल अत्यन्त छोटे नहीं होने चाहिए क्योंकि इससे कार्य छोटे तथा अर्थहीन भागों में बँट जाएगा।

(ग) *पूर्ण व आंशिक अधिगम*

एक अन्य कारक जो अधिगम की कुशलता को निर्धारित करता है वह विषयवस्तु अधिगम की विधि है। पूर्ण अधिगम विशेषकर तेज़ सीखनेवालों के लिए अधिगम की एक कुशल विधि समझी जाती है। किन्तु यह सामग्री की लम्बाई पर निर्भर करता है। छोटी तथा अर्थपूर्ण सामग्री को पूर्ण रूप से आसानी से सीखा तथा स्मरण किया जा सकता है। आंशिक अधिगम से सामग्री की निरन्तरता और अर्थ प्रायः खो जाता है। किन्तु जब विषय वस्तु बहुत लम्बी है तो पहले खंडों में और बाद में एक साथ सीखी जा सकती है।

(घ) *अर्थपूर्णता*

एक और कारक जो अधिगम की कुशलता में योगदान करता है वह सीखे जाने वाली सामग्री की अर्थपूर्णता और सार्थकता है। यदि सीखी जाने वाली सामग्री अर्थपूर्ण एवं सार्थक है तो अधिगम का मान बढ़ जाता है। सामग्री जितनी अधिक अर्थपूर्ण होगी उसको सीखने मे उतने ही कम प्रयास अथवा अभ्यास सत्रों की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ व्यक्ति अर्थहीन अक्षरों की सूची की अपेक्षा समान लम्बाई वाली उस कविता को जल्दी याद कर लेता है जो अर्थपूर्ण है।

(ङ) *अभिरुचि एवं अभिवृत्ति*

वह व्यक्ति अधिक तेजी से सीखेगा जो सीखे जाने वाले कार्य में अथवा अर्जित किये जाने वाले कौशलो के प्रति अभिरुचि रखता हो। प्रभावपूर्ण अधिगम का एक महत्वपूर्ण निर्धारक व्यक्ति की सीखी जाने वाली सामग्री के प्रति अभिवृत्ति है। अगर व्यक्ति इस बात को समझ जाते हैं कि किसी कार्य का सीखना उनके लक्ष्यो की प्राप्ति से संबंधित है तो उस सामग्री के अधिगम के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति विकसित कर लेते हैं और उसे सीखने एव याद करने के लिए और अधिक प्रयास करेंगे। जब वे यह अनुभव करते हैं कि अधिगम से कुछ भी उपयोगी परिणाम नही निकलने वाला तो अधिगम का मान प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है।

(च) *अभिप्रेरण*

अधिगम सीखनेवाले के अभिप्रेरण से प्रभावित होता है। *अभिप्रेरण व्यक्ति की वह आन्तरिक स्थिति है जो व्यवहार को किसी लक्ष्य की ओर ले जाती है* । अन्तर्नोद की दिशा निर्देश करनेवाले तथा शक्ति देने वाले गुण अधिगम मे प्रभावशाली भूमिका निभाते हैं। अधिक अभिप्रेरित सीखनेवाले में कम अभिप्रेरित सीखनेवाले की अपेक्षा अधिक अनुक्रिया करने की प्रवृत्ति होगी। उदाहरणार्थ जब स्किनर के बॉक्स के चूहे वाले प्रयोग मे पेट भरे हुए चूहे को रखा जाता है तो अधिगम नहीं होगा क्योकि कोई क्रिया उत्पन्न नही होगी। अधिगम प्रक्रिया में पुनर्बलन एक अभिप्रेरण की भाँति कार्य करता है। पुनर्बलन एवं अभिप्रेरण दोनों का एक दूसरे से घनिष्ठ संबंध है। पुनर्बलन तभी प्रभावकारी होता है जब सीखनेवाला उस पुनर्बलन के लिए अभिप्रेरित है। अभिप्रेरित व्यक्ति उस व्यक्ति की अपेक्षा अधिक शीघ्र सीखते हैं जो अभिप्रेरित नहीं होते। सार्थक अभिप्रेरकों मे सामान्य एव विशिष्ट दोनों श्रेणियों के अभिप्रेरक होते हैं। सीखने की इच्छा और उपलब्धि की आवश्यकता सामान्य अभिप्रेरक हैं जबकि किसी विशेष पुरस्कार की इच्छा अथवा किसी भयात्मक दण्ड से बचाव विशिष्ट अभिप्रेरक हैं। अभिप्रेरक जो बहुत ही तीव्र होता है विशेषकर जब वह पीड़ा, भय अथवा दुश्चिन्ता द्वारा उत्पन्न होता है सामान्यतः विकर्षित संवेगात्मक स्थिति के साथ होता है। अतः कुछ प्रकार के कार्यों के अधिगम में विशेषकर जिनमे कठिन विभेदीकरण करने की आवश्यकता है उनमें अत्यधिक अभिप्रेरण मध्यम अभिप्रेरण की अपेक्षा कम प्रभावशाली हो सकता है।

अधिगम बाह्य अभिप्रेरण की अपेक्षा अन्तरस्थ अभिप्रेरण में अधिक कुशलतापूर्वक होता है। अभिप्रेरण तब अन्तरस्थ होता है जब सीखनेवाले किसी क्रिया को ही स्व-पुरस्कार समझ लेते हैं। वे उस कार्य को इसलिए करते हैं क्योंकि उसे करने से उन्हें सन्तुष्टि मिलती है। बाह्य अभिप्रेरण में पुरस्कार व्यक्ति तथा क्रिया के बाहर होता है। जो बच्चे छात्रवृत्ति पाने के लिए पढ़ते हैं वह बाह्य अभिप्रेरण का उदाहरण है। वे इस क्रिया को केवल बाह्य पुरस्कार प्राप्त करने के लिए करते हैं।

सारांश

अधिगम एक प्रक्रिया है जिसमें अभ्यास अथवा अनुभव के परिणामस्वरूप व्यवहार मे सापेक्षतः स्थाई परिवर्तन अथवा परिष्करण होता है। यह क्रमिक तथा सतत प्रक्रिया है। कौशल सीखने के लिए एक विशेष स्तर के परिपक्वन की आवश्यकता होती है। किसी कौशल का निष्पादन अभ्यास से सुधारा जाता है। कौशल निष्पादन की परिशुद्धता की दिशा में व्यवहार वृत्ति है। गत्यात्मक कौशल अधिगम के वे प्रकार है जिनमे प्रमुख रूप से मांसपेशियों का प्रयोग होता है। शब्द एव प्रतीकों के अधिगम कौशलों को शाब्दिक कौशल कहते हैं। बच्चे वस्तुओं एवं व्यक्तियों को नाम देकर प्रत्यय अधिगम करते हैं। प्रत्ययों की सहायता से वे समस्याओं का समाधान करना सीखते हैं। उद्दीपनों के संपर्क में आने की प्रक्रिया के दौरान बच्चे वस्तुओं, घटनाओ एवं व्यक्तियों के प्रति अभिवृत्तियो को सीखते हैं। अधिगम की मात्रा को अधिगम वक्र द्वारा मापन एवं प्रदर्शित किया जा सकता है। अधिगम के महत्वपूर्ण प्रकार प्रयास एवं त्रुटि अधिगम, क्लासिकी अनुबंधन, नैमित्तिक अनुबंधन और ज्ञानात्मक अधिगम हैं। जानवर तथा मनुष्य कुछ क्रियाएँ प्रयत्न एवं त्रुटि अधिगम द्वारा सीखते हैं। क्लासिकी अनुबंधन एक प्रकार से साहचर्यात्मक अधिगम है जिसमे एक उद्दीपन से दूसरे उद्दीपन का प्रतिस्थापन व साहचर्य होता है। नैमित्तिक अथवा क्रिया प्रसूत अनुबंधन मे अनुक्रिया पुरस्कार प्राप्ति व दण्ड से बचाव के लिए निमित्त के रूप में कार्य करती है। पुनर्बलन, उद्दीपन सामान्यीकरण, विभेदीकरण, विलोपन और स्वतः पुनर्प्राप्ति कुछ महत्वपूर्ण शब्द हैं जो क्लासिकी तथा नैमित्तिक अनुबंधन में प्रयुक्त किये जाते हैं। ज्ञानात्मक अधिगम मे सूचना संग्रह और उस पर कार्यवाही, प्रत्यक्षीकरण मे परिवर्तन और ज्ञानात्मक मानचित्रों के निर्माण पर बल दिया गया है। अनुकरण व अन्तर्दृष्टि अधिगम ज्ञानात्मक अधिगम के दो प्रकार हैं।

अधिगम के स्थानान्तरण में ज्ञान, कौशलो, आदतों, अभिवृत्तियों अथवा दूसरी अनुक्रियाओ को एक अधिगम स्थिति से दूसरी अधिगम स्थिति में व्यवहृत करना अथवा पूर्वाविशिष्ट करने की प्रक्रिया है। सकारात्मक, नकारात्मक व शून्य, अधिगम स्थानान्तरण के तीन प्रकार हैं। पुनर्निवेशन, अभ्यास का वितरण, पूर्ण एव आंशिक अधिगम, अर्थपूर्णता, अभिरुचि एवं अभिवृत्ति और अभिप्रेरण कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं जो अधिगम को प्रभावित करते है।

प्रश्न

1. अधिगम की परिभाषा एवं प्रक्रिया की विवेचना करिए।
2. हम गत्यात्मक व शाब्दिक कौशल कैसे अर्जित करते हैं? व्याख्या करिए।
3. एक अधिगम वक्र बनाइए और उसकी विभिन्न अवस्थाओं की व्याख्या कीजिए।
4. प्रयास एवं त्रुटि द्वारा अधिगम की व्याख्या कीजिए। प्रयास एव त्रुटि अधिगम का एक उदाहरण दीजिए।
5. क्लासिकी अनुबंधन द्वारा किस प्रकार अधिगम होता है? सोदाहरण व्याख्या करिए।
6. नैमित्तिक अनुबंधन की व्याख्या कीजिए। नैमित्तिक अनुबंधन का हमारे दैनिक जीवन मे क्या महत्व है?
7. ज्ञानात्मक अधिगम के स्वरूप की व्याख्या कीजिए। अंतर्दृष्टि द्वारा सीखने की व्याख्या कीजिए। अंतर्दृष्टि अधिगम का एक उदाहरण दीजिए।
8. अधिगम स्थानांतरण की परिभाषा दीजिए। सकारात्मक, नकारात्मक एवं शून्य स्थानांतरण का विभेद कीजिए।
9. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
10. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
    (क) अधिगम एवं परिपक्वन
    (ख) अधिगम एवं निष्पादन
    (ग) प्रत्यय अधिगम और समस्या समाधान
    (घ) अभिवृत्ति अधिगम

(ङ) क्लासिकी अनुबंधन की सार्थकता

(च) क्लासिकी व नैमित्तिक अनुबंधन मे भेद

(छ) पुनर्बलन

(ज) उद्दीपन सामान्यीकरण और विभेदीकरण

(झ) विलोपन और स्वतः पुनर्प्राप्ति

11. सही विकल्प पर यह निशान (√) लगाइए। प्रयास एवं त्रुटि अधिगम का प्रवर्तन इन्होने किया

(अ) वर्दाइमर

(ब) थॉर्नडाइक

(स) वाट्सन

(द) एबिंगहॉस

12. कबूतर को हरी बत्ती होने पर चोच मारना सिखाया गया अब वह हर प्रकाशित बिन्दु पर चोंच मारता है यह इसका उदाहरण है

(अ) उद्दीपन सामान्यीकरण

(ब) अनुक्रिया सामान्यीकरण

(स) सामान्यीकरण प्रवणता

(द) विभेदीकरण

13. विलोपन के कुछ समय अंतराल के पश्चात् अनुबंधित अनुक्रिया की वापसी को यह कहते है

(अ) प्रत्यभिज्ञा

(ब) साहचर्य

(स) पुनः प्रचलन

(द) स्वतः पुनर्प्राप्ति

14. जिस व्यक्ति ने साइकिल चलाना सीख रखा है, वह स्कूटर को थोड़ी सी दिक्कत से ही चलाना सीख जाता है इस दृग्विषय को यह कहते हैं

(अ) रटा रटाया अधिगम

(ब) अति अधिगम

(स) यान्त्रिक अधिगम

(द) अधिगम स्थानांतरण

15. बैडमिंटन के खेल मे सुधार के लिए हारमोनियम बजाने के ज्ञान का कोई प्रभाव नही पड़ता, यह इस बात का उदाहरण है

(अ) द्विपक्षीय स्थानांतरण

(ब) एकपक्षीय स्थानांतरण

(स)✓ शून्य स्थानांतरण

(द) नकारात्मक स्थानांतरण

एकक 6

स्मृति

इस एकक को पढ़नें के बाद विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- स्मृति की प्रक्रिया की व्याख्या कर सकें;
- संवेदी स्मृति, अल्पकालीन स्मृति और दीर्घकालीन स्मृति की विशेषताओं का वर्णन कर सकें;
- धारण के मापन की विधियों का वर्णन कर सकें;
- विस्मृति के प्रत्यय की व्याख्या कर सके;
- विस्मृति के विभिन्न सिद्धान्तो का वर्णन कर सकें;
- स्मृति को प्रभावित करनेवाले कारको का वर्णन कर सकें;
- अपनी स्मृति को सुधार सकें।

कभी-कभी हम सब ऐसे अनुभवो से होकर गुज़रे हैं कि परीक्षा के लिए भली-भाँति तैयार होने पर भी हमारा पर्चा बिगड़ गया हो। यद्यपि विषय को अच्छी तरह सीखा गया किन्तु जब इसकी आवश्यकता हुई तो वह हमें भूल गया। हम सभी जानते हैं कि अधिगम सापेक्षतः कठिन कार्य है जबकि विस्मृति सरल है। जब व्यक्ति कुछ सीखते हैं इसका अभिप्राय होता है कि उनके अभ्यास अथवा अनुभव द्वारा उनके व्यवहार मे सापेक्षतः स्थाई परिवर्तन अथवा परिष्करण हो चुका है।

जब हम पूर्व अधिगमित सूचना, घटनाओ या कौशलों का पुनःस्मरण करने अथवा उन्हें स्मरण करने मे समर्थ होते हैं तो हम स्मृति का प्रमाण देते हैं। स्मृति पूर्व अधिगमित सूचना, घटनाओं अथवा कौशलों को पुनः स्मरण अथवा स्मरण करने की योग्यता है। *धारण* का तात्पर्य अभ्यास द्वारा एकत्रित सूचना के संचय की अवस्था है। किन्तु अधिगम और धारण एक दूसरे से इस प्रकार सबंधित हैं कि एक का अध्ययन दूसरे के बिना कठिन है। अधिगम और स्मृति में अन्तर केवल इनके बल देने मे है। अधिगम का अध्ययन अधिग्रहण की प्रक्रिया पर बल देता है जबकि स्मृति का धारण प्रक्रिया पर। धारण का अर्थ है कि सीखी हुई सूचना संचयित है और वह पुनःस्मरण के लिए उपलब्ध होगी।

स्मृति का अध्ययन सूचना सचयन तथा प्रत्यानयन (फिर स्मृति में लाना) करने की मानसिक प्रक्रियाओं के रूप मे किया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब सीखा जाता है तो कुछ सामग्री संचयित होती

है और बाद में स्मृति द्वारा प्रत्यानयन हो सकती है। इसका उन प्रक्रियाओं के रूप में अध्ययन किया जा सकता है जो तीन समय चक्रों में कार्य करते हैं : वह समय जब अधिगम होता है, अधिगम और धारण के बीच का अन्तराल, और वह समय जिसमें धारण का मापन किया जाता है। यदि सामग्री पर उस समय अधिक अवधान दिया जाए जब वह सीखी जा रही है तो यह अच्छी तरह धारित होती है। परीक्षा में किसी उत्तर का पुनःस्मरण न करने का एक सामान्य सा कारण होता है कि पढ़ाते समय हम सामग्री पर अवधान देने में असफल रहे। इसके अतिरिक्त सार्थक सामग्री का सीखना और उसे धारित करना निरर्थक सामग्री की अपेक्षा अधिक आसान होता है जैसे अ, स, अ, द, इ, ग, ख, क, ज,–ई, स, ट, का सीखना और धारण करना एक वाक्य जैसे "बच्चा गली में गया" को सीखने अथवा धारण करने की अपेक्षा अधिक कठिन है। मूर्त सूचना को याद रखना अमूर्त सूचना की तुलना में अधिक सरल है। अतः अधिगमित की जाने वाली सामग्री की प्रकृति एक महत्वपूर्ण चर है जो यह निर्धारित करती है कि क्या सामग्री आसानी से याद रखी जा सकती है अथवा नहीं। अधिगमित की जाने वाली सूचना अथवा सामग्री का संगठन करना सीखने के लिए महत्वपूर्ण है। बहुत सी सूचनाओं को संगठित करने के बहुत से तरीके जैसे 'गुच्छन' लाभदायक रूप से प्रयुक्त किए जाते हैं। मेज़, कुर्सी, चारपाई आदि शब्द यदि सीखने हैं तो उन्हें 'सज्जा-सामग्री' के प्रत्ययात्मक शीर्षक के अन्तर्गत रखकर सीखा जा सकता है। इससे सूचना को सीखने, संग्रह करने और पुनःस्मरण करने में आसानी होती है।

किन्तु सीखी जाने वाली सामग्री और उसके पुनःस्मरण में समय का कुछ अन्तर होता ही है। इस समय के दौरान बहुत सी क्रियाएँ चलती रहती हैं। ये क्रियाएँ पहले से सीखी हुई सामग्री की स्मृति में हस्तक्षेप कर सकती हैं। यह तभी ज्ञात हो सकता है जब सीखी हुई सूचना को पुनःस्मरण करने का प्रयास किया जाए। यदि पहले सीखी हुई सूचना का पुनःस्मरण नहीं हो सकता तो इसका अर्थ होगा कि इसको प्रभावित करनेवाले कारकों मे एक कारक वह क्रिया थी जो बीच के समय में चलती रही। यदि व्यक्ति किसी सूचना को धारण नहीं कर पाते तो इसका यह अर्थ हुआ कि उस सूचना के लिए उनकी स्मृति कमज़ोर है। अधिकतम सूचना के पुनःस्मरण का अर्थ है कि उस सूचना की स्मृति अच्छी है। अतः जबकि अधिगम किसी सूचना की आगत से संबधित है, स्मृति इस सूचना के संचयन और आवश्यकता पड़ने पर उसके पुनःस्मरण से सबंधित है।

जब पूर्वकालीन विद्वानों ने मानव स्मृति की प्रकृति पर चिन्तन किया उस समय हरमन एबिंगहॉस प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने इसे वस्तुनिष्ठता से मापने का प्रयास किया। उन्होंने तुलना की कि निरर्थक अक्षरों की छोटी और लम्बी सूचियों को सीखने में कितनी बार पुनरावृत्तियों की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने स्मृति को प्रभावित करने वाले बहुत से कारकों जैसे अभ्यास की मात्रा और सूचियों की लम्बाई के प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने सूचियों को सीखा, विभिन्न समय विभागों में इन सूचियो का पुनःस्मरण किया और धारण के गणितीय वक्र आलेखित किए। प्रयोगों के क्रम में, उन्होंने व्याख्या की कि कैसे स्मृति समय के बीतने के साथ क्षीण होती जाती है। उन्होने देखा कि एक सूची को पहली बार सीखने की अपेक्षा दूसरी बार सीखने में कम समय व प्रयत्न लगता है। दूसरी बार किसी सूची को सीखने में कितना समय बचा यह इस बात का माप था कि पहली बार सीखने के बाद कितना धारण किया। उन्होंने यह भी देखा कि सीखने के बाद के पहले घण्टे मे अधिक विस्मृति होती है अपेक्षाकृत एक महीने के बाद के। इसमें यह निहित है कि धारण की मात्रा पहले बहुत तेजी से कम होती है और फिर क्रमशः कम होती जाती है। एबिंगहॉस ने यह स्पष्ट किया कि स्मृति प्रक्रियाओं का अध्ययन वैज्ञानिक रूप से हो सकता है। उन्होंने प्रयोग के लिए

नियन्त्रित प्रयोगात्मक दशाओ और परिणाम के परिशुद्ध विश्लेषण पर बल दिया। इस प्रकार उन्होने मानव स्मृति के वैज्ञानिक अध्ययन की नींव डाली।

आज हम कम्प्यूटर तकनीकी की लहर का सामना कर रहे हैं। कम्प्यूटर में कार्य करते समय प्रारम्भ मे उस रूप मे सूचना प्रविष्ट की जाती है जिसमें वह उसे ग्रहण कर सके। एक विशेष कार्यक्रम (प्रोग्राम) लिखा जाता है जिसमें वांछित कूटो द्वारा कम्प्यूटर में सूचना प्रविष्ट की जाती है। यह भी महत्वपूर्ण है कि सूचना चाहे उसी रूप मे अथवा किसी और रूप में सूचित की जाए। किन्तु हमारे उद्देश्य की प्राप्ति इन दोनों अवस्थाओं से नहीं होती है। हमे उस सूचना का प्रत्यानयन करना आना चाहिए। यदि इन तीनों कार्यों मे से किसी एक भी काम को करने मे कम्प्यूटर असफल हो जाता है तो हमारा उद्देश्य निष्फल हो जाता है। कम्प्यूटर के सदृश हमारे स्मृति तंत्र के भी तीन सघटक है—सकेतन, सचयन तथा प्रत्यानयन—जिनकी विवेचना निम्नवत है।

(I) *संकेतन*

सकेतन का तात्पर्य है *किसी भौतिक उद्दीपन का ऐसे रूप मे रूपान्तरण करना जिसे मानव स्मृति स्वीकार करे*। अतः यह उन प्रक्रियाओ से सबंधित है जिनके द्वारा सूचना संचयन की जाती है अथवा स्मृति को सौंप दी जाती है।

एक बाह्य वस्तु जैसे शब्द-सूची को याद करके आन्तरिक प्रतिनिधित्व दिया जाता है। उदाहरणार्थ यदि व्यक्ति 'आइसक्रीम कोन' को याद कर रहे हैं तो वे इसे प्रतिमा के रूप में याद रख सकते हैं। अतः यह स्मृति में या तो शब्दो के रूप में अथवा प्रतिमा के रूप मे सौपी जा सकती है। संकेतन लचीला होता है अत: सूचना का कोई विषय स्मृति मे विभिन्न रूपो में रखा जा सकता है।

(II) *संचयन*

संचयन का अभिप्राय *संकेतित सूचना के धारण से है*। इसका सबंध इस बात से है कि सूचना के सकेतन के पश्चात् इसके साथ क्या होता है। क्या वह अक्षुण्ण ही रहती है या कुछ परिवर्तित हो जाती है। यदि यह परिवर्तित होती है तो कैसे परिवर्तित होती है? क्या यह क्षय होती है या जीवन भर समान ही रहती है।

(III) *प्रत्यानयन*

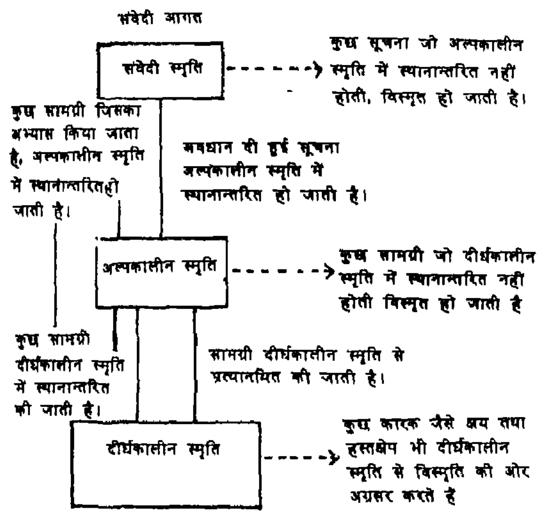
प्रत्यानयन का सबंध *उन प्रक्रियाओं से है जिनके द्वारा सचयन क्षेत्र से सूचनाओ को पुन: प्राप्त किया जाता है*। संचयित सूचना को पुनःस्मरण करना सम्भव हो भी सकता है और नहीं भी। उदाहरणार्थ यदि आपसे यह प्रश्न पूछा जाए कि भारतवर्ष के द्वितीय राष्ट्रपति कौन थे? आप इसका उत्तर दे भी सकते हैं और नही भी। आप इसका उत्तर जानते होगे किन्तु इसे स्मरण करने में असमर्थ हो सकते हैं। इसका निहित अर्थ यह हुआ कि यद्यपि सूचना संकेतित हो चुकी है, सचयित भी है किन्तु इस क्षण उसका प्रत्यानयन सम्भव नही है।

स्मृति तंत्र

स्मृति के अधिकतर सिद्धात सूचना-प्रक्रमण के प्रतिमान के रूप मे प्रस्तुत किये गए हैं। इन प्रतिमानो ने मनुष्य की स्मृति की कम्प्यूटर से तुलना की है जिसमे विभिन्न संचयन तत्र होते हैं जो सूचना को प्रक्रम करते है और सचित करते हैं। किन्तु कुछ विशेष नियन्त्रण प्रक्रियाएँ यह निर्धारित करती हैं कि सूचना किसी विशेष तंत्र मे सचित होगी अथवा नहीं। संचित सूचना को जब भी इच्छा हो वह प्रत्यानयन होगी यह सम्भव हो भी सकता है और नही भी हो सकता।

ऐसा एक प्रतिमान आर सी एटकिन्सन और आर एम शिफरिन का है। उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि सवेदी आगत जो सग्राहको तक पहुँचती है वह संवेदी पजिका या सवेदी स्मृति मे अल्प समय के लिए सचित होती है। यदि आगत पर अवधान दिया जाता है तो वह अल्पकालीन स्मृति या अल्पकालीन संचय में सप्रेषित हो जाती है। अल्पकालीन स्मृति की क्षमता सीमित होती है और यह सूचना को थोडे समय के

लिए ही रख पाती है। नई आने वाली सूचनाएँ पुरानी सूचनाओं को विस्थापित कर देती हैं। जब सूचना विस्थापित हो जाती है तो वह भूल जाती है। किन्तु जब दोहराया जाता है तब यह दीर्घकालीन संचय या दीर्घकालीन स्मृति में चली जाती है। दीर्घकालीन स्मृति में गई हुई सूचना को कुछ दिनो, महीनो अथवा जीवन भर के लिए धारित किया जा सकता है। दीर्घकालीन सचय मे सूचना संगठित होती है। यह प्रतिमान चित्र 6.1 में दिखाया गया है।



चित्र 6.1 स्मृति का सूचना-प्रक्रमण प्रतिमान

सवेदी स्मृति

सवेदी स्मृति सवेदी सूचना की स्पष्ट तथा पूर्ण प्रतिमा लगभग 0.25 सैकंड से लेकर 2 सैकंड तक धारण करती है। उसके बाद यह क्षय होने लगती है। यह देखा गया है कि दृश्य सूचना सवेदी स्मृति मे प्रतिमा के रूप में धारित रहती है। यह प्रतिमा दृश्य आगत का प्रतिरूप होती है। इसे *मूर्तिपरक प्रतिमा* कहते हैं।

इसी प्रकार का दृग्विषय ध्वनि तत्र के लिए है जिसे प्रतिध्वन्यात्मक स्मृति कहा जाता है। जिस प्रकार व्यक्ति किसी उद्दीपन का चित्र उसके लुप्त हो जाने के बाद एक क्षण तक देख सकते है उसी प्रकार व्यक्ति ध्वनि को उसके रुकने के बाद भी सुन सकते हैं। संवेदी स्मृति मे दृश्यात्मक आगत एक या दो सैकंड तक रहती है जबकि ध्वन्यात्मक आगत चार या पाँच सैकंड तक रहती है। सूचना के लगभग 11 से 16 मद दृश्यात्मक स्मृति मे क्षय होने से पूर्व रखे जा सकते हैं किन्तु उसके बाद अवधानित सूचना अल्पकालीन स्मृति मे चली जाती है।

अल्पकालीन स्मृति

सवेदी स्मृति मे सूचना बहुत शीघ्र क्षय हो जाती है किन्तु जिन सूचनाओ पर अवधान दिया जाता है वे अल्पकालीन स्मृति या अल्पकालीन सचय मे चली जाती है। अल्पकालीन स्मृति मे सूचना 20 से 30 सैकंड के लिए रहती है तत्पश्चात् आने वाली सूचनाओ से विस्थापित हो जाती है। कुछ सूचना लुप्त होने से पूर्व पुनः प्राप्त की जा सकती है। अल्पकालीन स्मृति मे सूचना की सर्वांगीण खोज रहती है अर्थात् जिस वस्तु की खोज की जा रही है और वह मिल भी गई है तो भी अवलोकन प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक अल्पकालीन स्मृति मे सबकी जॉच नही हो जाती।

अल्पकालीन स्मृति मे सूचना का सकेतन प्रकृति से ध्वन्यात्मक होता है अर्थात् इसमे वाणी, ध्वनियाँ, दृश्यात्मक प्रतिमाएँ और शब्द होते हैं। यह प्रकृति से अर्थगत भी होता है अर्थात् सार्थक शब्द निरर्थक शब्दो की अपेक्षा सरलता से सचित किए जा सकते हैं।

खड

सूचना की सीमित मात्रा अल्पकालीन स्मृति मे रखी जा सकती है। अल्पकालीन स्मृति सूचना के लगभग पाँच से नौ खड तक धारण कर सकती है। *खड से अभिप्राय सूचना की किसी एक इकाई से है*। उदाहरण के लिए यदि आप ये अक्षर—प, ना, झे, ढ, मु, न, ये, हि, म, चा, वि, नो, ज्ञा—एक बार पढे तो इनमे से लगभग सात को याद रखना सम्भव हो सकेगा।

किन्तु यदि इन्हीं अक्षरो का पुनः समूहन इस उच्चारण के लिए करें "मुझे मनोविज्ञान पढ़ना चाहिए" तो इन अक्षरों के सम्पूर्ण समूह को याद करना अधिक सरल होगा। अतः "मुझे मनोविज्ञान पढ़ना चाहिए" एक खंड है। यह सूचना की एक इकाई हुई।

अंकों की एक लड़ी जैसे 1, 4, 9, 1, 6, 2, 5, 3, 6, 4, 9, 6, 4, 8, 1, 1, 0, 0 को याद रखना बहुत कठिन काम होता है किन्तु यदि किसी को यह अनुभूति हो जाए कि यह अकों की लड़ी 1 से 10 के पूर्णांक के वर्गों को एक साथ रखने से बनी है जैसे $1^2=1$, $2^2=4$, $3^2=9$ आदि तो व्यक्ति को केवल सूचना का एक खंड याद रखना पड़ेगा। इस प्रकार इन 18 अकों को अब आसानी से स्मरण किया जा सकता है।

अल्पकालीन स्मृति की क्षमता इस खण्डकरण प्रक्रिया से बढ़ाई जा सकती है। सूचना के अनेक मद एक खंड मे संयुक्त किए जा सकते हैं और ऐसे 7 खंड धारण किए जा सकते हैं लगभग 40 मद 7 खंडों में संयुक्त किए जा सकते हैं और अल्पकालीन स्मृति में रखे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए एक दूरभाष संख्या एस टी डी कूट (0731), दूरभाष केन्द्र संख्या (52) और वैयक्तिक संख्या (4100) को खंड में तोड़कर सरलता से याद किया जा सकता है। जब यह स्वाभाविक सीमा से बढ़ जाता है तो विस्मृति हो जाती है। सूचना की अधिक मात्रा को याद रखने के लिए इसकी कुछ मात्रा को दीर्घकालीन स्मृति में स्थानान्तरित कर देना चाहिए।

दोहराने से सूचना के मदो को अल्पकालीन स्मृति मे देर तक रखा जा सकता है। दोहराना वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सूचना अवधान के केन्द्र में रखी जा सकती है। जो मद जितनी अधिक देर तक दोहराये जाते हैं वे सामान्यतः दीर्घकालीन स्मृति में पहुँच जाते हैं। दोहराना दो प्रकार का हो सकता है—साधारण दोहराना और विस्तृत दोहराना। साधारण दोहराने में सूचना की बार-बार पुनरावृत्ति की जाती है। विस्तृत दोहराने में दोहराने के साथ-साथ सामग्री को सगठित करना तथा अर्थ देना सम्मिलित होता है। सूचना को उसके गुणो के अनुसार विद्यमान स्मृतियों में उचित स्थान दिया जाता है।

दीर्घकालीन स्मृति

दीर्घकालीन स्मृति में सूचना की बहुत बड़ी मात्रा बहुत समय, दिनो, महीनो, वर्षों या जीवनभर के लिए संचित रहती है।

दीर्घकालीन स्मृति में सूचना घटनात्मक और अर्थगत दोनों होती है

दीर्घकालीन स्मृति मे दो प्रकार की सूचना संचित होती है—घटनात्मक और अर्थगत। घटनात्मक स्मृति में व्यक्ति के पुराने अनुभव और दैनिक जीवन की घटनाएँ उल्लिखित होती हैं। घटनात्मक स्मृति विशिष्ट और आत्मकथात्मक दोनों होती है। उदाहरणार्थ यदि किसी व्यक्ति को एक दिन पहले वाले प्रीतिभोज समारोह की याद है तो इसका तात्पर्य यह है कि यह घटना उसकी घटनात्मक स्मृति में संचित है। अर्थगत स्मृति में अमूर्त ज्ञान, शब्दों के अर्थ, सकेत, विचार और उनसे संबंधित नियम होते हैं।

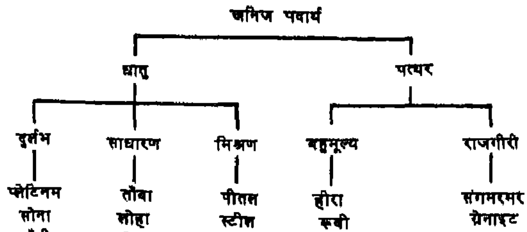
आप एक प्रपत्र भरते हैं, पक्ति में लगकर दो घन्टे तक प्रतीक्षा करते हैं और जब आपकी बारी आती है तो आपको बताया जाता है कि आपने गलत प्रपत्र भर दिया है। इस घटना का अर्थगत की अपेक्षा घटनात्मक मूल्य अधिक है अतः घटनात्मक स्मृति में संचित होगी। किन्तु यह ज्ञान कि सबधित कार्यालय के कर्मचारी असभ्य हैं, अर्थगत स्मृति में संचित होगा। घटनात्मक स्मृति अर्थगत स्मृति की अपेक्षा विस्मृति के लिए अधिक सवेदनशील है।

आप किसी लेख मे यह पढ़ते हैं कि किसी विशेष स्थान पर गैस रिसने के परिणामस्वरूप बहुत से

व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। कुछ समय पश्चात् यह घटना भूल सकते हैं किन्तु इस तथ्य का ज्ञान कि गैस रिसने के परिणामस्वरूप मृत्यु होती है, स्मृति मे रहता है। यह ज्ञान अर्थगत स्मृति का भाग होता है।

दीर्घकालीन स्मृति में सूचना का सगठन व्यक्तिपरक होता है

अर्थगत स्मृति मे सामग्री के संगठन द्वारा पुनः स्मरण प्रभावित होता है। आने वाली सूचना को विभिन्न श्रेणियों में उचित स्थान देने के लिए व्यवस्थित किया जा सकता है अथवा तर्कसंगत विधि से समूहबद्ध किया जाता है। एक प्रयोग में प्रयोज्यो के लिए 60 शब्द अनावृत किए गए। ये शब्द विभिन्न पशुओ, सब्जियो या व्यवसायों के नाम थे। यद्यपि ये शब्द यादृच्छिक क्रम में प्रस्तुत किए गए थे फिर भी प्रयोज्यो ने इन्हें पहले श्रेणियों तथा गुच्छों में पुनः स्मरण किया और फिर गुच्छे के प्रत्येक मद को। तार्किक अनुक्रमों मे व्यवस्थित सूचना को यादृच्छिक रूप से व्यवस्थित शब्दों की अपेक्षा अधिक सरलता से स्मरण किया जा सकता है। जैसा कि चित्र 6.2 में दिखाया गया है। किन्तु जिस सामग्री का अधिगम करना है वह अन्तर्निष्ट रूप से संगठित हो सकती है और नही भी हो सकती है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति स्मरण करनेवाली सामग्री को अपने तरीके से संगठित कर सकते हैं। इसे व्यक्तिपरक संगठन कहते हैं।



चित्र 6.2 तार्किक विधि द्वारा व्यवस्थित मद

सूचना की प्रतिमाएँ मूर्त और अमूर्त होती है

आने वाली सूचना को उसकी प्रतिमाओ का निर्माण करके भी स्मरण किया जा सकता है। ऐसे शब्द जो आसानी से प्रतिमाएँ उभारते हैं, मूर्त शब्द कहे जाते हैं जैसें मेज़, कुर्सी, लड़की, लड़का आदि। ऐसे शब्द जिनमे कम प्रतिमाएँ उभरती हैं, अमूर्त शब्द कहे जाते हैं जैसे दया, निर्धनता, सत्य आदि। मूर्त शब्द अमूर्त शब्दों की अपेक्षा सरलता से सीखे जा सकते हैं और प्रतिमाओं एव शाब्दिक तत्र, अर्थात् शब्द और उनके साहचर्यों के रूप मे स्मरण किया जा सकता है। अमूर्त शब्द प्रतिमा नही उभारते अतः उन्हें शाब्दिक तंत्र के रूप मे ही स्मरण किया जा सकता है। किन्तु जो प्रतिमाएँ बनती हैं वे अक्षरशः वही प्रतिमाएँ नही होती वरन् उनके आशिक अथवा परिवर्तित प्रतिनिधित्व होते हैं।

जिह्वाग्र दृग्विषय

जिह्वाग्र दृग्विषय इस तथ्य का समर्थन करता है कि दीर्घकालीन स्मृति में सूचना संगठित होती है। इस सम्बन्ध में यह जानने के लिए प्रयोग किए गए हैं कि यह क्यों होता है कि जब व्यक्ति संचित सामग्री मे से कुछ याद कर सकते है पर पूर्णरूपेण नही कर सकते। एक प्रयोग में पदो की परिभाषाएँ पूर्व स्नातकों के सामने पढ़ी गईं और उनसे सही शब्द का नाम पूछा गया। जब विद्यार्थियों ने जिह्वाग्र का अनुभव किया अर्थात सही शब्द को जानते हुए भी उसे स्मरण न कर पाने का अनुभव हुआ तो उनसे उस दुर्ग्राह्य शब्द की विशेषताओं का वर्णन करने को कहा गया जैसे उसका प्रथम वर्ण, उसमें आए अक्षरों की सख्या, शब्द जिनकी ध्वनि समान थी आदि। परिणामो से यह ज्ञात हुआ कि विद्यार्थियों ने उन शब्दों को पुनःस्मरण किया जिनकी ध्वनि याद करनेवाले लक्ष्यांक शब्दों के समान थी, जो उसी वर्ण से शुरू होते थे, जिनमें अक्षरों की संख्या उसी के समान थी और जिनका अर्थ लक्ष्यांक शब्द से मिलता-जुलता था।

दीर्घकालीन स्मृति मे खोज यादृच्छिक नही होती
स्मृति के भीतर किसी सूचना के पुनःस्मरण अथवा प्रत्यानयन के प्रयत्न में खोज करना यादृच्छिक नहीं होता। याद की जाने वाली मद को संचित करना होता है तो उसे एक अंकितक दिया जाता है और दीर्घकालीन स्मृति में सही स्थान पर सचित कर दिया जाता है। सूचना को प्रत्यानयन करते समय स्मृति के सही भाग में खोज प्रारम्भ होती है जिसके बाद वस्तु की स्थिति ढूँढ़ी जाती है, सम्पर्क स्थापित किया जाता है, पहचानी जाती है और पुनः स्मरण की जाती है। किन्तु यदि वस्तु से सम्पर्क या उसकी पहचान नहीं हो पाती तो उस मद को पुनःस्मरण करने में असफलता होती है अर्थात् विस्मृति होती है।

स्मृति तत्र की तीन अवस्थाओं की तुलना उनकी कालावधि, क्षमता, स्थानान्तरण प्रक्रिया, संचित सूचना का प्रकार और सूचना लोप के प्रमुख कारण सारणी 6.1 में प्रदर्शित की गई है।

धारण का मापन

सूचना जो स्मरण की जाती है अथवा सीखी जाती है वह धारित भी रह सकती है और भूल भी सकती है। यह कहना व्यर्थ है कि सूचना धारित है यदि उसको प्रत्यानयित नहीं किया जा सकता। अतः स्मृति का एक महत्वपूर्ण पहलू सूचना की उस मात्रा से सबंधित है जिसे प्रत्यानयित किया जा सकता है। स्मृति चार विधियो की सहायता से मापी जा सकती है: (अ) पुनःस्मरण, (ब) प्रत्यभिज्ञा, (स) बचत, और (द) पुनर्निर्माण।

सारणी 6.1

स्मृति की तीन अवस्थाओं की विशेषताएँ

विशेषताएँ	*सवेदी स्मृति*	*अल्पकालीन सचयन*	*दीर्घकालीन सचयन*
अनुमानित कालावधि	दृश्यात्मक आगत करीब 2 सैकंड तक, श्रव्यात्मक आगत 5 सैकंड तक	30 सैकंड तक (बहुत से कारको पर निर्भर होने के कारण विचलन हो सकता है)	दिनो, महीनो, वर्षों, अथवा जीवन भर तक रह सकती है।
क्षमता	कम से कम 16 मद तक और कभी-कभी अधिक	7 मद अथवा खड तक	बहुत विस्तृत तथा कोई सुस्पष्ट सीमा नही
स्थानान्तरण प्रक्रियाएँ	अवधानित मद अल्पकालीन सचयन मे चले जाते हैं।	दोहराए हुए मद दीर्घकालीन सचयन मे चले जाते है।	—
सचित सूचना की प्रकृति	आगत का प्रतिरूप	ध्वनियाँ, दृश्य प्रतिमाएँ, शब्द तथा वाक्य	अर्थगत, घटनात्मक, अर्थपूर्ण वाक्य, जीवन की घटनाएँ और प्रतिमाएँ
सूचना लोप का कारण	चिन्हों का क्षय	पुरानी सूचना नई सूचना द्वारा विस्थापित	दोषपूर्ण संगठन, प्रत्यानयन की अनुचित विधि अथवा हस्तक्षेप

(अ) *पुनःस्मरण विधि*

पुनःस्मरण विधि में व्यक्ति से वह दोहराने की अपेक्षा की जाती है जो उसने पहले सीखा है। उदाहरण के लिए प्रयोज्य के सामने शब्दों की सूची पढ़ी जाए और उसे उस सूची से जितने सभव हों अधिक से अधिक शब्द पुनःस्मरण करने को कहा जाए। पुनःस्मरण प्राप्तांक दो प्रकार के हैं। प्रथम *स्वतन्त्र पुनःस्मरण* कहलाता है जिसमें सूची में शब्दों की स्थिति के अनपेक्ष प्रयोज्य द्वारा सूची के सही मदों के पुनःस्मरण की संख्या सम्मिलित होती है। द्वितीय प्राप्तांक *पूर्वानुमान प्राप्तांक* होता है। इस प्राप्तांक में केवल उन्हीं मदों को मान्यता दी जाती है जिनका पुनःस्मरण उनके सही क्रम में किया जाता है। उदाहरणार्थ प्रयोज्यों को 15 शब्दों की सूची प्रस्तुत की गई। उन्हें 2 मिनट सूची को सीखने के लिए दिये गए। दो मिनट के पश्चात् उन्हें सूची में दिये हुए शब्दों को दोहराने को कहा गया। यदि स्थिति के अनपेक्ष सभी शब्दों का पुनःस्मरण कर लिया गया तो स्वतंत्र पुनःस्मरण अंक 15 होगा। किन्तु यदि प्रयोज्य ने सभी शब्दों का पुनःस्मरण तो कर लिया किन्तु उसमें से दो शब्दों का क्रम सही नहीं था अर्थात् वास्तविक सूची में उन शब्दों की जो क्रम स्थिति थी उसके अनुसार नहीं था तो प्रयोज्य का पूर्वानुमान प्राप्तांक 13 होगा न कि 15 अतः पुनःस्मरण विधि में पहले सीखी हुई सूचना को फिर स्मरण करके उसको दोहराना सम्मिलित है।

(ब) *प्रत्यभिज्ञा विधि*

स्मृति की जाँच की दूसरी विधि प्रत्यभिज्ञा है। इस विधि के अन्तर्गत प्रयोज्यों को पहले सीखी गई सामग्री को उस सामग्री में से पहचानना होता है जिसे पहले सीखा नहीं गया है। उदाहरणार्थ प्रयोज्यों को 12 शब्दों की सूची याद करने को कहा गया। फिर 50 शब्दों की एक अन्य सूची में से उन शब्दो को चयन करने को कहा गया। प्रत्यभिज्ञा अक सही और गलत विकल्पों के बीच के विभेदीकरण की मात्रा से प्रभावित होते हैं। धारण तब अच्छा होता है जब सही उत्तर और अन्य विकल्पों में बहुत अधिक और स्पष्ट अन्तर होता है। जब सही उत्तर और विकल्प ध्वनि में एकसमान प्रतीत होते हैं तब गड़बड़ की सम्भावना रहती है और इस प्रकार धारण कम हो जाता है। इन दो बहु विकल्प पदो को देखिए:

1. पश्चिम बंगाल की राजधानी यह है
   (अ) पुणे (ब) दिल्ली
   (स) कलकत्ता (द) थिरुवनन्तपुरम्
2. पश्चिमी बंगाल की राजधानी यह है
   (अ) कालीकट (ब) कटक
   (स) कलकत्ता (द) कुड्डापाह।

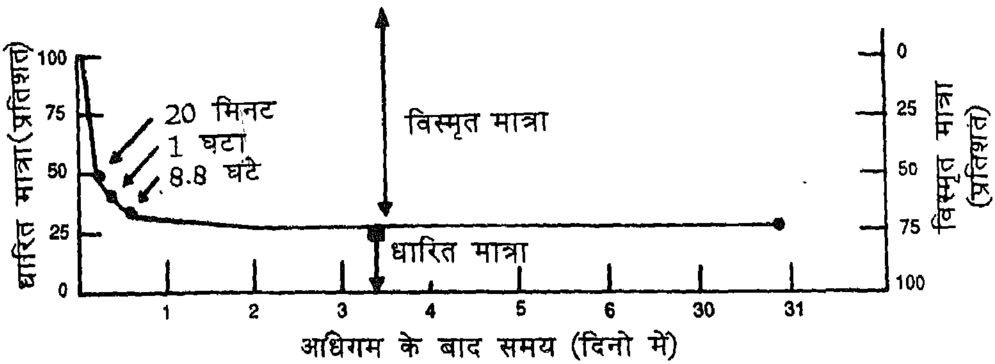
पहले उदाहरण में दूसरे की अपेक्षा सही प्रत्यभिज्ञा की अधिक सम्भावना है क्योंकि पहले में विकल्पों और सही उत्तर में दूसरे उदाहरण की तुलना में स्पष्ट विभेद है।

धारण विकल्पों की संख्या से भी प्रभावित होता है। यदि प्रयोज्य 20 शब्दों की सूची का अध्ययन करते हैं और तब उन्हें इन शब्दों को 40, 80, 120, और 160 शब्दों में से पहचान करने को कहा जाता है तो सबसे अच्छा धारण 40 शब्दों की सूची में होगा। सूची में दिए गए शब्दों की संख्या जैसे जैसे बढ़ती जाएगी सही पहचाने गए शब्दों की सख्या वैसे वैसे घटती जाएगी।

(स) *बचत या पुनः अधिगम विधि*

एबिंगहॉस ने बचत अथवा पुनः अधिगम की विधि का इस्तेमाल धारण के मापन के लिए किया। इस विधि में किसी सामग्री को सीखने में लगा समय या सामग्री को एक बार सीखने में अपेक्षित पुनरावृत्ति की संख्या और फिर बाद के अवसरों पर लगे समय या पुनरावृत्ति की संख्या से तुलना की जाती है। बचत अंक की गणना निम्नलिखित सूत्र द्वारा की जा सकती है :

$$\frac{\text{मूल अधिगम में लगा समय (अपेक्षित पुनरावृत्तियों की सख्या—नये अधिगम में लगा समय (अपेक्षित पुनरावृत्तियों की सख्या)}}{\text{मूल अधिगम में लगा समय (अपेक्षित पुनरावृत्तियो की संख्या)}} \times 100$$



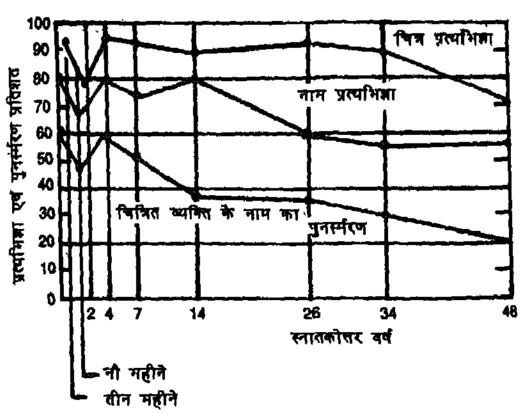
चित्र 6.3 बचत के रूप में धारित मात्रा का कारण समय

यदि प्रयोज्य ने प्रथम अवसर पर किसी सूची को सीखने में 6 प्रयास लिए और दूसरे अवसर पर 3 प्रयास लिए तो उसके बचत अंक की गणना निम्न प्रकार की जाएगी :

$$\frac{6-3}{6} \times 100 = 50\%$$

एबिंगहॉस ने यह देखा कि किसी सामग्री सीखने के तुरन्त बाद शीघ्रता से विस्मृति होती है जैसा कि चित्र 6.3 में दिखाया गया है। उन्होंने यह देखने के लिए परीक्षण किए कि निरर्थक अक्षरों की सूची को प्रथम बार सीखने के बाद दुबारा सीखने के लिए कितने प्रयासों की आवश्यकता पड़ती है। उन्होंने पाया कि जब मूल सामग्री में से अधिक सामग्री याद कर ली जाती है तो उसी सामग्री को दुबारा सीखने के लिए कम प्रयासों की आवश्यकता पडती है।

मनोवैज्ञानिको ने यह जानने के लिए बहुत प्रयोग किए हैं कि लोग अपनी दसवी कक्षा के साथियों के नाम व चेहरे कितनी अच्छी तरह याद रख सकते हैं। यह मापन भिन्न-भिन्न समय पर लिए गए और विभिन्न स्मृति परीक्षण प्रयुक्त किए गए। पहला परीक्षण स्वतंत्र पुनःस्मरण का था जिसमें प्रयोज्यों से अपने कक्षा के साथियों के अधिक से अधिक नाम लिखने को कहा गया। दूसरे दो परीक्षणो मे साथियों के नाम व चेहरे पहचानना सम्मिलित था। यह पाया गया कि प्रयोज्यो ने 34 वर्षों के बाद भी अपने 90% साथियो के चेहरे पहचान लिए जैसा कि चित्र 6.4 मे दिखाया गया है। उन्होंने अपनी कक्षा के 60 प्रतिशत साथियों के नाम भी पहचान लिए। इस प्रयोग से यह स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है कि स्मृति मापन में प्रयुक्त की गई विधि स्मृति वक्र को प्रभावित करने में एक महत्वपूर्ण कारक है।



चित्र 6.4 विस्मृति की मात्रा का कारण धारण के मापन

(द) पुनर्निर्माण विधि

यद्यपि स्मृति की विशेषताओं और प्रक्रियाओ का अध्ययन करने के लिए निरर्थक अक्षरो जैसी सरल सामग्री का इस्तेमाल करना आसान होता है तथापि हमारे दैनिक जीवन में पाठ्यविषय की स्मृति जैसे पुस्तकें, कहानियाँ और विवरण होते हैं। (पाठ्यसामग्री का जो भी कुछ हम स्मरण करते हैं वह स्मरण की जाने वाली सामग्री की प्रतिलिपि नहीं होता, वरन् यह सामग्री आगत के समय बहुत तरीकों से विस्तृत, सरलीकृत और परिवर्तित होती है। इन्हें *निर्माण प्रक्रियाएँ* कहा जाता है। याद की जाने वाली सामग्री में परिवर्तन उसका पुनः स्मरण करते समय भी हो सकता है। इन्हें *पुनर्निर्माण प्रक्रियाएँ* कहा जाता है। ये प्रक्रियाएँ यह निर्धारित करने में सहायता करती हैं कि क्या याद करना है। एफ सी बार्टलेट ने एक प्रयोग किया जिसमे व्यक्तियों को कहानी पढ़ने को कहा गया और कुछ घंटो, दिनो या महीनों के पश्चात् इसका पुनःस्मरण करने को कहा। एक उद्दीपन एक पुरानी कहानी थी जिसका नाम था 'भूतो की लड़ाई'। यह इन शब्दों के साथ समाप्त हुईः

> 'उसने यह सब बताया और फिर शान्त हो गया।
> सूरज के निकलते ही वह गिर पड़ा।
> कुछ काली सी चीज उसके मुँह से निकली।
> उसका चेहरा विकृत हो गया।
> लोग यह देखकर उछल पड़े और चीखने लगे।
> वह मर गया था।'

जब एक प्रयोज्य को आठ दिन बाद इस कहानी का पुनःस्मरण करने को कहा गया तो उसने इसका निम्न प्रकार स्मरण किया।

> 'दूसरे दिन सूर्योदय के समय वह अपने मित्रो को अपने साहसिक कार्यों का वर्णन कर रहा था जो उसके आसपास इकट्ठे हुए थे। अचानक कुछ काली चीज उसके मुँह से निकली और वह एक चीख मार कर गिर गया। उसके मित्रो ने उसको चारों ओर से घेर लिया किन्तु उन्होने पाया कि वह मर चुका था।'

दूसरे प्रयोज्य ने छः महीने बाद इसी कहानी को निम्न प्रकार से सुनायाः

> 'एक आवाज ने कहा : काला आदमी मर चुका है। वह उस जगह लाया गया जहाँ वे सब लोग थे और उसे जमीन पर रख दिया था और उसके मुँह से झाग निकल रही थी।'

बार्टलेट ने इसे 'निर्माणात्मक स्मृति' का नाम दिया जिसका तात्पर्य किसी व्यक्ति द्वारा पुरानी घटनाओ की कुछ याद रह गई बातो मे भूली हुई बातो के स्थान पर कुछ अपनी तरफ से पूर्ति करके दुबारा चित्र निर्माण करने की प्रवृत्ति है। उन्होंने बताया कि कुछ बातो को छोड़ देने के कारण और कुछ का निर्माण और पुनः निर्माण अनुमान के आधार पर करने के कारण कहानी बदल गई थी। कहानी की सरचना योजनाओ पर निर्मित थी अर्थात पूर्वअनुभवों का संगठन था अथवा अर्थगत स्मृति में सचित सूचना थी।

यह भी देखा गया है कि घटना के वर्णन में इस्तेमाल की गई भाषा निर्माणात्मक स्मृति और पुनः निर्माणात्मक स्मृति को प्रभावित करती है। एक अध्ययन मे प्रयोज्यो को कारों की टक्कर के विभिन्न चलचित्र दिखाए गए। कुछ प्रयोज्यो से प्रश्न पूछा गया "कारें कितनी तेज चल रही थीं जब उन्होने एक दूसरे को तोड़ा?" दूसरे प्रयोज्यों से प्रश्न पूछा गया "कारें कितनी तेज चल रही थी जब उनमे सम्पर्क हुआ?" जबकि प्रथम समूह ने कार की औसत गति 40.8 मील प्रति घंटा अनुमानित की, दूसरे समूह ने इस गति को 31.8 मील प्रति घटे का अनुमान किया। कुछ प्रयोज्य चित्र देखने के एक सप्ताह बाद प्रयोगशाला मे वापस लाए गए। फिर उनसे पूछा गया कि क्या उन्होने शीशे के टूटे हुए टुकड़े दुर्घटना के बाद देखे हैं। परिणाम आश्चर्यजनक थे और पुनःनिर्माण स्मृति पर भाषा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ा। 50 प्रयोज्यों जिनको टकरानेवाली कारों के बारे मे पूछा गया, उनमे से 16 ने बताया कि उन्होंने टूटे हुए शीशों को देखा था। लेकिन जिनसे सम्पर्क

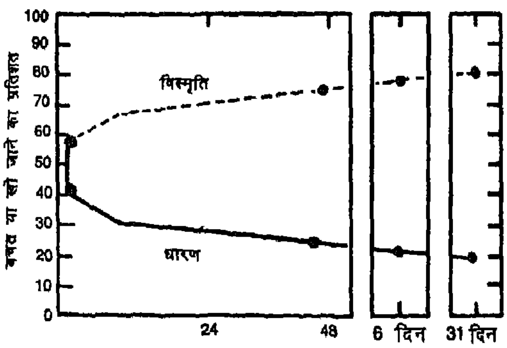
वाली कारों के बारे मे पूछा गया उन 50 प्रयोज्यों में से केवल 7 प्रयोज्यों ने यह बताया कि उन्होंने शीशे को देखा था। किन्तु चलचित्र मे कोई शीशा नही दिखाया गया था। ये प्रयोग यह बताते हैं कि व्यक्ति पुनः निर्माण में अपनी योजनाओं का इस्तेमाल करते हैं और भाषा का पुनर्निर्माणात्मक स्मृति पर प्रभाव पड़ता है।

विस्मृति

विस्मृति की प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। याद करना एक ऐसा दृग्विषय है जो समाज में उच्च रूप से पुरस्कृत होता है। यदि व्यक्ति किसी का नाम स्मरण करने में असफल हो जाते हैं तो इसे सामाजिक त्रुटि माना जाता है। यदि कोई यह याद नही कर पाता कि भारतवर्ष के प्रथम उपराष्ट्रपति कौन थे तो ऐसे व्यक्ति की उसके साथियो में प्रतिष्ठा कम हो जाती है। 'धारण' पद स्मृति का सकारात्मक पक्ष है जो विशिष्ट स्थितियों में याद रखी गई सूचना की मात्रा को इंगित करता है। विस्मृति स्मृति का नकारात्मक पक्ष है और पुनःस्मरण न की गई मात्रा की ओर इंगित करता है।

विस्मृति को प्रभावित करनेवाली दशाओ का अध्ययन अधिगम के अध्ययन के साथ-साथ समझा जा सकता है। किसी विशेष कसौटी तक सीखने के पश्चात् किसी दिये हुए समय पर अनुक्रिया प्रवृत्तियो की तीव्रता के मापन द्वारा विस्मृति के सूचकांक प्राप्त किये जा सकते हैं। विस्मृति की मात्रा अधिगम के उपरान्त के अंकों और एक विशेष अन्तराल के पश्चात् प्राप्त अंकों के बीच का अन्तर है। अधिगम मे दो प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं। उनमें से एक प्रक्रिया अर्थात् धारण अनुक्रिया प्रवृत्तियो को मजबूत बनाती है जबकि दूसरी प्रक्रिया अर्थात् विस्मृति, अनुक्रिया प्रवृत्तियों को कमजोर करती है। जब निष्पादन मे उन्नति प्रदर्शित होती है तो इसमे एक साथ दो प्रक्रियाओ का प्रभाव होता है जिसमें अधिगम की मात्रा विस्मृति से अधिक होती है। किन्तु जब निष्पादन मे कमी प्रदर्शित होती है तो इसमें विस्मृति की प्रक्रिया अधिक होती है।

विस्मृति के अध्ययन मे आवश्यक है कि अधिगम और धारण परीक्षणों के बीच कुछ समय का अन्तराल रखा जाए। एबिगहॉस प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने समय को विस्मृति का कारण माना। एबिगहॉस अपने प्रयोज्य स्वयं बने। उन्होंने निरर्थक अक्षरो की बहुत सी सूचियाँ सीखीं और उनका मापन पुनर्अधिगम अर्थात् बचत अक के रूप मे किया। "एबिगहॉस का धारण-वक्र" जैसा यह जाना जाता है, के द्वारा स्पष्ट होता है कि विस्मृति अधिगम के तुरन्त पश्चात तेजी से होती है और उसके बाद जैसे-जैसे समय बीतता जाता है इसकी गति धीमी होती जाती है। किन्तु धारण मे परिवर्तन की वास्तविक मात्रा का विचलन अनेक चरों के कारण होता है। उनके एक अध्ययन के परिणाम चित्र 6.5 मे प्रस्तुत किए गए हैं।



चित्र 6.5 समय के कारण विस्मृति

विस्मृति के सिद्धान्त

यद्यपि हम प्रत्येक बात को याद रखना चाहेंगे किन्तु हम जानते हैं कि यह सभव नही है। हम बहुत सी बातें भूल जाते हैं जिन्हें हम याद रखना चाहते हैं। यह क्यो होता है? विस्मृति के बहुत से कारण हैं। विस्मृति की व्याख्या करने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्त बताए गए हैं।

(i) *विस्मृति का क्षय सिद्धान्त*

साहचर्यवादी उपागम ने क्षय सिद्धान्त के रूप मे विस्मृति की व्याख्या की है। स्मृतियाँ विचारो के आपसी साहचर्यों पर आधारित होती हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार *विस्मृति तब घटित होती है जब समय व्यतीत होने के कारण साहचर्य बन्धन कमज़ोर पड़ जाते हैं*। विस्मृति का कारण केवल उस समय को माना गया है जिसके दौरान स्मृति का इस्तेमाल नहीं होता। यह सिद्धान्त मानता है कि अधिगम मस्तिष्क मे कुछ स्मृति चिन्ह छोड़ता है जो उस से पूर्व अस्तित्व मे नही थे। ये चिन्ह समय के साथ क्षय होते हैं और बहुत समय तक उपयोग न होने के कारण विलीन हो जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि यह क्षीणता अथवा क्षय होना मस्तिष्क की सामान्य चयापचय प्रक्रिया के परिणामस्वरूप होता है। हम सामान्यतः देखते हैं कि ऐसी सूचना जिसे हम दिन-प्रतिदिन के जीवन मे अर्जित करते हैं यदि इसका इस्तेमाल अधिक समय तक नही होता है तो वह क्षीण हो जाती है।

इसमे सन्देह नहीं कि मूल अधिगम और पुनः स्मरण अथवा प्रत्यभिज्ञा के बीच बीते समय की मात्रा विस्मृति की व्याख्या मे एक मुख्य कारक है किन्तु क्षय-सिद्धान्त की आलोचना भी हुई है। एक आलोचना इस तथ्य से उत्पन्न हुई कि कुछ सीखी हुई सामग्री की विस्मृति शीघ्र हो जाती है जबकि कुछ बहुत समय तक रहती है चाहे उसका प्रयोग कई दशकों तक न हो। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जिनमे अधिगम का धारण बिना किसी अभ्यास के लम्बे समय तक रहा है। बहुत से गत्यात्मक कौशल जैसे तैरना, साइकिल चलाना आदि विस्मृत नही होते चाहे व्यक्ति उनका प्रायः इस्तेमाल न करे। इसी प्रकार बहुत से शाब्दिक कौशल भी बहुत वर्षों तक धारित रखे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ प्राथमिक कक्षाओ मे याद की गई किसी कविता का स्मरण बहुत समय के बाद भी हो सकता है। वृद्ध-जनों द्वारा अपनी बाल्यावस्था की घटनाओ के विस्तृत वर्णन का पुनःस्मरण कर सकना भी देखा गया है।

अप्रयोग अथवा क्षय के कारण विस्मृति के प्रत्यय के विरुद्ध दूसरी आलोचना यह की जाती है कि एक ही समय में धारण की गई विभिन्न सामग्री को क्षय प्रक्रियाओ द्वारा समान रूप से प्रभावित करना चाहिए। किन्तु तथ्य यह है कि यदि हम दो चीज़ो को एक साथ सीखे तो दूसरे की अपेक्षा एक शीघ्र भूली जा सकती है।

क्षय सिद्धान्त के विरुद्ध एक तर्क और है कि स्मृतियाँ अप्राप्य हो सकती हैं किन्तु यह आवश्यक नहीं कि इनका क्षय हो ही गया हो। इस मत के अनुसार दीर्घकालीन स्मृति काफी स्थाई होती है और इसमे से सूचनाएँ खोती नहीं हैं। किन्तु दीर्घकालीन स्मृति में सूचनाओं तक पहुँचने तथा उन्हें सचयन मे से निकालने में कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं।

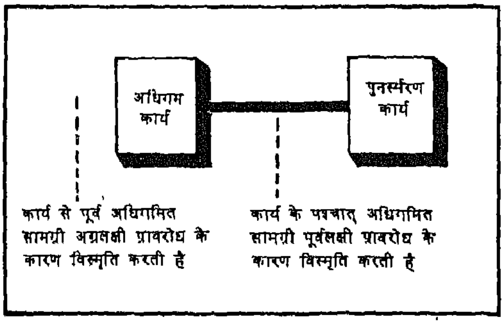
(ii) *विस्मृति का हस्तक्षेप सिद्धान्त*

एक और सिद्धान्त जो इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करता है कि विस्मृति क्यों होती है वह हस्तक्षेप करनेवाली क्रिया का सिद्धान्त है। अधिगमकर्ता की विविध क्रियाएँ और उसके नए अनुभवों की परस्पर क्रिया, सीखी जाने वाली सामग्री मे हस्तक्षेप के स्रोत प्रदान करती है। इसी से विस्मृति होती है। सुबह जागने पर आप रात्रि में देखे गए स्वप्न को स्पष्टतः याद कर सकते हैं। किन्तु जैसे ही आप जगने के बाद अन्य क्रियाएँ करते हैं तो स्वप्न के विवरण शीघ्र लुप्त हो जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि विविध उद्दीपनो के ज्ञानेन्द्रियों पर दबाव के कारण कुछ उद्दीपन अभिज्ञता से हटा दिए जाते हैं। अभिज्ञता

सारणी 6.2

पूर्वलक्षी प्रावरोध

समूह	*प्रथम अवस्था*	*द्वितीय अवस्था*	*तृतीय अवस्था*
प्रयोगात्मक	अधिगम कार्य-अ	अधिगम कार्य-ब	अधिगम कार्य-अ के धारण के लिए परीक्षण
नियन्त्रण	अधिगम कार्य-ब	असम्बन्धित कार्य अथवा विश्राम	अधिगम कार्य-ब के धारण के लिए परीक्षण



चित्र 6.6 हस्तक्षेप करनेवाली सूचना के कारण विस्मृति

में घटनाओं के बीच स्पर्धा होती है और कुछ विचार उस समय धूमिल पड़ जाते हैं जब हम उनका पुनः स्मरण करना चाहते हैं।

हस्तक्षेप मुख्यतः दो प्रकार के हो सकते हैं यथा नया अधिगम पुराने अधिगम में हस्तक्षेप कर सकता है—पूर्वलक्षी प्रावरोध अथवा पुराना अधिगम नए अधिगम मे हस्तक्षेप कर सकता है—अग्रलक्षी प्रावरोध। इस प्रकार पूर्वलक्षी प्रावरोध तब होता है जब सूचना की विस्मृति अधिगम कार्य के बाद प्रस्तुत की जाने वाली सूचना के कारण होती है। अग्रलक्षी प्रावरोध तब होता है जब सूचना की विस्मृति उस सामग्री के हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप होती है जो नये अधिगम कार्य से पूर्व सीखी गई थी।

पूर्वलक्षी प्रावरोध : पूर्वलक्षी प्रावरोध दैनिक जीवन में सामान्य है। पूर्वलक्षी प्रावरोध की प्रक्रिया का अध्ययन करने के लिए किए गए प्रयोगो मे बच्चो के एक समूह को किसी कार्य को सीखने को कहा जाता है। फिर उन्हें किसी दूसरे कार्य को सीखने को कहा जाता है और फिर प्रथम कार्य के धारण का परीक्षण किया जाता है। बच्चो के दूसरे समूह को भी प्रथम कार्य सीखने के लिए कहा जाता है। फिर उनसे विश्राम करने को कहा जाता है जिसके बाद प्रथम कार्य के धारण के लिए परीक्षण किया जाता है। दोनो समूहो की प्रथम कार्य में विस्मृति की सीमा की तुलना की जाती है। सामान्यतः यह देखा जाएगा कि वह समूह जिसे दूसरा कार्य सीखना पड़ा प्रथम कार्य को अधिक भूलेगा। ऐसे प्रयोगो से यह स्पष्ट होता है कि प्रथम कार्य और उसके बाद के कार्य में जितनी अधिक समानता होगी उतना ही अधिक हस्तक्षेप होगा और इसलिए प्रथम कार्य अथवा पहली बार सीखी सामग्री की विस्मृति भी अधिक होगी। दो कार्यो के बीच में जितनी अधिक समानता होगी पहले कार्य का धारण उतना ही कम होगा। तालिका 6.2 में एक प्रयोग का रूपांकन दिखाया गया है जो अतर्विष्ट

क्रिया अथवा पूर्वलक्षी प्रावरोध द्वारा हस्तक्षेप के प्रभाव का मापन करता है।

यदि पूर्वलक्षी प्रावरोध हुआ है तो दोनों समूहों मे विस्मृत सामग्री की मात्रा की तुलना करने पर यह स्पष्ट होगा कि प्रयोगात्मक समूह में विस्मृति अधिक हुई है।

अग्रलक्षी प्रावरोध : पूर्वकृत क्रिया और पूर्वघटित क्रियाओ के साहचर्यों के हस्तक्षेपो या अग्रलक्षी प्रावरोध का अध्ययन करने के लिए हम सारणी 6.3 मे दिए गए प्रयोगात्मक रूपांकन का इस्तेमाल कर सकते हैं।

यदि अग्रलक्षी प्रावरोध हुआ है तो प्रयोगात्मक समूह के बच्चे नियंत्रण समूह के बच्चो की तुलना मे कार्य को कम धारण करेंगे। यह उल्लेखनीय है कि इस दशा मे हस्तक्षेप करनेवाली क्रिया सीखनेवाली सामग्री से पहले आती है।

(iii) *सकेतों पर निर्भर विस्मृति का सिद्धान्त*

इस सिद्धान्त के अनुसार *सचयन मे अनुपयुक्त स्मृति संकेतो के कारण सूचना प्रत्यानयन मे असफल होने पर विस्मृति होती है* । हम पाते हैं कि जब हम किसी घटना अथवा सूचना के पुनःस्मरण का प्रयत्न करते हैं तो कुछ सकेत मिलने पर इसका पुनःस्मरण करना सरल होता है। उदाहरणार्थ आप किसी व्यक्ति का पुनःस्मरण करना चाहते हैं जिससे आप किसी प्रीतिभोज में मिले थे। किन्तु आपको उसका नाम या चेहरा ठीक से याद नहीं आ रहा है। तब कोई मित्र यदि उस व्यक्ति की पोशाक का वर्णन देता है तो आपको लगता है कि अब आप उस व्यक्ति का पुनःस्मरण कर सकते हैं। अतः उस व्यक्ति की पोशाक ने सकेत का कार्य किया और इसने सूचना के प्रत्यानयन मे आपकी सहायता की।

एक प्रयोग में विद्यार्थियो को शब्दो की सूचियाँ याद करने को कहा गया। यह पाया गया कि विद्यार्थी विशिष्ट परीक्षण दशाओ मे केवल 20% शब्द ही याद रख पाए। किन्तु जब भूले गए शब्दो के पहले तीन शब्द सकेत के रूप मे प्रस्तुत किए गए तो उन्ही विद्यार्थियों ने सूची का 50% से अधिक भाग याद किया।

(iv) *संचयन की असफलता का सिद्धान्त*

विस्मृति की व्याख्या सूचना प्रक्रम उपागम के अनुसार सचयन की असफलता के रूप मे भी की गई है। जैसा पहले उल्लेख किया गया है कुछ सैकंड के लिए सूचनाएँ सवेदी स्मृति या सवेदी सचयन में रखी जाती हैं जहाँ इन पर अवधान दिया जा सकता है या इनकी अवहेलना की जा सकती है। यदि अवहेलना की गई है तो सूचना पर आगे कार्यवाही नही होती किन्तु यदि इस सूचना पर अवधान दिया जाता है तो ये अल्पकालीन सचयन मे चली जाती हैं। अल्पकालीन संचयन की क्षमता सीमित होती है। अतः यदि संचयन में अधिक सूचना भेज दी जाती है तो इसमें से कुछ सूचना बाहर धकेल दी जाती है। और इस प्रकार

सारणी 6.3

अग्रलक्षी प्रावरोध के अध्ययन के लिए प्रयोगात्मक रूपांकन

समूह	*प्रथम अवस्था*	*द्वितीय अवस्था*	*तृतीय अवस्था*
प्रयोगात्मक	अधिगम कार्य-अ	अधिगम कार्य-ब	अधिगम कार्य-ब के धारण के लिए परीक्षण
नियत्रण	कोई कार्य नहीं अथवा विश्राम	अधिगम कार्य-ब	अधिगम कार्य-ब के धारण के लिए परीक्षण

धकेली हुई या विस्थापित सूचना का धारण नही होता। यदि अल्पकालीन सचयन मे सूचनाओ को दोहराया न जाए तो वह सूचना खो भी सकती है। जो सूचना अल्पकालीन सचयन मे दोहरायी जाती है वह दीर्घकालीन संचयन मे चली जाती है। इस संचयन की क्षमता अधिक है और सूचना को अधिक समय तक रोक सकता है। यहाँ सूचना सगठन के नये ढंगों मे संकेतित हो सकती है और बारम्बार दोहराई जा सकती है।

अतः पहली दो अवस्थाओ मे से सूचना किसी मे भी खो सकती है और हो सकता है दीर्घकालीन सचयन मे पहुँचे ही नही। इस प्रकार विस्मृति सचयन की असफलता के कारण भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति दीर्घकालीन सचयन में से सूचना प्रत्यानयन में तभी सफल हो सकते हैं यदि प्रत्यानयन के लिए उचित सकेत प्रस्तुत हो और वह सूचना दूसरी सूचना से अलग की जा सके। किन्तु यदि अधिगम के साथ सूचना का स्थायी परिष्करण हो चुका है तो सूचना का उसके मूल रूप मे प्रत्यानयन सम्भव नही भी हो सकता।

(v) *अभिप्रेरणात्मक विस्मृति*

इतना उल्लेखनीय है कि पूर्व वर्णित विस्मृति सिद्धान्तो मे से किसी ने भी व्यक्ति की आवश्यकताओ, इच्छाओ, कामनाओ तथा अभिलाषाओ को स्थान नहीं दिया। *यह सभव है कि व्यक्ति किसी विशेष सूचना को याद रखने के लिए और दूसरी को भूलने के लिए अभिप्रेरित हो* । वह सूचना जो किसी व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण है, याद रखी जा सकती है जैसे किसी समारोह मे भेंट हुए किसी आकर्षक व्यक्ति का नाम। किन्तु वे स्मृतियाँ जो दुख अथवा दुश्चिन्ता के कारण हो सकती है उनकी विस्मृति की सम्भावना होती है। फ्रॉयड प्रथम मनोवैज्ञानिक थे जिन्होने अपने रोगियो के निरीक्षण के आधार पर अभिप्रेरणात्मक विस्मृति के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

फ्रॉयड ने 'दमन' पद का इस्तेमाल व्यक्ति की उस प्रवृत्ति के सदर्भ मे किया है जिससे व्यक्ति भय अथवा दुखद अनुभवो से सबधित किसी भी वस्तु की स्मृति का परिहार करते हैं। उनका विचार था कि बहुत सी स्मृतियाँ जिनसे कष्ट, बेचैनी या दुश्चिन्ता होती है उनके अवरोधन या दमन की सम्भावना होती है। उदाहरणार्थ यह पाया गया कि कुछ सैनिक युद्धस्थल से स्मृतिलोप से ग्रस्त होकर लौटते है। ऐसी विस्मृति चयनित होती है। ये सैनिक यह तो नही भूलते कि वे कौन हैं तथा कहाँ से आए हैं अर्थात् उनका 'घर' कहाँ है किन्तु वे युद्ध के अनुभवो के वर्णनो का पुन. स्मरण करने मे असमर्थ होते हैं। प्राय· विस्मृत अनुभव वे होते है जो उन्हे शर्मिन्दा करते है अतः इन अनुभवो के दमन से सैनिक उन विचारो द्वारा उत्पन्न व्यथा और अपमान का परिहार करने मे समर्थ हो जाते हैं। अहम् की रक्षा की एक युक्ति दमन है जिसके बारे मे आप बाद मे पढेगे।

अभिप्रेरणात्मक विस्मृति पर प्रयोग करते समय समान अनुभवो को अनुरूप करना कठिन होता है। मनोवैज्ञानिक भी नैतिक कारणों से प्रयोज्यो को तुलनात्मक दशाओ मे रखने मे हिचकिचाएँगे। एक सरल परीक्षण मे महाविद्यालय के विद्यार्थियों के दो समूहो ने निरर्थक अक्षरो की एक सूची सीखी। इसके बाद उन्हें एक और स्मृति कार्य करना था जिसमे थपकियो के जटिल आकारो का पुनरुत्पादन करना था। प्रयोगात्मक समूह के प्रयोज्यो को यह बताया गया कि वे बुरी तरह असफल रहे हैं और जो नियन्त्रण समूह मे थे उन्हें यह बताया गया कि उन्होने अच्छा किया है। बाद मे दोनो समूहो को निरर्थक अक्षरों के धारण के लिए एक परीक्षण दिया गया। यह पाया गया कि नियत्रित समूह का निष्पादन प्रयोगात्मक समूह की अपेक्षा अच्छा था। दूसरे समूह ने निरर्थक अक्षरों की अपनी स्मृति को दमित कर दिया था क्योकि उस परीक्षण का बाद के परीक्षण से साहचर्य हो गया होगा जिसके कारण उन्हें अपमान तथा लज्जा का सामना करना पडा। जब इन प्रयोज्यों को

सफलतापूर्वक थपकी वाला कार्य करने के लिए एक और अवसर दिया गया तो निरर्थक अक्षरों के पुनःस्मरण में सुधार हुआ। दमन के कारणो को हटाने से धारण अच्छा हुआ।

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यद्यपि विस्मृति के विभिन्न सिद्धान्त हैं किन्तु ये आपस मे अनन्य या पूर्ण नही हैं। स्मृति को पूर्णरूपेण समझने के लिए इन विविध उपागमों को ध्यान मे रखना चाहिए।

स्मृति को प्रभावित करने वाले कारक

धारण को प्रभावित करनेवाले बहुत से कारक ये है: (i) अधिगम और धारण परीक्षण के बीच का समय, (ii) अधिगम की मात्रा, (iii) सामग्री का प्रकार, (iv) अधिगम की विधि, (v) प्रस्तुत की गई सूचना का सदर्भ, (vi) दूसरे कार्यों का अधिगम, तथा (vii) सामग्री की मात्रा।

(i) *अधिगम और धारण परीक्षण के बीच का समय*

एक सामान्य अवलोकन यह है कि जैसे-जैसे समय बीतता जाता है विस्मृति उतनी ही अधिक होती है। इससे ऐसा विश्वास हो सकता है कि *समय के कारण विस्मृति* होती है। किन्तु यह प्रदर्शित किया जा चुका है कि समय उन प्रक्रियाओं को कार्यान्वित होने देता है जो विस्मृति का कारण होती है। समय के कारण विस्मृति के मापन के क्रमबद्ध प्रयत्न सर्वप्रथम एबिंगहॉस ने किए। धारण का मापन बचत अक के रूप मे किया गया। उन्होने पाया कि विस्मृति की गति अधिगम के तुरत बाद तेज होती है तथा जैसे-जैसे समय बीतता है विस्मृति की गति धीमी होती जाती है। किन्तु दूसरे अध्ययनो से ज्ञात हुआ है कि समय के साथ शाब्दिक सामग्री के धारण वक्र की तुलना में गत्यात्मक आदतो का वक्र धीरे नीचे आता है। स्मृति पर किए गए अनेक प्रयोगो से यह दृढ़ होता है कि स्मरण की हुई सामग्री मे समय अन्तराल के साथ परिवर्तन होते है।

(ii) *अधिगम की मात्रा*

स्मृति को प्रभावित करनेवाला एक स्पष्ट चर सीखने की मात्रा है। *अन्य बातो के समान होने पर यदि अधिगम की मात्रा जितनी अधिक होगी धारण की मात्रा उतनी ही अच्छी होगी।*

एबिगहॉस ने अधिगम की मात्रा मे निरर्थक अक्षरो की सूचियों को दोहराने की सख्या द्वारा फेरबदल किया। धारण का मापन सूचियो के पुनः सीखने मे बचे समय द्वारा किया गया। परिणामो से ज्ञात हुआ कि दोहराने की सख्या बढ़ने के साथ बचत अको मे भी वृद्धि हुई। यह भी पाया गया है कि सीखने की मात्रा का प्रभाव तब अधिक होता है जब सामग्री को एक परिशुद्ध प्रयत्न की कसौटी से अधिक बार सीखा जाए। एक सूची के परिशुद्ध कसौटी के प्रयत्न के बाद लगातार पुनरावृत्ति करने से पुन.स्मरण और पुन. अधिगम के अको मे विभिन्न अन्तरालो के बाद वृद्धि होती है।

(iii) *सामग्री का प्रकार*

सामग्री का प्रकार सीखने के मान को प्रभावित करता है। *सार्थक सामग्री निरर्थक सामग्री की अपेक्षा अधिक आसानी से सीखी जाती है*। सार्थकता एक महत्त्वपूर्ण चर है जो अधिगम की गति को प्रभावित करता है। यह देखा गया है कि सार्थक सामग्री को निरर्थक सामग्री की अपेक्षा स्मरण करना अधिक सरल होता है। एक अध्ययन मे प्रयोज्यो के चार समूहो ने विभिन्न 10 मदों की सूची को 2 मिनट तक याद किया। एक समूह को तीन अक्षरो का शब्द सीखना पड़ा जैसे बबलू , पूनम, फासला आदि जबकि दूसरे तीन समूहो ने निरर्थक अक्षरो को सीखा जो सार्थकता मे भिन्न थे। परिणामो से ज्ञात हुआ कि धारण की मात्रा सार्थकता पर निर्भर थी अर्थात् सामग्री जितनी अधिक सार्थक थी, धारण उतना ही अधिक था। शब्दो की सार्थकता का मूर्तता तथा अमूर्तता के आयाम पर भी विचार किया जाता है। मूर्त शब्द प्रतिमा को अधिक सरलता से उभारते है और इसलिए अमूर्त शब्दो की

तुलना में जो मानसिक रूप से कल्पना करने में कठिन होते हैं, अधिक आसानी से याद किए जा सकते हैं। शब्दों की अपेक्षा चित्र अधिक याद रखे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ हारमोनियम का चित्र हारमोनियम शब्द की अपेक्षा अधिक सरलता से याद रखा जा सकता है तथा 'हारमोनियम' शब्द की मूर्त प्रतिमा होने के कारण न्याय शब्द की अपेक्षा जो अमूर्त है, अधिक सरलता से स्मरण किया जा सकता है।

(iv) *अधिगम की विधि*

अधिगम को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण चर अधिगम की विधि है। *एक ही सामग्री को अविरम एकत्र अभ्यास विधि और विश्राम सहित वितरित अभ्यास विधि द्वारा सीखने पर, अधिगम मे लिए गए समय मे अन्तर होता है*। एक अध्ययन में प्रयोज्यो को निरर्थक अक्षरों की सूचियो को अविराम एकत्र अभ्यास विधि तथा विश्राम सहित वितरित अभ्यास विधि द्वारा प्रयासों के बीच में दो मिनट का समय अन्तराल देकर सीखना था। प्रयोज्यों को एक परिशुद्ध पाठन की कसौटी तक सीखना था। परिणामो से ज्ञात हुआ कि प्रयोज्यों को सूचियों के परिशुद्ध पाठन के लिए वितरित अवस्थाओं की अपेक्षा एकत्र अवस्थाओ द्वारा अधिगम मे अधिक प्रयासों की आवश्यकता पड़ी। ऐसे ही परिणाम दूसरे प्रकार की सामग्री के साथ पाए गए।

(v) *प्रस्तुत की गई सूचना का संदर्भ*

सभी उत्तेजनाएं एक पृष्ठभूमि अथवा संदर्भ में प्रवेश पाती हैं किन्तु वास्तविक जीवन में उद्दीपन की दशाएँ कभी एक सी नहीं रहती। चूँकि संदर्भ को मात्रात्मक रूप से विचलन करना कठिन होता है अतः प्रयोगशाला के अध्ययनों मे उद्दीपन संदर्भ के केवल अल्प भाग का विचलन किया गया है और अधिगम और प्रत्यास्मरण पर इनके प्रभाव का अध्ययन किया गया है। एक अध्ययन में निरर्थक सूचियो के युग्म प्रयुक्त किए गए थे। प्रयोगात्मक समूह के लिए पृष्ठभूमि संदर्भ शब्दों को विभिन्न रंगो के कागज़ पर रखकर बदल दिया गया और फिर बाद में पुनःस्मरण किए गए शब्दों को लिखने के लिए कागज़ का रंग बदल दिया गया। नियत्रित समूह के लिए शब्दों का संदर्भ अधिगम और पुनःस्मरण मे समान रखा गया। परिणामों मे अधिगम पर सदर्भ का प्रभाव स्पष्ट दिखाई दिया। *सदर्भ मे परिवर्तन की अपेक्षा अपरिवर्तनीय दशाओ मे अधिक सही अनुक्रियाओ का पुनःस्मरण किया गया* । इन परिणामों से यह प्रतीत होता है कि सदर्भ एक प्रभावशाली चर है। संदर्भ मे जितना अधिक परितवर्तन होगा पुनःस्मरण में उतना ही ह्रास होगा।

(vi) *दूसरे कार्यों का अधिगम*

दूसरे कार्यों का सीखना स्मृति को प्रभावित करता है। यहाँ पूर्वलक्षी प्रावरोध तथा अग्रलक्षी प्रावरोध महत्वपूर्ण चर है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है पूर्वलक्षी प्रावरोध अधिगम और धारण परीक्षण के बीच होने वाले अधिगम के परिणामस्वरूप कार्य के धारण का ह्रास है। अग्रलक्षी प्रावरोध में उस अधिगम जिस पर धारण का परीक्षण किया जा रहा है, उससे पूर्व के अधिगम के फलस्वरूप धारण मे ह्रास होता है।

(vii) *सामग्री की मात्रा*

सामग्री की मात्रा के बढ़ने के साथ-साथ उसके अधिगम का समय भी बढ़ता है । इसका तात्पर्य है कि जब सामग्री लम्बी हो जाती है तो प्रयोज्य उस सामग्री के अधिगम में अधिक समय लेते हैं।

निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि स्मृति अनेक चरों की परस्पर क्रिया का कार्य है। किन्तु अगला प्रश्न उठता है वह यह है कि "क्या स्मृति को सुधारा जा सकता है? स्मृति की प्रक्रियाओ को समझने के बाद प्राप्त सूचना के आधार पर स्मृति को सुधारने मे क्या इसे प्रयुक्त किया जा सकता है?"

अच्छी स्मृति की ओर

अच्छी स्मृति के लिए सामग्री अथवा सूचना को अच्छी

तरह सीखना चाहिए। अधिकांशतः ऐसा होता है कि विद्यार्थी अपने लिए आसान कसौटी बना लेते है जिसके परिणामस्वरूप सूचना अच्छी तरह नहीं सीखी जाती। यह भी होता है कि यदि प्रत्यय जाने पहचाने होते हैं तो ऐसा लगता है कि वे इनको जानते है इसलिए वे इनको आवश्यक कसौटी तक नही सीखते। इस प्रकार विषय को जानने का विचार उसके प्रभावपूर्ण सीखने में बाधक बनता है। *अति अधिगम* अर्थात् सामग्री के निपुणता के न्यूनतम अपेक्षित स्तर से आगे सीखने से सामग्री को लम्बे समय तक धारण करने मे सहायता मिलती है। इसके प्रभाव थोडे दिनो की अपेक्षा बहुत दिनो बाद तक टिकाऊ होते हैं।

अति अधिगम *स्वचलीकरण* की ओर अग्रसर करता है। जब कोई सामग्री अनेक बार सीखी जाती है तो वह स्वचालित अर्थात् यन्त्रवत् हो जाती है। तब कोई कौशल अधिक ध्यान दिए बिना ही निष्पादित किया जा सकता है। स्वचलीकरण उपयोगी है क्योकि यह मस्तिष्क को किसी कार्य को करते समय दूसरे कार्यो की ओर अवधान देने के लिए स्वतन्त्र छोड़ देता है।

सूचनाओ को संगठित करने के लिए बेहतर साधनो का उपयोग अच्छे पुन. स्मरण की ओर अग्रसर करता है। सूचनाओ को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए कि वे स्मृति की वर्तमानं श्रेणियो के अनुरूप हो जाएँ। इस उद्देश्य के लिए प्रयोज्य अपने सगठनात्मक संकेतन का उपयोग कर सकते हैं। अति अधिगम इस *व्यक्तिपरक संगठन* को सुदृढ़ बनाता है और अच्छे प्रत्यास्मरण की ओर अग्रसर करता है। यद्यपि अल्पकालीन स्मृति एक समय मे पाँच से नौ मद तक धारण कर सकती है किन्तु इस स्मृति विस्तार को पुनः *कूट सकेतन* या *खण्डीकरण* प्रक्रिया द्वारा बढ़ाया जा सकता है। यह एक बटुए के समान होता है जिसमे बीस पैसे के 300 सिक्के नहीं आ जाते किन्तु यदि इन्हें एक रुपये के सिक्कों मे परिवर्तित कर दिया जाए तो उसी बटुए मे एक रुपये के 60 सिक्के आ जाएँगे।

स्मरण युक्तियो का उपयोग भी स्मृति मे सुधार लाने के लिए हो सकता है। इन विधियों का उपयोग सामग्री को सगठित करने के लिए किया जाता है जिससे सामग्री को आसानी से पुनःस्मरण करने मे सहायता मिलती है। इन विधियों मे सबसे सरल विधियाँ *तुकान्त* और *तुकबन्दियाँ* हैं। उनका उपयोग तारीखो और दूसरे तथ्यों को याद करने के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए तीस दिन सितम्बर के, अप्रैल, जून, नवम्बर के। ऐसी दूसरी विधि *स्थान निर्धारण* विधि है। इस विधि मे प्रतिमाओं का उनकी स्थानिक स्थितियो से साहचर्य किया जाता है। उदाहरणार्थ व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति का नाम याद करना चाहते हैं जो किसी प्रीतिभोज मे आए थे तो ऐसा करने के लिए सबसे आसान उपाय यह होगा कि उन्हें उनके बैठने की स्थितियो को ध्यान मे रखकर पुन.स्मरण किया जाए। *सख्या कील प्रविधि* एक और प्रकार की स्मरण युक्ति है जो पुनःस्मरण करने मे सहायक होती है। प्रत्येक सख्या की उससे मिलते जुलते आकार के चित्र द्वारा कल्पना की जाती है और याद की जाने वाली वस्तुओ को उन चित्रो से जोडा जाता है। उदाहरणार्थ 1 को मोमबत्ती जैसा देखा जाता है और पहली वस्तु मोमबत्ती को पकडे हुये जैसे कल्पना की जाती है, 2 को हंस की भाँति देखा जाता है और 2 सख्या वाली वस्तु हंसो को खिलाने जैसे चित्र की कल्पना की जाती है। फिर वस्तुओ को इसी क्रम में रखकर उनका मानसिक प्रतिमाओ के रूप में पुन.स्मरण किया जाता है। वस्तुओ को *कहानी रूप* मे भी याद किया जा सकता है। वस्तुओ को प्रतिमाओ के रूप मे याद करने से हस्तक्षेप नहीं होता। दृश्यात्मक प्रतिमाएँ धारण मे भी सहायता करती हैं।

विद्यार्थियो द्वारा याद करने के लिए प्रयुक्त उपायो में व्यक्तिगत भेद है। उपाय से निरपेक्ष होकर यह आवश्यक है कि मेहनत से काम करें। वृतान्त का शीघ्रता से विवरण लिखने की योग्यता विकसित करें ताकि प्रभावपूर्ण ढंग से स्मरण किया जा सके।

सारांश

स्मृति एक महत्त्वपूर्ण मानसिक प्रक्रिया है। स्मृति के सघटक सकेतन, सचयन और प्रत्यानयन हैं। स्मृति का सूचना प्रक्रमण प्रतिमान बताता है कि स्मृति तत्र मे सवेदी स्मृति, अल्पकालीन सचयन और दीर्घकालीन सचयन होते हैं। प्रत्यानयन का माप पुनःस्मरण, प्रत्यभिज्ञा और बचत अक के रूप मे हो सकता है। विस्मृति की व्याख्या पुनःस्मरण की असफलता के रूप में की गई है। विस्मृति के सिद्धात क्षय, हस्तक्षेप, सकेत निर्भरता, सचयन की असफलता और अभिप्रेरणात्मक विस्मृति है। स्मृति को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारक अधिगम और धारण के बीच का समय अन्तराल, सीखने की मात्रा, सामग्री के प्रकार, सीखने की विधि, प्रस्तुत की गई सूचना का सदर्भ, दूसरे कार्यों का सीखना और सामग्री की मात्रा हैं। अति-अधिगम, स्वचलीकरण, व्यक्तिपरक सगठन, खडीकरण, स्थान निर्धारण विधि, सख्या कील प्रविधि और कहानी रूप ये बहुत से उपाय हैं जिन्हें स्मृति मे सुधार लाने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

प्रश्न

1. स्मृति तत्र के विभिन्न सघटकों के रूप मे सकेतन, सचयन और प्रत्यानयन प्रत्ययो की व्याख्या कीजिए।
2. स्मृति के सूचना प्रक्रमण प्रतिमान पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
3. दीर्घकालीन स्मृति मे सूचनाएँ किस प्रकार सचित होती हैं?
4. स्मृति के मापन के विभिन्न उपाय कौन-कौन से है?
5. विस्मृति क्या है? विस्मृति के एबिंगहॉस वक्र का वर्णन कीजिए।
6. सक्षेप मे विस्मृति के विभिन्न सिद्धान्तो की व्याख्या कीजिए।
7. स्मृति को प्रभावित करनेवाले कारको पर टिप्पणी लिखिए।
8. निम्नलिखित पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :
   (क) व्यक्तिपरक संगठन
   (ख) अभिप्रेरणात्मक विस्मृति
   (ग) एकत्र और वितरित अभ्यास
   (घ) संवेदी स्मृति
   (ङ) अल्पकालीन स्मृति
   (च) दीर्घकालीन स्मृति

एकक 7

चिन्तन

इस एकक को पढ़ने के पश्चात् विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे
- चिन्तन की परिभाषा कर सकें;
- चिन्तन में प्रतिमा और भाषा की भूमिका बता सकें;
- प्रत्यय, इसके प्रकार और प्राप्ति का वर्णन कर सकें;
- समस्या-समाधान की प्रकृति और कुशल नीतियो का वर्णन कर सकें,
- समस्या-समाधान को प्रभावित करने वाले कारको की व्याख्या कर सके;
- सृजनात्मक चिन्तन और उसकी अवस्थाओ को समझ सके।

हम ससार को प्रत्यक्षीकरण द्वारा जानते हैं किन्तु यदि हम एक क्षण विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि मनुष्य की उपलब्धियो मे मात्र प्रत्यक्षीकरण से कुछ अधिक होता है। हम अपने चारो ओर मनुष्य द्वारा निर्मित अनेक वस्तुएँ देखते हैं जैसे मशीन, रेडियो, दूरदर्शन, वायुयान, अतरिक्षयान आदि। ये वस्तुऐं प्रदर्शित करती हैं कि मनुष्य ने 'चिन्तन' का प्रयोग किया है। मनुष्य द्वारा चिन्तन और कल्पना के मिश्रण से वैज्ञानिक नियमो की खोज और नए आविष्कार हुए हैं। इस प्रकार सोचने की क्षमता मनुष्य का एक महत्वपूर्ण गुण है और मानव व्यवहार की जानकारी तब तक अपूर्ण रहेगी जब तक इस अपूर्व मानव क्षमता का अध्ययन न किया जाए।

चिन्तन व्यक्तिगत पहचान के भाव की ओर अग्रसर करता है, प्रत्यक्षीकरण के लिए सदर्भ देता है तथा हमारे अनुभवो का प्रतिनिधित्व करने मे सहायक होता है। इसका अधिगम की प्रक्रिया से घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योकि अधिकाशत. हमारे सोचने के उपकरण जैसे 'प्रत्यय' सीखे हुए होते है। इसके अतिरिक्त हमारे जीवन मे चिन्तन के अधिकतम अश मे स्मृति सम्मिलित होती है। वास्तव मे जिसे हम चिन्तन के रूप मे जानते है वह स्मरण होता है। उदाहरण के लिए जब आप कहते है कि "काश मुझे उसका नाम याद आ जाए" तो आप पूर्व अधिगमित नाम को याद करने की कोशिश कर रहे है। किन्तु फिर भी कुछ ऐसी स्थितियाँ होती है जिनमे चिन्तन विविध रूप ले लेता है। जब आप दिवा स्वप्न देखते हैं और हवाई किले बनाते है तो आप मनोविलास मे होते है। वैज्ञानिक जो अनुसधान कार्य कर रहे है वे कुछ खोजने की कोशिश कर रहे है। साधारणतम कोटि का चिन्तन सरल साहचर्य है।

चिन्तन सामान्यतः हर समय होता रहता है फिर

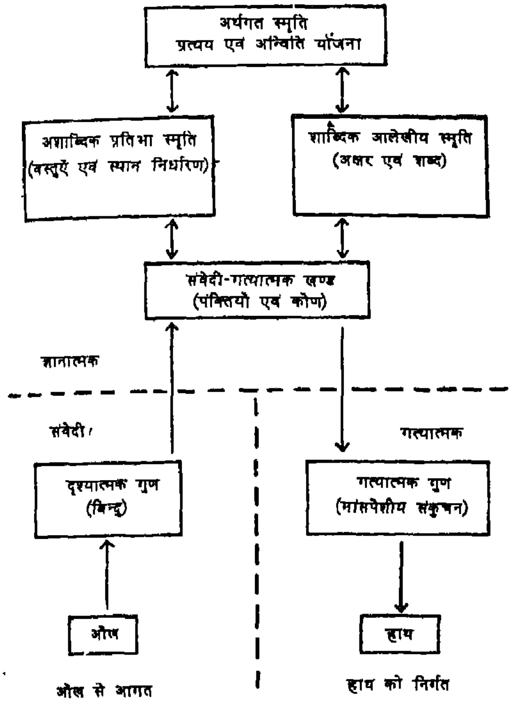
भी इसकी परिभाषा करना कठिन है। अनेक मनोवैज्ञानिको ने चिन्तन के वर्तमान प्रत्यय को निरूपित किया है। जॉन बी वाटसन पहले पथप्रदर्शको मे से एक थे जिन्होने व्यवहार के विज्ञान मे से आंतरिक प्रक्रिया की भूमिका को अलग करने का प्रयत्न किया। उन्होने चिन्तन को अधो-स्वर-भाषण माना जिसमें बाह्य उद्दीपन व्यावहारात्मक अनुक्रिया को उत्पन्न करती है। किन्तु इस सिद्धात को अनुभव-मूलक अनुसधानो से समर्थन नही मिला। एक मनोवैज्ञानिक ने अपने आप को थोडे समय के लिए 'क्युरारे' नामक औषध से सस्तभित कर लिया और अपनी विचार प्रक्रिया पर इसके प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने यह पाया कि यद्यपि वह अपनी किसी एक भी मासपेशी को हिला नही सकते थे फिर भी वह उन घटनाओं का प्रत्यक्षीकरण, समझ और सोच पा रहे थे जो उनके चारो ओर घट रही थी।

चिन्तन के विषय मे दूसरा दृष्टिकोण इसे एक सूचना देने की प्रक्रिया के रूप मे मानता है जो किसी घटना के उद्दीपन और अनुक्रिया के बीच घटित होता है। उदाहरणार्थ आप कोई विज्ञापन देखते हैं जिसमे साइकिल किस्तो पर मिल रही है। यहाँ विज्ञापन को देखना उद्दीपन घटना है जो आप मे साइकिल खरीदने की इच्छा जागृत करती है। अन्ततः आप उसे खरीदने का निर्णय कर लेते हैं। किन्तु इस निर्णय से पहले इस बीच बहुत सी प्रक्रियाएँ घटित होती हैं। आप उस विशेष प्रकार और किस्त योजना के सकारात्मक और नकारात्मक बिन्दुओ को तौलते है। आप अपनी आर्थिक स्थिति को भी देखते हैं। इन सब विषयो पर विचार करने के पश्चात् आप साइकिल खरीदने की अन्तिम अनुक्रिया करते हैं।

आप कपड़ा खरीदने के लिए बाज़ार जाते हैं। दुकान पर आपको विभिन्न रंगो, बुनावट व मूल्यों के कपडे दिखाये जाते हैं। आप कपड़े के प्रकार, रंग व मूल्य पर विचार करेंगे और तब इसके बारे मे अंतिम निर्णय करेंगे। दूसरे शब्दो मे उद्दीपन स्थिति अर्थात् कपड़ो और अनुक्रिया अर्थात् पसन्द के बीच चिन्तन घटित हो चुका है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि चिन्तन उद्दीपन और अनुक्रिया के बीच मध्यस्थता करता है।

पिछले कुछ दशको में चिन्तन अथवा विचारात्मक प्रक्रियाओ के अध्ययनो की दिशा मे परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन ज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य की ओर स्थानान्तरित हुआ है। अब मनोवैज्ञानिक इसे 'ज्ञानात्मक प्रक्रिया' कहना अधिक पसन्द करते हैं जिसका तात्पर्य उन प्रक्रियाओ से है जो चिन्तन, तर्कणा, समस्या-समाधान, सृजनात्मकता तथा निर्णय करने से सबधित प्रतीको और प्रत्ययो के निर्माण एव उनके प्रयोग मे प्रयुक्त होती हैं।

ज्ञानात्मक उपागम अर्थात् प्रक्रमण स्तर उपागम चिन्तन को एक नई दृष्टि से देखता है। यह उपागम ज्ञानात्मक रूपात्मकता को दृश्य, श्रवण, संवेदी गत्यात्मक या शाब्दिक के रूप मे वर्णित करता है। प्रत्येक रूपात्मकता के प्रक्रम के अनेक स्तर हैं। इस मत के अनुसार मानव मस्तिष्क मे एक मज़बूत ऊर्ध्वाकार श्रेणीबद्ध सगठन है। मूल स्तर संवेदी होते हैं जो ऊपरी आगत को ग्रहण करते हैं और ऊपरी निर्गत उत्पन्न करतें हैं। गत्यात्मक केवल नीचे की ओर की आगत ग्रहण करते हैं नीचे की ओर ही निर्गत ग्रहण करते और उत्पन्न करते हैं। संवेदी स्तर इसलिए उद्दीपन और गत्यात्मक स्तर अनुक्रिया का प्रतिनिधित्व करते हैं। उद्दीपन और अनुक्रिया के बीच ससार का ज्ञानात्मक प्रतिरूप होता है जो कार्य मे न तो पूर्ण रूप से सवेदी होता है और न गत्यात्मक। प्रत्येक रूपात्मकता मे इसलिए सबसे ऊपर अमूर्त ज्ञानात्मक स्तर होता है। वह रूपात्मकता जो हमे अक्षरो, शब्दो को पढ़ने या लिखने देती है उसमे ज्ञानात्मक सवेदी गत्यात्मक खडो का स्तर होता है जिसका प्रतिनिधित्व पक्तियो और कोणो मे होता है तथा इस ज्ञानात्मक खड स्तर के नीचे भी एक सवेदी एव गत्यात्मक स्तर होता है। यह उपागम चित्र 7.1 मे प्रस्तुत किया गया है।



चित्र 7.1 मानसिक प्रक्रमण का प्रक्रमण स्तर उपागम

उपरोक्त चर्चा को ध्यान मे रखकर यह कहा जा सकता है कि चिन्तन वह प्रक्रिया है जो तर्कणा, इच्छा और कल्पना की भाँति मस्तिष्क में चलती है। *चिन्तन मे वातावरण से प्राप्त सूचना तथा स्मृति मे संचित प्रतीकों की ज्ञानात्मक पुनर्व्यवस्था समाहित होती है ।*

प्रतीक

प्रतीक *वह चिन्ह है जो ससार में किसी घटना अथवा वस्तु के स्थान पर होता है* । दूसरे शब्दो में यह किसी दूसरी वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है। चिन्तन मे प्रयुक्त हुए प्रतीक, प्रतिमाएँ और भाषा-प्रतीक होते हैं। शब्द एक भाषा प्रतीक है। उदाहरणार्थ 'ऊँट' शब्द एक विशेष प्रकार के पशु के लिए प्रयुक्त किया जाता है। भारतवर्ष का मानचित्र भी प्रतीक का उदाहरण है और इसी तरह धन (+) का चिन्ह भी एक प्रतीक है। प्रतीको के इस्तेमाल करने पर किसी वस्तु या स्थिति की अनुपस्थिति मे भी उसके बारे मे चिन्तन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए जब हम किसी चलचित्र, दिवास्वप्न या बीजगणित की समस्या-समाधान के बारे मे सोचते हैं तो हम किसी वस्तु या स्थिति की अनुपस्थिति मे सोच रहे होते हैं। चिन्तन मे सन्निहित क्रिया साधारण भी हो सकती है और जटिल भी।

यह ध्यान रहे कि चिन्तन मात्र मानवीय क्रिया नही है। पशु भी सवेदना, प्रत्यक्षीकरण, अधिगम और समस्या-समाधान करते हैं। किन्तु वे सोचने और अभिव्यक्ति मे भाषा का प्रयोग नहीं करते।

विचारात्मक प्रक्रियाएँ रूप मे भिन्न होती हैं। चिन्तन स्वलीन या निर्देशित हो सकता है। स्वलीन चिन्तन रूप में निजी होता है और ऐसे प्रतीकों का प्रयोग करता है जिनका अर्थ भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न होता है। कुछ प्रतीको के अर्थ गुप्त होते हैं इसलिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए उनके अर्थ विशिष्ट होते हैं। ये व्यक्ति की आवश्यकताओ और अभिलाषाओ से निर्धारित होते हैं। विचारो की एक लड़ी घटित होती है। इस स्थिति मे चिन्तन का कोई उद्देश्य नही होता। यह स्वतन्त्र होता है। निर्देशित चिन्तन का उद्देश्य समस्या-समाधान करना या रचनात्मक होता है। इसमे समस्या-समाधान करने के लिए पर्यावरण से सूचना और दीर्घकालीन स्मृति के संचित प्रतीकों का इस्तेमाल सम्मिलित होता है।

प्रतिमा और चिन्तन

प्रतिमाएँ मस्तिष्क मे बने चित्र है । उनमें उद्दीपन की प्रस्तुति के बिना भी किसी प्रत्यक्ष की स्मृति रहती है। ये मानसिक चित्र हैं जिनके लिए स्पष्टत. कोई बाह्य उद्दीपन नहीं होता। प्रतिमाएँ प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय मे बनती हैं अर्थात् आप ध्वनि, दृश्य, स्वाद या बुनावट की कल्पना कर सकते हैं। व्यक्ति कल्पना करने मे भिन्न होते हैं। वे मानसिक प्रतिमाओं के विस्तार में

भी भिन्न होते है अर्थात् मानसिक प्रतिमा के वे विभिन्न प्रकार जिनमें उनके अधिकतम अनुभव होते है। अधिकाशतः मनुष्यो में दृश्य प्रतिमा सामान्य होती है। ऐसा देखा गया है कि व्यक्ति की सम्पूर्ण मानसिक प्रतिमाओं में दृश्य प्रतिमाओं का प्रभुत्व होता है। हम भिन्न आकारों की प्रतिमाएँ बनाने में भी समर्थ हैं।

चिन्तन में प्रयुक्त प्रतिमाएँ सामान्यतः अपूर्ण चित्र होते हैं। प्रतिमाएँ पूर्व अनुभवो के विशेष गुणो की अमूर्तता होती हैं। ये प्रतिमाएँ दीर्घकालीन स्मृति मे संचित सूचनाओ से बनती हैं। मानसिक प्रतिमाएँ समस्या-समाधान मे प्रयुक्त की जा सकती हैं। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति आपसे आपके क्षेत्र के किसी विशेष स्थान को जाने वाली सड़क पूछता है। आपके निर्देश देने से पूर्व या निर्देश देते समय क्या होता है? आप रास्ते की प्रतिमा बनाएँगे कि कौन से मोड़ हैं, कौन से सीमा चिन्ह हैं और फिर निर्देश देगे। किन्तु ये प्रतिमाएँ अपूर्ण होगी। उनमे केवल कुछ विवरण होगे जैसे सड़के, भवन, भवनो के रंग आदि। प्रतिमाएँ स्मृति मे सचित सूचनाओ के अमूर्त रूप हैं।

भाषा और विचार

भाषा और विचार के सबध का एक लम्बा और विवादग्रस्त इतिहास है। आरंभिक दार्शनिक ऐसा अनुभव करते थे कि चिन्तन के लिए भाषा एक उपकरण है और चिन्तन की प्रक्रियाएँ मुख्यतः भाषा की प्रकृति को निर्धारित करती हैं। इस सबध पर किए गए अध्ययनो ने विभिन्न रूप धारण किए हैं। जैसा पहले कहा जा चुका है, वाटसन ने मत व्यक्त किया था कि चिन्तन अधो-स्वर-भाषा अथवा एक प्रकार की 'मूक बातचीत' है। उन्होने यह तर्क दिया कि चिन्तन वाणी यत्रों की गतियो के बिना सभव नहीं है। किन्तु बाद मे हुए प्रयोगात्मक अध्ययनो से यह स्पष्ट हुआ कि वाणी यत्रो की मासपेशीय गतियो के बिना भी चिन्तन संभव है।

बी एल बोर्फ का विचार अलग ही था उन्होने *भाषात्मक सापेक्षता* के सिद्धान्त को प्रस्तावित किया। उन्होने यह तर्क दिया कि व्यक्ति जिस भाषा का इस्तेमाल करते हैं वह उनके अनुभव और विचार प्रक्रियाओ के रूप को निर्धारित करती है। उदाहरण के लिए एस्किमों बर्फ के लिए अनेक शब्द प्रयुक्त करते हैं किन्तु वे व्यक्ति जिनके जीवन मे बर्फ उतनी महत्वपूर्ण नही है, बर्फ के लिए केवल कुछ शब्द प्रयुक्त करते हैं। दूसरा उदाहरण अरबी भाषा मे ऊँट शब्द के लिए अनेक शब्दो का इस्तेमाल है किन्तु बोर्फ की भाषात्मक सापेक्षता की प्राक्कल्पना को अधिक समर्थन नही मिला। वर्तमान समय मे अधिकतर अनुसधानकर्ता भाषा पर विचार की प्राथमिकता के पक्ष मे है। सामान्यत· यह माना जाता है कि भाषा सापेक्षत· बाद का आविष्कार है और विचारो के विभिन्न रूप भाषा से स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हैं।

किन्तु शनैःशनैः समकालीन मनोवैज्ञानिक भाषा और विचार की अन्तर्निर्भरता को पहचानने लगे हैं।

प्रत्यय

व्यक्ति अपने एव दूसरो के बारे मे अनेक विचार रखते हैं। उदाहरणार्थ व्यक्ति अपने आपको शान्त, सवेदनशील, शर्मीला आदि कह सकते हैं । ये पद व्यक्ति की कुछ विशेषताओ का वर्णन करते है। जब कोई लड़की यह कहती है कि वह शर्मीली है, इसका सम्भवतः तात्पर्य है कि वह समूह में वाचाल नहीं है। उसे अपनी सहेलियो के पास जाने या उनसे चीजे उधार माँगने मे भय लग सकता है। वह अपने मन की भावनाएँ दूसरो को बताने मे डरपोक हो सकती है। जब व्यक्ति वस्तुओ, घटनाओ या व्यक्ति के व्यवहार को अनेक अवसरो पर श्रेणीबद्ध कर लेते हैं तो इसका तात्पर्य यह होता है कि वे उनके बारे मे प्रत्यय विकसित कर चुके हैं। दूसरे शब्दो मे प्रत्यय का तात्पर्य है *वस्तुओ के किसी समूह की समान विशेषताओ के प्रति एक ही जैसी अनुक्रिया करना* । ससार ऐसी वस्तुओ से पूर्ण है जिनके कुछ सामान्य गुण हैं जो उन्हें दूसरी वस्तुओ से विभेदित करते हैं। जब व्यक्ति किसी वस्तु के समान गुणो की

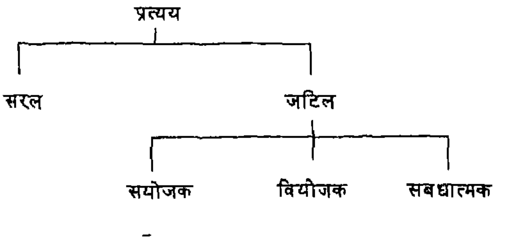
ओर अनुक्रिया करना सीख लेते हैं और उनकी भिन्नताओ की ओर ध्यान नही देते तो इसका अर्थ है कि उन्होंने प्रत्यय को सीख लिया हैं। जब बच्चे लाल गेद को या लाल टॉफी को विभिन्न रंगो की समान वस्तुओं मे से पहचान सकते हैं तो इसका तात्पर्य हुआ कि वे 'लाल रग' के प्रत्यय को सीख गए है। *प्रत्यय* वस्तुओं अथवा घटनाओ की एक श्रेणी अथवा वर्ग है जो एक नियम के आधार पर समूहबद्ध अथवा सयुक्त है जो सबद्ध गुण या गुणों का विशेषरूप से वर्णन करता है। यह प्रतीकात्मक निर्माण है जो वस्तुओ या घटनाओ की एक या अधिक सामान्य विशेषताओ का प्रतिनिधित्व करती है। प्रत्ययों के कुछ उदाहरण हैं बक्सा, कुर्सी, दिन, प्रजातन्त्र और द्वेष आदि।

व्यक्ति जो प्रत्यय नहीं बना सकते उनके लिए प्रत्येक वस्तु या घटना नवीन होगी। मान लीजिए कि आप पालतू के प्रत्यय से परिचित नही हैं। आप अपने मित्र के निवास पर जाते हैं, वहाँ उसका *पालतू कुत्ता* आपके ऊपर उछलने लगता है और आपके चेहरे को चाटने लगता है, आप डर जाएँगे। इसके विपरीत यदि आप 'पालतू कुत्ते' का प्रत्यय जानते हैं तो आप उस कुत्ते की पीठ थपथपाएँगे और उसे शान्त करने की कोशिश करेंगे।

प्रत्यय बहुत तरह से सहायक होते है। वे हमारे अनुभवो के संसार को वर्गीकृत और सगठित करते हैं। प्रत्ययों की अनुपस्थिति मे प्रत्येक घटना, वस्तु या अनुभव अद्वितीय होगा और उन्हें समझना और विभेदीकृत करना हमारी क्षमता के बाहर होगा। इस प्रकार प्रत्ययो को प्रयुक्त करने से हमारा यह जगत व्यवस्थित रहता है। प्रत्यय अधिगम और स्मृति के भार को कम करने मे सहायता करते हैं क्योकि एक प्रत्यय या श्रेणी से सबध रखने वाले सभी उद्दीपनों के लिए केवल एक अनुक्रिया ही आवश्यक होगी। ये वातावरण से समायोजन की हमारी योग्यता और वृद्धि मे सुधार करते हैं।

प्रत्ययों के प्रकार

मोटे तौर पर प्रत्यय दो वर्गों मे वर्गीकृत किए जा सकते हैं। सरल और जटिल। *सरल प्रत्ययो को केवल एक विशेषता या गुण के आधार पर पारिभाषित किया जाता है जैसे लाल, नीला, पीला या हरा। जटिल प्रत्यय वे होते है जो अनेक सामान्य विशेषताओ द्वारा पारिभाषित होते हैं, जैसे एक लाल वर्ग।* जटिल प्रत्ययो के प्रकार सयोजक, वियोजक और सबधात्मक हैं।



चित्र 7.2 प्रत्ययो के प्रकार

सयोजक प्रत्यय एक ही समय मे एक वस्तु की दो या अधिक विशेषताओ का प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरणार्थ 'लाल वर्ग' संयोजक प्रत्यय का उदाहरण है। इस प्रकार यदि चित्र लाल है साथ ही साथ वर्गाकार भी हो तो यह संयोजक प्रत्यय का उदाहरण होगा।

इसके विपरीत वियोजक प्रत्यय मे आने के लिए किसी वस्तु की अनेक विशेषताओ मे से कोई एक विशेषता हो सकती है। उदाहरण के लिए लाल या वर्गाकार या दोनो। इस प्रकार बहुत से गुणो में से कोई एक गुण उस वस्तु के प्रत्यय की श्रेणी मे ले आता है। ईंधन वियोजक प्रत्यय का उदाहरण है क्योकि कोयला, तेल या कोई अन्य वस्तु ईंधन के रूप मे प्रयुक्त की जाती है। 'यातायात के साधन' इस प्रकार के प्रत्यय का एक और उदाहरण है क्योकि यह घोड़ा, बस या कार हो सकते है।

संबंधात्मक प्रत्यय किन्हीं वस्तुओं या घटनाओं की विशेषताओं के आपसी संबंध इंगित करते हैं जैसे यह प्रत्यय 'एक मकान जिसमें खिड़कियों से अधिक दरवाजे हैं।' संबंधात्मक प्रत्ययों के अन्य उदाहरण हैं उसकी अपेक्षा हल्का, उससे छोटा, उससे लंबा आदि।

प्रत्ययों के कुछ प्रकार दूसरे प्रकारों की तुलना में आसानी से सीखने योग्य हैं। वियोजक प्रत्यय दूसरे प्रत्ययों की अपेक्षा सीखने में अधिक कठिन होते हैं। उदाहरण के लिए यदि प्रत्यय लाल वर्ग है तो लाल वृत्त, हरे वर्ग, लाल वर्ग, हरे वृत्त सभी इस प्रत्यय में आ जाते हैं क्योंकि वे लालिमा और वर्ग की विशेषताओं को पूर्ण करते हैं। यह निर्णय करना तब और भी कठिन हो जाता है जब आयामों की सख्या बढ़ायी जाती है।

प्रत्यय-प्राप्ति

जब हम कोई प्रत्यय सीखते हैं तो दो मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ कार्य करती हैं। ये सामान्यीकरण और विभेदीकरण हैं। हम दी हुई वस्तुओ अथवा घटनाओं के समूह में सामान्य तत्वों के प्रति अनुक्रिया करना सीखते हैं। हम देखते हैं कि विभिन्न वस्तुओ या घटनाओं में समान गुण होते हैं जैसे गेद की लालिमा, घास का हरापन या नीबू का पीला रंग आदि। इसके साथ ही साथ विभेदीकरण की क्रिया भी होती है। हम सार्थक गुणों जैसे लालिमा, हरापन या पीलेपन को दूसरे गुणों से पृथक करना सीखते हैं।

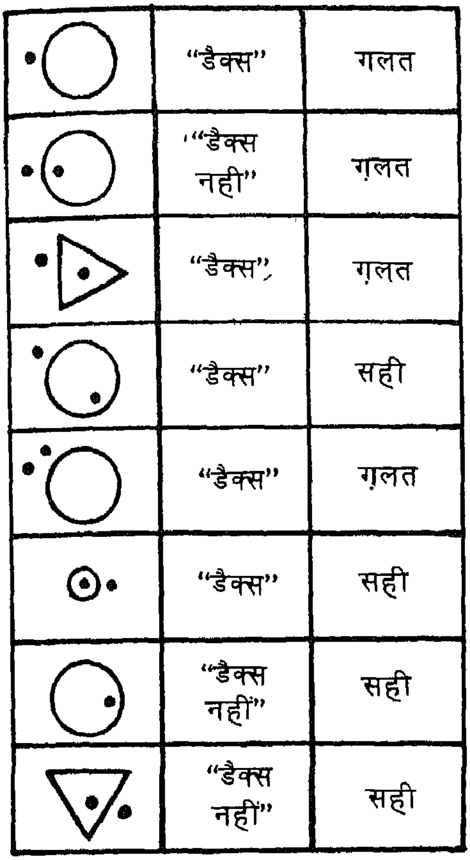
प्रत्यय-प्राप्ति के लिए हमे वस्तु अथवा घटना के सार्थक और निरर्थक गुणों को पहचानना चाहिए। इसलिए हमें सार्थक गुणो को अलग कर देना चाहिए। और निरर्थक गुणों को अस्वीकार कर देना चाहिए। प्रत्यय-प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि सार्थक गुणो को शासित करने वाले नियमों को भी खोज ले। जब नियमों को खोजकर उन्हें लागू किया जाता है तो प्रत्यय को पहचानना सम्भव हो जाता है। उदाहरणार्थ किसी वस्तु की लालिमा। इस तरह प्रत्यय-प्राप्ति मे द्विपक्षीय क्रियाएँ सम्मिलित हैं अर्थात् गुणो की खोज और नियम की खोज।

प्रायोगिक स्थिति में प्रत्यय-प्राप्ति के प्रयत्न मे प्रयोज्य का व्यवहार यादृच्छिक नही होता बल्कि वे प्राक्कल्पना के परीक्षण की प्रक्रिया का उपयोग करते हैं। प्रयोज्य को प्रत्यय के बहुत से उदाहरण तथा जो उदाहरण नहीं हैं दिए जाते हैं। वे प्राक्कल्पना बनाते हैं और बाद में उल्लेख करते हैं कि वह विशेष उदाहरण प्रत्यय का प्रतिनिधित्व करता है या नहीं। यदि यह प्रत्यय से संबंध रखता है तो प्रयोज्य को प्रयोगकर्ता बता देते हैं कि उसकी अनुक्रिया 'सही' है। यदि यह प्रत्यय का प्रतिनिधित्व नही करते तो उसे बता दिया जाता है कि उसका उत्तर 'गलत' है। पुनर्निवेशन प्राप्त होने पर प्रयोज्य प्राक्कल्पना को स्वीकार या अस्वीकार करते हैं। यह पाया गया है कि सही उदाहरण ग़लत उदाहरण की अपेक्षा अधिक सूचना देते हैं तथा प्रत्यय की शीघ्र प्राप्ति करने में सहायक होते हैं।

एक प्रयोग में प्रत्यय-प्राप्ति की विधि का अध्ययन किया गया। इस प्रयोग मे प्रयोज्यो के समक्ष ऐसे चित्र प्रस्तुत किए गए जो सुगठित रूप, आकार, बिन्दुओ की संख्या और बिन्दुओं की स्थिति के गुणो मे भिन्न थे। प्रत्येक प्रत्यय इन गुणो मे से कुछ के रूप मे पारिभाषित था। उदाहरण के लिए एक प्रत्यय 'डैक्स' एक वृत्त था जिसके अन्दर एक बिन्दु और बाहर दूसरा बिन्दु था। प्रत्यय को सीखने के लिए प्रयोज्य को सार्थक गुणो की खोज करनी थी अर्थात् एक वृत्त और दो बिन्दु। किन्तु केवल इतनी ही सूचना अपूर्ण है। प्रयोज्य को इन विशेषताओं को शासित करने वाले नियम की खोज करनी है अर्थात् एक बिन्दु वृत्त के अन्दर हो और एक बिन्दु वृत्त के बाहर होना चाहिए।

प्रत्यय-प्राप्ति की यह प्रक्रिया चित्र 7.3 में प्रस्तुत की गई है।

पहला उदाहरण जिसमे बिन्दु वृत्त के बाएँ बाहर की ओर है दिखाने पर, प्रयोज्य की अनुक्रिया 'डैक्स' होती है। तब प्रयोज्य प्राक्कल्पना कर सकते हैं कि प्रत्यय—'बाईं ओर बिन्दु' है। दूसरे प्रयास में एक बार



चित्र 7.3 प्रत्यय-प्राप्ति की प्रक्रिया

फिर जब उस वृत के लिए जिसमे वृत्त के अन्दर बाईं ओर एक बिन्दु है, और एक बाहर की ओर है, प्रयोज्य 'डैक्स नहीं' कहकर अनुक्रिया करते है तो उन्हें यह बताया जाता है कि उनकी अनुक्रिया गलत है। तब प्रयोज्य यह अनुभव करते हैं कि उनकी प्राक्कल्पना गलत है और वे नई प्राक्कल्पना बनाते हैं—"दो बिन्दु और एक वृत्त"। यह प्राक्कल्पना चौथे प्रयास मे सत्य सिद्ध होती है। इससे प्रयोज्य को यह अनुभूति होती है कि प्रत्यय एक वृत्त और दो बिन्दुओं के सबंध में है जिसमे दो बिन्दुओं की एक विशिष्ट स्थिति है। इसलिए वह अपनी प्राक्कल्पना को बदल देते हैं— 'एक वृत्त जिसके एक बिन्दु अन्दर है और एक बिन्दु बाहर है' तथा चौथे प्रयास मे यह प्राक्कल्पना सही सिद्ध होती है। इसके पश्चात् की उसकी सभी अनुक्रियाएँ सही होगी क्योकि उसने प्रत्यय की प्राप्ति कर ली है।

आदिप्ररूप

जबकि प्रयोगशाला मे प्रयुक्त प्रत्यय स्पष्ट और सुनिश्चित होते हैं वास्तविक जीवन मे प्रयुक्त प्रत्यय इतने स्पष्ट नहीं होते। अधिकतर प्रत्यय अस्पष्ट होते हैं इसका अर्थ यह हुआ कि वे एक दूसरे को आच्छादित कर लेते हैं। उदाहरणार्थ 'पक्षी' प्रत्यय मे बहुत गुण सम्मिलित हैं जैसे वे उड़ते हैं, उनका निश्चित आकार होता है, उनके पख होते हैं आदि। किन्तु फिर भी इस प्रत्यय के कुछ अच्छे उदाहरण हैं और कुछ अच्छे उदाहरण नही है। उदाहरण के लिए कोयल और कौआ 'पक्षी' प्रत्यय के अच्छे उदाहरण है किन्तु मुर्गा और पेंगुइन इस प्रत्यय के अच्छे उदाहरण नही हैं क्योकि पक्षी प्रत्यय के बहुत कम गुण इनमे मिलते हैं। जीवन की स्थितियों मे मिलने वाले प्रत्यय नियमो और गुणो के रूपों में जटिल होते हैं। वास्तव में हम प्रत्ययों को उनके उदाहरणो के रूप में अधिक इस्तेमाल करते हैं अपेक्षाकृत उनके वर्गीकरण, नियम या गुणो के रूप मे। हम प्रत्ययों का निर्माण उनके वर्ग के अच्छे उदाहरणों को पहचान कर करते हैं। उदाहरणार्थ हम जब भी किसी 'वृक्ष' के प्रत्यय के बारे में सोचते हैं तो किसी विशेष वृक्ष जैसे आम या नारियल की प्रतिमा मन में उभरती है। हम अपने से ऐसा नही कहते हैं कि "वृक्ष कोई ऐसी वस्तु होती है जिसमे हरी पत्तियाँ, तना, या जड़ होती है"।

किसी प्रत्यय का विशेष उदाहरण जो आसानी से मन मे आता है वह उस प्रत्यय का आदिप्ररूप कहलाता है । यह निश्चय करने के लिए कि कोई वस्तु एक वर्ग के अंतर्गत आती है अथवा नहीं सामान्यतः हम उस वस्तु की तुलना उस आदिप्ररूप

से करेंगे जो उस वर्ग का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण होगा। यदि वस्तु उसी आदिप्ररूप के समान मानी या समझी जाती है तो उसे उस वर्ग मे सम्मिलित कर लिया जाता है, किन्तु यदि वस्तु भिन्न होती है तो उसे दूसरे वर्ग मे रखा जाता है। अत: एक वर्ग के सदस्य अपनी आदिप्ररूपता मे भिन्न हो सकते हैं अथवा उस मात्रा मे भिन्न हो सकते हैं जिसमे वे आदिप्ररूप हैं। ऐसा पाया गया है कि आदिप्ररूप पर आधारित वर्ग शीघ्रता से अर्जित कर लिए जाते हैं और आदिप्ररूप प्रतिमाएँ सदर्भ बिन्दु की भाँति कार्य करने लगती हैं। यह भी पाया गया है कि उन वस्तुओं को 'सही है' यह अनुक्रिया करने मे कम समय लगता है जो उस प्रत्यय के अच्छे उदाहरण है। किन्तु व्यक्ति उन वस्तुओं को 'सही है' कहने मे अधिक समय लगाएँगे जो उस प्रत्यय के अच्छे उदाहरण नही है। यदि दो वाक्य "कौआ एक पक्षी है" और "पेगुइन एक पक्षी है" प्रस्तुत किए जाते हैं तो पहले वाक्य को 'सही है' कहने मे दूसरे वाक्य की अपेक्षा कम समय लगेगा। इसके अतिरिक्त प्रयोज्यो को इस वाक्य को सोचने मे अधिक समय लगेगा जैसे "चमगादड एक पक्षी है" अपेक्षाकृत इस वाक्य के कि "पत्थर एक पक्षी है"। पहले वाक्य को 'हाँ' या 'ना' कहने मे अधिक समय लगेगा क्योकि चमगादड़ मे पक्षी प्रत्यय के कुछ गुण मिलते हैं जबकि पत्थर मे पक्षी के कोई गुण नहीं हैं। हमारी भाषा प्रत्ययो से पूर्ण है। भाषा मे अधिकतर शब्द प्रत्यय होते हैं। वे विभिन्न प्रकार की समान वस्तुओ और घटनाओ का प्रतिनिधित्व करते हैं। शब्द जो प्रत्यय नही है, सख्या मे कम है उदाहरणार्थ व्यक्ति वाचक सज्ञाएँ जैसे कपिल, जॉर्ज, नजमा, अमनप्रीत, आदि। हमारे जीवन मे प्रत्यय बहुत महत्वपूर्ण हैं तथा प्रत्ययात्मक व्यवहार से ही समस्या-समाधान उभर कर आते है।

समस्या-समाधान

समस्या-समाधान एक महत्वपूर्ण ज्ञानात्मक क्रिया है। अपने दैनिक जीवन मे हम अधिकतर कोई न कोई समस्या सुलझाने मे व्यस्त रहते हैं। जब कभी हम किसी विशेष लक्ष्य तक पहुँचना चाहते हैं और वह लक्ष्य हमे सरलता से नहीं मिलता तो हम समस्या-समाधान का इस्तेमाल करते हैं। यदि आपके पास पर्याप्त समय और वाहन है तो रेलवे स्टेशन तक पहुँचने मे कोई समस्या ही नही है। इसी प्रकार आपके लिए परीक्षा में प्रश्नो के उत्तर देना कोई समस्या ही नही है यदि आपकी अच्छी तैयारी है। किन्तु आप उस स्थिति मे समस्या का अनुभव करेंगे जब आप अपने मित्र के लिए कोई सदेश छोडना चाहें और आपके पास पैन या पैन्सिल न हो । आप समस्या का अनुभव तब भी करेंगे, यदि आपके कमरे मे से कोई वस्तु गायब हो जिसे आपने स्वय वहाँ रखा था । समस्या-समाधान मे ऐसी स्थितियाँ सम्मिलित होती हैं जहाँ सफलतापूर्वक कार्य सम्पन्न होने मे कुछ चीजे अवरोध उत्पन्न करती हैं। समस्या एक विशेष स्थिति को कहते हैं जब कोई व्यक्ति दी हुई स्थिति अथवा दशा से बिना सीधे रास्ते के लक्ष्य स्थिति तक पहुँचना चाहता है और समस्या-समाधान *उस स्थिति मे समस्या की लक्ष्य स्थिति की ओर बढने की प्रक्रिया है* ।

समस्या के तीन पक्ष होते हैं : (अ) मूल अवस्था, (ब) लक्ष्य अवस्था, तथा (स) नियम। मूल अवस्था प्रारम्भ की वह स्थिति है जब हम किसी समस्या का सामना करते हैं। लक्ष्य अवस्था वह दशा होती है जहाँ समस्या-समाधान हो जाने पर पहुँचा जाता है। नियम कार्यविधि के वे विवरण हैं जिनका मूल अवस्था से लेकर लक्ष्य अवस्था पर पहुँचने तक पालन करना चाहिए अथवा उनको ध्यान मे रखना चाहिए।

कुछ समस्याएँ स्पष्ट और सरल होती हैं जिनका समाधान स्मृति से शीघ्र ही प्रत्यानयन द्वारा किया जा सकता है। कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जो जटिल होती हैं और जिनका आसानी से समाधान नही किया जा सकता । जटिल प्रकार की समस्याओ का समाधान करने मे लम्बी या अधिक कठिन प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं। समस्या के समाधान के लिए व्यक्ति अपनी

अनोखी योजनाएँ अथवा तरीके इस्तेमाल करते है। अच्छी योजनाएँ समाधान करने वाले को अपने प्रयत्नों को संगठित करके और सूचना पर कार्यवाही करने तथा स्मरण करने में सहायक सिद्ध होती हैं। समस्या-समाधान की कुछ महत्वपूर्ण कुशल नीतियाँ नीचे दी गई हैं:

समस्या-समाधान के लिए कुशल नीतियाँ

(i) *अलगोरिदम्स*

अग्रेजी भाषा का पद 'अलगोरिदम्स' जिसे 'कलन गणित' भी कह सकते हैं वे *प्रक्रियाएँ अथवा नियम हैं जो किसी समस्या के समाधान का पूरा वचन देते हैं* जैसे गुणा के नियम या गणित और विज्ञान का कोई सूत्र। लक्ष्य तक पहुँचने का रास्ता कभी-कभी लम्बा या घुमावदार हो सकता है किन्तु यह निश्चय ही उचित हल तक पहुँचा देगा। अलगोरिदम्स यन्त्रवत् हल की ओर अग्रसर करते हैं। किन्तु अधिकतर समस्याओं के लिए हमारे पास अलगोरिदम्स नहीं होते।

(ii) *स्वतः शोध प्रणाली*

स्वतः शोध प्रणाली वे छोटे पथवाले व्यावहारिक नियम होते हैं जो समाधान की ओर शीघ्रता से अग्रसर कराते हैं। वे इन समस्याओ के संबंध मे पूर्व अनुभवों पर आधारित होते हैं और उनमे तर्कणा सन्निहित होती है। स्वतः शोध प्रणाली अलगोरिदम्स की तुलना मे अधिक सरल और कम मेहनत लेने वाली कुशल नीतियाँ हैं किन्तु वे समस्या का हल दे भी सकती हैं और नहीं भी दे सकतीं। एक समस्या का उदाहरण नीचे दिया गया है जिसमे दोनो कुशल नीतियाँ समाधान के लिए प्रयुक्त की जा सकती हैं। यह एक वर्ण विपर्यय समस्या या बिखरे हुए शब्द हैं। आपको निम्नलिखित बिखरे हुए अक्षरों के पाँच विन्यासों से पाँच शब्द बनाने हैं।

य	भ	दा	क	ला	________
टा	मु	व	न	म	________
स	ल	ता	फ	अ	________
र	का	रो	प	प	________
म	ड़	उ	र	क	________

एक नीति योजना जिससे समाधान की प्राप्ति अवश्यम्भावी है वह अलगोरिदम्स है यद्यपि यह लम्बी है और इससे अधिक समय लगता है। इसमें सब अक्षरों को सभी सम्भाव्य सयोगो में व्यवस्थित करने की आवश्यकता होती है। जहाँ ऐसे पाँच अक्षर सम्मिलित हैं वहाँ 120 सयोग होते हैं। आपको पाँच शब्दों को ढूँढ़ने के लिए प्रत्येक सम्भावित सयोग को देखना होगा किन्तु अधिकतर विद्यार्थी वर्ण विपर्यय कर हल ढूँढ़ने के लिए अलगोरिदम्स का उपयोग नहीं करते । वे प्रायः सरल और कम मेहनत वाली विधि का उपयोग करते हैं जो समाधान प्रक्रिया को सक्षिप्त कर दे किन्तु इसके सफल होने की वचन बद्धता नही होती। वे ऐसे शब्द संयोगो के विषय में विचार करेंगे जो प्रायः घटित होते हैं और ऐसे संयोगों पर विचार नही करेंगे जिनको सामान्य हिन्दी भाषा में होने की सम्भावना नहीं है। ये छोटी विधियाँ स्वतः शोध प्रणाली कहलाती हैं।

(iii) *साधन-साध्य विश्लेषण*

उन समस्याओं के समाधान के लिए जिनकी प्रारम्भिक और लक्ष्य अवस्थाएँ भली प्रकार पारिभाषित हैं, स्वतः शोध प्रणाली का एक विशेष प्रकार साधन-साध्य विश्लेषण प्रयुक्त किया जाता है। इस विधि मे समस्या को कई उप समस्याओं मे विभाजित कर लिया जाता है जिसमें से प्रत्येक वाछित लक्ष्य के थोड़ा पास होती है जिससे समस्या और समाधान के बीच वर्तमान अवस्था में जो अन्तर है उसे कम या समाप्त किया जाता है। यह विधि शतरंज की समस्या, गणित की समस्याएं हल करना, कम्प्यूटर का प्रोग्रामन तथा नीचे दी गई एक दैनिक समस्या की भाँति समस्याओ मे समाधान में लाभदायक पाई गई :

मान लीजिए कल आपका नौकरी के लिए साक्षात्कार है और आपका लक्ष्य अच्छा प्रभाव जमाना है। आप ऐसा कैसे कर सकते है? मान लीजिए इसमे अच्छी वेश-भूषा पहनना आवश्यक

है। आपको अच्छे कपड़ो की आवश्यकता है। आपको अच्छे कपड़े कहाँ मिलेंगे? अलमारी में। वे वहाँ नहीं है। फिर कहाँ होंगे? कोठरी में। वे मैले है । धुलाईघर में धुलाने में समय लगेगा। आपको वे और कहाँ मिल सकते हैं? आपके मित्र की अलमारी में। क्या वे आपको अपने कपडे देना पसद करेंगे? यदि नहीं तो आप उन्हें समझाने का प्रयत्न करेंगे आदि। बहुत से ऐसे सोपान अतिम लक्ष्य के समीप पहुँचने के लिए प्रयुक्त किए जा सकते हैं।

(iv) *पश्चगामी खोज*

समस्या-समाधान करने के लिए व्यक्ति लक्ष्य की अवस्था से पश्चगामी या पीछे की ओर दी हुई प्रारम्भिक अवस्था की ओर कार्य करते हैं। ऐसी कुशल नीति उन समस्याओं मे लाभदायक होती है जहाँ लक्ष्य के बारे मे समस्या की अपेक्षा अधिक सूचना मिली होती है और समस्या का प्रकार ऐसा हो कि आगे की तथा पीछे की दिशा में प्रयत्न किए जा सकें। समस्या समाधान करने वाले उप-लक्ष्य बना लेते हैं जिसमे समस्या छोटे-छोटे भागो मे तोड ली जाती है और जिनका प्रबन्ध करना आसान हो जाता है। हम उप-लक्ष्य विधि का उपयोग प्रायः करते हैं उदाहरणार्थ मान लीजिए आप फर्श को साफ करना चाहते हैं तो आप क्या करेंगे? पहले आप साबुन, बाल्टी, पानी आदि लेगे। फिर आप जहाँ सम्भव होगा मेज़ कुर्सियो को हटाएँगे। तीसरे आप फर्श को साफ करेंगे और इसे सूखने देगे। इस प्रकार आपने लक्ष्य को उप-लक्ष्यों में विभाजित कर लिया।

समस्या-समाधान की अवस्थाएँ

विभिन्न मनोवैज्ञानिको ने समस्या-समाधान की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया है। हम निम्नलिखित चार अवस्थाओ का वर्णन करेंगे जिनका उपयोग सामान्यतः विद्यार्थी अपनी समस्याओ के समाधान के लिए करते है। वे हैं— (अ) समस्या को समझना, (ब) योजना बनाना, (स) योजना का कार्यान्वियन, और (द) मुड़कर पीछे देखना ।

(अ) *समस्या को समझना*

इस अवस्था में वे क्रियाएँ होती हैं जो समस्या के स्वरूप, उपलब्ध सूचना और अपेक्षित समाधान के प्रकार को निर्धारित करती हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि हम समस्या को कार्यरत स्मृति में संकेतित करते हैं और अपने आप से कहते हैं कि मुझे पता है—मै खोज करना चाहता/चाहती हूँ—और मैं केवल इनका उपयोग कर सकता/सकती हूँ। चूँकि कार्यरत स्मृति की क्षमता सीमित होती है और यदि समस्या-समाधान करने वाले पूर्णरूप से अपनी कार्यरत स्मृति पर निर्भर करते हैं तो समस्या-समाधान मे वे त्रुटियाँ कर सकते हैं।

(ब) *योजना बनाना*

फिर अगली अवस्था दीर्घकालीन स्मृति मे समाधान की योजना को खोजने की आती है जिसे हम रचना तंत्र कह सकते हैं। इस अवस्था मे व्यक्ति लाभदायक सूचनाओ का प्रत्यानयन करने का प्रयास करते हैं और यह स्मरण कर सकते हैं कि इसी के समान समस्या का समाधान पूर्व समय मे किया गया था और उस मामले मे व्यक्ति उसी रचना तंत्र का उपयोग करने का प्रयत्न करेंगे जो पहले सफल हुआ था अथवा नई कार्य योजना का सृजन भी कर सकते हैं।

(स) *योजना का कार्यान्वियन*

तीसरी अवस्था मे व्यक्ति अपनी योजना को कार्यान्वित करते हैं जिसका प्रत्यानयन उन्होने अपनी दीर्घकालीन स्मृति से किया था अथवा वह नई सोची हुई योजना थी। यदि रचना तंत्र के थोड़े चरण हैं और विस्तारपूर्वक सोचे और बनाए गए हैं तो यह अवस्था शीघ्र ही कम त्रुटियो के साथ पूरी की जा सकती है। किन्तु यदि इस अवस्था में अधिक चरण है अथवा

किन्हीं विशिष्ट दशाओं मे ही कार्य किया जा सकता है तो इस अवस्था में अधिक समय लग सकता है और त्रुटि-प्रवण भी हो सकता है।

(द) मुड़कर पीछे देखना

योजना के कार्यान्वियन के पश्चात् हममें परिणामों का मूल्यांकन करने या उन्हें मुड़कर पीछे देखने की प्रवृत्ति होती है। समस्या सुलझाने वाले समाधान की तुलना स्मृति में संकेतित समस्या (प्रथम चरण) से करते हैं। वे रचना तंत्र को कार्यान्वित करते समय विभिन्न चरणों का मूल्यांकन करते हैं। यदि वे ऐसा सोचते हैं कि यह रचना तत्र किसी दूसरे के लिए लाभदायक हो सकता है तो वे अपनी दीर्घकालीन स्मृति मे प्रत्यानयन संकेतों को स्मरण कर सकते हैं। ये संकेत भविष्य की समान समस्याओं के लिए रचना तत्र को पाने में उसकी सहायता कर सकते हैं।

सरल समस्याओं के लिए ये अवस्थाएँ सरल क्रम में एक दूसरे का अनुसरण करती है। उदाहरणार्थ आपके पास कुछ अवकाश का समय है और आप इसे कोई कहानी या उपन्यास पढ़कर व्यतीत करना चाहते हैं। जब आप समस्या को समझते है तो आप उपयुक्त वस्तु की खोज घर मे करने के लिए, खरीदने के लिए या अपने मित्रों से उधार लेने के लिए योजना बनाते हैं। इन विकल्पों में आप पीछे मुड़कर देखते हैं और अपनी समस्या का मूल्यांकन करते हैं। किन्तु सभी समस्याएँ उपरोक्त जैसी सरल नही होती। हम अपनी दैनिक जीवन की बहुत सी समस्याओं मे एक अवस्था से दूसरी अवस्था मे परिवर्तन करते रहते हैं जब तक कि हम उत्तम सभाव्य प्राप्त विकल्प को अतिम रूप देने मे सफल न हो जाएँ। इनमें से कौन सी अवस्था पर अधिक बल दिया जाएगा यह समस्या के प्रकार पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ +2 के पाठ्यक्रमों का चयन करने के लिए संभावित विकल्पों की सूचना अर्थात् जो पाठ्यक्रम विद्यालय द्वारा प्रस्तावित किए जाते हैं वह उपलब्ध है किन्तु बहुत सा समय और प्रयत्न प्रत्येक प्राप्य विकल्प का भविष्य क्या है, यह जाँचने में लग जाता है।

देश मे पेट्रोल की खपत के नियंत्रण जैसी समस्याओं मे जो अस्पष्ट हैं और जिनके समाधान के लिए रचनात्मक समाधान अपेक्षित हैं, सभी अवस्थाओ पर उचित बल दिया जाता है। इस प्रकार की समस्या की अनेक व्याख्याएँ और समाधान हो सकते हैं। ये अवस्थाएँ संभवतः किसी भी समय प्रयुक्त की जा सकती हैं जब कोई समस्या का समाधान करना चाहता है किन्तु उनका सापेक्षिक महत्व समस्या के प्रकार, समस्या हलकर्ता के पूर्व अनुभव के साथ बदलता रहता है।

समस्या-समाधान को प्रभावित करनेवाले कारक

हमारा जीवन बहुत प्रकार की समस्याओ से भरा है। प्रत्येक आयु और अवस्था की अपनी समस्याएँ होती हैं जिनको हल करने की आवश्यकता होती है। हम एक समस्या पर ध्यान केन्द्रित करके उसका समाधान करने का प्रयत्न करते हैं तो दूसरी खड़ी हो जाती है और इस प्रकार उनका कोई अन्त नही होता। प्रत्येक व्यक्ति का समाधान करने का अपना तरीका होता है किन्तु कुछ कारक ऐसे होते हैं जो सामान्यतः समस्या के समाधान को प्रभावित करते हैं, वे हैं: (क) मानसिक विन्यास, (ख) अनम्यता, (ग) प्रकार्यात्मक स्थिरता, (घ) सुपारिभाषित और कुपारिभाषित समस्याएँ, (ङ) दुश्चिन्ता, (च) अवधान की विस्तृति, (छ) उद्भवन, तथा (ज) मस्तिष्क आलोड़न।

(क) मानसिक विन्यास

समस्या-समाधान को प्रभावित करनेवाला एक महत्वपूर्ण कारक मानसिक विन्यास है। *विन्यास का अभिप्राय सरचना या स्थिति के प्रत्यक्षीकरण का तरीका है*। हम इसे प्रत्यक्षीकरण विन्यास भी कह सकते हैं। एक प्रकार से समस्या-समाधान किसी व्यक्ति को दूसरी समस्याओं का उसी प्रकार समाधान करने और कुछ नया न सोचने की ओर बढ़ाता है। समान समस्याओं में मानसिक विन्यास समस्या-समाधान को सुसाध्य बनाता है। किन्तु मानसिक विन्यास समस्या-समाधान में वहाँ बाधा बन सकता है जहाँ समस्या नये

समाधानो, नये नियमों या पुराने अनुभवों के नये उपयोगों की अपेक्षा करती है। व्यक्ति किसी कार्य को करने के विशेष तरीके में इस सीमा तक जकड़ जाते हैं कि वे दूसरे अधिक सरल उपायो को अनदेखा कर जाते है जो कार्य भी कर सकते हैं। मानसिक विन्यास के ऐसे उदाहरण दिए जा सकते हैं जो हमारी दैनिक क्रियाओं मे पर्दे का काम करते हैं। उदाहरणार्थ आपको यह बताया जाता है कि वह विधि जिससे आप विदेशी भाषा वर्षों से सीख रहे थे दूसरी विधियो की तुलना में अधिक समय की खपत करनेवाली और कम प्रभावशाली थी या आपकी बैडमिन्टन खेलने की शैली यद्यपि काफी थकानेवाली थी किन्तु विजेता से अच्छी नहीं थी।

(ख) *अनम्यता*

मानसिक विन्यास या प्रत्यक्षीकरण विन्यास के सदृश ही एक प्रकार का अनुक्रिया विन्यास होता है *जिसमे उस अनुक्रिया का निरन्तर उपयोग किया जाता है जिसने दूसरी स्थितियो मे कार्य किया था*। यह अनम्यता है जिसे सामान्य व्यक्ति की भाषा मे हम आदते कहते हैं। जो व्यक्ति कम्प्यूटर पर काम करते हैं अपने आपको ऐसी अनम्यता का शिकार पाते हैं। कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग करते समय या कम्प्यूटर प्रोग्राम पर कार्य निष्पादित करने के लिए प्रविधि के विकास मे व्यक्ति इसका बाद के प्रोग्रामों में भी प्रयोग करते हैं जबकि उससे सरल विधि भी बाद की समस्याओ में काम कर सकती है।

(ग) *प्रकार्यात्मक स्थिरता*

यह उल्लेख करना रुचिकर होगा कि पूर्व अनुभव सदैव समस्या-समाधान मे सहायक नही होते। एक विशेष उदाहरण जिसमें पूर्व अनुभव प्रभावशाली समस्या-समाधान के मार्ग मे बाधक होता है प्रकार्यात्मक स्थिरता का है। *जब किसी विशेष वस्तु का कार्य किसी विशेष विधि द्वारा इसके इस्तेमाल अथवा समस्या प्रस्तुतीकरण से पहले ही स्थिर अथवा निर्धारित कर दिया जाता है तो इसे प्रकार्यात्मक स्थिरता कहते हैं*। परिणामस्वरूप व्यक्ति यह नहीं देख पाते कि कोई वस्तु किस प्रकार अपने नियत या लीक से हटकर काम कर सकती है। इन परिस्थितियों मे समस्या जितनी साधारणतया उसे होना चाहिए, उससे अधिक कठिन हो जाती है। यदि इस पर हम विभिन्न कोणों से विचार करें तो हम समस्या का समाधान आसानी से कर पाएँगे। प्राकार्यात्मक स्थिरता चिन्तन प्रक्रिया को उस समय अवरोधित कर देती है जब हम उन समस्याओ का सामना करते हैं जिसमे नये और अन्तर्दृष्टिपूर्ण समाधान अपेक्षित होते हैं।

(घ) *सुपारिभाषित और कुपारिभाषित समस्याएँ*

हम ऐसी सभी संभव समस्याओ के बारे मे सोच सकते हैं जो सातत्यक के किसी बिन्दु पर होती हैं। इस सातत्यक के एक छोर पर सुपारिभाषित समस्याएँ हैं और दूसरे छोर पर कुपारिभाषित समस्याएँ हैं। सुपारिभाषित समस्याओं में लक्ष्य भली भाँति स्पष्ट होता है जबकि कुपारिभाषित समस्याओ मे यह स्पष्ट नही होता है। दूसरे सुपारिभाषित समस्याओ मे समस्या को हल करनेवाली आवश्यक सूचना समस्या के साथ कथन में ही दी हुई होती है जबकि कुपारिभाषित समस्याओ मे संबद्ध सूचना स्पष्ट रूप से नहीं दी जाती। आपके पास अपने प्रयोगो के लिए ु ।रिभाषित समस्या है क्योकि आपको सुपारिभाषित लक्ष्य और उपयुक्त सूचना प्राप्त होती है। जीवन वृत्ति का चयन कुपारिभाषित समस्या का उदाहरण हो सकता है क्योकि इसमे न तो लक्ष्य स्पष्ट है और न ही वास्तविक जीवन की परिस्थितियो से सबधित कोई सूचना उपलब्ध है।

(ङ) *दुश्चिन्ता*

कुछ समस्याओ में लक्ष्य ऐसे कारको को जन्म देते हैं जैसे द्वन्द्वपूर्ण अभिप्रेरक और जीवन मूल्य जिनके कारण समस्या समाधान में बाधा की सभावना हो सकती है। अन्तर्द्वन्द्व और कुण्ठा से दुश्चिन्ता उत्पन्न होती है जिनका समस्या-समाधान पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। किन्तु चिन्ता की मध्यम मात्रा व्यक्ति को समस्या समझने और

समाधान करने मे अधिक प्रयत्न करने के लिए अभिप्रेरित कर सकती है। दुश्चिन्ता की मध्यम मात्रा समस्या-समाधान को सुसाध्य बनाती है जब व्यक्ति स्पर्धाशील होते हैं क्योकि इससे समस्याओ से निबटने की क्षमता बढ़ती है।

(च) *अवधान की विस्तृति*

अवधान की विस्तृति भी समस्या-समाधान को प्रभावित करती है। यदि हम महत्वपूर्ण सूचनाओ पर 'अवधान दें और निरर्थक सूचना की अवहेलना करे तो हम समस्या-समाधान करने की अच्छी स्थिति में होते हैं। कार्यकारी स्मृति की सीमाएँ एक समय में *कुछ ही समस्या-समाधान करने की क्षमता रखती हैं* किन्तु इस पर विजय पाने के लिए बाह्य सामग्री जैसे पैन, पैन्सिल, डायरी आदि का उपयोग किया जा सकता है ताकि समस्या-समाधान की प्रक्रिया मे प्रयुक्त क्रियाओं का विवरण रखा जा सके।

(छ) *उद्भवन*

उद्भवन से तात्पर्य *समस्या-समाधान की सभावना की उस वृद्धि से है जो विचाराधीन समस्या को कुछ समय के लिए रोकने, विश्राम, या प्रत्याहार के परिणामस्वरूप होती है।* इसका कारण है कि जब व्यक्ति किसी समस्या से कुछ समय के लिए दूर होते हैं *तो भी वे अचेतन* रूप से उसे हल करने के लिए निरन्तर प्रयास करते रहते हैं और इस प्रकार बाद मे उन्हें समाधान सूझ सकता है। हमने कई बार सृजनात्मक या गणित की क्रियाओ मे उद्भवन का अनुभव किया है। दैनिक जीवन मे हम कभी-कभी किसी वस्तु के पुनःस्मरण के प्रयत्न मे असफल रहते हैं। कुछ समय पश्चात् जब हम किसी दूसरे कार्य को करने में व्यस्त होते हैं तो अचानक उस सूचना की क्षणदीप्ति हमें मिल जाती है, किन्तु विश्राम, अन्तराल या प्रत्याहार सदैव समस्या के समाधान देने का वचन नही देते।

(ज) *मस्तिष्क आलोड़न*

मस्तिष्क आलोड़न· *वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्तियो को समूह में किसी समस्या के समाधान के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।* प्रयोज्यो को मस्तिष्क आलोड़न सत्र मे समस्या के सभी सभव समाधान बताने को कहा जाता है जो उनको सूझ रहे हैं। उन्हें समाधान की उपयुक्तता के सबंध मे कोई निर्णय नही देना होता है। उन्हें एक निश्चित समय मे अधिक से अधिक हल देने होते हैं जितने वे दे सकते हैं। सामान्यतः मस्तिष्क आलोडन मे अधिक से अधिक समाधान जो अच्छी गुणवत्ता वाले हो सकते हैं, निकल आते है। इस कुशल नीति से स्थिरता की समस्या पर विजय पाई जा सकती है जो समस्या-समाधान मे बाधक होती है। यह भी देखा गया है कि मस्तिष्क आलोड़न प्रयोग करते समय सृजनात्मक समस्या-समाधान मे प्रशिक्षित प्रयोज्य अप्रशिक्षित प्रयोज्यो की तुलना मे अधिक सख्या मे श्रेष्ठ कोटि के विचार प्रदान करते हैं। मस्तिष्क आलोडन की प्रक्रिया दो प्रकार से प्रभावशाली ढंग से कार्य करती है। प्रथम, किसी विशेष कार्य के सभव परिणामो को पहचानने मे और द्वितीय, उन सोपानो को सुझाने मे जिनका अनुसरण करके उस विशेष लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है।

समस्या समाधान मे सुधार लाने के लिए यह लाभप्रद पाया गया है कि किसी कार्य को योजनापूर्वक प्रारंभ किया जाए और उसे सगठित रूप मे किया जाए। यह भी लाभप्रद पाया गया है कि जटिल समस्या के सरल रूपान्तर के साथ कार्य किया जाए और मानसिक रूप से उन सोपानो को दोहराया जाए। अभिप्रेरण और कार्य मे लगन भी महत्वपूर्ण है क्योकि वे समस्या-समाधान मे व्यक्ति के *अध्यवसाय* की वृद्धि करते हैं।

तर्कणा

चिन्तन में विभिन्न अर्थ को दिखाने वाले प्रतीको का परिचालन करना होता है। तर्कणा एक विशेष प्रकार का निगमनात्मक चिन्तन है जिसमे विशेष ज्ञात तथ्यो से कुछ निष्कर्ष निकालने होते है। *जब चिन्तन मे तर्कपूर्ण सिद्धान्त प्रयुक्त किए जाते है तब तर्कणा होती*

है। अत. चिन्तन मे तर्कणा सम्मिलित है और बेहतर चिन्तन की ओर अग्रसर करती है। उचित तर्कणा द्वारा समस्याओ के सही और कभी-कभी नवीन समाधानो तक पहुँचना सभव होता है।

समस्या आने पर सार्थक तथ्यो को साथ-साथ रखना पड़ता है। इन तथ्यो को किन्ही विशेष तार्किक सिद्धान्तो के अनुसार समूहगत करना पड़ता है। उचित तर्कणा हो, इसके लिए समस्या-समाधान मे विभिन्न सोपान लेने होते हैं। सर्वप्रथम सभी सार्थक आकड़ो को साथ-साथ रखना चाहिए। यदि आकड़ो को उचित रूप से संयुक्त अथवा समूहबद्ध नही किया जाता तो उपयुक्त तर्कणा नही हो सकती। तर्कणा के नियमो को भी समूहीकरण सम्बन्धो की खोज करते समय सही तरीके से प्रयुक्त करना चाहिए। जब हम तर्क करते हैं तो किसी युक्ति या विचार की वैधता निर्धारित करने का प्रयत्न करते हैं।

तर्कणा का एक महत्वपूर्ण प्रकार निगमनात्मक तर्कणा है जिसका प्रयोग हम दैनिक जीवन मे करते हैं। प्रत्येक बार जब आप किसी 'यदि ...फिर' कथन को जाँचते है, या किसी युक्ति की वैधता का निर्णय कर रहे होते हैं तो आप निगमनात्मक तर्कणा मे रत होते हैं। निगमनात्मक तर्कणा दो प्रकार की होती हैं : (अ) निरूपाधिक अनुमानवाक्य और (ब) प्रतिबधित तर्कणा।

(अ) निरूपाधिक अनुमानवाक्य

निरूपाधिक अनुमानवाक्य यन औपचारिक अनुमान वाक्य या अरस्तू का अनुमानवाक्य एक युक्ति है जिसका निम्नलिखित रूप होता है, दो प्रतिज्ञप्ति जिन्हें *आधारवाक्य* कहा जाता है, उनका अनुसरण एक प्रतिज्ञप्ति द्वारा होता है जिसे *निष्कर्ष* कहते हैं। एक वैध अनुमानवाक्य वह होता है जिसमे निष्कर्ष, अनिवार्य तार्किक रूप से आधारवाक्य का अनुसरण करता है। निरूपाधिक अनुमानवाक्य का एक उदाहरण निम्नलिखित है।

निरूपाधिक अनुमानवाक्य

प्रधान आधारवाक्य	**सब वैज्ञानिक ईमानदार होते है।**
गौण आधारवाक्य	**सब औरतें वैज्ञानिक होती है।**
निष्कर्ष	**सब औरतें ईमानदार होती है।**

(ब) प्रतिबधित तर्कणा

प्रतिबधित तर्कणा या प्राक्कल्पनात्मक अनुमानवाक्यों में एक कथन दूसरे कथन की सचाई या झूठ के बारे मे होता है। प्रतिबधित तर्कणा वैज्ञानिक अनुसधान कार्य मे महत्वपूर्ण है किन्तु इसे हम दैनिक अनुभवों मे भी देखते हैं। उदाहरणार्थ एक माँ अपने छोटे बच्चे को यह कहती है, "यदि तुम पूरा दूध पी लोगे तो मै तुम्हें तुम्हारे मित्रो के साथ खेलने जाने दूँगी" या एक विद्यार्थी से उसके शिक्षक द्वारा यह कहा जाता है, "यदि तुम परीक्षा मे अच्छा करोगे तो तुम्हें अगली कक्षा मे उन्नति दी जाएगी।"

सृजनात्मक चिन्तन

यह निर्धारित करना कठिन है कि सृजनात्मक समाधान क्या है या सृजनशील व्यक्ति कौन है। सृजनात्मक चिन्तन या *सृजनात्मकता वह प्रक्रिया है जो मौलिकता ,नवीनता और उपयुक्तता के गुण रखती है।* यह किसी स्थिति के प्रति की गई मौलिक अनुक्रिंया मे परिलक्षित होती है। सृजनात्मक अनुक्रियाएँ दुर्लभ और असाधारण अनुक्रियाएँ होती हैं। जब उद्दीपन के प्रति ऐसी अनुक्रिया की जाती है जो उसके लिए साधारणतया नही की जाती तो ऐसी अनुक्रिया को मौलिक अनुक्रिया समझा जाता है। नई अनुक्रियाएँ नवीन अनुक्रियाएँ होती हैं। वे अपरिचित, असाधारण तथा अपूर्ववर्ती होती हैं। एक नवीन और मौलिक अनुक्रिया तभी सृजनात्मक मानी जाएगी जब यह उपयुक्त होगी। समाधान उपयुक्त होने के लिए स्थिति के लिए अनुक्रिया तर्कसगत होनी चाहिए। उदाहरणार्थ मकान बनाने के लिए पत्तो का घर एक नवीन समाधान है किन्तु यह एक उपयुक्त अनुक्रिया नही है अत इसे सृजनात्मक नही माना जा सकता।

सृजनात्मकता के स्वरूप का अनेक तरीकों से विश्लेषण किया गया है। कुछ विद्वान कहते हैं कि सृजनात्मकता केवल एक ही प्रकार की होती है और लोग उस आयाम पर भिन्न होते हैं। इस प्रकार सृजनात्मकता किसी नवीनता को अस्तित्व मे लाने की योग्यता मानी जाती है। इसे विभिन्न प्रत्ययों के साथ कार्य करने की, उन्हें नए संयोजनों में निर्माण करने की एक प्रक्रिया समझा जाता है। दूसरे विद्वान यह कहते हैं कि उन व्यक्तियों की सृजनात्मकता, जिन्होने अपने जीवन सृजनात्मक कार्य मे अर्पित कर दिए हैं जैसे चित्रकार, लेखक, कलाकार और वैज्ञानिक, उनकी सृजनात्मक गुणवत्ता सामान्य जनसख्या की सृजनात्मकता से अलग होती है। सृजनात्मक चिन्तन का स्वरूप, दूसरे प्रकार के चिन्तनो से, इसके भेदों को ध्यान मे रखते हुए भी अध्ययन किया जा सकता है। जे पी गिलफर्ड के अनुसार चिन्तन दो प्रकार के होते हैं: उपसारी चिन्तन तथा अपसारी चिन्तन। उपसारी चिन्तन का संबंध विशेष प्रयोजन से होता है। इसमें संबद्ध सूचनाओं को इकट्ठा करना और समाधान पर पहुँचने के लिए समस्या-समाधान का उपयोग करते हुए उचित समाधान निकालना होता है। ऐसे चिन्तन के परिणामस्वरूप प्राय. ऐसे समाधान मिलते हैं जिनकी खोज किसी ने की हुई होती है। अपसारी चिन्तन का तात्पर्य समस्या के विषय मे विभिन्न विचार होते हैं। अपसारी चिन्तन मे स्वलीन चिन्तन या मुक्त साहचर्य सम्मिलित होता है जिसमे विचार प्रतीको के उच्चतम निजी अर्थ होते हैं। इनकी परिणति कभी-कभी लाभदायक विचारो मे होती है यदि चिन्तनकर्ता केवल समस्या पर ही केंद्रित करते तो वे चूक जाते। अपसारी चिन्तन मे उपसारी चिन्तन भी शामिल होता है। यह ऐसी समस्या के प्रति होता है जो या तो पारिभाषित है या जिसका हल मिल गया है। इस प्रकार समस्या-समाधान का कोई निश्चित तरीका नही होता। गिलफर्ड का मत है कि सृजनात्मक व्यक्ति अपसारी चिन्तन मे व्यस्त रहते हैं।

सृजनात्मक चिन्तन की अवस्थाएँ

सृजनात्मक चिन्तन पाँच क्रमबद्ध अवस्थाओ मे से होकर आगे बढते हैं जो हैं उपक्रम, उद्‌भवन, प्रबोधन, मूल्याकन, और संशोधन।

(क) *उपक्रम*

उपक्रम मे समस्या का प्रतिपादन, तथ्यो और सामग्री का एकत्रीकरण सम्मिलित है जो समाधान के लिए आवश्यक समझा जाता है।

(ख) *उद्‌भवन*

उद्‌भवन वह अवधि होती है जिसमे हस्तक्षेप करनेवाले विचार क्षीण हो जाते हैं और अतिरिक्त अनुभव महसूस किए जाते हैं जो समस्या-समाधान के लिए सकेत प्रदान करते हैं। इस अवस्था मे सृजनात्मक चिन्तन मे सम्मिलित अचेतन विचार प्रक्रियाएँ क्रियाशील रहती है।

(ग) *प्रबोधन*

प्रबोधन अवस्था मे समस्या के समाधान का विचार घटित होता है। यह अन्तर्दृष्टि 'अहा' के अनुभव की ओर अग्रसर कर सकती है।

(घ) *मूल्याकन*

चौथी अवस्था मे वह समाधान जो घटित होता है, उसकी जाँच की जाती है कि क्या वह समस्या का समाधान कर पाएगा। यदि समाधान समस्या के हल करने के लिए अपर्याप्त होता है तो सम्पूर्ण प्रक्रिया फिर से शुरू की जाती है।

(ङ) *सशोधन*

यदि समस्या के लिए ढूँढा गया समाधान अच्छा है किन्तु इसमे थोडे से परिष्करण की आवश्यकता है तो अन्तिम अवस्था सशोधन की होती है।

कुछ खोजकर्ताओ ने सृजनकर्ता की तीन अवस्थाओ का उल्लेख किया है। वे है प्राक्कल्पना निर्माण, प्राक्कल्पना का परीक्षण और परिणामो का सप्रेषण।

ये सोपान लगभग पूर्व उल्लिखित अवस्थाओ के समान है।

हाल ही के कुछ वर्षो मे सृजनात्मक व्यक्तियों के व्यक्तित्व के गुणो का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है जैसे लेखक, चित्रकार, वैज्ञानिक आदि। इन व्यक्तियो मे सामान्यतः प्रभुत्व, सवेगात्मक स्थिरता, और आवेगों को नियत्रित करने की योग्यता होती है। उनमे अमूर्त चिन्तन की उच्च क्षमता होती है। उन्हें स्वतंत्रता और स्वायत्तता पसन्द होती है। वे स्वतत्रता प्रेमी पार्थक्यवादी और चुनौती स्वीकार करनेवाले होते हैं। वे अपनी चिन्तन प्रक्रियाओ मे लचीलापन प्रदर्शित करते हैं। वे अपने कार्यो मे कट्टर नही होते। उनके कार्य करने की कोई विशेष विधि नही होती। वे समस्याओ को अनोखे तरीको से देखते हैं। सृजनात्मकता अपने आप को प्रस्फुटित करने के लिए असरचित अवसर चाहती है। सृजनात्मक व्यक्ति जटिलता को वरीयता देते हैं। किन्तु ये केवल विवरण हैं और सृजनात्मकता की गतिकी को पूर्ण रूप से समझने के लिए अधिक अनुसधान की आवश्यकता है।

कृत्रिम बुद्धि

कृत्रिम बुद्धि का तात्पर्य 'कम्प्यूटर चिन्तन' से है। ऐसे प्रयास किए जा रहे हैं जिनसे कम्प्यूटर प्रोग्राम का इतना विकास किया जा सके जिससे कि प्रत्यय निर्माण अथवा निर्णय करने की मानसिक प्रक्रियाओ का अनुकरण या नकल कर सके। यह कम्प्यूटर अनुप्रयोगो का परिष्कृत क्षेत्र है और इस क्षेत्र का अधिक विवरण देना यहाँ संभव नही होगा। फिर भी इसकी आधारभूत विशेषताओ से परिचित होना लाभदायक प्रतीत होता है।

बौद्धिक समस्याओ का हल पाने के लिए कम्प्यूटर प्रोग्राम को दो चीज़ो की आवश्यकता होती है, एक ज्ञान का आधार और दूसरा खोज की विधि। खोज की विधि का तात्पर्य अनेक प्रयुक्त स्वतः शोध प्रणालियो या नियमो से है। ज्ञान का आधार प्रतिज्ञप्ति के जाल के रूप मे होता है, जबकि स्वतः शोध प्रणाली को 'यदि....तब' निर्देशो के रूप मे सचित किया जाता है। यह स्थितियाँ कि "यदि यह दशा घटित होती है तो यह करिए"। कम्प्यूटर प्रोग्राम द्वारा कम्प्यूटर स्मृति मे संचित सूचनाओ मे से खोजने की प्रभावशाली विधियो का विशेष विवरण देता है। कृत्रिम बुद्धि के क्षेत्र मे कार्यरत अनुसंधानकर्ता विभिन्न प्रकार की समस्याओ जैसे प्रतिमा विश्लेषण, वाणी प्रत्यक्षीकरण, भाषा का समझना तथा परामर्श सेवाओ मे रुचि रखते हैं। वे कम्प्यूटर प्रोग्राम जो निर्णय करने मे सहायता करते हैं, तकनीकी रूप मे उन्हें विशेष निपुण तत्र जाना जाता है। निपुण तत्र को विकास मे सबद्ध ज्ञान को सुस्पष्ट करने की तथा ज्ञान के अनेक क्षेत्रो को समाकलित करने की आवश्यकता होती है। किन्तु इसमे कुछ सामान्य बुद्धि का निर्माण करना अत्यधिक कठिन सिद्ध हुआ है। इन समस्याओ के बावजूद औषधि तथा दूसरे क्षेत्रो मे मनुष्यो के निर्णय की प्रक्रिया मे सहायता करने के लिए निपुण तत्र विकसित किए जा रहे है।

सारांश

चिन्तन एक महत्वपूर्ण ज्ञानात्मक प्रक्रिया है। इसमे पर्यावरण से प्राप्त सूचनाओ और स्मृति मे सचित प्रतीको की पुनर्व्यवस्था सम्मिलित है। प्रतिमाएँ मस्तिष्क मे बने चित्र है। वे चिन्तन मे सहायता करते हैं। भाषा और विचार एक दूसरे पर निर्भर हैं। प्रत्यय से तात्पर्य किसी समूह की वस्तुओ के समान गुणो के प्रति समान अनुक्रिया करने से है। प्रत्यय सरल और जटिल दो प्रकार के होते हैं। जटिल प्रत्यय सयोजक, वियोजक और सबधात्मक तीन प्रकार के होते हैं। सामान्यीकरण और विभेदीकरण दो प्रक्रियाएँ हैं जो प्रत्यय मे कार्यशील होती हैं। एक विशेष उदाहरण

जो आसानी से मन मे किसी प्रत्यय के बारे मे आता है वह उस प्रत्यय का आदि प्ररूप कहलाता है।

समस्या की दी हुई अवस्था से लक्ष्य अवस्था तक पहुँचने की प्रक्रिया समस्या-समाधान है। समस्या-समाधान के लिए चार कुशल नीतियो अलगोरिदम्स, स्वत. शोध प्रणाली, साधन साध्य विश्लेषण और पश्चगामी खोज का उपयोग किया जाता है।

समस्या को समझना, योजना का निर्माण, योजना का कार्यान्वियन और मुड़कर पीछे देखना समस्या समाधान की चार अवस्थाएँ हैं। मानसिक विन्यास, अनम्यता, प्रकार्यात्मक स्थिरता, सुपारिभाषित और कुपारिभाषित समस्याएँ, दुश्चिन्ता, अवधान की विस्तृति, उद्भवन और मस्तिष्क आलोड़न कुछ महत्वपूर्ण कारक है जो समस्या-समाधान को प्रभावित करते हैं।

तर्कणा एक विशेष प्रकार का निगमनात्मक चिन्तन है जिसमे कुछ ज्ञात तथ्यो से निष्कर्ष निकालना सम्मिलित है। निरूपाधिक अनुमानवाक्य, और प्रतिबधित तर्कणा निगमनात्मक तर्कणा के दो प्रकार है। सृजनात्मक चिन्तन या सृजनात्मकता एक प्रक्रिया है जिसकी विशेषताएँ मौलिकता, नवीनता और उपयुक्तता हैं। उपक्रम, उद्भवन, प्रबोधन, मूल्याकन और सशोधन सृजनात्मक चिन्तन की पाँच अवस्थाएँ हैं। सृजनात्मक चिन्तनशील व्यक्ति अपसारी चिन्तन मे व्यस्त रहते हैं यह माना जाता है कि उनमे व्यक्तित्व के कुछ विशेष गुण होते हैं। कृत्रिम बुद्धि कम्प्यूटर विचार है इसे ज्ञान के आधार एव खोज की विधि की आवश्यकता होती है।

प्रश्न

1. चिन्तन के प्रत्यय को पारिभषित करनेवाले विविध उपागमो की व्याख्या कीजिए।
2. प्रत्यय क्या है ? प्रत्यय के प्रकारो का सोदाहरण वर्णन कीजिए।
3. प्रत्यय प्राप्ति की प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए।
4. समस्या-समाधान की परिभाषा दीजिए और समस्या-समाधान की कुशल नीतियो की व्याख्या कीजिए।
5. समस्या-समाधान को प्रभावित करनेवाले कारको का वर्णन कीजिए।
6. तर्कणा क्या है? तर्कणा के प्रकारो का वर्णन कीजिए।
7. सृजनात्मक चिन्तन की व्याख्या कीजिए और उपयुक्त उदाहरणो द्वारा इसकी विभिन्न अवस्थाओ का वर्णन कीजिए।
8. निम्न पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
   (अ) चिन्तन मे प्रतिमाओ और भाषा की भूमिका
   (ब) आदिप्ररूप
   (स) समस्या-समाधान की अवस्थाएँ
   (द) कृत्रिम बुद्धि

एकक 8

व्यवहार के पर्यावरणीय निर्धारक, समाजीकरण की प्रक्रिया और वंचन का प्रभाव

इस एकक को पढ़ने पर विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे

- पर्यावरण के प्रत्यय को जानें;
- समाजीकरण और उसके रचना तंत्र को समझें;
- परिवार को समाजीकरण के प्रमुख कर्मक के रूप में पहचानें;
- पड़ोस एवं साथी समूहों के महत्व को समझें;
- विद्यालय और शिक्षक के प्रभाव का वर्णन करें;
- धार्मिक समूहों, जाति समूहों व व्यावसायिक समूहों के महत्व की व्याख्या कर सकें;
- व्यवहार पर जनसंचार के प्रभाव को निर्धारित कर सकें;
- वंचन के प्रत्यय और प्रकारों की व्याख्या कर सकें;
- विकास पर वंचन के प्रभावों की व्याख्या कर सकें।

विद्यालय में अपने मित्रों व अन्य के व्यवहार को देखकर आप स्वयं से प्रश्न करते हैं "कक्षा की एक जैसी स्थितियो मे विद्यार्थी अलग-अलग व्यवहार क्यों करते हैं?" "वही विद्यार्थी अलग-अलग अध्यापकों के प्रति अलग-अलग प्रतिक्रिया क्यों करते हैं?" "विद्यार्थी के घर एव विद्यालय की दशाओं के प्रति व्यवहार में बहुत अन्तर क्यो होता है?" इन प्रश्नों का उत्तर देना सरल नहीं है क्योंकि व्यक्ति का व्यवहार बहुत से कारकों द्वारा निर्धारित होता है। यह उसकी आनुवंशिकी विशेषताओ और पर्यावरणीय प्रभावों का परिणाम होता है। यह उसे प्राप्त उद्दीपनों के प्रकार एवं उनके प्रति उसकी प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है। हमने इससे पूर्व व्यवहार को निर्धारित करनेवाले शरीर क्रियात्मक आधार का अध्ययन किया है, अब हम व्यवहार के पर्यावरणीय निर्धारकों के विषय में पढ़ेंगे।

पर्यावरण

पर्यावरण एक सामान्य पद है जो उन सभी कारकों को इंगित करता है जो बच्चे के जीवन काल के प्रारंभ से ही उसे प्रभावित करते हैं। यह जल, भोजन और वायुमण्डल प्रदान करके बच्चे के विकास को प्रभावित करता है। यह ज्ञान, कौशलो, सामाजिक अभिवृत्तियों आदि के विकास को भी प्रभावित करता है। अतः पर्यावरण किसी व्यक्ति के समस्त प्रभावी प्रतिवेश से मिलकर बनता है। पर्यावरण को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है : (अ) पारिस्थितिकी, और (ब) मनोसामाजिक।

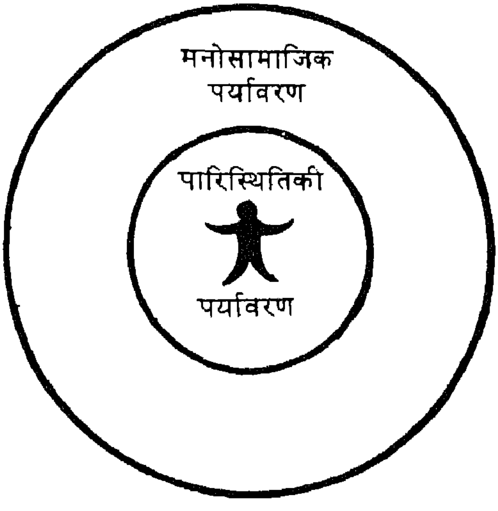
(अ) पारिस्थितिकी पर्यावरण

मनुष्य बहुत सी पीढ़ियों से किसी एक क्षेत्र विशेष मे रहने पर वहाँ के भौतिक एवं सास्कृतिक पर्यावरण के अनुसार अनुकूलन कर लेता है। फसल की पैदावार का प्रकार भूभाग की प्रकृति, वर्षा की मात्रा और क्षेत्र की स्थिति पर निर्भर करता है। यही दशाएँ घरो के प्रकार, सामाजिक सुविधाएँ, रहन-सहन की आदते, पास पड़ोस एवं अन्य सामाजिक समूहो जैसी बाते भी निर्धारित करती हैं। ई पी ओडम के अनुसार परिस्थितिविज्ञान पृथ्वी द्वारा धारित पशुओं, पेड़-पौधो, सूक्ष्म जीवों, और लोग जो अन्योन्याश्रित सघटकों की भाँति इकट्ठे रहते हैं, का अध्ययन है। यह पृथ्वी, समुद्रो और वायु मे प्रवाहित ऊर्जा और सामग्री चक्रो से भी सबधित है।

अतः पारिस्थितिकी पर्यावरण *व्यक्ति के भौतिक पर्यावरण, जलवायु दशाओ और क्षेत्रीय खण्ड को इंगित करता है जो व्यक्ति की सामाजिक आदतो, व्यावहारात्मक प्रवृत्तियो और जीवन के प्रति सामान्य दृष्टिकोण निर्धारित करने मे सार्थक भूमिका निभाते हैं* ।

(ब) मनोसामाजिक पर्यावरण

मनोवैज्ञानिक अथवा आन्तरिक पर्यावरण से तात्पर्य किसी व्यक्ति की अभिप्रेरणाओ, सज्ञान, प्रत्यक्षीकरणो और अन्य व्यक्तित्व विशेषताओं से है। ये सभी मनोवैज्ञानिक पहलू परस्पर क्रिया करते हैं और व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। अधिक अभिप्रेरित व्यक्ति बेहद खराब भौतिक स्थितियों में भी बिना थके काम कर सकता है। सामाजिक पर्यावरण का तात्पर्य अन्य लोगों द्वारा व्यक्ति को प्रदत्त पर्यावरण, समाज में उसकी भूमिका,समाज में उसके परिवार की स्थिति और उसकी परिवार के अनुक्रम में अपना स्थान है। सास्कृतिक, शैक्षिक और आर्थिक पृष्ठभूमियों के रूप में परिवार विशिष्टतया अलग-अलग होते हैं। अनेकों पारिवारिक चर, जैसे परिवार का आकार, परिवार की सरचना और बच्चे की परिवार में स्थिति आदि व्यक्ति के दूसरों से संबंधित दैनिक व्यवहार के लिए उत्तरदायी है।



चित्र 8.1 व्यक्ति और उसका पर्यावरण

समाजीकरण

परस्पर क्रिया कौशलों का अधिगम

जब किसी परिवार मे बच्चे पैदा होते है तो वे उसमे एक विशिष्ट स्थान पाते हैं। विकास क्रम मे वे कुछ समूहो की सदस्यता स्वय ही पा लेते हैं और कुछ

सगठनों की इच्छानुसार अर्जित करते हैं। परिवार और समूह इन नये सदस्यो को परस्पर व्यवहार के कौशल जैसे बोलना एवं दूसरो से व्यवहार करना सिखाते हैं। वे सदस्यों को यह बताते हैं कि उनसे क्या अपेक्षाएँ हैं और वे समाज से क्या अपेक्षाएँ रख सकते हैं जिसमे सामाजिक पर्यावरण निहित है। सामाजिक जीवन, सदस्यो की आदतों की सरचना एव समाज के सदस्यो के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। व्यक्ति जिस समूह के सदस्य होते हैं उसके सदस्यों की अपेक्षाओ के अनुरूप बनने के लिए वे अपने व्यवहार मे परिष्करण लाते हैं। इससे कौशलों, आदतो, अभिवृत्तियो, विश्वासो, परम्परागत मूल्यो और समाज की सामाजिक भूमिकाओं को सीखने मे भी मदद मिलती है। परस्पर व्यवहार के कौशल सीखना वह प्रक्रिया है जो किसी विशेष अवस्था पर रुकती नही है बल्कि जीवन भर चलती रहती है और व्यक्ति को दिए हुए सास्कृतिक एव सामाजिक समूह मे प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य करने में सहायता देती है।

सामाजिक भूमिका का अधिगम

किसी नई सामाजिक भूमिका को सीखने के लिए जीवन मूल्यो, अभिवृत्तियो और दिए हुए धार्मिक, राजनीतिक, व्यावसायिक, आर्थिक, जातिगत और यहाँ तक कि खेल समूहों की व्यावहारिक विशेषताओं को समझने और अन्तरस्थता की अपेक्षा होती है। इन व्यवहार स्वरूपो की विषयवस्तु जीवन की विभिन्न अवस्थाओं अर्थात् बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था के अनुसार बदलती है। कुछ जीवन मूल्य जिनको मन मे बाल्यावस्था मे बैठाया जाता है वे विकास की विभिन्न अवस्थाओ मे प्रस्फुटित अथवा प्रोत्साहित होते है और कुछ जीवन मूल्यो को उम्र के बढ़ने के साथ-साथ चुनौतियो का सामना करना पड़ता है। किसी विशेष सामाजिक समूह की सार्थकता दूसरे समूह की वरीयता मे समाप्त हो सकती है। उदाहरणार्थ किशोरावस्था मे साथी समूहो और साथी सस्कृति का प्रभाव प्राथमिक सामाजिक कर्मक अर्थात् परिवार के ऊपर हावी रहता है। समाज में ही कुछ विशेष समूह व सगठन इस पारस्परिक क्रिया की प्रक्रिया मे अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाते है। माता-पिता, भाई-बहन, साथी और अध्यापक अपना बहुत-सा समय जीवन मूल्यो और अभिवृत्तियो का सप्रेषण करने एवं बच्चो के व्यवहार को दिशा निर्देश देने और परिष्कृत करने मे लगा देते है। बच्चो से माता-पिता क्या अपेक्षा करते हैं यह भी उन्हें सूचित कर दिया जाता है। ऐसी अपेक्षाओ की भूमिकाएँ अपने मे काफी कुछ समाहित किए रहती है जैसे कि उन्हें कैसा दिखना चाहिए, क्या पहनना चाहिए, किस प्रकार सप्रेषण, चिन्तन, विश्वास, मूल्याकन एव व्यवहार करना चाहिए, यह सब शामिल है। ये भूमिकाएँ सस्कृति के सरक्षण एव भावी पीढियो मे उसके हस्तातरण मे सहायता करती हैं।

सस्कृति का हस्तातरण

भारत मे अनेक उपसस्कृतियो की समृद्ध परम्परा चली आ रही है। सस्कृति की परिभाषा किसी ऐसे समूह मे आपसी व्यवहार के ढंग के रूप मे की जा सकती है जिसके सदस्य सप्रेषण हेतु एक ही जैसे अर्थों और प्रतीको का इस्तेमाल करते हैं। जब कोई समुदाय अपने जीवन मूल्यो की प्रणाली विकसित कर लेता है जिसमे उसकी अपनी कला, धर्म एव जीवन दर्शन प्रतिबिम्बित होते हैं तो यही उसकी सस्कृति बन जाती है। इसमें व्यक्ति का एक दूसरे के साथ सप्रेषण भी शामिल है जिसे मौखिक परम्परा कहते हैं। समाजीकरण की प्रक्रिया अनेक उपसस्कृतियो मे यथेष्ट विविधताएँ प्रदर्शित करती है। किसी व्यक्ति का किसी सस्कृति मे समाजीकरण उत्सस्करण कहलाता है। हम पशुओ मे भी समाजीकरण देख सकते हैं जब वे परिवार या समूहो मे रहते हैं। लेकिन केवल मनुष्य ही उत्सस्करण की प्रक्रिया में से गुजरता है। अतः *कच्चे माल को तैयार उत्पादन मे परिवर्तित करके मानव को समाज के प्रभावकारी सदस्य बनाने की प्रक्रिया समाजीकरण मानी जाती है* ।

समाजीकरण के रचनातंत्र

मनोवैज्ञानिको के अनुसार समाजीकरण के अनेक रचनातंत्र और रिवाज़ हैं जिनके द्वारा मनुष्यो मे ऐसे प्रशिक्षण का सप्रेषण या व्यवहार का अधिग्रहण होता है। तीन महत्वपूर्ण रचनातत्रों की विवेचना नीचे की गई है।

(i) *पुरस्कार एव दण्ड*

वे क्रियाएँ जो बार-बार पुरस्कृत अनुभवो मे परिणत होती हैं उन्हें सामान्यतः धारित कर लिया जाता है या सीख लिया जाता है और जिन कार्यों की परिणति पीड़ादायक परिणामो मे होती है वे क्रमश· विलुप्त अथवा अस्वीकृत कर दिए जाते है। दण्ड प्राय· कष्टदायक एव पुरस्कार सतोषप्रद होता है। अनेक माता-पिता इस तथ्य से अवगत हैं कि बच्चे के किसी विशेष कार्य के लिए पुरस्कार देने से वह व्यवहार प्रोत्साहित होता है। माता-पिता सामान्यतः अवाछित व्यवहार को कम करने अथवा पूर्णत· विलुप्त करने के लिए किसी प्रकार के दण्ड का प्रयोग करते हैं। कक्षा मे अध्यापक भी पाठ्यक्रम अथवा पाठ्य सहगामी क्रियाकलापो मे किसी प्रकार की उपलब्धि को पुरस्कृत करने की विधि प्रयुक्त करते है एवं अनचाहे व्यवहार जैसे अनुशासनहीनता को दण्डित करते है।

(ii) *अनुकरण एव प्रतिरूपण*

अधिकाश मानव व्यवहार अभिप्रेत रूप से या अनाभिप्रेत रूप से दूसरो द्वारा दिए गए उदाहरणो से हस्तान्तरित होता है। दूसरे के व्यवहार को निरीक्षण द्वारा वैसा ही सीखने की प्रक्रिया को प्रतिरूपण कहते हैं। अनेक स्थितियो मे व्यक्ति अनिश्चित होते है कि क्रिया कैसे करें। समान स्थितियो मे किसी के व्यवहार





चित्र 8.2 बड़े होना सचमुच मज़ेदार है

का अनुकरण करना सबसे आसान है। बच्चे नायक उपासक होते हैं। नायक या प्रतिरूप व्यक्ति प्रायः सफल व्यक्ति होते है और बच्चे उनकी उपलब्धियों को अपने जीवन के संभावित लक्ष्यों की भाँति देखते हैं। प्रतिरूप दिशा देते हैं और बच्चे उनके अनुसार कार्य करके गर्व का अनुभव करते हैं। बच्चे अपने प्रतिरूपों का चयन यादृच्छिक रूप से नही करते। प्रतिरूपो का चयन प्रतिरूप की क्रियाओ और उसके व्यवहार का अनुकरण करके प्राप्त सन्तोष पर निर्भर करता है। परिवार में बच्चे प्रायः बड़े भाई-बहनों, माता-पिता अथवा पड़ोसियों को अपने प्रतिरूप के रूप में अनुकरण करते हैं। यह आवश्यक नही कि प्रतिरूप वास्तविक जीवन रूप मे ही हो। यहाँ तक कि प्रतिरूप का चित्रित अथवा प्रतीकात्मक रूप जैसे चलचित्र अथवा दूरदर्शन के व्यक्तित्व, खिलाड़ी, चित्रकार, राजनीतिज्ञ और अन्य ऐतिहासिक व्यक्ति और उनके कार्य भी प्रतिरूपण के लिए पर्याप्त हैं।

(iii) *तादात्मीकरण एव अन्तरस्थता*

बहुत सी सामाजिक स्थितियों मे व्यक्ति सफलता प्राप्त करने के लिए दूसरो का अनुकरण करते हैं। सन्तोषदायक सम्बन्धो या किसी विशेष विशेषता के परिणामस्वरूप बच्चे अपने व्यवहार को अपने प्रतिरूप के अनुसार आकार देने का प्रयास करते हैं। इसे *तादात्मीकरण* कहते हैं। यह एक प्रक्रिया है जिसमे व्यक्ति अपने को राष्ट्र, सामाजिक वर्ग, धार्मिक समूह के रूप में पारिभाषित करते हैं। तादात्मीकरण प्रशसित व्यक्तियो के अनुकरण अथवा उनकी अपेक्षाओ के अनुरूप बनने के परिणामस्वरूप होता है। जब ऐसी अपेक्षाएँ व्यक्ति के स्वय के व्यवहार का मानदण्ड बन जाती हैं अथवा दूसरे व्यक्ति की विशेषताएँ और तौर तरीके व्यक्ति के अपने व्यवहार के रंगपटल मे समाविष्ट हो जाते हैं तो ऐसे प्रभाव को *अन्तरस्थता* कहा जाता है। यह एक प्रक्रिया है जिसमे व्यक्ति अपने प्रतिरूप की अभिवृत्तियो तथा जीवन मूल्यो को अपनाकर स्वीकार कर लेते हैं किन्तु व्यक्ति अपने प्रतिरूप की सभी अभिवृत्तियाँ एवं जीवन मूल्य अन्तरस्थ या यहाँ तक कि स्वीकृत नहीं भी कर सकते।

समाजीकरण के कर्मक

सामाजिक संस्थाओं को किसी भी समाज का आधार स्तम्भ माना जा सकता है। ये मानवीय सम्बन्धों की औपचारिक प्रणालियाँ हैं जो मानव और मानव समूहों की आधारभूत आवश्यकताओ से संबंधित हैं और वर्तमान सस्कृति के जीवन मूल्यो द्वारा सरणीकृत होती हैं।

जिन सामाजिक समूहों से बच्चे का उत्तरोत्तर परिचय होता है, वे परिवार, पड़ोस, विद्यालय, धार्मिक समूह, जाति समूह, व्यावसायिक समूह आदि है। बच्चे के समाजीकरण के दौरान ये समूह उसे अपने जीवन की विभिन्न अवस्थाओ मे समायोजित करने के लिए तैयार करते हैं। समाजीकरण के यह कर्मक समाज और सस्कृति की निरन्तरता को बनाये रखने के लिए महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। ये समूह जिनके बारे में हम अगले पृष्ठों पर पढ़ेगे, व्यक्ति के जीवन पर्यन्त समाजीकरण मे प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

(i) **परिवार**

तादात्म्य करने के लिए एक स्थिर समूह

परिवार सबधो और परस्पर क्रियाओ का जाल है जिसकी सततता, सहयोग और सवेगात्मकता के मूर्तरूप का समकक्ष सभवत. किसी अन्य प्रणाली मे नही मिलता। परिवार के प्रमुख कार्य सस्कृति का वहन करना, बच्चो को अन्वेषण व समस्या-समाधान की स्वतन्त्रता देकर और सुखद सामूहिक जीवन और सुरक्षा प्रदान करके, इस जटिल विश्व की व्याख्या करना और उसे सरल बनाना है जिससे उनका सर्वांगीण विकास हो सके। परिवार सबसे पहली अति महत्वपूर्ण इकाई है जिसके साथ बच्चे का निरन्तर सम्पर्क रहता है। यही एक मात्र स्थाई समूह है जिसके साथ बच्चे तादात्म्य स्थापित कर सकते हैं। बच्चे इस समूह के साथ वैयक्तिक सुरक्षा अनुभव करते हैं।

इसी कारण परिवार के विभिन्न सदस्यो के साथ सम्बन्धो के विभिन्न प्रकार उसके व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

परिवार भाई बहनो के सतत सबध प्रदान करता है

सयुक्त परिवार मे बच्चे के अनेक बहन-भाई होते हैं। छोटे परिवार में एक दो या कोई भी भाई बहन नहीं हो सकता और वह इकलौता हो सकता है। भाई बहनों का संबंध विशेष होता है और परिवार सबधो के समूह का सार्थक भाग है। यह बच्चे के समाजीकरण में महत्वपूर्ण है क्योकि भाई बहन इस प्रकार के व्यवहार मे रत होते हैं जो आपसी लगाव और स्पर्धा को इंगित करता है। परिवार मे दो बच्चे होने पर चाहे माता पिता बच्चो के साथ एक समान बर्ताव करें तो भी दोनो बच्चो के लिए घर का वातावरण एक जैसा नही होता। दोनो मे से प्रत्येक बच्चे की संगति के लिए विभिन्न बच्चा है। दोनो मे से बडे बच्चे को परिवेश के भाग के रूप मे छोटे बच्चे का साथ मिलता है जबकि छोटे को बड़े बच्चे का साथ मिलता है जो कि बिल्कुल ही भिन्न सबध है।

कुछ मनोवैज्ञानिको विशेषतया अल्फ्रेड एडलर ने बच्चे की परिवार मे स्थिति या जन्मक्रम पर अत्यधिक बल दिया है। इकलौता बच्चा जिसने कभी बँटवारा नही किया, अधिक मॉग के साथ-साथ निरकुश भी हो सकता है। सबसे बड़ा बच्चा, काफी समय तक अपने जीवन के निर्माण काल मे इकलौते बच्चे की भूमिका निभाने के बाद पदच्युत अनुभव करता है। दूसरा बच्चा सदैव पहले बच्चे की भाँति बनने के प्रयत्न मे व्यग्र और अशान्त व्यक्ति बन सकता है। सबसे छोटा बच्चा अविरत छोटा बच्चा बना रहने के कारण सदैव दूसरो की मदद चाहेगा और लाडला बच्चा बन जाता है।

भाई बहनो मे सबध जो कि माता पिता और साथी समूहो के सबधो से गुणवत्तात्मक रूप से भिन्न होता है, बच्चे को अपनी आन्तरिक शक्तियो के विकास मे सापेक्षतः सतत अवसर प्रदान करता है।

(ii) पास-पड़ोस

'पड़ोस' पद का तात्पर्य 'समीपता' से है। पडोसी वह है जो पास मे रहता है। यद्यपि पड़ोस सबध बहुत महत्वपूर्ण प्रतीत होते हैं किन्तु ये सवेगात्मक रूप से कम तीव्र होते हैं और कभी-कभी पडोसियो मे केवल बातचीत ही होती है या यहाँ तक कि वे एक दूसरे के विरोधी भी हो सकते हैं। बडे होने के साथ-साथ बच्चे अपने समीपवर्ती पड़ोस के बच्चो के सम्पर्क मे आते हैं, वे इनके साथ आनन्द प्राप्त करते है। क्योकि वे उनके अपने भाई बहनो से भिन्न होते हैं।

बच्चे सामान्यत पडोसियो के साथ और उनके बच्चो के साथ अपने माता-पिता के सबधो के अनुसार व्यवहार करते है। इन अनुभवो से बच्चो मे नये विचारो और सूचनाओ का हस्तान्तरण होता है। बहुत सी परिस्थितियो मे मित्रो और पड़ोसियो का बच्चो पर अत्यधिक प्रभाव पडता है। किन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि व्यक्ति बहुमजिली भवनो मे रहते हैं जहाँ उन्हे पड़ोसियो मे हो रहे झगड़े भी सुनाई पड़ते हैं अथवा विशाल बँगले मे जहाँ वस्तुत दूसरे से कोई सम्पर्क ही नही होता। झुग्गी झोपड़ियो मे पडोस का व्यवहार अर्द्ध शहरीकृत अथवा कस्बाई पडोस से भिन्न होता है। वे लोग जो सामान्य जन सुविधाओ जैसे जल, शौचालय इत्यादि का मिलकर उपयोग करते है, उनका व्यवहार उन लोगो से भिन्न होता है जो इन सुविधाओ को अपने घरो मे उपयोग करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रो मे पडोस शहरी क्षेत्रो की तुलना मे विभिन्न अनुक्रियाएँ उत्पन्न करता है।

साथियो के साथ समाजीकरण

जैसे-जैसे बच्चे बढते हैं, उनके सपर्को मे वृद्धि होती है और वे विभिन्न सामाजिक एव सास्कृतिक पृष्ठभूमि वाले पडोसियो के बच्चो के साथ मित्रता विकसित कर लेते है। बच्चे प्रारम्भ से ही अपने साथियो के साथ अनुक्रियाशील होते है। साथियो के साथ अधिकतर सामाजिक परस्पर क्रियाएँ क्रीडा के विन्यास मे ही होती हैं। विद्यालय परिसर मे एक दूसरे का



चित्र 8.3 मित्र

पीछा करना, झूलो पर झूलना, पेडो पर चढना एव इसी तरह के अनेको खेलो में व्यस्त रहने के कारण बच्चों को अधिकतर समय अपने मित्रो के साथ रहने के लिए मिल जाता है। युवाओं को अपने साथी समूह, अपने माता-पिता, शिक्षक व अन्य बडो की अपेक्षा अधिक आकृष्ट करते है क्योकि यह समूह अधिक समान, रुचिकर, और उन्हें आसानी से उपलब्ध होते हैं। वे सजीव एव रुचिपूर्ण क्रियाओ मे व्यस्त रहते हैं।

साथी समूहों के साथ समाजीकरण की प्रक्रिया मे युवा, सामाजिक परस्पर क्रियाएँ सीखते हैं। साथी समूह क्रियाएँ सामान्यतः सुखद होती हैं। युवा सूचनाएँ, जीवन मूल्य और अभिवृत्तियाँ अर्जित करते हैं और वे प्रतियोगिता, विवाद या अपनी बुद्धि को दूसरो के अनुरूप करने के कौशल विकसित करते है जो उनकी वृद्धि और विकास मे योगदान करते हैं। वे यह समझते हैं कि अपने बराबरवालो की आज्ञा मानने को वे बाध्य नहीं है और इसलिए सभवत. वे इसे आनन्ददायक मानते है। वे प्राय: अपने साथियो मे अधिक रुचि लेते हैं और अपनी भूमिका और समूह क्रियाओ का चयन कर लेते हैं। कभी-कभी यह समूह जोखिमपूर्ण क्रियाओ मे भी भाग लेते हैं। ऐसे समूह का साहचर्य युवाओ को सामान्य रूप से जीवन के प्रति उदार दृष्टिकोण देता है। उनके अनेक विचार दूसरो के विचारो से भिन्न हो सकते है और यदि वे प्रभावित हो जाते है तो वे अपने मत मे परिवर्तन कर सकते हैं। वे लेन-देन, आपस मे बाँटना, अच्छा खिलाडी बनना, और जब वे कष्ट मे हो तो सहानुभूति रखना आदि सीखते है। ये ही समूह आचरण एव व्यवहार के मानदण्ड निर्माण करते हैं और लागू करते है।

किशोर अपने समूह सदस्यो की क्रियाओ को अवधान एव स्वीकृति देते हैं। वे प्रशसा करना,

सहायता देना, स्नेह देना और साथियो को स्वीकृति देना सीखते है जो समाजीकरण व्यवहार में महत्वपूर्ण हैं। दूसरो के विचारो के प्रति प्रसन्नतापूर्वक आत्मसमर्पण, सहयोग, समझौता, और चीजो को मिलकर बॉटना आदि महत्वपूर्ण व्यवहार है जो युवा अपने साथियो की सगति मे सीखते हैं। मित्रता, समायोजन, उचित स्तर, तर्कसगत आत्म सम्मान, और दूसरो की आवश्यकताओं और भावनाओ के लिए सवेदनशीलता आदि व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण विशेषताएँ साथियो के साथ परस्पर व्यवहार से प्रकट होती है।

(iii) विद्यालय का व्यवहार पर प्रभाव

दूसरो के साथ समायोजन

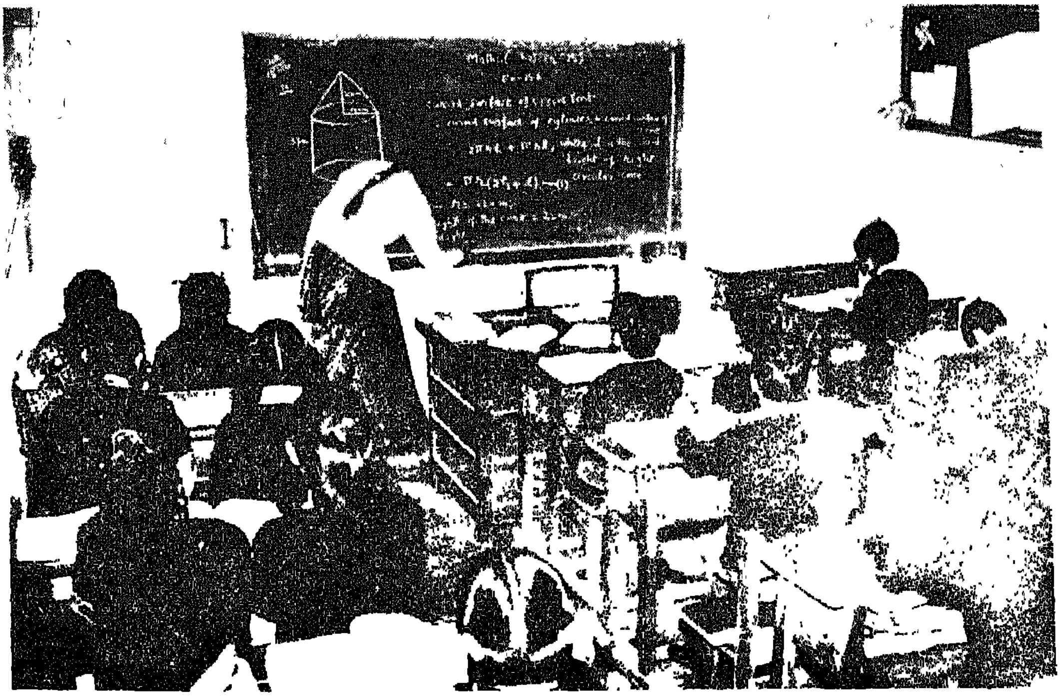
समाजीकरण की प्रक्रिया मे विभिन्न कर्मक बच्चे के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षो का विकास करते हैं। इनमे से परिवार के बाद विद्यालय द्वितीय महत्वपूर्ण कर्मक है। विद्यालय का ससार अद्वितीय ससार है। सहपाठी, अध्यापक, प्रधानाध्यापक, प्रतियोगिताएँ, छोटी-छोटी बातो पर प्यार व द्वेष, उत्तेजनापूर्ण छुट्टियाँ, विशेष शिविर और खेल प्रतियोगिताएँ सभी दूसरो के साथ समायोजन करने के प्रशिक्षण मे योगदान करते हैं।

सर्वांगीण विकास

विद्यालय का तात्पर्य उसकी सरचना या भवन से नही है। इसमे सुव्यवस्थित रूप से सजोयी हुई सभी सगठित क्रियाएँ जो विद्यार्थियो के सर्वांगीण वृद्धि एव विकास का नियन्त्रण करती हैं, आती हैं। यह नये कौशलो को सीखने का परिवेश प्रदान करता है और शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया बच्चो के व्यक्तित्व के सभी पहलुओ के विकास मे सहायता करती है।

कक्षा मे अनुशासन

विद्यालय आयु आधारित श्रेणियों के सिद्धात पर कार्य करता है जिसमे बच्चे विभिन्न कक्षाओ मे अध्ययन



चित्र 8.4 कक्षा

करते हैं। कक्षा इस पद्धति की एक महत्वपूर्ण इकाई है। यह वह स्थान है जहाँ बच्चे का शिक्षण-अधिगम होता है। कक्षा मे अनिवार्य उपस्थिति और अनुशासन बनाये रखना अपेक्षित होता है। चूँकि विद्यालय समाजीकरण का महत्वपूर्ण कर्मक है और कक्षा विद्यालय की केन्द्रीय इकाई है, बच्चे का व्यवहार कक्षा में शिक्षण-अधिगम स्थिति द्वारा निर्धारित होता है।

औपचारिक जीवन का प्रशिक्षण

जब बच्चे 3-4 वर्ष के होते हैं तो उन्हें विद्यालय प्रणाली से परिचित कराया जाता है। प्रारम्भ मे उनके आसपास के लोग उनके लिए अपरिचित होते हैं। उनसे पूर्व निर्धारित मानको के अनुसार व्यवहार करने की अपेक्षा की जाती है। नियम, दैनिक चर्चा और नियमितता उनके जीवन को शासित करते हैं जो विद्यालय में सब पर एकसमान लागू होते है। वे यह पाते हैं कि उनकी आवश्यकताएँ एवं रुचियों से किसी दूसरे को कोई संबंध नहीं है। उन्हें अपनी सनक, चित्तवृत्ति और इच्छाओ को नियन्त्रित रखना पड़ता है। उनके बैठने का विशेष स्थान होता है, कभी-कभी अकेले व कभी-कभी कक्षा-साथियों के साथ भागीदारी करनी पड़ती है जिसके साथ उनकी मित्रता हो भी सकती है और नहीं भी। वे केवल अनुमति मिलने पर ही खड़े हो सकते हैं या इधर-उधर आ-जा सकते हैं। इन सबके अतिरिक्त उन्हे कौशल सीखने अपेक्षित होते हैं और अपनी उपलब्धि को आशानुकूल स्तर तक बनाये रखना पड़ता है।

शिक्षक की भूमिका

विद्यालय में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति शिक्षक होते हैं। वे कक्षा मे केन्द्र बिन्दु होते हैं। अपनी सत्ता एव ज्ञान के कारण शिक्षक की भूमिका बच्चे के विद्यालयी जीवन मे निर्णायक होती है। शिक्षक प्रत्येक कक्षा मे अपने विद्यार्थियों के जीवन को प्रभावित करते हैं। छोटी कक्षाओ मे बच्चे शिक्षक के हर शब्द आदेश की भाँति पालन करते हैं और उनके व्यवहार का अनुकरण करने का प्रयास करते हैं। शिक्षक अपने व्यवहार द्वारा विद्यार्थियों का व्यवहार निम्न प्रकार से प्रभावित कर सकते हैं।

(क) *शिक्षण अध्यापन जीवन मूल्य* : शिक्षक का प्रथमतः और संभवतः महत्वपूर्ण प्रभाव जो बच्चों पर होता है वह ईमानदारी, स्पष्टता, निष्पक्षता व न्यायप्रियता के विषय मे होता है। बच्चे वैयक्तिक एव सामूहिक रूप से यह अपेक्षा करते हैं कि शिक्षक व्यवहार में पक्षपातपूर्णता नहीं दिखाएँगे। वे यह भी अपेक्षा करते हैं कि विशेष सुविधाएँ, वांछित उत्तरदायित्व और श्रेणियाँ बच्चों को समानता और योग्यता के आधार पर वितरित की जाएँगी न कि व्यक्तिगत पक्षपात के आधार पर।

(ख) *योग्यता के लिए सम्मान* : एक महत्वपूर्ण अपेक्षा जो बच्चों को शिक्षक से होती है वह है कि शिक्षक अपने विषय को अच्छी प्रकार जानते हैं और उनके पास उनके सभी प्रश्नों के सन्तुष्टिदायक उत्तर हैं। जैसे एक रोगी को अपने चिकित्सक के अनुभव पर पूर्ण विश्वास होता है, शिक्षक अपनी योग्यता एवं ज्ञान द्वारा बच्चों का विश्वास प्राप्त कर लेते हैं। बदले में जब बच्चे शिक्षक द्वारा अभिप्रेरित होते हैं, वे भी ज्ञान की खोज करते हैं और सीखने का प्रयत्न करते है। जब शिक्षक पूरी तैयारी के साथ शिक्षण के लिए कक्षा मे आते हैं वे विद्यार्थियो को सतर्क और सीखने के लिए तैयार पाते हैं। योग्य अध्यापको को बच्चे सम्मान देते हैं और इसी प्रकार वे बड़ो का सम्मान करना सीखते है।

(ग) *आत्मबोध* : बच्चे अध्यापक को एक समझदार वयस्क के रूप मे पाते हैं जिसके पास उनकी समस्याओ को धैर्य से सुनने का समय है और वे यह अपेक्षा करते हैं कि अध्यापक के पास उनकी सभी समस्याओं का समाधान है। ध्यान से सुनने के कारण अध्यापक विद्यार्थियों की समस्याओं को बोल करके अपने आप समझने मे सहायता करते हैं। इस प्रकार अध्यापक

विद्यार्थियों को यह व्याख्या करके कि प्रत्येक की समस्याएँ होती हैं, प्रत्येक के साथ होती है और व्यक्ति को अपनी क्षमताओ के अनुसार उनका समाधान करने का प्रयत्न करना चाहिए, उनके आत्म सम्मान मे वृद्धि करते हैं।

(घ) *परिश्रम* : शिक्षक विद्यार्थियों को अपने उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए परिश्रम करने के लिए प्रेरित करते हैं। जब बच्चे अपने शिक्षक को अपनी योग्यताओ के अनुसार उन्हें उत्तम शिक्षण देने के लिए कठिन परिश्रम करते हुए देखते हैं तो वे भी अपने प्रयासो को बढाने के लिए अभिप्रेरित होते हैं। अगर शिक्षक बच्चो के साथ सहयोग करते हैं तो उनको बच्चो का हार्दिक सहयोग मिलता है। किसी सामूहिक क्रिया में यदि शिक्षक अपना योगदान करते है तो उन्हें सहयोग प्राप्त होता है। इस प्रकार जहाँ सहयोग की आवश्यकता होती है, उन स्थितियो में बच्चे भागीदारी करना सीख जाते हैं।

(ङ) *स्नेहपूर्ण व्यवहार* : शिक्षक के व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष जिसका निरीक्षण एव मापन थोडा कठिन है, वह है एक ओर उनका उत्साह और दूसरी ओर उनका बच्चो के साथ स्नेह। उत्साही शिक्षक वे हैं जो बच्चो को पसन्द करते हैं और उनके साथ आनन्दित होते हैं। इस प्रकार के शिक्षक कक्षा को अपने प्रिय व्यवहार, सहयोग ओर बाल्यावस्था की दुर्बलताओं को समझते हुए प्रसन्नतायुक्त स्थान बना देते हैं। उत्साही शिक्षक अनिवार्यत उन्मुक्त शिक्षक नही होते और वे बिना निष्ठुरता के दृढ़ता के साथ सीमाओ को नियत कर सकते है। वे स्नेह से अनुशासन कायम करने के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

(च) *स्व-अनुशासन* : अनुशासनकर्ता के रूप मे शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। अनुशासन से तात्पर्य व्यवस्था एव नियत्रण के साथ-साथ स्व-अनुशासन बनाये रखना है। बच्चो मे स्व-अनुशासन की भावना भरने के लिए शिक्षक कक्षा मे ऐसी स्थितियॉ या क्रियाओ का सृजन करते हैं जिनसे बच्चो को उत्तरदायित्व सौपा जा सके और उन्हें स्वय निर्णय लेने के अवसर प्राप्त हो। विद्यालय विन्यास मे अपने पद एव सत्ता के कारण शिक्षक अपने विद्यार्थियो के व्यवहार को प्रभावित करते हैं और उनके लिए कर्तव्य प्रतिरूप बन जाते हैं।

(iv) धार्मिक समूह

भारत एक धर्म निरपेक्ष राज्य है जिसका तात्पर्य है कि यहाँ केवल एक प्रभुसत्ता धर्म नही है और सभी धर्म राज्य के लिए एकसमान महत्वपूर्ण हैं तथा प्रत्येक नागरिक को अपने देवी/देवता की आराधना करने का बराबर अधिकार है। प्रत्येक धर्म के कुछ मूलभूत सिद्धात होते हैं जो अन्तत. मानवता के कल्याण की ओर अग्रसर करते हैं। लेकिन सभी धर्म अपने मतानुयायिओ से विभिन्न प्रकार के व्यवहार करवाते है जो उनके अपने दर्शन पर निर्भर करते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दू धर्म कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धात मे विश्वास करता है, मुसलमानो द्वारा कुछ धार्मिक अनुष्ठानो को नियमपूर्वक मानना आवश्यक होता है। जैन और बौद्ध धर्म को मांननेवाले कुछ विशेष वस्तुओ के परित्याग एव अपरिग्रह पर अधिक बल देते है। इसका तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति किसी विशेष धार्मिक समूह मे पैदा होते हैं तो उनका व्यवहार कुछ सीमा तक उस समूह द्वारा निर्धारित होता है।

धार्मिक समारोह सामाजिक जीवन के दैनिकचर्या का भाग हैं जो बच्चो को इनमे भाग लेने, निरीक्षण करने और अपने से बडो का अनुकरण करने का अवसर देते हैं। होली, दीवाली, ईद-उल-फित्र, क्रिसमस, बुद्ध पूर्णिमा, महावीर जयन्ती, और गुरुनानक जन्मदिन पर बच्चे प्रसन्नतापूर्वक इन धार्मिक क्रियाओ मे सक्रिय भाग लेते हैं। भारतवर्ष मे फसलो की कटाई के समय, मौसम के परिवर्तन और बच्चो के बढने के महत्वपूर्ण समय धर्म के साथ सबद्ध है। इन धार्मिक आनन्दोत्सवो के अवसरो पर कहानियाँ, गीत, प्रतीक, रीति-रिवाज़, समारोह और नाटक प्रस्तुतीकरण आदि के माध्यम से धार्मिक उत्सव बच्चो पर अमिट छाप छोड़ते है।

यह अपेक्षित एवं प्रशंसनीय है कि दूसरे धार्मिक दृष्टिकोणों के प्रति उदारता हो और विभिन्न धर्मों में व्याप्त विभेदो के प्रति सम्मान दिया जाए। किन्तु प्रायः सभी धर्म निष्ठा की अपेक्षा रखते हैं जिसका अन्तर्निहित तात्पर्य एक धर्म मे विश्वास करना और अन्य सभी धर्मों के प्रति अस्वीकृति है। प्रत्येक धर्म उसके पुजारियो एवं धर्म के पूजास्थलो द्वारा प्रचारित होता है।

बाल्यावस्था में बच्चे अपने माता-पिता के धार्मिक दर्शन को बिना प्रश्न किए हुए अनुगमन करते हैं। यदि माता-पिता किसी रूप में धर्म विरोधी हैं तो उनके बच्चे इसी दृष्टिकोण से परिचित हो जाते हैं। यदि माता-पिता किसी विशेष धार्मिक पद्धति के पक्ष में हैं तो इन अनुभवों का प्रभाव भी बच्चों पर जीवन पर्यन्त रहता है। यदि बच्चे धार्मिक दृढ धारणाएँ विकसित कर लेते हैं तो उनमें उन धार्मिक विचारों को निरन्तर रखने की प्रवृत्ति होती है। किन्तु यदि वे असहमत हैं अथवा तैयार नही होते तो धार्मिक समर्पण प्रत्येक पीढ़ी के साथ समाप्त होता जाता है। यद्यपि विभिन्न धर्मों ने अनेक उच्चतर जीवन मूल्यो को पोषित करते हुए उत्सस्करण मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है फिर भी कभी-कभी दूसरे धार्मिक समूहो के प्रति सहिष्णुता दम तोड़ देती है और साम्प्रदायिक हिंसा भड़क उठती है जो राष्ट्रीय एकता और सामजस्य के व्यापक हितो को हानि पहुँचाती है।

(v) जातीय समूह

वैवाहिक संबंधो की व्यवस्था और उन्हें सपोषित करने के लिए पुरानी पीढ़ी युवा पीढ़ी को जातीय पहचान हस्तान्तरित करती है। बच्चो में परस्पर क्रिया के पारिवारिक ढंग, सप्रेषण के निरीक्षण और निर्धारित व्यवसायों को अपनाने से जातीय मूल्य आ जाते हैं। जातीय व्यवस्था व्यक्ति के व्यवहार को भी निर्धारित करती है। कभी-कभी बच्चे जातीय बंधनो का विरोध करते हैं और इन ज़जीरों को तोड़ने का प्रयत्न करते हैं किन्तु जाति के और समुदाय के बंधन अभी भी काफी दृढ़ हैं और कभी-कभी व्यक्तियो और समूहों मे तनाव उत्पन्न कर देते हैं। यद्यपि शहरों मे जाति प्रथा खडित प्रतीत होती है किन्तु इसकी पहचान पूर्णतः लुप्त नहीं हुई है क्योकि अभी भी माता-पिता या परिवार के सदस्य अपने लड़को और लड़कियों के विवाह अपनी ही जाति या समुदाय मे करने का उत्तरदायित्व लेते हैं। वे विवाह को संपोषित करने में भी सहायता करते हैं क्योकि भारत मे विवाह दो व्यक्तियों मे नही बल्कि दो परिवारो का सबध माना जाता है। शिक्षित भारतीयों मे अन्तर्जातीय विवाह वृद्धि पर हैं और वे जातियो में सदियो से चले आ रहे तनावो को कम करने में सहायता कर सकते हैं।

(vi) व्यावसायिक समूह

जब व्यक्ति अपने आप को किसी भी उत्पादन क्रिया मे संलग्न रखते हैं वही उन व्यक्तियो का व्यवसाय होता है। इसके परिणामस्वरूप उन्हें और उनके परिवार के लिए आय प्राप्त होती है। वह समूह जिसमे व्यक्ति अपने को इस प्रकार के कार्य करते हुए पाते हैं वे उनके व्यावसायिक समूह होते हैं। इनकी क्रियाएँ उनके व्यवहार को बहुत सीमा तक प्रभावित करती हैं। यह इस बात पर निर्भर करता है कि व्यक्ति वहाँ कितना समय व्यतीय करते हैं और उस समूह के लोगों के साथ उनके कैसे परस्पर व्यवहार है। समूह का प्रकार इस बात पर भी निर्भर करता है कि वे कौन सी क्रियाएँ अपने व्यवसाय के लिए चुनते हैं। ये समूह सगीत और ललित कलाओ से लेकर मशीन पर कार्य करनेवाले लोगो के समूह हो सकते हैं।

व्यवहार के निर्धारकों के रूप में जनसंचार साधन

मनुष्यों मे प्रतीकात्मक रूप से चिन्तन की क्षमता होती है और उन्हें अपने और विश्व के प्रति विचार निर्माण करने के लिए व्यक्तियों या वस्तुओ की वास्तविक उपस्थिति की आवश्यकता नहीं होती। मानव आविष्कारक है और विभिन्न उद्देश्यों के लिए उसने विस्तृत श्रोतागणों के लिए उद्दीपनो के अटल बौंध

को अनावृत करने के वास्ते जनसचार माध्यमो का आविष्कार किया है। जनसचार के आधुनिक साधनों के तीव्र तकनीकी विकास के कारण बहुसख्यक लोगो के पास एक ही समय में सूचना पहुँचना सभव हो गया है।

सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा

जनसंचार के साधन न केवल औपचारिक निर्देश वरन् मूल्यवान सूचनाएँ और सास्कृतिक समृद्धि भी प्रदान करते है। जनसंचार साधनो मे बच्चो के सपूर्ण व्यवहार को प्रभावित करने की क्षमता है। पुस्तकें, पत्रिकाएँ, उपन्यास, चित्र कथाएँ, समाचार पत्र, रेडियो, वीडियो, दूरदर्शन, नाटक और चलचित्र बच्चों को वास्तविकता से लेकर कल्पना प्रवाह और शिक्षा से मनोरंजन तक की सूचना अनावृत करते हैं। ज्ञान के विश्व से यह सामना जिज्ञासा, सप्रेषण और शाब्दिक कौशलो को उद्दीप्त करता है। जनसचार साधनों द्वारा प्रदान किए गए सचरण बच्चों मे सामाजिक मानक, सास्कृतिक जीवन मूल्य, राष्ट्रीय गरिमा और व्यक्तित्व के अन्य गुणो को पोषित करते हैं।

जनसामान्य की साक्षरता

जनसचार का दूसरा मुख्य और महत्वपूर्ण कार्य सूचना द्वारा शिक्षित करना है। उपग्रह के माध्यम से शैक्षिक दूरदर्शन हमारे देश मे दूर-दूर पहुँच गया है और इसने जन सामान्य की शिक्षा को प्रभावित किया है। अधिगम, शिक्षण और व्यवसायो के अनेक कौशल विभिन्न जनसचार माध्यमों द्वारा सीखे जा सकते है।

मनोरजन

जनसचार माध्यमो के मनोरजन कार्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता। बच्चों के साथ-साथ बड़े भी चित्र कथाओ, पत्रिकाओ, रगीन पुस्तको, कहानियो और सभी प्रकार की पाठकों के उपयुक्त सूचनाओ से आनन्द प्राप्त करते है। समाचार पत्रो मे प्रत्येक की रुचि के प्रबध के लिए अलग स्तम्भ होते है। रेडियो, दूरदर्शन, और चलचित्र भी काफी मनोरजन प्रदान करते है।

सामाजिक परिवर्तन और विकास

जनसचार के साधन सामाजिक परिवर्तन व विकास की शक्ति के रूप में कार्य करते हैं। उनके द्वारा संचारित सदेश क्षण भर मे करोड़ो लोगो तक पहुँच जाते हैं। सदेश के अनुसार करोडो लोग एक साथ प्रसन्नता अथवा दुःख का अनुभव करते हैं। कुछ सामाजिक घटनाओ को दूरदर्शन प्रकरणों में स्पष्ट दिखाया जाता है जो सामाजिक परिवर्तन मे योगदान करते हैं और चिन्तन के वातावरण को नये मोड़ प्रदान करते हैं। दूरदर्शन ने बहुत से माता-पिता एव अन्य वयस्को द्वारा समर्थित मिथ्या को खडित किया है। अब बच्चे जनसचार के साधनों की प्रामाणिकता से लैस होकर माता-पिता से तर्क कर सकते हैं। जनसचार के प्रभावी उपयोग द्वारा सामाजिक परिवर्तन की ओर प्रभावोत्पादक एव अभिप्रेत प्रयत्न किया जा रहा है।

सास्कृतिक विरासत की निरन्तरता

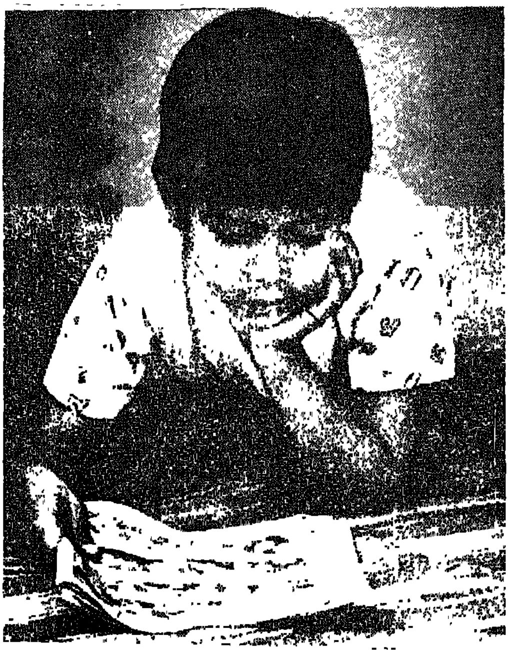
लोकगीत, लोककथाओ, लोक नृत्यो द्वारा बच्चे परम्परा के साथ-साथ सामाजिक आदर्शों का आनन्द लेते हैं। जनसचार माध्यमो द्वारा पौराणिक कथाओ और त्योहारो की भूमिका को विशिष्टता दी जाती है जिससे समकालीन धर्मों की सामान्य विशेषताओं को जानने, उनका वर्तमान सदर्भ मे महत्व और इन सबसे ऊपर आत्म अन्वेषण द्वारा स्वपहचान मे सहायता मिलती है। इससे लोगो की सामान्य रुचियो और सस्कृति को पहचानने मे सहायता मिलती है जिससे देश की एकता एव अखण्डता मे सहायता मिलती है। जनसचार के तीन महत्त्वपूर्ण साधनों—मुद्रण, श्रव्य एव दृश्य की विवेचना निम्नलिखित है।

(1) मुद्रण

मुद्रण माध्यम मे जनसख्या के पढने के लिए कोई भी मुद्रित सामग्री सम्मिलित होती है। इसमे प्रतिदिन के समाचार पत्र से लेकर शोध पत्रिकाओ तक की सारी पठन सामग्री आ जाती है। सचार तकनीक के क्षेत्र मे विकास ने सामग्री का मुद्रण सुसाध्य बना दिया

है, जिससे शिक्षा मे सुधार हुआ है। मुद्रण माध्यम की शैक्षिक सभाव्यता में अत्यंत वृद्धि हुई है। मुद्रण सूचना और शिक्षा के लिए तेज़ी से सहायक पद्धति बन रहा है। मुद्रण सामग्री जैसे पुस्तकें, पत्रिकाएँ आदि लम्बे समय तक सुरक्षित रखी और पढ़ी जा सकती है क्योंकि वे इसी उद्देश्य से मुद्रित की जाती हैं।

समाचार पत्र सूचनाओ के प्रसारण का एक प्रभावकारी माध्यम है। इसके मुख्य कार्यों मे से घटनाओ के क्रम का विवरण मुद्रण के रूप मे लाना है। कुछ समाचार पत्र अपने कुछ स्तम्भ भूमि सबधी सुधार, कृषि सुधार और विकास के लिए अर्पित करते हैं जिससे सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रोत्साहन मिलता है जो कृषको के लिए महत्वपूर्ण है। अत: मुद्रण माध्यम अपने विस्तृत आच्छादन के कारण पाठको के व्यवहार को प्रभावित करने की क्षमता रखता है।



चित्र 8.5 रुचिकर अध्ययन

(ii) **श्रव्य**

रेडियो और ट्रॉंज़िस्टर लोगो के व्यवहार को प्रभावित करनेवाले शक्तिशाली माध्यम है। भारत में अधिकाशतः लोग रेडियो व ट्रॉंज़िस्टर द्वारा प्रसारित समाचार, सूचना, निर्देशो एवं मनोरंजन के लिए इन पर निर्भर हैं। वर्तमान समय में रेडियो व्यावहारिक रूप से सभी राज्यो मे सभी लोगों के पास और विभिन्न भाषाओं मे पहुँच गया है। महत्वपूर्ण सूचनाएँ, समाचार और अत्यावश्यक संदेश प्रसारित किए जाते है और वे शीघ्र ही सब लोगो तक पहुँच जाते हैं। रेडियो का उपयोग औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा दोनों के हेतु किया जाता रहा है। श्रव्य माध्यम विशेष रूप से रेडियो और ट्रॉंज़िस्टर ने सफलतापूर्वक कृषि संबंधी कार्यक्रमों के समर्थन जैसे नये बीजो के आविष्कार, खेती के नये ढंगो की सूचना देकर प्रसारण कार्यकर्ता की भूमिका अदा की है। इस माध्यम का मनोरजन कार्य निर्विवाद है। परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए रेडियो व ट्रॉंज़िस्टर पर उनकी पसद का कार्यक्रम होता ही है।

ट्रॉंज़िस्टर क्रान्ति के साथ और प्रसारण तकनीक की अन्य उन्नति के साथ ही साथ अखिल भारतीय रेडियो के लिए लगभग भारत की 93 प्रतिशत जनसख्या तक पहुँचना सभव हुआ है। उपग्रह ने आवाज एवं चित्र को दूरस्थ क्षेत्रो तक पहुँचाने की क्षमता में वृहत् सुधार किया है।

(iii) **दृश्य**

1. *दूरदर्शन*

ध्वनि एवं चित्र दोनो मिलकर सपूर्ण प्रभाव देते हैं इसीलिए दूरदर्शन जनसचार के साथ-साथ मनोरंजन का भी लोकप्रिय माध्यम है। दूरदर्शन को प्रारम्भ करने का उद्देश्य शिक्षा, सूचना एव मनोरंजन देना था। इन उद्देश्यो की प्राप्ति करते हुए दूरदर्शन सभी आयु के व्यक्तियो के व्यवहार को प्रभावित करनेवाला सशक्त एव प्रभावशाली माध्यम निम्न प्रकार से है।

(क) घर मे *शिक्षक* : संचार की तकनीक में विकास एवं समुचित उपयोग द्वारा दूरदर्शन कार्यभार से दबे शिक्षकों के उत्तरदायित्व मे भागीदारी करता है। अपने अद्वितीय दृश्यात्मक प्रभावों और महत्वपूर्ण ससाधन

सामग्री के उपयोग द्वारा शिक्षण, प्रशिक्षण की गुणवत्ता में शैक्षिक व तकनीकी स्तरों पर सुधार किया जा सकता है। ज्ञान के इस सचार का सामना होने पर जिज्ञासा, सप्रेषण और शाब्दिक कौशल उद्दीप्त होते हैं। दूरदर्शन भारत के वृहत् रूप को कक्षा में लाकर बच्चों को अपने देश के दूसरे भागों के दूसरे साथियों के करीब लाने में सहायता करके देश की एकरूपता को यथार्थ करता है।

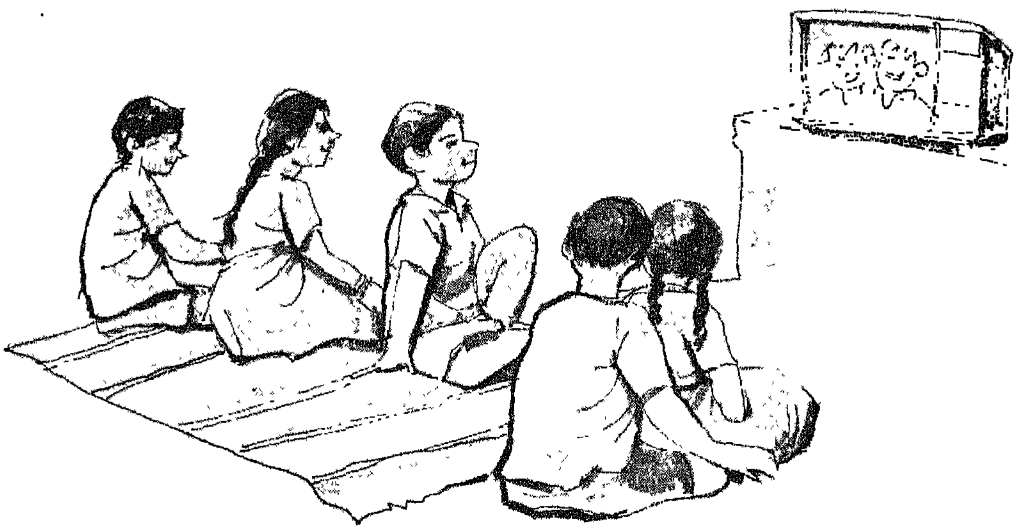
(ख) *सम्पूर्ण देश मे एक समान कक्षा* : दूरसंचार उपग्रह को प्रतिस्थापित करने के बाद संपूर्ण जनसख्या के लगभग 70 प्रतिशत को संचार के माध्यमों से जोड़ दिया गया है। दूरदर्शन, केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और दूसरे स्वतन्त्र माध्यम बहुत से शैक्षिक तथा प्रासंगिक सामाजिक कार्यक्रम बना रहे हैं। यह सपूर्ण देश को समान कक्षा बनाने की शुरुआत हो सकती है। जिससे शिक्षा की सार्वभौमिकता में सहायता मिलेगी। क्योंकि शिक्षा प्रदान करने की दूसरी विधियाँ हमारे पाँच लाख गाँवों के करोड़ों बच्चों को शिक्षित करने में अनुपयुक्त प्रतीत हो रही हैं।

(ग) *मनोरंजन* : दूरदर्शन मनोरंजन का एक महत्वपूर्ण साधन है। बच्चे जिनके घरों में अपना दूरदर्शन नही होता, वे अपने पड़ोस के घर मे बैठकर किसी प्रकार इसका आनन्द लेने की व्यवस्था कर लेते हैं। ग्रामीण क्षेत्रो मे कम समृद्ध लोग सामुदायिक केन्द्रो में बैठकर दूरदर्शन के कार्यक्रम देखते हैं। दर्शकों द्वारा दूरदर्शन के गम्भीर सूचनात्मक कार्यक्रमों की अपेक्षा धारावाहिकों को अधिक पसन्द किया जाता है क्योंकि वे दैनिक जीवन की समस्याओं से संबंधित होते हैं और रुचिकर एवं मनोरंजक रूप से प्रस्तुत किए जाते हैं।

(घ) *बच्चो का शारीरिक एव सामाजिक विकास* : लोग अपना मनपसन्द दूरदर्शन धारावाहिक या चलचित्र कार्यक्रम देखने के लिए सामाजिक क्रियाएँ रोक देते हैं। बच्चे कार्यक्रम देखने के लिए अपने खेल समय को कम कर लेते हैं। खेलकूद क्रियाएँ जिनसे आँख-हाथ समन्वय, तीव्र प्रतिवर्त, शक्तिशाली शरीर और सहनशीलता के गुण आते हैं उनकी उपेक्षा होती है। इन बच्चो के पास अपने शौको को पोषित करने का या ऐसी क्रियाओं जैसे वनविहार और सामाजिक समारोहो मे अन्य बच्चों के साथ परस्पर क्रिया के लिए समय नही होता। मानव पारस्परिक क्रिया का स्थानापन्न बिल्कुल कोई नहीं है जिसमे समझदारी, अभिव्यक्ति, समस्या-समाधान और लोगों को जानना शामिल होता है। यह हानि आगे बड़े होकर पारस्परिक आदान-प्रदान के कौशल मे कमी से प्रकट हो सकती है।

(ङ) *परस्पर विरोधी जीवन मूल्य* : दूरदर्शन द्वारा अनेक जीवन मूल्यो को चित्रित किया जाता है जिनका युवा मन पर दृढ़ प्रभाव पड़ता है। इनमे से अनेक जीवन मूल्य उन जीवन मूल्यों के साथ सघर्ष पैदा करते हैं जिनको माता-पिता अपने बच्चों मे पैदा करना चाहते हैं। यथार्थ के नाम पर हिंसा, प्यार की आड मे यौन, जीवन शैलियो में विषमता प्रदर्शन द्वारा अयथार्थ तथा विज्ञापनों में भौतिकवाद ये सभी बच्चों के कोमल अति सवेदनशील मनो पर कुछ अभाव की धमकी प्रस्तुत करते हैं। वे अपनी पहचान खो बैठते हैं और सतही बन जाते हैं। विज्ञापनो के प्रभाव के कारण दूरदर्शक अपने आपको उन सभी उत्पादनों के केवल उपभोक्ता मानने लग गए हैं और वे इन विज्ञापित वस्तुओ के उपयोग करने पर मोहकता, शक्ति, प्रसन्नता, सफलता और आनन्द के प्रतिज्ञात तात्कालिक पुरस्कारो की अपेक्षा करते हैं।

(च) *सामाजिक-सांस्कृतिक सबध* : जब दूरदर्शन घर का सदस्य बन जाता है तो पारिवारिक सबध निश्चित रूप से प्रभावित होते हैं। परिवारो के दूरदर्शन देखने का समय तो दूरदर्शन बढ़ा देता है किन्तु एक दूसरे से, मित्रो, सबधियों तथा पड़ोसियो से बात करने का समय कम कर देता है। समझदारी और दूसरों के साथ संप्रेषण के लिए समय कम मिलता है। हमारी समृद्ध



चित्र 8.6 दूरदर्शन कार्यक्रम देखते हुए बच्चे

मौखिक संस्कृति तेज़ी से क्षीयमान हो रही है और धीरे-धीरे मानवीय संबधों में निष्क्रियता आ सकती है।

2. वीडियो कैसेट रिकार्डर (वी सी आर)

वी सी आर और वी सी पी (वीडियो कैसेट प्लेयर) शहरी घरो मे सामान्य नाम हैं। जिन लोगो के पास वी सी पी और वी सी आर होते है वे इस सुविधा को मनोरंजन के उद्देश्यो के लिए प्रयुक्त करते हैं जैसे अपनी रुचि के अनुसार चलचित्र, हास्य चलचित्र या वीडियो खेल देखते हैं। शायद ही कभी यह शैक्षिक एवं सूचना प्राप्ति के उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। वी सी आर ने दूरदर्शन सस्कृति को विस्तृत किया है। जब कभी बच्चों को दूरदर्शन कार्यक्रम रुचिकर नहीं लगते वे अपने आसपास फैली असंख्य दुकानों से कैसेट खरीदकर या उधार लेकर उनका आनन्द लेते हैं। बड़े बच्चे एव किशोर वयस्को के चलचित्र देखना पसन्द करते हैं। इस प्रकार के चलचित्रो की आसानी से उपलब्धता से किशोरावस्था के विकास और जीवन मूल्यो विशेषकर युवा पीढी पर गभीर प्रभाव होते हैं। उपयोगी सामग्री प्रचुरता मे बनाकर विद्यालयो मे उपयोगी शैक्षिक चलचित्र दिखाकर वीडियो का साक्षरता की उन्नति मे प्रभावकारी ढंग से इस्तेमाल किया जा सकता है।

3 चलचित्र

बच्चो के व्यवहार पर पड़ने वाले चलचित्र के प्रभाव के विषय मे दो राय नहीं हो सकती। वे अपने नायक की बुलन्द आकृतियो, जो उनकी वास्तविक आकृतियो से अनेक गुना आवर्धित होती हैं, के साथ तादात्मीकरण करते हैं। हिन्दी एव क्षेत्रीय चलचित्रों के निर्माताओं द्वारा प्रयुक्त सूत्र है स्वप्निल ससार का सृजन करना जो लोगो को यथार्थता से दूर ले जा सके। किन्तु जब वे जीवन की यथार्थ समस्याओ का सामना करते हैं जो उनकी स्वप्निल दुनिया से भिन्न असहनीय और अप्रिय होती है तो उन्हें कुण्ठा का अनुभव होता है।

कामुकता, हिंसा, विद्वेष, अनैतिकता, अपराध, असुरक्षा, और संदेह आदि चलचित्रो के कुछ नकारात्मक पहलू हैं जो अपरिपक्व मन को प्रभावित करते हैं।

यद्यपि कुछ चलचित्र हैं जो अनैतिकता और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध नये सदर्श प्रदर्शित करते हैं। वे युवा पीढ़ी मे उपयुक्त जीवन मूल्य पैदा करते हैं। लोकप्रिय विज्ञान एवं तकनीक सम्बन्धी, शिक्षा, सामाजिक विकास और बच्चो में वैज्ञानिक वृत्ति का सृजन करनेवाले अनेको चलचित्र हैं किन्तु वे सागर मे एक बूँद की भाँति ही हैं। जनसंचार साधन अपने चित्रण मे सभी क्षमताओ के साथ साक्षरता, स्वस्थ मनोरजन और हमारी समृद्ध सस्कृति को हस्तान्तरित करनेवाले कार्यक्रमो को गति दे सकते है। वे बच्चो की जीवन शैली एवं शिक्षा को प्रभावित करते है और संभवत. जनसचार माध्यमो के सकारात्मक प्रभाव इसलिए गंभीरतापूर्वक नही लिए जाते क्योंकि वे अव्यक्त, समस्यारहित एव स्वीकृत है और अधिक चिन्ता उत्पन्न नही करते हैं।

वंचन

वंचन का प्रत्यय

'वचन' पद की व्युत्पत्ति 'वचित' क्रिया से हुई है जिसका तात्पर्य दुर्गानन्द सिन्हा के अनुसार कब्जा हरण करना, बेदखल करना या कोई व्यक्ति अथवा वस्तु ले लेना और इसका अन्तर्निहित तात्पर्य अनुभव की जाने वाली कमी है। इसका तात्पर्य है कि कुछ विशेष अभाव जैसे किसी शिशु को अपनी माँ से वचित होना, किसी बच्चे का भोजन या कपड़ो से वचित होना, जिनका अनुभव बच्चो को होता है। समाज व प्रकृति द्वारा व्यक्तियो को दिए जाने वाले किसी अवसर या स्वतन्त्रता की अनुपस्थिति भी वंचन है। कभी-कभी किसी विशेष क्षेत्र का सपूर्ण पर्यावरण ही बाकी समाज से अलग होता है तो उस क्षेत्र के सम्पूर्ण समुदाय को वचित का नामांकन किया जाता है। जनजाति के लोग जो पिछड़े क्षेत्रो मे रहते हैं अथवा आन्तरिक क्षेत्रों मे रहनेवाले लोग स्वय को कुछ विशेष सामान्य अवसर जो दूसरो को प्राप्त होते हैं, उनसे वचित पा सकते हैं। यह व्यक्ति के सामाजिक सदर्भ मे उपयुक्त अथवा सामान्य माने जाने वाले से एक प्रकार का विचलन है। 'वचन' एवं 'असुविधा' पद कभी-कभी परस्पर अदल-बदलकर प्रयुक्त किए जाते है, किन्तु दोनो मे अन्तर है। असुविधा विस्तृत पद है जो ऑक्सफोर्ड शब्द कोष के अनुसार प्रतिकूल दशाएँ और परिस्थितियाँ, हानिकारक, नुकसान, चोट या पूर्वाग्रह है। इस प्रकार असुविधा मे हर प्रकार की शारीरिक विकलांगताएँ भी आ जाती हैं जबकि वचन सकीर्ण एव सीमित प्रत्यय है। इससे तात्पर्य केवल उन परिस्थितियो से है जो बच्चों की आन्तरिक शक्तियो के प्राकृतिक विकास मे बाधा उत्पन्न करती हैं।

ससार मे कोई भी ऐसा व्यक्ति नही है जिसने कभी न कभी वचन अथवा अपनी आवश्यकताओ की असतुष्टि अनुभव न की हो। कुछ के लिए यह शारीरिक जिसका तात्पर्य अनिवार्य शारीरिक आपूर्ति जैसे भोजन, जल, निद्रा और यौन आदि का वचन जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक ऊतको मे कमी आ सकती है, होता है। अन्य के लिए यह पर्यावरणीय वस्तुओ का वचन हो सकता है जिसको धन से प्राप्त किया जा सकता है जैसे मकान, कपडे, शिक्षा, मनोरंजन आदि। कुछ लोगों के लिए यह वंचन थोड़े समय के लिए हो सकता है और कुछ के लिए लम्बे समय तक। वचन की अनुभूति भी व्यक्तिगत और विवादास्पद विषय है क्योंकि यह व्यक्ति की आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओ की न्यूनतम अपेक्षित वस्तुनिष्ठ सूची नही हो सकती। केवल व्यक्ति ही जान सकते हे कि उन्हें क्या और कितनी मात्रा में अपेक्षित है? जब उन्हें वाछित वस्तु नही प्राप्त होती तो वे वचित अनुभव करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षुधा शान्त करने के लिए भोजन करता है। लेकिन हम जो खाते हैं वह हमारी आवश्यकताओ पर निर्भर करता है जो व्यक्तिपरक है। एक भिखारी जिसके पास खाने के लिए बिल्कुल नही है वह भोजन से बिल्कुल वचित है जबकि एक बच्चा जो चॉकलेट के लिए रो रहा

है वह भी अपने को वंचित समझता है। पर्वतीय, रेगिस्तानी अथवा समुद्रतटीय प्रदेशो मे रहनेवाले लोग अपने को उन सुविधाओ से वंचित होने का नामांकन कर सकते हैं जो मैदानी क्षेत्रो मे रहनेवाले लोगो द्वारा प्राप्त की जाती है। पिछड़े एवं जनजातीय लोग अपने को समाज की मुख्य धारा से कटे हुए पा सकते हैं। अनाथालयों, आवासीय विद्यालयो, माता-पिता रहित घरों अथवा एकल मातृ-पितृ घरो मे रह रहे बच्चे अपने को उन बच्चो की तुलना मे वंचित पा सकते है जो सुरक्षित और स्नेहपूर्ण घरो मे पल रहे हैं जहाँ उनकी स्वीकृति, संबधिता, तादात्मीकरण, और अनुमोदन की आवश्यकताओ की पूर्ति होती है।

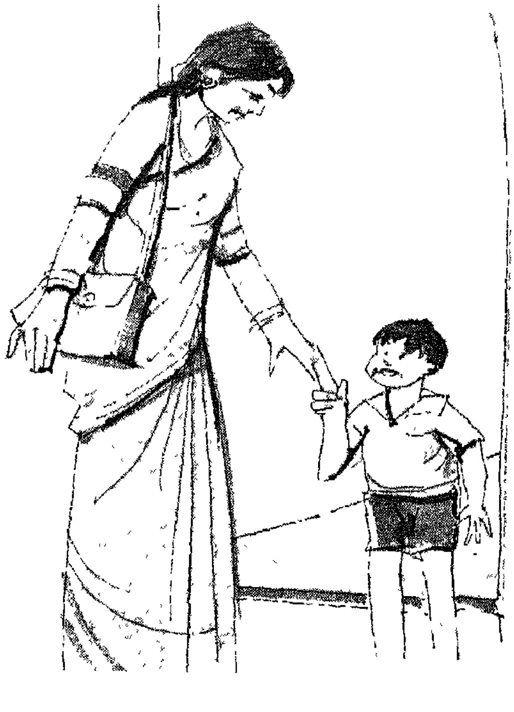
वंचन के प्रकार

वंचन के प्रकारो का वर्णन करना कठिन है फिर भी इनको नामांकित करने के उद्देश्य से हम तीन मुख्य प्रकार के वंचनो मे वर्गीकृत कर सकते हैं (i) संवेगात्मक (ii) सांस्कृतिक और (iii) आर्थिक।

(i) *संवेगात्मक वंचन*

इस विचारधारा के समर्थन मे शोध प्रमाण है कि परिवार मे बच्चो के जीवन के प्रारंभिक वर्ष 'निर्माण काल' होता है। यहाँ पर बच्चे का अपना अमूल्य स्थान होता है। स्नेहपूर्ण माता-पिता बच्चे को अपने व्यवहार द्वारा स्नेह प्रदान करते हैं। आर्थिक स्तर, संस्कृति, धर्म, रीति-रिवाज और परम्पराओ से अनपेक्ष मानव संबधो का आधार प्यार, आपसी सम्मान और समझ है जो बच्चे स्नेहपूर्ण घरो के उत्साही वातावरण मे पाते हैं। महत्वपूर्ण आवश्यकताएँ जैसे सुरक्षा, साथी, संबधिता, प्रत्यभिज्ञा, संवेगात्मक अनुक्रिया और नए अनुभवों आदि की परिवार के सभी सदस्यो द्वारा पूर्ति की जाती है। माता-पिता व बच्चो के संबधो का उनके शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसी संदर्भ मे बच्चे प्रेम व घृणा, प्रसन्नता एवं क्रोध, भ्रम और आश्चर्य, आनन्द व दुःख के पहले अनुभव प्राप्त करते हैं। इस प्रकार व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण पहलू अर्थात् संवेगात्मक समायोजन की नींव परिवार मे ही रखी जाती है।

जो बच्चे इस तरह के अनुभवो से वंचित रह जाते हैं वे अपने को संवेगात्मक रूप से वंचित अनुभव करते हैं। जिस परिवार मे माता व पिता दोनो की मृत्यु हो जाती है अथवा तलाक, अलगाव, आर्थिक अथवा अन्य कारको से एकल मातृ-पितृ घरो मे बच्चे संवेगात्मक वंचन अनुभव करते हैं।



चित्र 8.7 संवेगात्मक वंचन

भारत सरकार द्वारा अनेक राज्यों मे एस ओ एस बाल ग्राम योजना (अनेक घरों का समूह) का प्रयत्न जिसमे 8-10 बच्चो की देखभाल एक धाय माँ द्वारा एक घर में की जाती है, संवेगात्मक रूप से वंचित बच्चो को कुटुम्ब जीवन के महत्त्व की पहचान की ओर एक सोपान है।

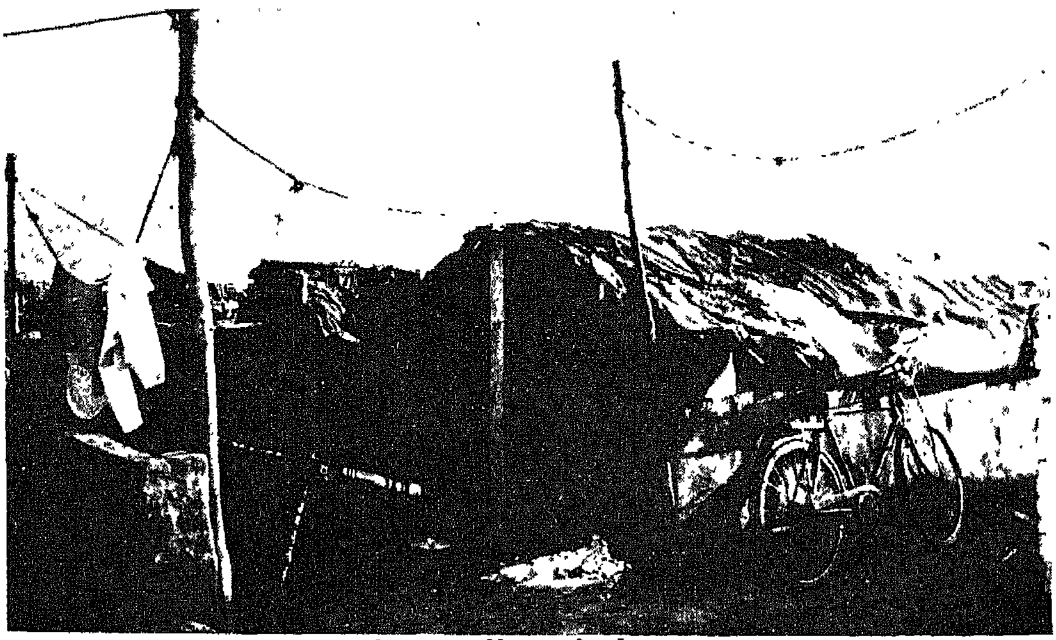
(ii) *सांस्कृतिक वंचन*

'संस्कृति' पद का तात्पर्य सम्पूर्ण जीवन के तरीके से

है जो सोचा जाता है, सामान्य होता है और किसी विशेष समाज के सदस्यो द्वारा एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तान्तरित किया जाता है। आधुनिक समाज मे वैज्ञानिक एव तकनीकी परिवर्तनो के कारण समाज की मुख्यधारा के लोग यह सोचते है कि उनकी सस्कृति ही सबसे अच्छी एव सही है और दूसरे लोग सस्कृति से वचित हैं। वे सोचते हैं कि उनकी सस्कृति के अतिरिक्त दूसरे लोग निम्न, अपूर्ण एव वचित है। भारत मे मुख्यधारा से जुड़े लोग कुछ जातियो व जनजातियो के लोगो को सास्कृतिक रूप से वचित समझते है। इन जातियो व जनजातियो से जुडे लोग शताब्दियो से तीव्र सामाजिक असुविधाओ की दशाओ मे रहते हुए सामाजिक जीवन की मुख्य सामाजिक एव सास्कृतिक धारा मे भाग लेने से रोके गए। शिक्षा व अन्य विकासशील योजनाओ की कमी ने उनकी इस दयनीय दशा मे वृद्धि की। वे भौतिक लाभो और बौद्धिक कार्यों से भी वचित रहे। उनकी कमज़ोर आर्थिक स्थिति ने उनके अन्धविश्वासो, पुरातन सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज, अपरिशोधित तौर तरीके, लडाई झगडो और आपसी कष्टो मे वृद्धि की। इन लोगो का सामाजिक जीवन सृजनात्मक विचारो, उच्चतर जीवन मूल्यो एव लक्ष्यो के लिए अनुकूल नही है। इनमे निर्धनता, अल्प आवास सुविधा, अनुपयुक्त पडोस और शिक्षा और उनके परिवारो की शिक्षा के प्रति उदासीनता है। ये भेद भाव अब कानूनी रूप से समाप्त कर दिए गए है और राज्य ने उनको शिक्षा व व्यवसाय मे कुछ विशेष सुविधाएँ प्रदान करने और भेद भाव दूर करने के लिए कुछ सवैधानिक और प्रशासनिक कदम उठाए है। उन्हे शीघ्रता से मुख्य धारा के स्तर तक लाने के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे है। किन्तु परम्पराओ को समाप्त करना बहुत कठिन होता है और राज्य के प्रत्येक नागरिक की समानता की सवैधानिक बचनबद्धता को पूरा करने मे थोडा समय लग सकता है।

(iii) *आर्थिक वचन*

जैसी कि पहले व्याख्या की जा चुकी है कि वचन का विस्तृत तात्पर्य सुख सुविधाओ, शक्ति, अवसरो, पदार्थों, सुविधाओ एव भोग वस्तुओ के न होने अथवा



चित्र 8.8 आर्थिक रूप से वचित घर

खो जाने से है। ये कारक धन की शक्ति द्वारा इन्हें क्रय करने से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। धन आवास की आवश्यकता, शिक्षा और रोजगार मे सहायता करता है और यदि व्यक्ति इन आवश्यकताओं को धन की शक्ति से क्रय करके संतुष्टि पाने मे असमर्थ है तो वे अपने आपको आर्थिक रूप से वचित कह सकते हैं।

आर्थिक वचन और निर्धनता पर्यायवाची है। निर्धनता उन कारकों का गुच्छा है जो कुपोषण, निम्न स्तर एव अस्वास्थ्यकर जीवन दशाएँ, निरन्तर क्षुधा, स्थान की कमी, अध्ययन के लिए एकान्त एव शान्त वातावरण की कमी, विद्यालयो मे निम्न स्तर की शैक्षिक सुविधाएँ, रोजगार के अवसरो की कमी, माता-पिता की देखभाल एव स्नेह मे कमी आदि को बढ़ावा देते हैं। यह आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए सामान्य ससाधनो की कमी है।

वचन के प्रभाव

उन अनुसधानो के बारे मे दो राय नही है जिनका कहना है कि प्रारभिक अवस्था के वचन का प्रभाव व्यक्ति की वृद्धि एव विकास पर स्पष्ट प्रदर्शित होता है। प्रत्येक प्रकार के उपरोक्त वचन व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओ को प्रभावित करते है। इस भाग मे सामान्य वचन के शारीरिक, अभिप्रेरणात्मक, शैक्षिक, भाषाई, ज्ञानात्मक, स्वप्रत्यय और व्यक्तित्व विकास व विद्यालयी उपलब्धि पर प्रभावो को सक्षेप मे वर्णन करने का प्रयत्न किया गया है।

(i) *शारीरिक विकास*

शारीरिक विकास पर वचन के निम्नलिखित प्रभाव होते है :

(अ) *अल्पविकसित भ्रूण* : व्यक्ति के शारीरिक विकास का आधार माँ की कोख से प्रारम्भ होता है। यदि माँ कुपोषित है और सतुलित आहार नही लेती जिसमे दूध, दाले, हरी पत्तेदार सब्जियाँ और पौष्टिक अनाज नहीं होते तो उसके भोजन मे कैलोरी, प्रोटीन और विटामिन की कमी होगी। भ्रूण माँ की रक्त नलिका द्वारा मिलनेवाले भोजन से अनिवार्यतः वचित रहेगा। यह विकास को प्रभावित करेगा, जैसे माँ के भोजन मे विटामिन 'ए' की कमी जन्मजात अन्धापन और अन्य दृश्य असामान्यताओ की ओर अग्रसर करती है।

(ब) *सामान्य से कम वृद्धि व विकास* : जन्म के बाद भी सामान्य वृद्धि के लिए बच्चे को पर्याप्त भोजन विशेषतया प्रारभिक पाँच वर्षो मे मिलना चाहिए, जब वृद्धि तीव्र होती है और जो भी हानि होती है वह अपरिवर्तनीय होती है। पौष्टिक भोजन वृद्धि और क्रियाओ के लिए शक्ति देता है जो उचित शारीरिक विकास मे सहायता करता है।

(ii) *अभिप्रेरणात्मक एव सवेगात्मक विकास*

वचन बच्चो के अभिप्रेरणात्मक एव सवेगात्मक विकास को भी प्रभावित करता है।

(अ) *अभिप्रेरण एव आकाक्षाओ का निम्न स्तर* : शोध अध्ययनो मे यह पाया गया है कि वचित बच्चो मे अभिप्रेरण एव आकाक्षा की कमी होती है। बच्चो की शिक्षा मे माता-पिता की सहायता, अभिरुचि और आकाक्षाऐं बच्चो मे कठिन परिश्रम करने के अभिप्रेरण और लक्ष्यो की प्राप्ति की आकाक्षाओ मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है लेकिन वचित बच्चो के माता-पिता सामान्यतः शिक्षा के लिए चिन्तित नही होते। निर्धनता के कारण उन्हें अपने बच्चो को छोटी उम्र मे ही पारिवारिक आमदनी की सम्पूर्ति करने के लिए काम मे लगाना पड़ता है विशेषतया लडकियो को अपने छोटे भाई बहनो की देखभाल अथवा घर के कार्यों हेतु रोक लिया जाता है।

(ब) *सवेगात्मक कुसमायोजन* : व्यक्ति के जीवन में सवेगो के महत्व के विषय मे बहुत कुछ कहा जा चुका है, यदि बच्चो को अपने जीवन की प्रारभिक अवस्था मे ही अपने परिवार के सदस्यो विशेषकर, माता से वचित कर दिया जाए तो उनमे असुरक्षित, अनिश्चित, एकाकी और अनचाहा होने की अनुभूति

होने की सभावना होती है। अगर बच्चों को किसी वयस्क के साथ विश्वसनीय व प्रेमपूर्ण संबध का अनुभव नहीं होता तो वे अपने सबधो मे ये गुण विकसित नहीं कर पाते। माता-पिता के प्यार का वचन बच्चो के बौद्धिक, सामाजिक व शारीरिक विकास को प्रभावित करता है।

(iii) *भाषाई, ज्ञानात्मक विकास व विद्यालयी उपलब्धि*

(अ) *सीमित शाब्दिक सप्रेषण* : हम एक दूसरे के साथ मौखिक अथवा लिखित शब्दो के इस्तेमाल द्वारा सप्रेषण करते हैं। यह हमे अपने पर्यावरण को समझने एवं अनेक कौशलों के अर्जन मे सहायता करता है। शोध अध्ययनो से यह स्पष्ट हुआ है कि वचित बच्चो का भाषाई विकास मन्द होता है। अधिकतर वचित बच्चे उन घरो मे रहते हैं जहाँ पर शाब्दिक सप्रेषण सीमित हैं। कार्य मे अति व्यस्त और अल्प सुविधायुक्त माताएँ अपने बहुत से बच्चो की देखभाल की चिन्ता के कारण काम के लिए प्राय· बाहर जाती हैं। उनके पास अपने बच्चो के साथ बातचीत करने या उन्हें बच्चो के गीत, सोते समय की कहानियाँ, लोरियाँ और सामान्य वार्तालाप मे आनन्द लेने का समय और शक्ति नही होती। इस तरह के कुछ बच्चों को बहुत समय तक अपने शरीर के विभिन्न अगों के नामो का परिचय भी नही होता। माता-पिता अशिक्षित होते है और उनके पास बहुत कम समय व योग्यताएँ होती हैं जिनसे वे अपने बच्चो मे वार्तालाप द्वारा, सृजनात्मक वाद-विवाद, उनके प्रश्नों का उत्तर देकर उनकी प्राकृतिक जिज्ञासाओ को सतुष्ट करने अथवा विचारों एव प्रत्ययो की अभिव्यक्ति के लिए समुचित भाषा का प्रयोग कर सके। वचित बच्चे की भाषा साधारण, आवृत्तिपूर्ण, नीरस और अनौपचारिक होती है। यहाँ तक कि नौकरों एव बच्चो की देखभाल करनेवालो के पास पलनेवाले बच्चो का वार्तालाप भी सीमित होता है क्योकि वे प्राय· या तो अशिक्षित होते हैं या बच्चो से बातचीत मे रुचि नहीं रखते।

(ब) *मन्द ज्ञानात्मक विकास* : ज्ञानात्मक विकास मे भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। ज्ञानात्मक का तात्पर्य 'जानना' है। इस प्रकार ज्ञानात्मक विकास का तात्पर्य *उन मानसिक प्रक्रियाओं के विकास से है जो बच्चे को स्वय एव अपने चारो ओर के ससार का ज्ञान प्राप्त करने मे सहायता करती है* । व्यक्तियो एव वस्तुओं के साथ के अनुभव से ज्ञान बढ़ता है। वंचित घरो मे अनेको प्रकार की वस्तुएँ, खिलौने, पठन सामग्री और समृद्ध अनुभवो आदि जिनसे बच्चो के शब्द भडार, प्रत्यय निर्माण और अनेक कौशल विकसित करने मे सहायक सामग्री का अभाव होता है। ऐसे घरों मे शैक्षिक मूल्य के साधनो जैसे रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, सामान्य पुस्तके, चित्रकथाएँ, पुस्तके, शब्दकोष आदि बहुत कम होते हैं। पठन सामग्री के अभाव के कारण दूसरो के बारे मे उनकी सूचना सीमित होती है। कला दीर्घा, चिड़ियाघर, संग्रहालय, पुस्तकालय, और अन्य सगीत और नाट्य कार्यक्रम बच्चो के ज्ञान के साथ-साथ सृजनात्मकता को बढ़ावा देते हैं।

(स) *उपलब्धि प्राप्ति का निम्न स्तर* : अनेक शोध अध्ययनो में माता-पिता के सामाजिक स्तर एव शैक्षिक उपलब्धि के बीच सबध को प्रदर्शित किया गया है। सपन्न घरो से आने वाले बच्चे वचित घरो से आने वाले बच्चो की तुलना मे प्रायः उच्च शैक्षिक अक प्राप्त करते हैं। वचित बच्चो के माता-पिता प्रायः निरक्षर होते हैं। वे बच्चो को विद्यालय से मिले गृहकार्य मे सहायता नही कर सकते। अपने बच्चो की शिक्षा हेतु उनकी अभिरुचियाँ, इच्छाएँ, आकाक्षाएँ और अभिलाषाएँ उच्च स्तर की नही होती। विद्यालय एव घर मे असमर्थित शैक्षिक वातावरण बच्चो के अध्ययन के प्रति अभिप्रेरण को प्रभावित करता है। शहर व गाँव, निजी व सरकारी अथवा स्थानीय सस्थाओ के विद्यालयो के साधनो एव सुविधाओं मे भी बहुत अन्तर होता है।

वचित बस्तियो के आस-पास स्थित विद्यालय भवनों का रखरखाव काफी खराब रहता है। उनमे जीवन के लिए आधारभूत आवश्यकताओ एवं शैक्षिक साधनों का अभाव होता है। उनमे भीड़ भरी कक्षाएँ, अध्यापक व विद्यार्थियो का स्थानान्तरण, अध्यापको की अत्यधिक कमी, शैक्षिक इच्छाओं, आकाक्षाओं एव उपलब्धि का निम्न स्तर होता है। वंचित घरो से आने वाले बच्चो में सामान्यतः जो व्यवहार सबधी समस्याएँ अध्यापक के सामने आती हैं और जो उनकी उपलब्धि को भी प्रभावित करती हैं, वे अनियमित उपस्थिति, विद्यालय से पलायन, गृह कार्य की उपेक्षा, झगड़ा, मारपीट, गाली देना, आज्ञा का उल्लघन एव चोरी आदि हैं।

(iv) *स्वप्रत्यय एव व्यक्तित्व*

(अ) *स्वप्रत्यय* : स्वप्रत्यय से तात्पर्य *किसी व्यक्ति का किसी विशेष समाज मे दूसरो की तुलना मे अपने प्रत्यक्षीकरण से है* । यह एक प्रकार की छवि है जो किसी लड़के या लड़की की अपने विषय में होती है कि वह योग्य है या अयोग्य, समर्थ है या असमर्थ, स्नेह योग्य है या अस्वीकृत। ये सभी व्यक्ति के स्वप्रत्यय के विकास मे योगदान करते हैं। साथियो की सहमति और साथ तथा बच्चो के लिए महत्वपूर्ण लोगों द्वारा स्वीकृति का बच्चे के स्व-सहमति एवं स्व-स्वीकृति के विकास मे अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ तक कि माता-पिता और साथियों द्वारा अस्थाई अस्वीकृति भी बच्चे में अवसाद उत्पन्न कर देती है जो बच्चे को अकेलेपन, प्रत्याहार एव स्व-अस्वीकृति की ओर अग्रसर करती है। बच्चे अपने प्रति रचनात्मकता या विध्वसात्मकता, स्वीकृति अथवा अस्वीकृति की अभिवृत्ति विकसित करते हैं। यह माता-पिता तथा अन्य लोगो की उसके प्रति अभिवृत्ति पर निर्भर करता है।

नकारात्मक स्वप्रत्यय : वंचित घरों के बच्चो मे नकारात्मक स्वप्रत्यय पाया जाता है। उनमे प्राय निजी उपयुक्तता की अनुभूति की कमी होती है और वे प्रायः अपनी योग्यता के बारे में शंकित रहते हैं। हीनता की भावना उनमे गहरे तक होती है। वचित जीवन के परिणामस्वरूप अनेकों अभिवृत्तियो के गुच्छ का निर्माण होता है जैसे निम्न स्व-सम्मान, उपेक्षा, अक्षमता की अनुभूति और असार्थकता आदि। यह पाया गया है कि वचित घरो के बच्चे प्रायः अनेक प्रकार के अन्तर्द्वन्द्वो से ग्रस्त रहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे आत्म केन्द्रित बन जाते हैं। असफलता के भय के साथ हीनता की भावना उच्च उपलब्धि की आकाक्षाओं को प्रभावित करती है। बच्चे के निम्न निष्पादन के कारण अध्यापक, साथी और यहाँ तक कि माता-पिता भी उन्हें उचित समर्थन एव ध्यान नही देते। बच्चे प्रायः अपने को अलग कर लेते हैं अथवा शेखी बघारते हैं और दिखावा करते हैं या अन्य तरीके से दूसरो का ध्यान आकृष्ट करने की प्रविधियों द्वारा अपने समूह की स्वीकृति पाने का प्रयत्न करते हैं।

(ब) *व्यक्तित्व* : 'व्यक्तित्व' पद का तात्पर्य व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और सवेगात्मक विशेषताओ और उनके व्यावहारात्मक ढंगो मे सम्मिलित होने से है जो उस व्यक्ति की विशेषता है। यह गत्यात्मक सगठन है जो उस व्यक्ति के विशेष व्यवहार और विचारों को निर्धारित करता है। इस प्रकार व्यक्तित्व के बहुत से सघटक अथवा आयाम हैं और यह आनुवंशिकी और पर्यावरणीय कारको का परिणाम है। व्यक्ति के ये संघटक अथवा विशेषताएँ परस्पर प्रतिक्रिया करके एक दूसरे को परिष्कृत करते हैं। वे आपस मे घनिष्ठ रूप से सबधित हैं और प्रायः परिवर्तित होते हैं। किन्तु कोई विशेषता अथवा गुण व्यक्ति अथवा उसके पर्यावरण मे परिवर्तन के कारण दूसरो की अपेक्षा अधिक प्रभुत्वशाली हो जाता है जो व्यक्ति को उसके पर्यावरण के साथ अद्वितीय समायोजन मे सहायता करता है।

नकारात्मक गुणो का गुच्छन : वचित दशाओ के साथ व्यक्तित्व के जिन गुणो का साहचर्य होता है वे हैं

चुनौतियों से भय, वयस्कों, अध्यापकों व विद्यालय के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति, सामान्य जीवन में अनुशासन का अभाव, परम्परागत रीतियों एवं रुचियों में विश्वास, अपने दुर्भाग्य के लिए अपनी अपेक्षा संसार को दोषी ठहराना, आक्रामकता, अपराध, कुंठा, असहायता व भय अथवा कानून एव सत्ता मे अविश्वास। वंचित बच्चे कई प्रकार से विकलांग होते हैं। उनका शारीरिक, बौद्धिक व सामाजिक विकास कुन्द होता है। वे मनोवैज्ञानिक रूप से भी अति संवेदनशील होते हैं, जिससे वे स्वयं एवं समाज के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति विकसित कर लेते हैं। अतः बच्चों के व्यवहार पर वंचन के दूरगामी हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। संवेगात्मक रूप से वंचित अथवा संस्थागत बच्चे सामान्यतः सामान्य व्यक्तित्व गुणों को नहीं विकसित कर पाते।

वंचित बच्चों का सामर्थ्य

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकालना न्यायसंगत नहीं है कि वंचित घरों के बच्चे किसी उपलब्धि के और खुशहाल व संतुष्ट जीवन बिताने योग्य नही होते। उनमें अपना ही अनन्य सामर्थ्य हो सकता है। कभी-कभी तीव्र वंचन की दशाओ मे पले हुए बच्चे भी सामान्य रूप से विकसित हो सकते हैं और वयस्क जीवन व्यतीत करते हुए अपने प्रसन्न व बिना वंचित परिवार बनाते हैं। कभी-कभी निर्धन परिवारों के अपने पड़ोसियों के साथ बहुत ही घनिष्ठ संबंध होते हैं। वे यथार्थवादी होते हैं और कठिन स्थितियों में समायोजन करना सीख लेते हैं।

ज्ञानात्मक सिद्धान्तवादियों का विचार है कि ज्ञान का विकास संस्कृति अथवा पालन पोषण के अनपेक्ष उचित समय पर होता है। प्रत्येक परिवेश में रंग, आकार, आवाजें होती हैं और उसमें विजय पाने के लिए बाधाएँ भी प्रस्तुत होती हैं। उसमें खेलने और खोजने के लिए वस्तुएँ भी होती हैं जो ज्ञानात्मक विकास के लिए आवश्यक हैं। जब बच्चे अपना कार्य करना चाहते हैं तो उनमें अपने शोर से भरे हुए घरों के विकर्षणों से हटकर कार्य करने की अपूर्व क्षमता होती है। वंचित बच्चो की शैक्षिक कठिनाइयाँ उनके घर में प्रयुक्त एव विद्यालय में अपेक्षित कौशलों के बीच अन्तर के कारण होती हैं। इन बच्चो मे आवश्यक कौशल होते हैं पर वे उनके अध्यापकों द्वारा सही ढंग से पुरस्कृत नहीं किए जाते।

सारांश

इस एकक में व्यवहार को प्रभावित करनेवाले पर्यावरणीय कारकों की व्याख्या की गई है। पर्यावरण में वे सभी कारक सम्मिलित हैं जो बच्चे को उसके जीवन के प्रारंभ से ही प्रभावित करते हैं जिसके अन्तर्गत पारिस्थितिकी के साथ-साथ मनोसामाजिक पर्यावरण भी सम्मिलित है। समाजीकरण की जीवनपर्यन्त चलने वाली परस्पर क्रियात्मक प्रक्रिया के रूप में व्याख्या की गई है जिसमें मानव व्यवहार के सब पहलू आते हैं। पुरस्कार व दण्ड, अनुकरण और प्रतिरूपण, तादात्मीकरण एवं अन्तरस्थता समाजीकरण के तीन महत्वपूर्ण रचनातंत्र हैं। कुटुम्ब समाजीकरण का महत्वपूर्ण कर्मक है जो बच्चों के विकास के विभिन्न पहलुओ की सहायता करता है। माता-पिता, भाई-बहन, साथी, समूह और शिक्षक बच्चे के समाजीकरण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पड़ोस, विद्यालय, धर्म, जाति व व्यावसायिक समूह भी व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

आजकल जनसंचार के साधन व्यवहार के महत्वपूर्ण निर्धारकों के रूप में उभर रहे हैं। पुस्तकें, पत्रिकाएँ, उपन्यास, चित्रकथाएँ, समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, वीडियो कैसेट रिकार्डर, चलचित्र, मुद्रण, श्रव्य और दृश्य माध्यम हैं जो बच्चों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

बच्चो का व्यवहार उनके तात्कालिक पर्यावरण मे कुछ वस्तुओ अथवा व्यक्तियो की उपस्थिति से भी निर्धारित होता है। वचन मे किसी व्यक्ति या वस्तु का खो जाना होता है जिसकी कमी अनुभव की जा सकती है। सवेगात्मक वचन या परिवार के व्यक्तियो के स्नेहपूर्ण व्यवहार की अनुपस्थिति, सास्कृतिक वचन या तथाकथित पिछडी सस्कृतियाँ और आर्थिक वचन अथवा निर्धनता वचन के तीन मुख्य प्रकार है। वचन से शारीरिक विकास, अभिप्रेरणात्मक और सवेगात्मक विकास, भाषा, ज्ञानात्मक विकास और विद्यालय उपलब्धि और स्वप्रत्यय एव व्यक्तित्व प्रभावित होते है। वचित बच्चो मे कुछ सामर्थ्य होती है जो उन्हें दूसरो के साथ समायोजन करने मे सहायता करती है।

प्रश्न

1. 'पर्यावरण' पद को पारिभाषित कीजिए और पर्यावरण के प्रकारो की विवेचना कीजिए।
2. समाजीकरण जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। इसके तीन रचनातत्रो की व्याख्या कीजिए।
3. बच्चे के समाजीकरण मे परिवार किस प्रकार से महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है?
4. किसी विशेष आयु के बच्चे अपनी उम्र के साथियो के साथ अधिक समय व्यतीत करना पसन्द करते है। इसके समर्थन मे तर्क दीजिए।
5 बच्चो के व्यवहार पर शिक्षक के प्रभाव की विवेचना कीजिए।
6. समाजीकरण की प्रक्रिया मे पडोस, धर्म, जाति और व्यावसायिक समूहो की भूमिका की व्याख्या कीजिए।
7. जनसचार के साधन बच्चो के व्यवहार को किस प्रकार निर्धारित करते है?
8. वंचन को पारिभाषित कीजिए एव वचन के तीन मुख्य प्रकारो की व्याख्या कीजिए।
9. बच्चो के विकास पर वचन के क्या प्रभाव होते है?

पारिभाषिक शब्द कोष

अंतर्ग्रंथन	:	द्रव्य से पूर्ण सगमस्थल जिससे कोशिकाएँ रासायनिक तौर पर सप्रेषण करती हैं।
अग्न्याशय ग्रन्थि	:	शरीर के मध्य भाग मे अवस्थित, बहिःस्रावी तथा अन्तःस्रावी दोनो हैं।
अग्रलक्षी प्रावरोध	:	जब सूचना की विस्मृति उस सामग्री के हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप होती है जो नए अधिगम कार्य से पूर्व सीखी गई है।
अधश्चेतक	:	चेतक तथा मध्यमस्तिष्क के बीच सन्धि स्थल जो खाने, पीने, यौन व्यवहार तथा सवेगात्मक प्रतिक्रियाओ को विनियमित करता है।
अधिगम	:	वह प्रक्रिया जिससे अभ्यास अथवा अनुभवो के परिणामस्वरूप व्यवहार में सापेक्षिक रूप से स्थायी परिवर्तन या सुधार आता है।
अधिगम का शून्य स्थानान्तरण	:	जब पहले सीखी क्रिया बाद मे सीखी जाने वाली क्रिया पर कोई प्रभाव न डाले।
अधिगम स्थानान्तरण	:	सीखे हुए ज्ञान, कौशलो, आदतो, अभिवृत्तियो अथवा अनुक्रियाओं को एक स्थिति से दूसरी स्थिति मे व्यवहृत करने अथवा ले जाने की प्रक्रिया।
अधिवृक्क ग्रन्थियाँ	:	शरीर के मध्य भाग मे गुर्दों के ऊपर अवस्थित है; प्रत्येक ग्रंथि के दो भाग है।
अनुकंपी तंत्रिका तंत्र	:	उत्तेजना की अवस्था मे ऊर्जा व्यय करने वाला तत्र।
अनुक्रिया	:	उद्दीपन से प्रेरित क्रिया।
अनुमस्तिष्क	:	मस्तिष्क की एक अति उच्चस्तरीय लहरदार सरचना जो बारीक पेशीय गतियों का विनियमन, सतुलन और गति परिवहन करती है।
अन्तःनिरीक्षण	:	प्रयोज्य द्वारा स्वयं के विचार एव घटनाओं की ध्यानपूर्वक जाँच करके विवरण देना।
अन्तर्नोद	:	वह परिकल्पित प्रत्यय जो किसी प्राणी को कार्य करने की ओर आसन्न करता है और व्यवहार मे परिलक्षित होता है।
अन्तर्दृष्टि अधिगम	:	जब सीखने वाला एकाएक सबधों और कार्य में सन्निहित सार्थक साहचर्यों को देख लेता है और समस्या को तुरन्त हल कर लेता है।
अन्तर्द्वन्द्व	:	जब दो आवश्यकताएँ अथवा इच्छाएँ एक ही समय उत्पन्न होती हैं तथा अपनी पूर्ति की माँग करने लगती हैं।
अन्तरस्थता	:	किसी प्रशंसित व्यक्ति की विशेषताएँ और तौर-तरीके व्यक्ति के अपने व्यवहार में समाविष्ट होना।
अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ	:	वे नलिकाविहीन ग्रन्थियाँ जो अपना स्राव सीधे रक्त नलिकाओं मे विसर्जित करती हैं।
अन्तःस्रावी तंत्र	:	उन ग्रन्थियों से बना हुआ तत्र जो शरीर के विकास तथा पोषण के लिए आवश्यक विभिन्न रासायनिक पदार्थों का स्राव करती हैं।
अभिप्रेरण	:	वह आन्तरिक शक्ति है जो व्यवहार को प्रारंभ करती है, उसे दिशा देती है तथा इसके अन्त अथवा समाप्ति का कारण बनती है।
अलगोरिदम्स	:	वे प्रक्रियाएँ अथवा नियम जो किसी समस्या के समाधान का पूरा वचन देते हैं जैसे गुणा के नियम या गणित और विज्ञान का कोई सूत्र।
अवटु ग्रन्थि	:	गर्दन के निचले भाग मे अवस्थित, चयापचय मान को नियन्त्रित करती है।

अवधान	:	चयनित प्रत्यक्षीकरण
अवधान की विस्तृति	:	एक सैकंड के भाग मे व्यक्ति जितनी वस्तुएँ, अक्षर तथा अक देख सकता है।
असहभागी निरीक्षण	:	जहाँ निरीक्षणकर्ता दूर से व्यवहार का अध्ययन करे।
आकार स्थिरता	:	किसी भी वस्तु को दूरी अथवा स्थिति के बावजूद स्थिर देखने की प्रवृत्ति।
आनुवशिक कूट सकेतन	:	डी.एन.ए द्वारा प्राप्त कूट सकेतित-आनुवशिक सदेश जो विकास, सवृद्धि तथा विभेदीकरण प्रक्रियाओ का आधार है।
आवश्यकता	:	प्राणी मे किसी कमी अथवा अभाव की दशा।
आदिप्ररूप	:	किसी प्रत्यय का वह विशेष उदाहरण जो आसानी से मन मे आता है।
उत्संस्करण	:	किसी व्यक्ति का किसी सस्कृति मे समाजीकरण।
उद्भवन	:	समस्या-समाधान की सभावना की वह वृद्धि जो विचाराधीन समस्या को कुछ समय के लिए रोकने, विश्राम या प्रत्याहार करने के परिणामस्वरूप होती है।
उद्दीपन	:	पर्यावरण का शरीर पर पड़नेवाला प्रभाव जिससे क्रिया करने के लिए उत्तेजना पैदा होती है।
उपयोगी व्यवहार	:	वह विशिष्ट व्यवहार जो अभिप्रेरण को सन्तुष्ट करता है।
उपागम-उपागम अन्तर्द्वन्द्व	:	यह एक ही जैसे दो या दो से अधिक आकर्षित करने वाले लक्ष्यो के कारण उत्पन्न होता है।
एडीसन रोग	:	न्यासर्गी के अपर्याप्त स्राव के परिणामस्वरूप थकावट, भूख न लगना, रक्ताल्पता, दुर्बलता, अनिद्रा तथा त्वचा का कालापन हो जाता है इसे एडीसन रोग कहते हैं।
कायिक तंत्रिका तंत्र	:	ऐच्छिक क्रियाओ से सबधित तत्र।
कुण्ठा	:	अभिप्रेरित व्यवहार के मार्ग मे विफलता अथवा बाधा आ जाने के कारण लक्ष्य प्राप्ति मे असफलता से उत्पन्न मानसिक दशा।
केन्द्रित बिन्दु	:	किसी एक क्षण मे अभिज्ञता का क्षेत्र जिस विशेष उद्दीपन पर केन्द्रित होता है उसे अवधान का केन्द्र या केन्द्रित बिन्दु कहा जाता है।
कोशिका	:	तत्रिका तत्र की आधारभूत इकाई।
कौशल	:	निष्पादन की परिशुद्धि की दिशा मे व्यवहारात्मक झुकाव या किसी कार्य को करने का नया तरीका ढूँढ़ना।
क्लासिकी अनुबंधन	:	एक उद्दीपन द्वारा दूसरे उद्दीपन का स्थानापन्न करना ताकि उन दोनो के बीच साहचर्य पैदा हो जाए।
खंड	:	सूचना की एक इकाई।
गतिबोधेन्द्रिय	:	वे इन्द्रियाँ जो हमारे शरीर के अगो की स्थिति तथा गति के बारे मे प्राणी को सूचित रखती हैं।
चयापचय	:	कोशिकों के निर्माण तथा अनुविभाजन की क्रियाएँ।
चर	:	किसी प्रयोग मे परिवर्तनशील दशाएँ, घटनाएँ या कारक।
चिन्तन	:	वह ज्ञानात्मक प्रक्रिया जो तर्क, इच्छा और कल्पना की भाँति मस्तिष्क मे चलती है जिसमे पर्यावरण से प्राप्त सूचनाओ और स्मृति मे सचित प्रतीको की पुनर्व्यवस्था सम्मिलित है।

चेतक	:	भूरे रंग के पदार्थ का पिंड जो दूसरे केन्द्रो को सवेदात्मक सदेश पहुँचाता है।
जटिल प्रत्यय	:	वे प्रत्यय जो अनेक सामान्य विशेषताओं द्वारा पारिभाषित होते हैं।
जैविक पोषण	:	वे विशिष्ट कोशिकाएँ जो उद्दीपनो के विभिन्न प्रकारो को विद्युत उत्तेजना मे परिवर्तित करती है।
तंत्रिका सप्रेक्षक	:	जिन रसायनो द्वारा कोशिकाएँ रासायनिक तौर पर सप्रेक्षण करती हैं।
तादात्मीकरण	:	जब बच्चे अपने व्यवहार को अपने प्रतिरूप के अनुसार आकार देने का प्रयास करते हैं।
दुर्भीति	:	भय की ऐसी प्रतिक्रियाएँ जो उद्दीपनो के प्रति भय के लिए अपर्याप्त तथा अनपकारी हो।
दुश्चिन्ता	:	उद्दीपन के प्रति बिना किसी विशेष कारण के त्रास और आशका।
दृष्टि तीक्ष्णता	:	दृष्टि क्षेत्र मे विस्तृत तथा सूक्ष्म विभेदों को विभेदित करने की योग्यता।
द्युति	:	किसी उद्दीपन का सापेक्ष हल्कापन अथवा गाढ़ापन।
धारण	:	अभ्यास द्वारा एकत्रित सूचना का भण्डारण।
धनुस्तंभ	:	परावटु ग्रन्थि को क्षतिग्रस्त होने अथवा निकाल देने से एक प्रकार की तत्रिका व्याधि हो जाती है जिसे धनुस्तभ कहते हैं।
नकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण	:	पहले वाला अधिगम बाद मे सीखी जाने वाली क्रिया मे हस्तेक्षप करता है।
निर्भर चर	:	प्रयोज्य के व्यवहार मे परिवर्तन जो स्वतन्त्र चर मे परिवर्तन के परिणामस्वरूप प्राप्त हो।
निर्माण प्रक्रियाएँ	:	पाठ्य सामग्री आगत के समय जिन तरीको से विस्तृत, सरलीकृत और परिवर्तित होती है इन्हें निर्माण प्रक्रियाएँ कहा जाता है।
निरन्तरता	:	खडो वाले उद्दीपनो को एक परिचित आकार मे देखने की प्रवृत्ति।
नैमित्तिक अनुबंधन	:	वह प्रक्रिया जिसमे अनुक्रियाएँ उद्दीपन को प्रभावित करके पुरस्कार प्राप्ति व दण्ड के बचाव मे निमित्त होती है।
पराअनुकंपी तंत्र	:	सक्रियण के दौरान क्षत हुई ऊर्जा का सरक्षण तथा पूर्ति करने वाला तत्र।
परावटु	:	गर्दन के निचले भाग मे अवटु के नीचे अवस्थित है और अस्थि सरचना को बनाए रखती है।
परिधीय तंत्रिका तंत्र	:	तंत्रिका तत्र का एक मुख्य विभाजन जिसकी अधिकतर तत्रिकाएँ मस्तिष्क और सुषम्ना नाड़ी से बाहर स्थित होती हैं।
परिरेखा	:	आकृति तथा उसकी भूमि के बीच की सीमा रेखा।
परिहार-परिहार अन्तर्द्वन्द्व	:	यह एक जैसे दो या दो से अधिक अवाछनीय व अप्रिय लक्ष्यो के कारण उत्पन्न होता है।
परीक्षण	:	प्रश्नो तथा समस्याओ का वैज्ञानिक एव व्यवस्थित विन्यास।
पाचक रस	:	आनुवशिक कूट सकेतन के अनुसार कोशिका द्रव्य मे सश्लिष्ट प्रोटीन।
पीनियल ग्रन्थि	:	मस्तिष्क के अन्दर अवस्थित मटर के दाने जितनी बडी ग्रन्थि।
पीयूष ग्रन्थि (पीयूषिका)	:	मस्तिष्क स्तंभ के नीचे अवस्थित छोटे आकार की ग्रन्थि, नौ न्यासर्गों को स्रावित करती है।

पुनरुत्पादक ग्रन्थियाँ 'जनन ग्रन्थियाँ' : स्त्रियो मे अंडाशय पुरुषो मे अंडकोष यौन विशेषताओ और व्यवहार के लिए उत्तरदायी।

पुनर्बलन : एक उद्दीपन जो व्यवहार के घटित होने को मजबूत अथवा पोषित करता है।

पूर्वलक्षी प्रावरोध : जब सूचना की विस्मृति अधिगम कार्य के बाद प्रस्तुत की जाने वाली सूचना के कारण होती है।

पूर्ण अननुक्रिया काल : जब कोशिकाएँ बिल्कुल उत्तेजना नहीं निर्वाह कर सकती वह काल पूर्ण अननुक्रिया काल कहलाता है।

प्रकार्यात्मिक स्थिरता : जब किसी वस्तु का कार्य किसी विशेष विधि द्वारा इसके इस्तेमाल अथवा समस्या प्रस्तुतीकरण से पहले ही स्थिर अथवा निर्धारित कर दिया जाता है।

प्रकृतिवादी निरीक्षण : प्राकृतिक स्थिति मे व्यवहार का निरीक्षण द्वारा अध्ययन करना।

प्रच्छन्न व्यवहार : व्यक्ति के अन्दर होने वाली क्रियाएँ जो दिखाई नही देती।

प्रतिवर्त क्रिया : उद्दीपन के प्रति एक सरल, जन्मजात तथा अनैच्छिक अनुक्रिया।

प्रतीक : वह चिन्ह जो संसार मे किसी घटना अथवा वस्तु के स्थान पर होता है अर्थात् यह किसी दूसरी वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है।

प्रत्यय : किसी समूह की समान विशेषताओं के प्रति एकसमान अनुक्रिया करना।

प्रत्यक्ष व्यवहार : वे क्रियाएँ जिनका निरीक्षण दूसरो के द्वारा सभव है।

प्रत्यक्षात्मक स्थिरता : व्यक्तियो द्वारा अनुभव की जाने वाली पर्यावरण की स्थिरता।

प्रत्यक्षीकरण : वह मानसिक प्रक्रिया जिसमे संवेदी आगत को सगठित किया जाता है तथा सार्थक अनुभव के रूप में व्याख्या की जाती है।

प्रत्यानयन : ये प्रक्रियाएँ जिनके द्वारा संचयन क्षेत्र से सूचनाओ को पुनः प्राप्त किया जाता है।

प्रभावक : वे सरचनाएँ जो शरीर को सग्राहकों द्वारा प्राप्त सदेशो के प्रति अनुक्रिया करने के योग्य बनाती हैं।

प्रमस्तिष्क : अग्रमस्तिष्क का एक मुख्य भाग जो दाहिने और वाम गोलार्द्धों मे बँटा है। इसकी विभिन्न पालियाँ ऐच्छिक गतिविधियो, मानसिक व मनोगत्यात्मक क्रियाओं, वाणी व भाषा का नियन्त्रण व समन्वयन करती है।

प्रश्नावली : लिखित प्रश्नो का विन्यास जिनके उत्तर उचित स्थान पर चिन्ह बनाकर दिए जाएँ।

प्रैग्नान्ज का नियम : किसी भी उद्दीपन को अच्छी आकृति मे देखने की प्रवृत्ति।

फाई दृग्विषय : पर्दे पर वस्तुओ की गति वास्तविक प्रतीत होती है यद्यपि पर्दे पर वस्तुओ की गति नही होती। यह भ्रम दो आयामों वाले स्थिर चित्रों को सही गति पर शीघ्रता से अनुक्रम में प्रक्षेपण करने से उत्पन्न किया जाता है। इस प्रकार के भ्रम को फाई दृग्विषय कहते हैं।

बहिःस्रावी ग्रन्थियाँ : वे नलिका ग्रन्थियाँ जो न्यासर्गों के अतिरिक्त अन्य रासायनिक पदार्थों का स्राव भी करती हैं।

भाव प्रबोधन स्तर : उत्तेजना के सातत्यक पर शून्य से लेकर उच्च स्तर पर की स्थिति।

मनोविज्ञान : मानव व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन।

मध्यमस्तिष्क : पश्चमस्तिष्क तथा अग्रमस्तिष्क के बीच प्रसारण केन्द्र।

मध्यवर्ती चर : वह दशा अथवा कारक जो स्वतन्त्र तथा निर्भर चरो के मध्यस्थ हो और उनके सम्बन्ध को प्रभावित करें।

मस्तिष्क आलोड़न	:	वह प्रक्रिया जिससे व्यक्तियो को समूह मे किसी समस्या के समाधान के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
मुक्त प्रवाही दुश्चिन्ता	:	निरन्तर भय जैसी प्रतिक्रिया।
मूर्तिपरक प्रतिमा	:	दृश्य सूचना सवेदी स्मृति मे प्रतिमा के रूप मे धारित रहती है जो दृश्य आगत की नकल होती है इसे मूर्तिपरक प्रतिमा कहते हैं।
मूल प्रवृत्ति	:	पूर्वनिश्चित क्रिया जिससे प्राणी अपना अस्तित्व तथा अपनी प्रजाति को जीवित रख पाता है।
मेडुला ओबलांगाटा	:	मस्तिष्क स्तंभ का सबसे नीचे का भाग जो प्राणभूत प्रक्रियाओ का समन्वय और स्वायत्त तन्त्रिका तत्र का नियन्त्रण करता है।
मौखिक परम्परा	:	सस्कृति का एक व्यक्ति द्वारा दूसरे को सचरण।
यन्त्रवत् अवस्था	:	वह अवस्था जिसमे व्यक्ति को कार्य करते समय उस कार्य के विभिन्न पहलुओं के बारे मे सोचने की भी आवश्यकता नही होती है।
रक्तक पटल	:	आँख की बीच वाली सतह।
रंग स्थिरता अथवा द्युति स्थिरता	:	प्रकाश एव छाया अथवा विभिन्न रगो तथा दीप्तियो मे देखने के बावजूद किसी भी वस्तु को उसके सामान्य रंग मे देखने की प्रवृत्ति।
रंगत	:	रंगत रंग की तरंगो की लम्बाई को इंगित करता है।
लम्बाकार दरार	:	एक लम्बी दरार जो दो प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्धों को आगे से पीछे तक अलग करती है।
लक्ष्य	:	वह अतिम परिणाम जिसकी ओर प्राणी प्रयत्नशील अथवा गतिशील होता है।
विकर्षक	:	वह अत्यावश्यक उद्दीपन जिनको व्यक्ति अनदेखा नही कर सकता।
विभेदीकरण	:	जब दो या अधिक उद्दीपनो के प्रति विभिन्न अनुक्रिया की जाती है जो किसी प्रकार से एक से होते हैं।
विलोपन	:	अधिगम की वह प्रक्रिया जो अनुबधन मे अर्जित अनुक्रिया को अवरुद्ध करती है।
विस्थापन	:	वह प्रतिक्रिया जो क्रोध के वास्तविक उद्दीपन की अपेक्षा किसी अन्य कम सबद्ध उद्दीपन पर उतरती अथवा निर्देशित करती है।
वैषम्य	:	जब दो उद्दीपन एक दूसरे से अत्यन्त भिन्न हो।
श्वेत पटल	:	आँख का बाहर वाला ढक्कन।
सकेतन	:	किसी भौतिक उद्दीपन का ऐसे रूप मे रूपान्तरण करना जिसे मानवीय स्मृति स्वीकार करे।
संख्या कील प्रविधि	:	एक प्रकार की स्मरण युक्ति जो पुन स्मरण करने मे सहायक होती है।
संग्राहक	:	वे सरचनाएँ जो बाह्य परिवेश अथवा आन्तरिक परिवेश से सूचना प्राप्त करती है।
सचयन	:	सकेतित सूचना का धारण।
संतृप्त रंग	:	संतृप्त रंग वह होता है जिसमें रंगत की अधिकतम मात्रा होती है।
संयोजक	:	वे तन्त्रिकाएँ जो संग्राहको तथा प्रभावको को जोड़ती हैं।
सवेग	:	प्राणी की उत्तेजित अवस्था जो व्यवहार को शुरू करती तथा दिशा देती है।
संवेदना	:	वह शारीरिक प्रक्रिया जिसमें सवेदी सग्राहक तथा केन्द्रीय तंत्रिका तत्र सम्मिलित हैं।

सकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण	:	जब एक सीखी गई क्रिया दूसरी सीखी जाने वाली क्रिया को सीखने मे सहायता पहुँचाती है।
समग्राकृति	:	सपूर्ण अथवा समग्र आकृति।
समस्या	:	वह स्थिति है जिसमे व्यक्ति दी हुई दशा से लक्ष्य दशा तक पहुँचना चाहते हैं।
समाजीकरण प्रक्रिया	:	कच्चे माल को तैयार उत्पादन में परिवर्तित करके मानव को समाज के प्रभावकारी सदस्य बनाने की प्रक्रिया।
सरल प्रत्यय	:	जिन प्रत्ययो को केवल एक विशेषता या गुण के आधार पर पारिभाषित किया जाता है।
सर्वेक्षण	:	विशेष सूचना प्राप्त करने के लिए एक विस्तृत एवं विशाल अध्ययन जिसमें साक्षात्कार, प्रश्नावली आदि का प्रयोग हो।
सहभागी निरीक्षण	:	जहाँ व्यक्ति घटना अथवा व्यवहार के अध्ययन में स्वय सक्रिय रूप से भाग लें।
सान्निध्य	:	उद्दीपन एव अनुक्रिया का एक साथ घटित होना।
सापेक्षिक अननुक्रिया काल	:	तन्त्रिकाक्ष की सीमा तक पहुँचने तथा उत्तेजना करने के लिए अधिक विद्युत आवेग की आवश्यकता होती है। यह काल सापेक्षिक अननुक्रिया काल कहलाता है।
साक्षात्कार	:	एक प्रविधि जिसमे प्रयोज्य के साथ आमने-सामने प्रश्न पूछकर प्रत्यक्ष रूप से सूचना एकत्र की जाती है।
सृजनात्मकता	:	सृजनात्मकता वह प्रक्रिया है जो मौलिकता, नवीनता और उपयुक्तता के गुण रखती है।
सुगठित रूप स्थिरता	:	किसी जानी पहचानी वस्तु को किसी भी कोण से देखने के बावजूद भी मानक सुगठित रूप मे देखने की प्रवृत्ति।
सुषम्ना नाड़ी	:	एक लम्बी रस्सी की भाँति तन्त्रिका तन्तु का सग्रह जो मस्तिष्क के पीछे से प्रारम्भ होकर पीठ के नीचे तक जाता है।
सेतु	:	पश्चमस्तिष्क का भाग जो प्रसारण केन्द्र का कार्य करता है।
स्वतन्त्र चर	:	प्रयोग मे विचलित की जाने वाली कोई भी दशा जिसका विन्यास प्रयोज्य से स्वतन्त्र रूप से किया जाता है।
स्वप्रत्यय	:	किसी व्यक्ति का किसी विशेष समाज मे दूसरो की तुलना मे अपना प्रत्यक्षीकरण।
स्वतः शोध प्रणाली	:	छोटे पथ वाले व्यावहारिक नियम जो समाधान की ओर शीघ्रता से अग्रसर करते हैं।
स्वायत्त तन्त्रिका तंत्र/अनैच्छिक तन्त्रिका तंत्र	:	आन्तरिक परिवर्तनो का नियत्रण करने वाला तन्त्र।
ज्ञानात्मक अधिगम	:	वह अधिगम जिसमे उच्चतर मानसिक प्रक्रियाएँ सन्निहित होती हैं और जिसमे उद्दीपन अनुक्रिया साहचर्य के स्पष्ट निर्माण अथवा पुनर्बलन के परिचालन के बिना सूचना सग्रह और प्रक्रम पर बल दिया जाता है।
ज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ	:	वे प्रक्रियाएँ जो चिन्तन, तर्कणा करना, समस्या-समाधान, सृजनात्मकता तथा निर्णय करने से सम्बन्धित प्रतीको और प्रत्ययों के निर्माण एव उनके उपयोग से सबधित हैं।
ज्ञानात्मक विकास	:	उन मानसिक प्रक्रियाओ का विकास जो बच्चे को स्वयं एवं अपने चारों ओर के संसार का ज्ञान प्राप्त करने में सहायता करती है।

हिन्दी-अंग्रेजी शब्दावली

अंडकोष	Testes
अंडाकार गवाक्ष	Oval Window
अंतर्ग्रंथन	Synapse
अंतर्नोद	Drives
अंधबिन्दु	Blind Spot
अग्न्याशय	Pancreas
अग्न्याशयिक स्राव	Pancreatic Secretion
अग्रमस्तिष्क	Fore Brain
अग्रलक्षी प्रावरोध	Proactive Inhibition
अचेतन	Unconscious
अतिक्रमण	Violating
अतिजीवन	Survival
अति ध्रुवण	H,perpolarised
अधश्चेतक	Hypothalamus
अधिक स्राव	Over secretion (Hyper secretion)
अधिगम	Learning
अधिवृक्क	Adrenals
अधोवल्कुटीय	Subcortical
अधो स्वर भाषण	Sub vocal speech
अध्यारोपित	Superimposed
अर्थगत	Semantic
अर्धवृत्ताकार नलिकाएँ	Semi circular canals
अन-अनुबंधित अनुक्रिया	Unconditioned response
अननुक्रिया काल	Refractory Period
अनपेक्ष	Regardless
अनम्यता	Rigidity
अनावरण / अनावृत्ति	Exposure
अनिरीक्षित	Unobservable
अनिर्भिविन्यास	Disorientation
अनुकपाल पालि	Occipital lobe
अनुकरण	Imitation
अनुकंपी तंत्रिका तंत्र	Sympathetic Nervous system
अनुक्रम	Hierarchy
अनुक्रिया	Response
अनुबंधित उद्दीपन	Conditioned Stimulus
अनुमस्तिष्क	Cerebellum
अनुरक्षण दोहराना	Maintenance Rehearsal
अनुरूपता	Conformity
अनुसंधान	Research
अनुस्थापन	Orientation
अन्तर्जात	Innate
अन्तर्दृष्टि अधिगम	Insight Learning
अन्तर्द्वन्द्व	Conflict
अन्तर्निरीक्षण	Introspection
अन्तरस्थता	Internalisation
अन्तर्वैयक्तिक	Interpersonal
अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ	Endocrine Glands
अनैच्छिक अनुक्रिया	Involuntary Response
अन्योन्याश्रित	Interdependent
अपरिग्रह	Abstention
अपरिशोधित	Crude
अपसारी चिन्तन	Divergent Thinking
अप्रमाण्य	Undemonstrable
अभिप्रेरण	Motivation
अभिप्रेरणात्मक	Motivational
अभिरुचि	Interest
अभिलेखन	Record
अभिवृत्ति	Attitude
अभिवृत्ति माप	Attitude Scale
अभिज्ञता	Awareness
अमज्ज तंत्रिकांत	Free Nerve Ending
अमूर्त	Abstract
अल्पकालीन स्मृति	Short term Memory
अल्प विकसित भ्रूण	Under Developed Foetus
अल्प स्राव	Under Secretion (Hyposecretion)
अवगमन	Progression
अवटु	Thyroid
अवधान	Attention
अवधान की विस्तृति	Attention Span
अवधानिक	Attentional
अवरक्त	Infrared
अवरोही तन्तु	Descending Fibres
अवलोकन प्रक्रिया	Scanning Process
अवसीमा	Threshold
अविच्छिन्न अवधान	Sustained Attention
असत्य सूचित्र परीक्षण	Lie Detector Test
असहभागी	Non-Participant
असामान्य	Abnormal

अस्थिका	Ossicles	कर्ण पालि	Pinna or External Ear
अशाब्दिक चिन्तन	Non verbal Thinking	कर्णावर्त	Cochlea
अश्रु ग्रन्थियाँ	Tear Glands	कर्मक	Agents
आकडे	Data	कल्पना	Imagination
आत्म-अन्वेषण	Self-Discovery	क्लासिकी अनुबधन	Classical Conditioning
आत्मकथात्मक	Autobiographical	क्रमबद्ध अध्ययन	Systematic Study
आत्मबोध	Self-Understanding	काचाभ द्रव्य	Vitreous Humour
आत्मा	Soul	कारक	Factors
आदि प्ररूप	Prototype	कामोद्दीपक अंग	Erogenous Zones
आधार झिल्ली	Basilar Membrane	कायिक तत्रिका तत्र	Somatic Nervous System
आधार वाक्य	Premise	क्रातिक अवधि	Critical Period
आनुवशिक कूट सकेतन	Genetic Coding	क्रिया प्रसूत अनुबंधन	Operant Conditioning
आनुवंशिकी	Heredity	क्रिया विभव	Action Potential
आतरागी	Visceral	कुण्ठा	Frustration
आतरिक अभिप्रेरण	Intrinsic Motivation	कुपोषण	Malnutrition
आरोपण	Implantation	कुशिग सलक्षण	Cushing Syndrome
आरोही	Ascending	कुसमायोजन	Maladjustment
आवेग	Impulses	कूट सकेतन	Coding
आवृत्ति	Frequency	कृत्रिम बुद्धि	Artificial Intelligence
आयाम	Dimension	केन्द्रीय तत्रिका तत्र	Central Nervous System
उत्तरजीविता	Survival	कोशिका	Neuron
उत्संस्करण	Acculturation	कोशिका द्रव्य	Cytoplasm
उत्तेजना	Stimulation	कोषाणु	Cell
उत्तोलक	lever	कौशल	Skill
उद्भवन	Incubation	खड	Chunk
उदारवादी	Liberal	खडकरण प्रक्रिया	Process of Chunking
उद्दीपन	Stimulus	खेल मनोविज्ञान	Sport Psychology
उपक्रम	Preparation	खगोल विज्ञान	Astronomy
उपकल्पना	Hypothesis	गति बोधेन्द्रिय	Kinesthetic
उपचारात्मक	Therapeutic	गत्यात्मक	Motor
उपभोगी व्यवहार	Consumatory Behaviour	ग्रथि	Gland
उपलब्धि	Achievement	ग्रथीय	Glandular
उपवल्कुटीय तत्र	Limbic Syrtem	गर्तिका	Fovea
उपवाही कोशिकाएँ	Efferent Neurons	गुच्छन करना	Clustering
उपसारी चिन्तन	Convergent Thinking	गुरुत्वाकर्षण	Gravity
उपागम-उपागम अन्तर्द्वन्द्व	Approach - Approach Conflict	गोणिका	Saccule
		घटनात्मक	Episodic
ऊतक	Tissue	घुटना-झटका प्रतिवर्त	Knee-Jerk reflex
औद्योगिक	Industrial	चर	Variable
ककालीय सरचना	Skeletal Structure	चयापचय	Metabolism
कंडरा	Tendon	चयापचय मान	Metabolic rate
कर्ण पटल	Ear Drum	चिन्तन	Thinking
कर्ण पटीय	Tympanic Membrane	चिन्हन	Imprinting

चेतक	Thalamus
चेतन	Conscious
चेतना	Consciousness
छद्मावरण	Comouflaged
जलीय द्रव्य	Acqueous humour
जालाकार सक्रियण तंत्र	Reticular Activating System
जालीदार विन्यास	Reticulated set
जिह्वाग्र	Tip of the Tongue
जीवधारी	Organism
जीवन दर्शन	Philosophy
जीवन वृत्ति	Career
जैविक पारेषक	Biological Transducer
जैविकीय वशागति	Biological Inheritance
डिम्ब	Ovaries
तन्त्रिका	Nerve
तन्त्रिका तन्तु	Nerve Fibre
तंत्रिका तन्त्र	Nervous System
तन्त्रिकांत	Nerve ending
तन्त्रिकाक्ष	Axon
तथ्य परक	Factual
तर्कणा	Reasoning
त्वचीय सवेदनाएँ	Cutaneous Senses
तादात्मीकरण	Identification
तीव्रता	Intensity
तुकबन्दियाँ	Jingles
तुकान्त	Rhymes
तुम्बिका	Ampulla
तुलनात्मक	Comparative
दमन	Repression
दरार	Fissure
दिवास्वप्न	Day Dream
दीर्घकालीन स्मृति	Long term memory
दुर्ग्राह्य	Elusive
दुर्बल-मनस्कता	Feeble-mindedness
दुर्भीति	Phobia
दुश्चिन्ता	Anxiety
दृढ धारणा	Conviction
दृति	Utricle
दृष्टि तीक्ष्णता	Visual Acuity
दृष्टि पटल	Retina
देशीय रचना	Spatial Construction
द्युति	Brightness
धनुस्तंभ	Tetany
धवल मज्जाछद	Myelinated
ध्वनि तरंग	Sound Wave
ध्रुवण अवस्था	Polarised Condition
नलिका ग्रंथियाँ	Duct glands
नवीनता	Novelty
न्यादर्श	Sample
नाद	Sound
निगमनात्मक चिन्तन	Deductive Thinking
निदान	Diagnosis
निपुण तंत्र	Expert System
निरुपाधिक अनुमानवाक्य	Categorical Syllogism
निरीक्षण	Observation
निरीक्षणकर्ता	Observer
नियन्त्रित प्रयोगात्मकता	Controlled Experimentation
नियोजित	Planned
निरर्थक	Nonsense
निर्देशित	Directed
निर्भर	Dependent
निषेचित	Fertilised
निहाई	Incus
निष्पादन	Performance
निक्षेपण	Deposition
नैदानिक	Clinical, Diagnostic
नैमित्तिक	Instrumental
परमाणु	Molecules
पराअनुकंपी तन्त्रिका तंत्र	Parasympathetic Nervous System
परामर्शदाता	Counsellor
परावटु ग्रंथि	Parathyroid Gland
परिकल्पना	Hypothesis
परितारिका	Iris
परिदृश्य	Phenomenon
परिधीय तंत्रिका तंत्र	Peripheral Nervous System
परिपक्वन	Maturation
परिभ्रमण प्रतिवर्त	Reflex arc
परिरेखा	Contour
परिवेश	Environment
परिहार-परिहार अन्तर्द्वन्द्व	Avoidance - Avoidance conflict
परिष्करण	Modification
परीक्षण	Test
पलायन	Flight
पश्चगामी खोज	Backward Search

पश्च मस्तिष्क	Hind-Brain
पक्षाघात	Paralytic Stroke
पाचक रस	Enzymes
पादाधार	Stirrup
पारिस्थितिकी	Ecological
पारेषण	Transduction
पार्श्वपालि	Parietal Lobe
पिटकवत् तंत्रिकान्त	Basket Nerve Ending
पीयूष ग्रन्थि (पीयूषिका)	Pituitay Gland (Hypophysis)
पुटक	Follicles
पुतली	Pupil
पुनरावृत्ति	Repetition
पुनरुत्पादक (जनन)	Reproductive (Gonads)
पुनर्बलन	Reinforcer
पुनर्निवेश	Feedback
पुनः स्थापित	Rehabilitating
पुरस्कार	Reward
पूर्ति	Closure
पूर्व धारणा	Pre-conception, Assumption
पूर्वलक्षी प्रावरोध	Retroactive Inhibition
पूर्ववर्ती	Preceding
पूर्व विन्यास	Preparatory set
पूर्वाग्रह	Prejudice
पेशीय गति	Muscular Movement
प्रक्रमण स्तर उपागम	Level of Processing Approach
प्रकार्यात्मक स्थिरता	Functional Fixedness
प्रकृतिवादी	Naturalist
प्रक्रिया	Process
प्रघाण संवेदना	Vestibular Senses
प्रघाण प्रक्रिया	Vestibular Process
प्रच्छन्न	Covert
प्रतिक्रिया	Reaction
प्रतिपक्षीय विनियमन	Contralateral regulation
प्रतिबल	Stress
प्रतिवर्त क्रिया	Reflex action
प्रतिबंधित तर्कणा	Conditional Reasoning
प्रतिदर्श	Sample
प्रतिध्वन्यात्मक स्मृति	Echoic Memory
प्रतिनियुक्त	Surrogate
प्रतिरूपण	Modelling
प्रतीक	Symbol
प्रत्यय	Concept
प्रत्यय प्राप्ति	Concept Attainment
प्रत्यभिज्ञा	Recognition
प्रत्यक्ष	Overt
प्रत्यक्षात्मक प्रक्रियाएँ	Perceptional Processes
प्रत्यक्षीकरण	Perception
प्रत्यानयन	Retrieval
प्रत्याभूति	Guarantee
प्रत्याहार	Withdrawal
प्रदूषण	Pollution
प्रदीप्ति	Illumination
प्रबोधन	Illumination
प्रभावक	Effector
प्रमस्तिष्क	Cerebrum
प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध	Cerebral Hemisphere
प्रमस्तिष्कीय वल्कुट	Cerebral Cortex
प्रयास एवं त्रुटि	Trial & Error
प्रयोग	Experiment
प्रयोगशाला	Laboratory
प्रयोगात्मक	Experimental
प्रयोगात्मकता	Experimentation
प्रयोज्य	Subject
प्रविधि	Technique
प्रस्थापना	Proposition
प्रश्नावली	Questionnaire
प्रक्षेपक	projector
प्राणी	Human, Organism
प्राणीशास्त्री	Zoologists
प्रावरोध	Inhibition
बहिःस्रावी	Exocrine
बारम्बारता	Repetition
बाल मनोविज्ञान	Child Psychology
बाह्य कोशिकीय तरल पदार्थ	Extra Cellular Fluid
बुद्धिलब्धि	Intelligence Quotient
बोधेन्द्रिय	Kinesthetic Senses
भ्रम	Illusion
भाव प्रबोधन	Arousal
भौतिकी	Physics
मण्डलाकार	Circuit
मध्य मस्तिष्क	Mid brain
मध्यवर्ती चर	Intervening Variable
मधुसूदनी	Insulin
मन	Mind
मनोगत्यात्मक क्रियाएँ	Psychomotor Activities

मनोबल	Morale	लोम कोशिकाएँ	Hair Cells
मनोविज्ञान	Psychology	वचन	Deprivation
मनोसामाजिक पर्यावरण	Psycho-Social Environment	वंशानुसंक्रमण	Inheritance
मस्तिष्क	Brain	वक्र	Curve
मस्तिष्क आलोड़न	Brain Storming	वर्ण विपर्यय समस्या	Anagram Problem
महासंयोजक पिंड	Corpus Callosum	वर्णक कोशिका	Pigment cell
मांसपेशियाँ	Muscles	वर्णांध	Achromatic
माइजनर कणिका	Meissner Corpuscles	वल्कुट	Cortex
मानसिक प्रक्रिया	Mental Process	वस्तुनिष्ठ	Objective
मानसिक मंदन	Mental retardation	वायु अंतरिक्ष	Aerospace
मानसिक विन्यास	Mental Set	वाहिका क्रिया	Vascular
मापन	Measure	विकर्षण	Distraction
मात्रात्मकता	Quantification	विकलांग	Handicapped
मिथ्याभाष	Pseudophone	विचलन	Variability
मुक्त न्यासर्ग	Releasing Hormones	विकासात्मक	Developmental
मुक्त प्रवाही दुश्चिन्ता	Free Floating Anxiety	विचार	Thought
मुक्तिकर	Releaser	विधि	Method
मुद्गर	Malleus	विध्रुवण	Depolarised
मूर्त	Concrete	विनियमन	Regulation
मूर्तिपरक प्रतिमा	Inconic Image	विन्यसन	Ordination
मूल प्रवृत्तियाँ	Instincts	विभ्रान्ति	Hallucination
मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार	Instinctive Behaviour	विभेदक	Differential
मूल्यांकन	Evaluation	विभेदीकरण	Discrimination
मध्य मस्तिष्क	Mid Brain	विमुखी	Aversive
यथार्थवादी	Realistic	वियोजी प्रत्यय	Disjunctive Concepts
यंत्रवत् अवस्था	Automation Stage	विरुचि	Disgust
यादृच्छिक संग्रह	Random Collection	विलोपन	Extinction
यांत्रिक	Automatic	विवर	Cavity
युग्मन	Integration	विसारित	Diffused
युग्मित	Paired	विस्तृत अच्छादन	Large Coverage
युयुत्सा	Pugnacity	विस्थापन	Displacement
रंगत	Hue	विस्मृति	Forgetting
रकाब	Stapes	विशिष्ट विन्यास	Specific Set
रक्तक पटल	Choroid	विश्लेषण	Analysis
रचना तंत्र	Production System	वैषम्य	Contrast
रन्ध्र	Aperture	व्यक्तिनिष्ठता	Subjectivity
रसायन शास्त्री	Chemist	व्यक्तिपरक	Subjective
राजनीतिक	Political	व्यक्ति वृत्त अध्ययन	Case Study
रूढ़िवादी	Conservative	व्यक्तित्व परीक्षण	Personality Test
रोमछिद्र	Pore	व्यवस्थित विन्यास	Arranged Set
लम्ब अक्ष	Vertical Axis	व्यवहार	Behaviour
लम्बाकार दरार	Longitudinal Fissure	व्याधि	Disorder
ललाट पालि	Frontal Lobe	शंकु	Cone

शंखपालि	Temporal Lobe
शरीर क्रियात्मक	Physiological
शरीर शास्त्री	Physiologists
शलाकाएँ	Rods
शाब्दिक कौशल	Verbal Skills
शैशवावस्था	Infancy
शैक्षिक	Educational
श्रवण	Hearing
श्रवण नलिका	Auditory Canal
श्रवण संग्राहक	Auditory Receptors
श्वेतपटल	Sclera
संकेतन	Coding
संख्या कील प्रविधि	Number Peg Technique
संगठनात्मक मनोविज्ञान	Organisational Psychology
संग्राहक	Receptor
संघटक	Component
संचयन	Store/Storage
संचयन तंत्र	Storage System
संपोषित	Sustaining
संप्रेषण	Communication
संतृप्ति	Saturation
संबंधात्मक प्रत्यय	Relational Concept
संयोजक	Connector
संयोजी कोशिकाएँ	Connecting Neuron
संरचना	Structure
संवलन	Convolution
संवेग	Emotion
संवेगात्मक	Emotional
संवेदन द्वारीकरण	Sensory Gating
संवेदना	Sensation
संवेदी आगत	Sensory Input
संवेदी पंजिका	Sensory Register
संवेदी स्मृति	Sensory Memory
संश्लिष्ट	Synthetise
संस्कृति	Culture
संज्ञान	Cognition
सत्ता	Power
समकालीन	Contemporary
समग्राकृति	Gestalt
सम्बद्धता	Belongingness
संबंधन	Affiliation
सममिति	Symmetry
सममित्यात्मक	Symmetrical

समस्थिति	Homeostasis
समाजीकरण	Socialisation
समायोजन	Adjustment
समूहन	Grouping
सरलीकृत	Smoothed
सलाहकार	Advisor
सर्वेक्षण विधि	Survey Method
सहभागी	Participant
सांख्यिकीय	Statistical
सांस्कृतिक विरासत	Cultural Heritage
साग्रही	Insistent
सादृश्यता	Likeness
साधन साध्य विश्लेषण	Means End Analysis
सानवाही कोशिकाएँ	Afferent Neurons
सान्निध्य	Proximity
सापेक्षिक अननुक्रिया काल	Relative Refractory Period
सापेक्षिक तीव्रता	Relative Intensity
सामान्य	General
सामान्यीकरण	Generalisation
साम्यता	Similarity
साहचर्य तंत्रिका	Association Neuron
साक्षात्कार	Interview
सीमा	Threshold
सुधारात्मक	Correctional
सुपारिभाषित और कुपारिभाषित समस्याएँ	Well - Defined and Ill - Defind Problems
सुषम्ना नाड़ी	Spinal Cord
सूत्र कणिका	Mitochondria
सृजनात्मक चिन्तन	Creative Thinking
स्थूणक	Eardrum
स्थिरता	Constancy
स्पंदन	Vibration
स्पर्शीय साहचर्य	Tactile Association
स्पर्शेन्द्रिय	Sense of Touch
स्मरण युक्तियाँ	Mnemonic devices
स्मृति	Memory
स्मृति लोप	Amnesia
स्वअनुशासन	Self Discipline
स्वचलीकरण	Automatisation
स्वतन्त्र	Independent
स्वलीन चिन्तन	Autistic Thinking
स्वतन्त्र पुनःस्मरण	Free Recall

वतः पुनर्प्राप्ति	Spontaneous Recovery
वत. शोध प्रणाली	Heuristics
परिरक्षक	Self Preservatory
प्रत्यय	Self-Concept
लीन चिन्तन	Autistic Thinking
-सहमति	Self-Approval
-स्वीकृति	Self-Acceptance
कामोन्माद	Masculinism, Virilism
ग्रत्त तन्त्रिका तन्त्र	Autonomic Nervous System
क्षेप सिद्धान्त	Interference Theory
हृद्वाहिका	Cordiovascular
क्षण दीप्ति	Flash
क्षय सिद्धान्त	Decay Theory
क्षेत्र	Field
त्रिआयामीय	Three Dimensional
ज्ञानात्मक	Cognitive
ज्ञानात्मक अधिगम	Cognitive Learning
ज्ञानात्मक प्रक्रिया	Cognitive Process
ज्ञानेन्द्रिय	Sense Organ

संदर्भ पुस्तके

जायसवाल, महेन्द्रप्रसाद	.	*विकासात्मक मनोविज्ञान*, दिल्ली पुस्तक सदन, दिल्ली व पटना।
जायसवाल, सीताराम	:	*सामान्य मनोविज्ञान*, आर्य बुक डिपो, 30, नाईवाला, करौलबाग, नई दिल्ली, 1985
दवे, इन्दु	:	*शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार*, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1971
रायजादा, विपिन सिह	.	*बाल मनोविज्ञान*, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, राजस्थान, 1983
वर्मा, प्रीति	:	*बाल मनोविज्ञान*, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1991
सारस्वत, सत्य स्वरूप		*मनोविज्ञान प्रदीप*, गौतम ब्रदर्स एण्ड कम्पनी।
सिन्हा, सी.पी.	:	*सामान्य मनोविज्ञान*, भावना प्रकाशन, दिल्ली, 1978
सुलैमान, मुहम्मद एव अजीजुर्रहमान खान	:	*आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान*, शुक्ला बुक डिपो, पटना, 1987
त्रिपाठी, त्रिवेणी प्रसाद	:	*व्यावहारिक मनोविज्ञान*, राम नारायण लाल बेनी माधव, इलाहाबाद